Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Library
SHREE SHREE MA ANANDAMAYEE ASHRAM
Bhadaini, Varanasi-I
No. 1972
Vol XIX H
Books should be returned by date (last) noted below or re-issue arranged. Otherwise a fine of -/10/- N. P. daily shall have to be paid.

26. 4.78

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

9

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

श्री श्री आनन्दमयी संघ
ॐ मा
मातृ शरणं

वर्ष १९] जनवरी १९७२ [अंक १

CC-0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

[श्री श्री आनन्दमयी संघ का त्रैमासिक मुख पत्र]

परामर्श-परिषद्

महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज, एम. ए., डी. लिट्, पद्मविभूषण
अध्यक्ष

डाक्टर श्री गौरीनाथ शास्त्री, एम. ए. पी. आर. एस., डी. लिट्

ब्रह्मचारी शैलेश

ब्रह्मचारिणी आत्मानन्द

सम्पादक—ब्रह्मचारी निर्मलानन्द, एम. ए., शास्त्री

: वार्षिक चन्दे का विवरण :

भारत में—६) रुपये (डाक व्यय सहित)

विदेश में—(सी० मेल) १०.५० अथवा २५ शीलिंग अथवा २ डालर ।

(एयर मेल)—२५ रुपये अथवा १ पौण्ड १० शीलिंग (यूरोप)

„ —३५ रुपये अथवा ५½ डालर (उत्तर-दक्षिण अमेरिका)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नियमावली

- 'आनन्द वार्ता' त्रैमासिक पत्रिका। बँगला, हिन्दी और अंग्रेजी में तीन अलग-अलग संस्करण प्रकाशित होता है।
- 'आनन्द वार्ता' का वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होता है। वर्ष के किसी भी महीने में चन्दा भेजकर ग्राहक बना जा सकता है। प्रत्येक ग्राहक को जनवरी अंक से पत्रिका लेना आवश्यक है। दिसम्बर के अन्त तक चन्दा या सूचना न मिलने पर अगला अंक भी वी० पी० द्वारा भेजा जाता है।
- पत्रिका प्रकाशित होते ही प्रत्येक ग्राहक के पास डाक द्वारा भेजी जाती है। डाक की गड़वड़ी के कारण कभी-कभी पत्रिका ग्राहक को नहीं मिल पाती। जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्तूबर महीने के तीसरे सप्ताह के भीतर पत्रिका प्राप्त न होने पर स्थानीय डाकघर से पूछताछ कर फिर कार्यालय को सूचना देनी चाहिये।
- श्री श्री माँ की उपदेश वाणी तथा उनके दिव्य जीवन से सम्वन्धित रचनावली विशेष रूप से 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित की जाती है। इसके अतिरिक्त दार्शनिक मतवाद, धर्म, नीति, शिक्षा और संस्कृति मूलक तथ्यवहुल शोधपूर्ण रचनायें, सम्प्रदाय निर्विशेष साधक महापुरुषों की जीवनी, धर्म-सम्वन्धी वास्तव घटना-आख्यायिका आदि भी 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित किये जाते हैं।
- 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशनार्थ रचनाएँ फुलस्केप कागज़ के एक तरफ़ सुवाच्य अक्षरों में लिखकर और उसकी नकल रखकर भेजनी चाहिए। लेखों का परिवर्तन, परिमार्जन तथा परिवर्तन करने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- समीक्षा और समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।
- स्थायी पते में कोई परिवर्तन होने पर तुरन्त सूचना दीजिये।
- चन्दा और पत्रादि लिखते समय अपना नाम, पूरा पता और ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। जो सज्जन चेक द्वारा चन्दा देना चाहें, वे बैंक कलेक्शन चार्ज २) रुपये अधिक भेजने की कृपा करें।
- **रुपया तथा चेक इत्यादि भेजने का पता—** श्री श्री आनन्दमयी संघ
(पब्लिकेशन अकाउन्ट)
भदैनी, वाराणसी—१
- **रचना और समालोचना के लिये पुस्तक इत्यादि भेजने का पता—** सम्पादक, 'आनन्द वार्ता'
श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम.
भदैनी, वाराणसी—१

टेलीग्राम : माताजी ● फोन : ६२७९१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय सूची

१.	मातृवाणी	....	१
२.	उपनिषदं ब्रूहि		३
३.	शाहबाग लीला	....	६
४.	श्री श्री माता आनन्दमयी प्रसंग	....	९
५.	मातृ सत्संग	....	१३
६.	श्री श्री माँ को ७५वीं जन्म जयन्ती	....	१९
७.	महात्माओं के श्रीमुखसे	....	२८
८.	मानव जीवन का परम आदर्श : सांख्य वेदान्त और आगमदृष्टि	....	३२
९.	भारतीय संस्कृति और सन्त जीवन	....	३५
१०.	श्री श्री मुक्तानन्द-स्मरणांजलि	....	४४
११.	श्री श्री माता आनन्दमयी के आविर्भाव की विशेषता	....	४८
१२.	मुक्ति बाबा की मुक्ति यात्रा	....	५२
१३.	भोपाल में श्रीमद्भागवत सप्ताह महायज्ञ	....	५९
१४.	मातृ-लीला	....	६७
१५.	कीड़े की आत्मकथा	....	७४

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माताजी भगवान पद्मनाभ की प्रतिमूर्ति हाथों में लिये हुए

सौजन्य : सदानन्द, बाम्बे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

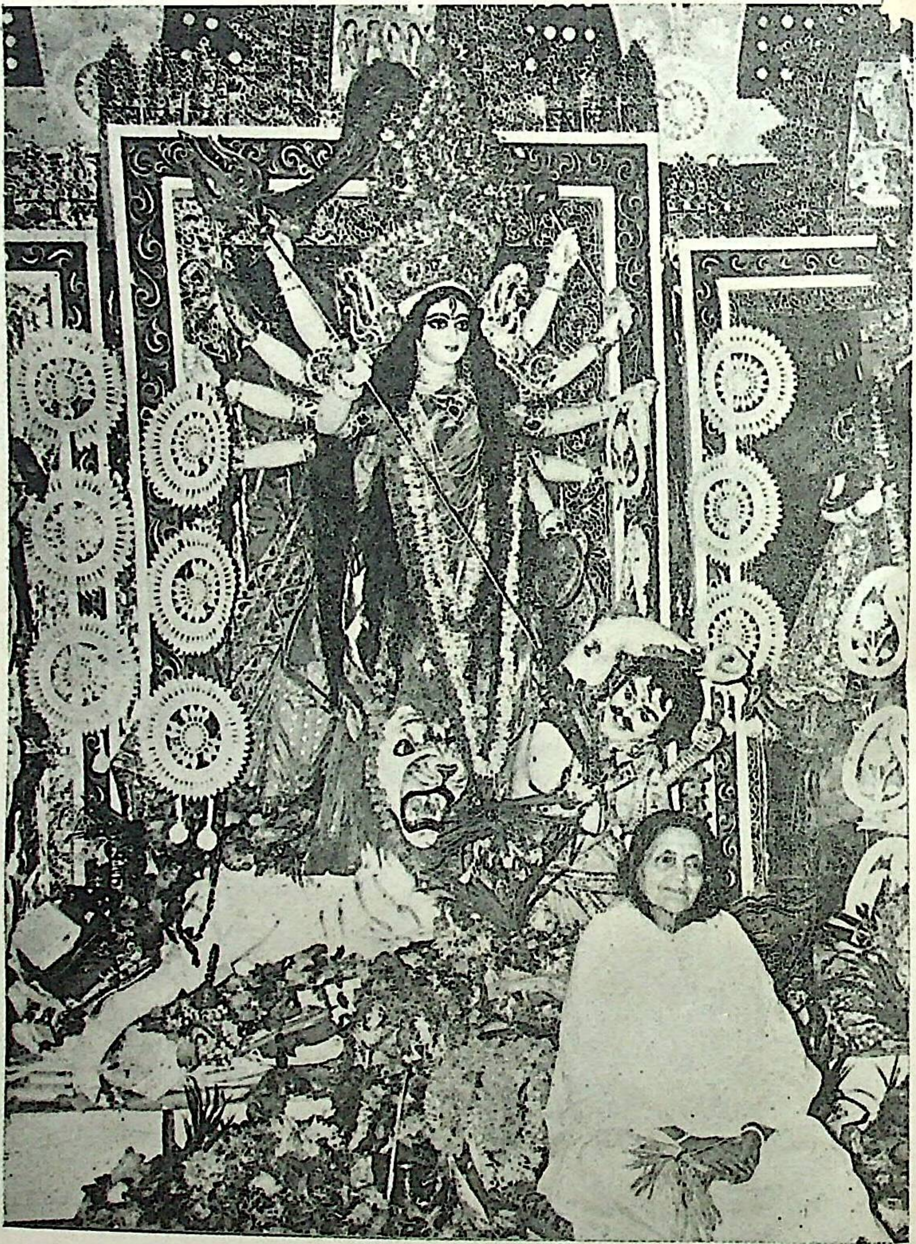

देहरादून में दुर्गा पूजा, अक्टूबर १९७१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता
"अमर आत्मा—अमर पन्थी स्वयम्—अपने में आप।"
वर्ष—१९] जनवरी १९७२ [अंक—१

मातृवाणी

भगवान् का जो रूप अच्छा लगता है उसी रूप में वे किसी किसी को दर्शन देते हैं। तुम्हें भाव तथा शक्ति का प्रदान किया, मन्त्र अक्षररूप तुम्हें नहीं मिला। तुम्हें जो नाम जो रूप अच्छा लगे वही जप में ध्यान में मननमें और प्रार्थना—प्रभु ! मेरा जो कल्याण उस रूप में मेरे सामने प्रकाशित हो जाओ।

× × ×

अक्षर ब्रह्म शब्द ब्रह्म प्रणव वही माँ शब्द आनन्द है। भगवान् को ही कहा जाता है—तुम्हीं माता, तुम्हीं पिता, तुम्हीं बन्धु सखा स्वामी-वही माँ-मय है जो मापती हुई देती है—अपने में स्वयं अपने को।

× × ×

भगवान् के निजी-यन्त्र में स्वयं जिसका क्षरण नहीं—नित्य है। उस अक्षर-रूपी मणिकक्ष में स्वप्रकाश की निरन्तर चेष्टा—वही अभय का रक्षा कवच है—स्व-में जो नित्य स्थित हैं उन्हीं का स्मरण रखना जो कल्याण-मंगल है।

× × ×

भगवान् करुणामय हैं। प्राण को बचाया। सब अवस्था में भगवत् स्मरण रखना है। धीरज से इस समय को पार कर जाना है। बहुतों को बहुत समय घनमान प्राणों पर चोट आती है। प्राण बच जाय तो सब की आशा रहती है। इच्छामय की इच्छा समझकर मान लेना है।

× × ×

संसार यात्रा—विश्व संसार में जिस दिशा से जो कुछ आता है निज कर्तव्य समझकर त्रुटिहीन होकर यथाशक्ति सम्पन्न करना है। भगवच्चिता में भगवान् के नाम से स्वभावतः शक्ति का प्रकट करना उनका स्वभाव है। भगवान् का नाम जप ध्यान आदि यथाशक्ति किसी भी अवस्था में करना।

× × ×

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मनुष्य का ही कर्तव्य हैं अपने को पहचानना, अपने को प्राप्त करने की चेष्टा। मनुष्य की ही भगवत् प्राप्ति है। सत्यानुसन्धान भी कर्तव्य है। जिसका जो पथ है पहचान लेना है। गुरु जिसको जो निर्देश देते हैं बिना विचार से ग्रहण करना है। सद्‌ग्रन्थों का पाठ और सत् संग में निरन्तर रहना है। सत्य स्वरूप भगवान् के प्रकाश के लिये चौवीस घण्टे में कम से कम कुछ समय के लिये स्थिर होकर मन को विषयशून्य कर बैठना, जब तक गुरु का विशेष निर्देश न हो; जो योगयुक्त है उसके प्रकाश के लिये। ऐसी इच्छा होने पर चला जा सकता है। सत्य का अनुसन्धान आवश्यक है।

× × ×

आने जाने वाले संसार में वियोग की व्यथा है। धीरज का आश्रय लेकर सहन करना है—पिता माता का आदेश यथाशक्ति पालन करना। सर्वदा भगवत्-चिन्ता में मन को डुवो रखना जिससे अन्य किसी दिशा में चिन्ता का पथ खुलकर व्यथा न आ जाय।

× × ×

विश्वजगत् विश्वातीत जिसमें, जो इन सृष्ट रूपों में भी उपस्थित है। सत्यानुसन्धान ही होना—शान्ति की वही दिशा है। भगवत् परिवेश जितना अधिक हो—जन जनार्दन को लेकर, केवल चेष्टा है—मन को सत् शुद्ध क्रिया में लगाने के लिये।

× × ×

गुरुवार गुरुपूर्णिमा तिथि का पूर्ण योगायोग है—गुरु के आदेश को पूर्ण करने की केवल चेष्टा है। गुरु कभी भी शिष्य को छोड़कर नहीं रहते सर्वदा यही याद रखना है।

× × ×

काशीवास–आनन्द की बात है। यथाशक्ति चेष्टा है। विश्वनाथ अन्नपूर्णा का आश्रय मनुष्य का सौभाग्य है।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उपनिषदं ब्रूहि

"आचार्यदेवो भव"

सत्यकाम ने अपनी माता से पूछा—'माँ ! मैं ब्रह्मचर्य व्रत धारण करता हुआ आचार्य की सेवा में रहना चाहता हूँ । वे मुझसे नाम और गोत्र पूछेंगे; मैं अपना नाम तो जानता हूं; परन्तु गोत्र नहीं जानता । सो मेरा गोत्र क्या है बतला दो ।'

माता जवाला का हृदय अपने बेटे के इस मर्मभेदी प्रश्न से सहम उठा । अपनी अन्तरात्मा के गहन दर्द को छिपाती हुई सहज भाव से बोली—'मेरे प्यारे बेटे ! मेरी भरी जवानी में जब तेरा जन्म हुआ था तब स्वामी के घरपर अनेक अतिथियों की सेवा में लगी रहने के कारण मुझको तेरे पिता से गोत्र पूछने का समय नहीं मिला । मैं जबाला हूँ और तू सत्यकाम है, बस, मैं इतना ही जानती हूँ । आचार्य पूछें तो कह देना मेरा नाम सत्यकाम है । मैं जबाला का पुत्र हूँ ।'

बालक सत्यकाम कन्धेपर समिधा लेकर महाशाल महर्षि गौतम के आश्रम में गया और अभिवादन करके बोला—'हे गुरुदेव ! हे आचार्य जी ! मुझे अपनी सेवा में स्वीकार कीजिए ।' गौतम ऋषि ने बड़े स्नेह और प्यार के साथ पूछा—'वत्स ! तेरा गोत्र क्या है' ? सत्यकाम ने सहज व सरल भाव से कहा—'हे पितः ! मैं जबाला का पुत्र सत्यकाम हूं । स्वामी के घर पर आये हुए बहुत से अतिथियों की सेवा करते समय मेरी माँ की युवावस्था में मेरा जन्म हुआ । पितासे गोत्र पूछने का समय नहीं मिला ।'

सत्यकाम की सरलता और सत्यवादिता पर प्रसन्न होकर महर्षि गौतम बोले—'अरे सोम्य !—नैतदब्राह्मणो विवक्तुमर्हति—तू निश्चय ही ब्राह्मण का पुत्र है । ऐसा निष्कपट सत्य वचन ब्राह्मण को छोड़कर कोई नहीं बोल सकता । आओ ब्राह्मण बालक, मैं तुम्हारा उपनयन संस्कार करूँगा । शास्त्रानुसार यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न होने के पश्चात् स्वाध्याय प्रारम्भ हो गया । कुछ समय तक वेदाध्ययन कराकर एक दिन गौतम जी ने सत्यकाम से कहा—'बेटा ! इन चार सौ गौओं को चराने बनमें ले जाओ और जब तक इनकी संख्या पूरी एक हजार न हो जाय तब तक आश्रम में वापस न आना ।' गुरु की आज्ञा पाकर सत्यकाम प्रसन्न हो गया और गौओं को लेकर जहाँ खूब चारा-पीना मिलता हो ऐसे बनमें जाकर गौओं को चराने लगा । उधर ही वर्षों तक जंगल में कुटिया बनाकर गौओं को चराता हुआ प्रसन्न चित्त से गुरुकी आज्ञा पालन करने लगा ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गो सेवा में लगा सत्यकाम के दिन गुजरने लगे। धीरे धीरे एक दिन वह समय आ गया जब गौओं की संख्या पूरी एक हजार हो गई। उस समय गौओं के बीच विचरने वाला वृषभने आकर पुकारा—'सत्यकाम !' 'भगवन् क्या आज्ञा है'—सत्यकाम ने कहा। 'वत्स ! हमारी संख्या एक हजार हो गयी। अब हमें महर्षि गौतमके आश्रम पर ले चलो।' रास्ता चलते चलते वृषभ ने कहा—"सत्यकाम ! मैं तुम्हें ब्रह्मका उपदेश दूँगा।, उपदेश देकर वृषभ ने कहा—'उसका नाम स्वयं प्रकाश'।

दूसरे दिन सायं काल जंगल के स्वच्छ स्थान पर पड़ाव डालकर सत्यकाम ने स्नान सन्ध्या की और फिर अग्नि जलाकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठ गया। अग्निदेव ने बड़े प्यार से तीन बार पुकारा—'सत्यकाम' !

सत्यकाम ने उत्तर दिया—'भगवन् वैश्वानर ! क्या आज्ञा है ?'

अग्नि ने कहा—'हे वत्स ! ब्रह्म के दूसरे पाद का उपदेश करूँगा, सुनो !'

सत्यकाम ने कहा—'कीजिए भगवन् !'

उसके बाद भगवान् वैश्वानर ने ब्रह्म के द्वितीय पाद का उपदेश करके कहा—'तात ! सत्यकाम ! उस ब्रह्म का स्वरूप अनन्त है इसे हृदयमें धारण करो।' अग्निदेव शान्त हो गये।

सत्यकाम उस ब्रह्म के स्वरूप चिन्तन मननमें ध्यानस्थ हो गया। भोर हो गया। गौओं को हाँककर आगे चलता गया। फिर सायंकाल किसी शीतल जल वाले जलाशय के किनारे रात्रिवास के लिए ठहर गया। सन्ध्यावन्दन के पश्चात् अग्नि जलाकर पूर्वाभिमुख बैठ गया। उस समय दूर गगन से उड़ता हुआ सुन्दर हंस उधर आया और जलाशय के किनारे अग्निके सामने सत्यकाम के पास बैठ गया। सत्यकाम ने नमस्कार के बाद हंस से पूछा—'भगवान् ! सेवा के लिए आज्ञा करें।' हंस ने कहा—'वत्स सत्यकाम ! मैं ब्रह्म के तीसरे पाद का उपदेश करता हूं ! सुनो।'

'कीजिए भगवन्'—सत्यकाम के मुख पर आनन्द छा गया। हंस ने ब्रह्म के तीसरे पाद का उपदेश करके कहा—'वह ब्रह्म चित्स्वरूप ज्योतिष्मान् है।' इसे सुनकर सत्यकाम प्रसन्न हो गया। हंस भगवान् उड़कर चले गये। सारी रात ब्रह्मचिन्तन में बीत गई। सत्यकाम प्रातःकाल फिर गौओं को हाँककर आगे बढ़ा। सायंकाल में निर्जन स्थान पर पेड़ के नीचे विश्राम के लिए ठहर गया। अग्नि जलाकर पूर्वाभिमुख होकर ध्यानस्थ हो गया। इतने में एक जलमुर्ग़ आकर बड़े प्यारसे सत्यकाम को कहा—'वत्स ! मैं तुम्हें ब्रह्मके चतुर्थपाद का उपदेश करता हूँ—श्रवण करो।'

सत्यकाम ने कहा—'जैसी आज्ञा आपकी !'

जलमुर्ग ने सत्यकाम को ब्रह्म के चौथे पाद का उपदेश किया और फिर बोला—'वह ब्रह्म अमृतस्वरूप है।' इसके बाद वह जलमुर्ग वहाँ से चला गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सत्यकाम की समाधि लग गई। आनन्दसे विभोर हो गया। प्रातः काल सूर्योदय होने पर अपनी हजार गौओं के साथ महर्षि गौतम के आश्रममें पहुंचा। उस समय सत्यकाम के मुखमण्डल पर ब्रह्म तेज की लालिमा छिटक रही थी। उसके सारे अंग रोम रोम उस परात्पर परमेश्वर परब्रह्म की आनन्द लहरी में डुबकियाँ लगा रहे थे। सत्यकाम की सम्पूर्ण चिन्ताओंसे मुक्त दिव्य तेजसे भरी मुखकान्ति को देखकर महर्षि गौतमने कहा—'बेटा! तुम तो ब्रह्मज्ञानीके तुल्य दीख रहे हो। तुम्हें किसने उपदेश किया।'

सारी बातें सुनाकर सत्यकाम ने कहा—'हे आचार्य देव! आपके श्रीमुखसे उस ब्रह्म-विद्या को फिरसे सुनना चाहता हूँ।"

गौतमजी मुस्कराये। सत्यकाम को आशीर्वाद देकर कहा—'मेरे प्यारे पुत्र सत्यकाम! तुम्हें वृषभरूप वायुसे, वैश्वानर अग्निसे, हंसरूप सूर्यदेवसे और प्राणरूप जलमुर्ग से जो कुछ प्राप्त हुआ वही ब्रह्मतत्त्व है। अब तुम्हारे लिये कुछ भी जानना शेष नहीं है। तुम कृतकृत्य हो गये। ब्रह्मविद्या वरिष्ठ आत्माराम हो गये। आओ! मेरा स्नेहाशीर्वाद ग्रहण करो।'

धन्य है जबाला पुत्र सत्यकाम। धन्य है उसकी सत्यवादिता–गुरु सेवा। ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति के लिए अपने आचार्य में भगवद् बुद्धि—सेवा और निष्ठाकी भावना बहुत ही आवश्यक है। इसीलिए ऋषियों ने सच कहा है—"आचार्यदेवो भव"–"यथा देवे तथा गुरौ"।

"जैसा कर्म, वैसा फल। फिर भगवत्-चिन्ता से भय दूर हो जाता है। चाहे सत्संग में या एकान्त में हो, जैसा ही हो, पुकारना ही पड़ेगा, नहीं तो आवरण से छुट्टी नहीं।"

—श्रीश्री माँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शाहबाग लीला

"प्रत्यक्षदर्शी"

ठंडी के दिन थे। भोर हो गया। शाहवाग के गोल कमरे में खाली जमीन पर ही श्रीमाँ अपने भाव में विराज रही थीं। इस समय एक सज्जन श्रीमाँ के दर्शन के लिए शाहवाग में उपस्थित हुए और एकान्त में बैठी श्रीमाँ की मधुर झाँकी पाकर मन में बड़ा आनन्दित हुए। वे सज्जन पाण्डिचेरी आश्रम के श्री अरविन्द के अनुगृहीत हैं और विशेष स्नेहभाजन भी हैं। सरकारी लेखा-जोखा काम के लिए इधर ढाका में आये हैं और इसी सिलसिले में श्री ज्योतिषवावू के साथ उनकी भेंट हो गई। ज्योतिषवावू ने उनको श्रीमाँ के दर्शन के लिए इधर आने की प्रेरणा दी। उन्होंने श्रीमाँ के चरणकमलों में दूर से ही साष्टांग प्रणाम किया और हाथ जोड़कर सिर झुकाकर विनीत भाव से कहने लगे—"माँ ! युग-युग में अनेकानेक पार्षदों को लेकर अपने अनन्त भावों का खेल स्वीकार कर इस धराधाम पर आपका अवतरण हुआ और स्वर्गीय आनन्द से विश्ववासियों को भरपूर कर दिया। परन्तु आज यह क्या देख रहा हूँ ? अब इस निभृत एकान्त गृहभाग में घूँघट की आड़ में अपनी मुखमाधुरी छिपाये कुलवधू के वेष में हमें क्या छलने आई हैं ? हम आपकी लीला जान गये। आप इस दीन पर कृपाकटाक्ष का वरदान दीजिए।"

श्रीमाँ के दिव्य मुखकमल पर मन्द मुस्कान की लालिमा छा गई। आपने इशारे से सज्जन को बैठने को कहा। वे बैठ गये और एकटक श्रीमाँ की दिव्य चिन्मयी मूर्ति की ओर देखते ही रह गये। श्रीमाँ के श्रीमुख से निकला—"तुम लोग इस शरीर को दर्शन देने आये हो। बोलो क्या चाहिये ?" सज्जन सचेत होकर बोले—"माँ ! किस साधन से भगवान् प्रसन्न होंगे ?"

श्रीमाँ—"भगवान् के नामस्मरण करने से।"

सज्जन—"यदि नामस्मरण में रुचि न हो ?"

श्रीमाँ—"रुचि हो जाय इसके लिए ही नामस्मरण।"

सज्जन—"लगातार भगवन्नाम लेते-लेते यदि कभी आलस्य निद्रा तन्द्रा घेर लें ?"

श्रीमाँ—"नामस्मरण ! नामस्मरण !! तीव्र भाव से नामस्मरण !!!"

सज्जन—"नामस्मरण के समय चित्त में बहुत वाहरी बकवास की बातें उदित हो जाती हैं—इसका प्रतिकार क्या है ?"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीमाँ—"व्याकुल भाव से केवल नामस्मरण।"

सज्जन—"श्री भगवान् के नामस्मरण करते समय ध्यान भी करना ठीक है?"

श्रीमाँ—"तुमने कभी कहीं ठाकुरजी के दर्शन किये हैं? यदि कहो कि 'ना' तो फिर तुम्हारे हृदय में ठाकुरजी किस रूप से आकर विराजेंगे यह तो तुम जानते नहीं हो। यदि कहो कि शास्त्रानुसार वर्णित मूर्ति का ध्यान करेंगे—सो कर सकते हो। परन्तु इसमें एक बात है—भगवान् तुम्हारे ऊपर प्रसन्न होकर तुम्हारी भावना के अनुकूल रूप धारण कर दर्शन देंगे, तुम उससे तृप्त हो जाओगे। सबकी तृप्ति एक प्रकार से नहीं होती। इसलिए भगवन्नाम ही तुम्हारी ध्यान की वस्तु होगी और उस नामस्मरण से ही ध्यान की मात्रा घनीभूत होगी।"

सज्जन—"माँ! आप के मधुर वचनामृत से यह समझ में आ गया कि हमारा कर्त्तव्य है राम के झंकार से अपने मन प्राण चित्त को भरपूर करके रखना। दर्शनलाभ और तृप्तिदान इच्छामय परमेश्वर की इच्छा पर निर्भर है।

थोड़ी देर चुपचाप बैठे रहने के बाद वे फिर बोले—"माँ! इस दीन-हीन सन्तान के ऊपर थोड़ी सी स्नेहदृष्टि रखियेगा। मैं धन्य कृतकृत्य हो जाऊँगा। आपकी कृपा से भगवन्मार्ग में मेरी रुचि हो गई है। बीच-बीच में अवकाश लेकर पाण्डिचेरी जाकर श्री अरविन्द जी का सत्संग लाभ करने का सौभाग्य प्राप्त कर लेता हूँ। यह सब आपकी कृपा है। इस दीन कंगाल को भूलियेगा नहीं।"

श्रीमाँ को पुनः प्रणाम करके सज्जन कमरे से बाहर चले आये और शाहबाग की शोभा देख-देखकर श्रीमाँ का स्थानीय प्रभाव अनुभव करने का प्रयत्न करते रहे। इसके बाद कई बार वे श्रीमाँ के दर्शन के लिए शाहबाग में आये और ज्योतिषबाबू से श्रीमाँ की एक फोटो लेकर पाण्डिचेरी जाकर श्री अरविन्दजी को दिखाया। श्री अरविन्दजी ने फोटो देख कर कहा—"मैंने माँ को अपनी दृष्टि दर्शन किया। आप सदा ही सच्चिदानन्द सागर में भास रही हैं।"

इस घटना के कुछ दिन बाद एक दिन दोपहर के समय श्री अबलानाग महाशय एक एम० ए० श्रेणी के युवक छात्र के साथ लेकर श्रीमाँ के दर्शन के लिए शाहबाग आये। श्रीमाँ उस समय रसोई के बरामदे के एक कोने में अपने भाव में चुपचाप बैठी थीं। उन दोनों ने नीचे से भक्ति के साथ श्रीमाँ को प्रणाम किया। फिर अबलानाग महाशय कहने लगे—"माँ! इस युवक का जन्म गरीब घराने में हुआ परन्तु लिखने-पढ़ने में बहुत तेज है। बी० ए० की परीक्षा में वृत्ति भी मिली है। अभी ढाका विश्वविद्याछय में एम० ए० में पढ़ रहा है। परन्तु अपनी पढ़ाई के खर्च जुटाने के लिए दिन में काम करना पड़ता है। इसलिए पढ़ाई का काम अधिक रात्रि तक करना पड़ता है परन्तु आँखों में ज्वलन होने से रात को पढ़

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी नहीं पाता। कभी-कभी आँखों में अँधेरा छा जाता है। इसलिए मन में चिन्ता है। आपकी शरण में आया है कृपा कीजिए।"

फिर युवक स्वयं बोलने लगा—"माँ! आप हमारे ऊपर दया कीजिए। बरिशाल जिले के एक गाँव में मेरे वृद्ध माता-पिता अत्यन्त गरीबी से दिन पाल रहे हैं, और मेरे उपार्जन के ऊपर आशा लगाये बैठे हैं। मेरी आँखों की यह दशा है। खर्च भी नहीं है। क्या करूँ? मनमें विचार आता है पढ़ाई छोड़कर गाँव चला जाऊँ और उधर कहीं पढ़ाने की नौकरी लेकर वृद्ध माता-पिता की कुछ आर्थिक सेवा करूँ। मेरे कल्याण के लिए जो ठीक हो आप कृपा करके बता दीजिए।"

इस बात को सुनकर सहसा श्रीमाँ के श्रीमुख से ये शब्द निकल पड़े—"तुम अपने गाँव में माता-पिता के पास चले जाओ।" इस आज्ञा को पाकर उस युवक की खुशी की सीमा न रही। परन्तु फिर भी उसने साहस बटोर कर श्रीमाँ से कहा—"आपके आज्ञानुसार गाँव जा रहा हूँ। यदि उधर कोई भी नौकरी न मिली तो मैं स्वयं अपने माता-पिता का भारी बोझ बन जाऊँगा जो मुझे बहुत ही दुःखदायी होगा और शायद उस समय आपके ऊपर दोषारोपण की इच्छा होगी और भगवान् के पास आपके नाम पर शिकायत के रूप में दो-चार बातें अवश्य कहूँगा।"

वह युवक अपनी बात समाप्त कर पाया कि नहीं श्रीमाँ के श्रीमुख से अकस्मात् ये शब्द जैसे उछल कर निकल आये—"यदि नालिश करना हो तो इधर आकर ही करना पड़ेगा।" वह युवक सहम गया और बोलने लगा—"माँ! आप क्या भगवान् हैं जो नालिश के लिए आपके पास आना पड़ेगा।" इसे सुनकर श्रीमाँ का भाव बदल गया। श्री अबलानाग महाशय की तरफ देखकर बोलीं—"तुम तो जानते हो। (अपने शरीर की तरफ अँगुली दिखाकर) खेयाल जब जो अटपटांग आ जाता है कह देती हूँ।" श्रीमाँ की बात सुनकर बहुत ही प्रसन्न हो गये और प्रणाम करके विदा ली।

इस घटना के तीन साल बाद वह युवक ढाका रमणा आश्रम में श्रीमाँ से मिलने आया। परन्तु उस समय श्रीमाँ ढाका में नहीं थीं। माँ के भक्त श्री गणेशजी से पता चला कि वह युवक गाँव गया था। उधर उसको नौकरी मिली थी। तीन साल माता-पिता की खूब सेवा की। पीछे दोनों परलोक सिधार गये। युवक के मन में वैराग्य का संचार हो गया। शाहबाग की माँ की याद आई और व्याकुल होकर उनके दर्शन के लिए ढाका में आया। पीछे मनमें इतना वैराग्य आया कि सब छोड़कर अवधूत वेश में हरिद्वार की ओर चला गया। श्रीमाँ की क्षणिक कृपाकटाक्ष से विद्या का यश धन का यश संसार का आकर्षण सब छूट गये और मुनिवृत्ति से रहने लगे।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माता आनन्दमयी प्रसंग

(पंचम खंड)

श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त, एम० ए० बी० एल०

(दसों के हित के लिये एक का भोग काम्य है)

डा० मैत्र को माँ के साथ देखा। सुनने में आया ये भी माँ के साथ गये थे। जिन सज्जन से मिलने माँ गयी थीं सम्भवतः उनको कुष्ठ जैसी कोई कठिन बीमारी है। डाक्टर साहब माँ से कह रहे थे कि उनके शास्त्र के अनुसार यह बीमारी दुरारोग्य है। माँ ने कहा—"अगर ऐसी दशा हो तो दसों के साथ न रहकर उसका अलग रहना ही उचित है। एक के लिये दस का भोग होना उचित नहीं है। इस विषय में हरिबाबा से मैंने एक कहानी सुनी है। शायद पुस्तक में भी यह है। तुम लोग भी यह कहानी जानते हो : (मुझको) तुम भी यह कहानी जानते हो। लेकिन तुम्हें याद है या नहीं कह नहीं सकती। कहानी इस प्रकार है—एक आदमी ने कुछ काल तक साधन भजन करने के बाद कुछ भी अनुभव प्राप्त न कर सकने पर निश्चय किया कि एक बार अपने घर जाकर देख आऊँ। यह सोचकर वह अपने देश की ओर चला। रास्ते में एक साथी भी मिल गया। वह भी उसी के गाँव की ओर जा रहा था। दोनों एक साथ चलने लगे। चलते हुए सन्ध्या होने पर एक गृहस्थ के घर जाकर अतिथि हुए। गृहस्थ ने भी बड़े यत्न से सोने की थाली और कटोरे में नाना प्रकार खाद्य-सामग्रियों से उनका सत्कार किया। भोजन के उपरान्त सुन्दर पलंग पर सोकर उन्होंने रात बितायी। दूसरे दिन ऊषा काल में वे अपने गन्तव्य की ओर चल पड़े। रवाना होने के पहले साधुजी के साथी ने गृहस्थ के एक सोने का कटोरा उठा कर अपने साथ ले आया। साधुजी को यह जब मालूम हुआ तब उसने अपने साथी से कहा—"तुम कैसे आदमी हो ? इस गृहस्थ ने हमलोगों का इतना आदर सत्कार किया फिर तुम उनके सोने का कटोरा चुराकर अपने साथ लाये ?" तब उसके साथी ने उत्तर दिया, "तुम्हारा काम तुम करते हो, मेरा काम मैं करता हूँ।"

इसके बाद वे दोनों साथ चलने लगे। दिन के अन्त भाग में जब वे दोनों एक गाँव को पहुँचे तब उस गाँव में कोई उन्हें स्थान या भोजन के प्रबन्ध करने में राजी नहीं हुआ। इतना तक कि बहुतों ने गालियाँ देकर भगा भी दिये : तब वे दोनों ग्राम छोड़कर ग्राम की सीमा पर स्थित एक गौशाले में आकर उपस्थित हुए। विचार हुआ कि इसी गौशाले में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किसी प्रकार से रात बितानी होगी। लेकिन वहाँ भी वहाँ के रखवालों ने उनको रहने का स्थान देने से इन्कार कर दिया। बहुत अनुनय विनय से उन्होंने वहाँ एक कोने में अपना स्थान बना लिया। दूसरे दिन भोर में स्थान छोड़ने के पहले साधु के साथी ने उस सोने के कटोरे को वहाँ छोड़ आया। देखकर साधु को आश्चर्य लगा।

उस दिन चलते हुए उन्होंने निश्चय किया कि मार्ग में यदि गाँव मिले तो दोपहर में ही किसी गृहस्थ के घर जाकर अतिथि बनेंगे। बात भी वैसी ही हुई। दोपहर को वे एक गृहस्थ के घर उपस्थित हुए। उस घर में तीन प्राणी थे। पति-पत्नी और उनका एक शिशु पुत्र। पति पत्नी ने बहुत यत्न से उनकी सेवा की और उनके विश्राम के लिए बिछौना बिछा दिया लेकिन विश्राम न करते हुए वे फिर रवाना हुए। आते समय साधु के साथी ने गृहस्थ के एकमात्र शिशु पुत्र को गला दबाकर मार डाला। यह देखकर साधु के मन में भयंकर सन्देह हुआ। उसने साथी से पूछा "क्या तुम मानव या दानव हो? जिन्होंने हमारी इतनी सेवा की तुमने उनके एक मात्र पुत्र की हत्या कर डाली? तुम्हारे साथ जाना भी मुझे उचित नहीं है।" लेकिन साथी ने पहले जैसा धीरज से उत्तर दिया—"तुम्हारा काम तुम करते हो, मेरा काम मैं।"

साधु भी कोई उपाय न देखकर फिर उसी के साथ चलने लगा। इस प्रकार चलते हुए नदी के किनारे आकर एक सुन्दर बालक को देखा। बालक को देखते ही उसके साथी ने उसे पकड़ा और उसका गला दबाकर मार डाला—और उसके हाथ से एक कागज छीनकर उसे नदी में बहा दिया। यह देखकर साधू का दिल घबड़ा उठा। उसने निश्चय किया कि ऐसे साधु के साथ वह एक कदम भी नहीं जायेगा। जो इस प्रकार एक एक कर दो की हत्या कर सकता है वह दानव के सिवा और कुछ नहीं है। यह सोचकर उसने अपने साथी से कहा—"या तो तुम अपने आचरण का कारण क्या है बताओ, नहीं तो अपना पथ देखो। मैं और तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगा।" यह सुनकर उसके साथी ने कहा "तब सुनो, मैं ने क्यों ऐसा किया। जिस गृहस्थ के सोने का कटोरा मैंने लिया था, वह अतिथिवत्सल है, सन्देह नहीं, लेकिन कैसे सेवा करनी चाहिए उसका तरीका वह नहीं जानता है। अतिथि की सेवा करने के लिए अतिथि के भाव के अनुकूल सेवा होनी चाहिए। साधु को सोने की थाली में खाना परोसना तथा कीमती पलंग पर सोने का प्रबन्ध करना जरूर साधु के भाव के अनुकूल सेवा नहीं। इसीलिए उनका सोने का कटोरा साथ ले आया था। इसके बाद आगे कभी वे साधु के पास कोई कीमती वस्तु न लायेंगे। जिस गाँव में हम लोग भोजन तथा रहने का स्थान प्राप्त न कर सके, अन्त में गौ-शाला में जाकर हमलोगों को रात बितानी पड़ी, उस गाँव के लोग अतिथि सेवा करना ही नहीं जानते। वहाँ मैं सोने का कटोरा इसलिए छोड़ आया कि वे लोग जब देखेंगे कि एक रात के लिए अतिथि को थोड़ी जगह देकर ही सोने का कटोरा मिला, तो विशेष लाभ की आशा से

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वे भविष्य में अतिथि की सेवा के प्रति अधिक सावधान रहेंगे और उनका आदर सत्कार करेंगे। जिस गृहस्थ के एक मात्र पुत्र की हत्या की पहले वे लोग बहुत धर्मशील थे। पुत्र प्राप्त करने के पहले पति-पत्नी दोनों सीताराम का सेवा पूजन करते थे, निरन्तर भगवान् के नाम कीर्तन में लीन रहते थे, लेकिन इस पुत्र की प्राप्ति होने के बाद उनका धर्मभाव चला गया। अब पुत्र को लेकर सदा मत्त से रहते हैं। इसीलिए उनके पुत्र को मार आया। इसके बाद फिर वे भगवान् की सेवा पूजन आरम्भ करेंगे। अब जिस बालक की हत्या की, इसके हाथ का कागज ही उसका कारण बतला देगा। इस देश के राजा के पुत्र को मारकर इसे राजा बनाने का षड़यन्त्र रचा गया था। यह अगर राजा होता तो प्रजाओं की दुर्दशा का अन्त न होता। जहाँ एक के विनाश से दसों की रक्षा होती है वहाँ एक की रक्षा करना श्रेयस है।

यह कहानी कहकर माँ उठ खड़ी हुईं। हम लोग भी प्रणाम के उपरान्त घर चले आये।

पुस्तक देखकर योगाभ्यास का परिणाम

चैत्र ९, बुधवार [२३।३।४९] आज दस बजे माँ के हाल में आने पर डा० मैत्र ने माँ को कई कविताएँ पढ़कर सुनायीं। उनमें उनकी अपनी लिखी कविताएँ भी थीं। इसका पाठ आरम्भ होते ही मेरे पीछे शब्द सुनकर उधर ताककर देखा कि मि० पेतित कुछ आवाज करते हुए गिर गये, उनके मुँह से फेन भी निकल रहा था। रोग का लक्षण मृगी (मूर्छा) जैसा मालूम हुआ। वहाँ जो लोग उपस्थित थे वे साहब की सेवा करने लगे। माँ ने साधन ब्रह्मचारी और परमानन्द स्वामीजी को बुलाने कहा। मैं उन्हें बुलाने ऊपर गया। साधन ब्रह्मचारी दादा को डाक्टरी शास्त्र का ज्ञान था। उन्होंने साहब की हालत देखकर कहा कि यह मृगी रोग न होते हुए भी वैसा ही कुछ है। साहब को Smelling Salt सुँघने दिया गया और उसके प्रयोग से उनकी चेतना धीरे धीरे आने लगी। साहब की इस हालत को देखकर माँ ने कहा—"पुस्तक देखकर योगाभ्यास करने के परिणाम से इसकी ऐसी दशा हुई। पहले भी ऐसा हुआ था, लेकिन आज जैसा इतना प्रबल नहीं हुआ था। पंजाब में पाँच छः दिन अचेत अवस्था में था। उसी हालत में, चलना, फिरना, खाना, पाखाने जाना आदि होता था। एक दिन मैंने देखा कि यह रात का वस्त्र पहनकर दाढ़ी बनाने के लिए मुँह में साबुन लगा रहा है और हँस रहा है। यह देखकर मैं ने उसे तुरंत सुला देने को कहा। उड़िया बाबाजी इसके मस्तक पर हाथ फेरने लगे और तुरंत इसकी चेतना लौट आयी। साहब का विश्वास है कि उड़िया बाबाजी के स्पर्श से ही इसका मोहभाव छूट गया। परमानन्द का ऐसा विश्वास नहीं है। साहब से जब उसकी हालत के बारे में पूछा गया तो उसने कहा कि वह अब भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अवीसिनिया में ही है और पंजाब में जो कुछ उसने देखा स्वप्न मात्र है। इस प्रकार जो फिट होना और मृगी की बीमारी जैसे सब लक्षण प्रकट होना ये सब गुरु के उपदेश बिना योग अभ्यास का फल है। इसलिए मैं किसी को कुछ करने को नहीं करती, केवल नाम करने को कहती। नाम करते हुए स्वभाव से जो हो जाता है वह ठीक है। गुरु जब शिष्य को कुछ करने को कहते हैं, वे उसकी प्रकृति की ओर लक्ष्य रखकर देते हैं, अतः उससे क्षति नहीं होती। साहब को मैंने ध्यान करने से निषेध किया. लेकिन तिस पर भी, वह इतने दिनों की आदत छोड़ नहीं सकते। ३० साल तक संयमी रह कर जिसका अभ्यास किया सहसा उसे त्याग देना भी कठिन है। इसलिए उसकी यह हालत।"

साहब की इस घटना से पाठ या कीर्तन न हो सका। १२ बजे हम लोग माँ को प्रणाम करते हुए चले आये।

प्रार्थना के बल

स्काटलैण्ड के ग्लासगो नामक स्थान में एक छः वर्ष की बालिका कैंसर रोगग्रस्त थी। सभी प्रमुख चिकित्सकों ने इस बात की घोषणा कर दी थी कि 'बच्ची अब एक सप्ताह की मेहमान है' उसका अन्त समय निकट जानकर उसकी माता फ्रांस के रोमन कैथेलिक चर्च में उसे ले गयी। लोगों के आश्चर्य का उस समय ठिकाना न रहा, जब उक्त लड़की वहाँ से तन्दुरुस्त होकर घर लौटी। अब उसे कैंसर की कोई शिकायत नहीं है। वह सामान्य लोगों की भाँति ही रहती है। उसने खेलना भी प्रारम्भ कर दिया है और वह स्कूल भी जाती है। ग्लासगो में उसकी चिकित्सा करने वाले डाक्टरों का भी कहना है कि वर्त्तमान चिकित्सा-पद्धति द्वारा इसका इलाज असम्भव था, लेकिन आश्चर्य है कि वह कैसे इस घातक रोग से छुटकारा पा सकी। इसे एक करिश्मा ही कहा जायगा कि चर्च में जाने पर केवल प्रार्थना के बल पर ही उसकी हालत बिना किसी चिकित्सा के सुधरने लगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मातृ-सत्संग

श्री स्वामी भागवतानन्द गिरि

स्थान : त्रिवेणीतट, अर्ध कुम्भ मेला, प्रयाग
ता० १ फरवरी १९४८—माघ कृष्णा सप्तमी

प्र०—कुम्भ मेला का माहात्म्य क्या है ?

माँ—कुम्भ माने क्या ? घड़ा ! अपना अपना घड़ा भर लेना चाहिये । त्रिवेणी स्नान माने क्या ? अपना घड़ा भर लो ।

श्री गोपाल ठाकुर:—अर्धकुम्भ माने कुम्भका अर्धमेला है क्या ? कुम्भ माने जहाँ कुम्भ मेला होता है ।

एक भाई—एक संन्यासी महात्मा से सुना है कि जब देवता लोग और दानव लोगों ने मिलकर अमृत मंथन किया था उस समय समुद्र मंथन से अमृत का घड़ा लेकर धन्वन्तरि महाराज निकले थे । उस अमृत के घड़े को दानवों ने छीन लिया था । उस समय अमृत के कलशको लेकर भारतवर्ष में चार जगह पर रखा गया था । उस समय जहाँ जहाँ कलश रखा गया था वहाँ वहाँ अमृत गिरा था इसलिये आजकल भी भारतवर्ष में हर १२ वर्ष के बाद प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में कुम्भ मेला होता है ।

माँ—शास्त्रों में जिन जिन बातों का उल्लेख आता है उन सब से यह शरीर का कोई मतभेद नहीं है । सबका मत ही यह शरीर का मत है । किसी किसी समय में इस शरीर से जवाब नहीं आता है । हर समय हर बात का जवाब नहीं आता है । यह शरीर तो एक ढोल है—जो जैसा बजावेगा वैसा सुनेगा ।

प्र०—माला रखने की क्या आवश्यकता है ? ऐसे ही बिना जप संख्या रखे असंख्य जप क्यों न करें ?

श्री गोपाल ठाकुर:—नित्य कर्तव्य के हिसाब से संख्या रख कर जप करना अच्छा है ? जप करते करते अभ्यास पक्का हो जायेगा तब जप भी असंख्य होगा ।

प्र०—तुलसी की माला और रुद्राक्ष की माला में क्या फर्क है ?

माँ—रुद्राक्ष की माला से शैव भक्तों और शाक्त साधक लोग जप करते हैं । वैष्णव लोग तुलसी की माला से अपना जप करते हैं । शिवजी को सफेद चन्दन और सफेद फूल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्यों चढ़ाते हैं ? शक्ति माने माँ दुर्गा या काली माँ को रक्त चंदन और लाल फूल की माला से पूजना क्यों होता है ? हर बात में विशेष तत्त्व रहता है। इसलिये तुलसी की माला की और रुद्राक्ष की माला की शक्ति में बहुत अन्तर है, बहुत किसम की माला बनती है। रुद्राक्ष, तुलसी, स्फटिक, रक्त चंदन, सफेद चंदन की माला बनती है। माला का प्रत्येक बीज भगवन्नाममय है ! और नाम स्वयं ब्रह्म है। ऐसा कहने में आता है कि यह तो भगवान् का नाम ब्रह्म का मंदिर है अर्थात् वहाँ पर भगवान् के नाम का जप होता है। जो लोग मंत्र जप करते हैं उनके लिये भी विशेष नियम होता है कि कैसे मंत्र जप किया जाय ? तुलसी की माला क्यों होती है ? तुलसी को भगवान् श्री विष्णु के श्री चरण कमलों में चढ़ाया जाता है। पद्म के बीज की माला होती है। पद्म के फूल भी भगवान् के ऊपर चढ़ता है। महाशंख की माला भी होती है और इससे भी मंत्र जप करते करते शक्ति जागृत होती है। भिन्न भिन्न मालाओं के जपने से भिन्न भिन्न अर्थ निकलता है। शास्त्रों में क्या लिखा वह तो सब कुछ जानते हो ? मनमाला, करमाला ? भिन्न भिन्न मालाओं की बात आती है। बाह्यमाला फिरते फिरते वही माला मनमाला हो जाती है। जैसा कि कभी कभी होता है कि माला जपते जपते माला कब गिर गई उसका भी पता नहीं लगता है। लेकिन इससे जप बंद नहीं होता है। जप तो चालू ही रहता है। किसी के घर में एक अतिथि आया था। अतिथि नारायण का स्वागत सत्कार करके अच्छी तरह से भोजन कराके सुला दिया। अतिथि भगवान् को सुला कर-वह व्यक्ति जप करने बैठा। अतिथि के कमरे में से जो कोई आवाज आ रही है-उसमें-'हरे कृष्ण' की ध्वनि आ रही है। अतिथि श्वास ले रहा है उस श्वास में भी 'हरे कृष्ण' जैसी ध्वनि निकल रही है। ऐसे जप करते करते जब सब हृदय ग्रंथि खुल जाती है तब अपना जप ही सर्वत्र, सब चीजों में सुनता है ग्रंथि भेद होता है तब नस नस में जप होता है। सारे शरीर में जप शुरू हो जाता है। अतिथि महाराज तो यहाँ पूर्ण निद्रामें हैं लेकिन उस अवस्था में भी उनके भीतर अखण्ड जप चल रहा है उनके शरीर में अपने आप अखण्ड जप चल रहा है। इसी को ही अजपा जप भी कहते हैं। इसलिए प्रत्येक साधक को अपने मंत्र को जागृत करना चाहिये। मंत्र जागृत करने के लिये किसी किसी को माला से भी सहायता मिलती है। भगवान् को पाने के अनन्त उपाय हैं। इस शरीर ने एक बात किसी से सुनी थी। एक भाई माला करते करते बहुत थक गये। उन्होंने सोचा कि मैं अब मन से जप करूँगा गुरु जी ने कहा,—"अभी तेरी इच्छा न हो तो अभी जप मत करना। जब इच्छा हो तब जप करना"-इतने में माला अपने आसन से नीचे गिर गई। गिरने से सब दाना अलग हो गया। उस समय उसने देखा कि प्रत्येक दाने में भगवान् की मूर्ति के दर्शन हुए। शिष्यजी ने सारे दाने इकट्ठे कर के रख लिये।

प्र०—वैष्णव लोगों को गले में माला क्यों रखनी चाहिये ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ—हर स्थान में हर समय में जिसको भगवान् विष्णु का सर्वत्र दर्शन होता है—वैसी एकमात्र श्रद्धा वैष्णव हैं।

प्रश्न—स्त्रियों को तुलसी और रुद्राक्ष की माला पहनने को मना क्यों है ?

माँ—अपना अपना श्रीगुरुदेव जिसको जैसा माला जपने को कहे वैसा ही करना चाहिए।

डा० पन्नालाल—माँ को उद्देश्य करके उसने कहा, 'किसी भक्त ने माँ को खूब गरम खीर खिला दिया था।'

माँ—इस शरीर को गरम खीर खिलाने से इसका मुख तो जला नहीं—लेकिन खीर खिलानेवाले का मुख जल गया। यह शरीर तो खूब गरम होने से भी आनन्द से खा लिया। लेकिन उन्होंने तो फेंक दिया। इस शरीर ने दीदी से कहा,—इस शरीर ने तो गरम खीर खा ली थी। दीदी ने समझा कि माँ इतना प्रेम से खीर खिला रही इसलिए खीर को मुख में डाला, कोई कहेगा, यह तो बात ठीक नहीं है। इस शरीर का तो जिस समय जो ख्याल होता है वह अपने आप हो जाता है। इसलिए भगवान् को जब भोग लगाना हो तो भोग को ठीक तरह से ठंडा करने के बाद ही भगवान् को अर्पण करना चाहिए। भगवान् की आत्मवत् सेवा करनी चाहिए।

प्रश्न—अपना कलश—कुम्भ कैसे भरना चाहिए ?

माँ—अपना कुम्भ भरने का उपाय मिलना चाहिए।

श्री गोपाल ठाकुर—हम सब लोग कुम्भ मेला में हैं। भारतवर्ष का परम पवित्र तीर्थ प्रयागराज में त्रिवेणी के तट पर हैं। करुणामयी माँ भी साथ रूप से हम लोगों के बीच में हैं। इसलिए! माँ! कृपा करो—दया करो। कैसे हम सब लोग अपना अपना कुम्भ भरें ?

माँ—श्री त्रिवेणी में—गंगा कहो—जहाँ कहो वहाँ अपना कुम्भ डालने से भर जायेगा। कुम्भ को उल्टा करके रखोगे तो भरेगा नहीं वरन कुम्भ प्रवाह में बह जायेगा। इतना दूर कपट करके अपने कुम्भ को लाए हो। "मैं" लाया हूँ—ऐसा सब लोग समझते हैं। 'मैं' पन का अभिमान छोड़ दो तो कुम्भ भर जायेगा। तुमको पता भी नहीं चलेगा और अपना अपना कुम्भ परिपूर्ण भर जायेगा। एक अंधा मनुष्य भगवान् श्री बदरी नारायण के श्री श्री चरण कमलों का दर्शन करने के लिए पैदल कष्ट उठा कर जा रहा था। सबको आश्चर्य हो हो रहा था कि यह अन्धा मनुष्य इतना कष्ट उठाकर श्री बदरी नारायण की यात्रा में जा रहा है। उनसे किसी भाई ने पूछा,—"अरे सूरदासजी महाराज, आप अन्धे हैं। भगवान् श्री बदरीनारायण के दर्शन कैसे करेंगे ?" अन्धे यात्री ने कहा—"मैं आँख से दर्शन तो नहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर सकता हूँ। लेकिन भगवान् बदरी नारायण कृपा करके मुझको तो देख सकते हैं न ? अपने में जितनी शक्ति हो सब शक्ति को लगा कर यहाँ से अपना अपना कुम्भ भर लेना चाहिए। इसके बाद माँ के आदेश से ब्रह्मचारी श्री आत्मानन्द जी ने कीर्तन शुरू किया। आप ओष्ट्रायन पहने हैं। बहुत वर्षों से श्री माँ के आश्रम में रहते हैं। उनके पूर्वाश्रम का नाम था—Miss Blancca, उन्होंने सुन्दर भाव से अति मधुर कीर्तन किया :—

भजो राधे कृष्ण, गोविंद, गोपाल,
गदाधर गिरिधारी ॥
देवकीनन्दन, गोकुलचन्द्रमा।
जनार्दन, जगवन्दन हे—॥
भजो राधेकृष्ण । १ ।
परब्रह्म परमेश्वर ईश्वर, ।
अलख निरञ्जन अविनाशीहर ॥
अवधविहारी, श्रीबनमाली, ।
राधावर रघुनन्दन हे ॥
भजो राधेकृष्ण । २ ।
दीनदयाल, दामोदर, रघुबर,
यदुवर, जगचिंतामणि धनुर्धर ॥
परशुराम, श्री रासविहारी, ।
नटवर नट यदुनन्दन हे ॥
भजो राधेकृष्ण । ३ ।
नारायण, नरसिंह, नरोत्तम, ।
पुरुषोत्तम, परमानन्द, माधव ॥
बालमुकुन्दम्, आनन्दकन्दम्, ।
सियाशरण करवंदन हे ॥
भजो राधेकृष्ण । ४ ।

प्रयाग—त्रिवेणीतट—अधकुम्भ मेला।

ता० २ फरवरी १९४८ माघकृष्ण अष्टमी, सोमवार।

भारतवर्ष के परम प्रसिद्ध संत श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के विशेष आदेश से कल से माताजी के कैम्प में अखण्ड कीर्तन शुरू हुआ है। सत्संग मंडप के पास में एक छोटा मंडप तैयार किया गया है। उसमें एक कुर्सी पर माँ के और भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी के फोटो को सुन्दर करके सजाया गया है। भगवान् श्री गोपाल जी का विग्रह भी यहाँ ही है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रातः करीबन ९ बजे माँ कीर्तन मंडप में आकर बैठ गयी हैं। कीर्तन मंडप में भगवन्नाम का अखण्ड कीर्तन शुरू हो गया है। अखण्ड कीर्तन महामंत्र का चल रहा है।

अखण्डकीर्तन—महामन्त्र

"हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे हरे राम, हरे राम, राम राम हरे हरे" कीर्तन शुरू कराके 'माँ' सत्संग मंडप में आकर बैठ गयीं। माँ के आने पर मातृसत्संग शुरू हो गया।

प्रश्न—शठं प्रति शाठ्यम् क्यों नहीं करना चाहिये ?

माँ—शठ के साथ शठता करने जाओगे तो तुम खुद दुःख में पड़ोगे। तुम खराब हो जाओगे। तुम अच्छा मनुष्य होने की कोशिश करो। कुत्ता यदि काट खाय तो क्या हम उस कुत्ता को भी काटने दौड़ें ?

प्रश्न—यदि कुत्ता काटने आये तो जरूर डंडा मारना पड़ेगा।

माँ—किसके साथ में कैसे व्यवहार करना चाहिये—इसके लिये भी तो नियम बने हुए हैं।

× × × ×

माँ ने कीर्तन करने का आदेश दिया। कीर्तन शुरू होते ही माँ ने अपने ख्याल से बहुत सुमधुर कण्ठ से कीर्तन शुरू कर दिया। माँ के सुमधुर कंठ ने समस्त सभा को मन्त्र मुग्ध जैसा कर दिया है।

माँ—गा रही हैः—

गोपाल, गोपाल, गोपाल................जय जय।
गोविन्द, गोविन्द, गोविन्द............जय जय॥
राधे राधे गोविन्द जय जय।
राधे राधे गोविन्द जय जय॥

× × × ×

कीर्तन पूरा होने के बाद आज शाम को श्री रामकृष्ण मिशन वाले स्वामी सदाशिवानन्द जी महाराज—जो स्वामी विवेकानन्द जी महाराज के शिष्य हैं—आप ज्यादातर श्री भक्त महाराज के नाम से भारतवर्ष में सर्वत्र प्रसिद्ध हैं—आज श्री भक्त महाराज जी श्री श्री माँ के दर्शन के लिये आये हैं। माँ और स्वामी जी—भक्त महाराज के बीच में बहुत सुन्दर वार्तालाप हुआ। श्री श्री माँ ने भक्त महाराज से कहा—"पिताजी का यह छोटी बच्ची के प्रति अपार स्नेह है—प्रेम है—इसलिये—पिताजी दर्शन देने आये हैं। भक्त महाराज

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साक्षात् भक्ति के अवतार मालूम हो रहे हैं। जाते समय माँ को और मातृभक्तों को सबको प्रणाम करते-करते चले गये।

प्रश्न—एक व्यक्ति शास्त्र के नियमानुसार रुद्री पाठ करता हैं और दूसरा बिना कोई नियम माने रुद्री पाठ कर रहा है—इसमें क्या कोई दोष है ?

माँ—इस शरीर ने सुना है कि नाम जप ठीक नियम से नहीं करने से नामापराध होता है। एक छोटा वच्चा जव पढ़ना शुरू करता है तव उसको कुछ नहीं आता है—बहुत गलत लिखा है तब भी हम लोग उस बच्चे को उत्साह देने के लिये उसको कहते हैं कि तुमने अच्छा लिखा है। लेकिन जब बच्चा बड़ा होता है तब दोष दिखाते हैं, जिससे वह सावधान रहे, और आगे भूल न करे। स्कूल में उसका नम्बर पीछे रह जायेगा। इससे बच्चे लोग सावधान होकर ही ठीक-ठीक लिखने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु वही बच्चा जब खूब छोटा होता है तव उसको दोष नहीं दिखाया जाता है क्योंकि उस समय वह अबोध है सच्ची शिक्षा पाने की कोशिश करो। यह बात सुनकर तुम क्या समझे इस पर एकान्त में विचार करो। क्या तुम्हारे प्रश्न का जवाब मिल गया ?

प्रश्न :—हा, माँ आपकी कृपा से समझ गया हूँ।

●

बिना टिकट का यात्री

"एक बार यह शरीर रेलवे में यात्रा कर रहा था। इस शरीर के साथ में जो भाई थे, उससे कह रखा था कि इस शरीर के लिये रेल टिकट लेना नहीं। बिना टिकट ही गाड़ी में वैठ गई। कुछ स्टेशन जाने के बाद एक टिकट-चेकर आया और मुझसे टिकट माँगा। इस शरीर ने उससे कहा—'पिताजी, इस शरीर का टिकट तुम ही ले लो, और तुमही उसको चेक कर दो।' इस शरीर की ऐसी बात सुन कर, बिचारा बिना टिकट ही ले गया। दूसरा स्टेशन आने पर टिकट-चेकर इस शरीर को अपने घर ले गया और खूब खिलाया और नया कपड़ा भी पहना दिया।"

—श्री श्री माँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माँ की ७५ वीं जन्म जयन्ती

विजनप्रभा देवी

इस बार श्री श्री माँ की शुभ जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में पुण्यतीर्थ वाराणसी धाम जाने की विशेष इच्छा हुई। निश्चय किया कि मैं, मेरे स्वामी दोनों जायँगे। पहले से ही हमारी माँ के श्री चरणों में दिनरात प्रार्थना चलने लगी—"माँ, हम तुम्हारे श्री चरणों में पहुँच सकें कोई बाधा विघ्न न उपस्थित हो।" निर्धारित दिन हम दोनों रवाना हो गए और निर्विघ्न वाराणसी पहुँच कर मालपत्र लेकर रिक्शा से आश्रम पहुँचे। मैं रिक्शा में बैठी रही। मेरे पति पानूदा के आफिस में उपस्थित हुए। उन्हें हृदय की अस्वस्थता के कारण सीढ़ी चढ़ना मना है इसलिए पानूदा को पहले ही एकतल्ला कमरे के लिए लिख दिया था। न्यू कौलोनी में एक सुन्दर स्कूल में नीचे का कमरा हमें मिल गया। कमरे सब साफ सुथरे थे। भीतर दालान, स्नानागार, शौचागार इत्यादि की खूब अच्छी व्यवस्था थी। भीतर दो नल और एक कम्पाउण्ड में चार-पाँच कमरे थे। स्त्री और पुरुषों की अलग-अलग व्यवस्था थी। हम भी कपड़े बदल कर मातृदर्शन के लिए फिर आश्रम गए। अस्पताल के पास बड़ा विशाल पंडाल लगाया गया था। कितना सुन्दर पंडाल था। उसकी अपूर्व सुन्दरता को देखकर मैं अवाक् रह गई। शिल्पी ने पंडाल के नीचे हल्का बदामी तथा पीले रंग व सफेद रंग के सम्मिश्रण से एक अपरूपता की सृष्टि की थी। कहीं-कहीं तो हल्के नीला तथा सफेद रंग के कपड़ों से बनी हुई लहरें शोभायमान थीं, और कहीं (सिकुड़े गये) नीले रंग के विराट कमल के फूल शोभित थे। श्री श्री माता की ७५ वीं (जन्म) जयन्ती पर मैंने पंडाल की जो शोभा देखी थी उससे मैं मोहित हो गई। नियन लाइट चारों ओर जल रही थी। दो मंच थे। एक पर रामलीला व रासलीला हुआ करती थी, और दूसरे पर दाहिनी ओर एक बिछौने पर तकिया टेकती हुई श्री श्री माँ अर्द्धशायित अवस्था में रहती थीं। उनके पास श्रेणीबद्ध रूप से रखे हुए जोगिया रंग के (साटिन के) आसनों पर साधु संत विराजित रहा करते थे। उन्हीं दिनों हम लोगों को श्री त्रिपुरारि चक्रवर्ती के श्री मुख से श्री महाभारत की अमृतमय व्याख्या सुनने का सौभाग्य भी हुआ था। मंच के बीच में श्री रामसीता की युगलमूर्ति शोभित थी। वह मूर्ति चारों ओर से आलोक मालाओं के द्वारा इस प्रकार प्रकाशित थी कि अगणित भक्तों के लिए जी भरकर भगवान् के दर्शन पाने में किसी प्रकार की बाधा नहीं थी। दूर ही से श्री श्री माँ को प्रणाम किया। मन ही मन मैंने कहा, "मेरी करुणामयी माँ मुझ पर कृपा करके तुमने मुझे अपनी इस शुभ पवित्र जन्मतिथि के अवसर पर बुलाया है। केवल तुम्हारी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कृपा से ही मैं इस अवसर पर आ सकी। माँ, तुम मेरा प्रणाम स्वीकार करो। श्री श्री माता आनन्दमयी के चरणों पर प्रणाम करती हूँ और श्री सीता के विग्रह के चरणों पर, तथा समागत साधुमहात्माओं और जो जोगिया वस्त्र पहने आसन पर उपविष्ट थे, उनको मैं प्रणाम करती हूँ। मातृदर्शन के लिए समागत अगणित भक्त वृन्द चाहे वे राजा हों या रानी, धनी हों या दरिद्र सबको मैं प्रणाम करती हूँ।"

सबको प्रणाम करने के बाद सर उठाते ही मैंने देखा कि मेरी ओर देखती हुई मां मृदु मृदु हँस रही हैं। मैं समझ गयी कि मां की दृष्टि मुझ पर पड़ी है। अब और कोई चिन्ता नहीं। ऐसे ही समय पर मैंने भोजन के लिए घण्टाध्वनि सुनी। तब भोजन स्थान पर जाने के लिए उठी। रास्ते में अनेक भक्तों से मिली। वार्तालाप करते हुए आनन्द से स्वरूपदा के दफ्तर में नाम लिखवा कर हम सब भोजन के लिए पहुँचे। तालपत्र के आसन अच्छी तरह बिछे हुए थे। प्रत्येक आसन के साथ गिलास में पानी रखा था। बड़े आनन्द के साथ सब लोग खाने को बैठ गये। बड़ा अच्छा खाना बनाया गया था। बाबा विश्वनाथ व माता अन्नपूर्णा के राज्य में कितनी सुन्दर व्यवस्था है। बिना किसी नुक्स के किस प्रकार से इतने बड़े जन समागम के लिये सब प्रकार के प्रबन्ध होते जा रहे थे। मातृकृपा के बिना यह सब असम्भव है। मां की दृष्टि चारों ओर है। कोई विशृंखलता कहीं भी नहीं है।

भोजन के बाद पुनः सब पंडाल में आये। उस समय माँ के श्रीमुख से भगवदालोचना के साथ ही साथ कहानियों के रूप में नाना प्रकार की कथायें सबको सुनने को मिल रही थीं। तत्पश्चात् आरती शुरू हुई। श्री शोभन ब्रह्मचारी के अपूर्व कण्ठ का कीर्तन ध्वनित हुआ— "श्रीराम चन्द्र कृपाल भज मन हरण भवभय दारुणम्।" श्री कमलाकान्त ब्रह्मचारी ने आरती के पंचप्रदीप से आरती की। वह आरती कितनी अपूर्व थी। श्री श्री मां तथा साधु सब खड़े थे। विधिपूर्वक आरती के बाद प्रणाममन्त्र उच्चरित हुआ। अगणित नर-नारियों ने उसका उच्चारण किया। तत्पश्चात् उस समय के कार्यक्रम की समाप्ति हुई। दूसरे दिन के कार्यक्रम की सूचना श्री निर्मलानन्द जी ने माईक द्वारा घोषित कर दी। भीड़ के कारण श्री श्री मां व महात्माओं का यात्रा पथ विघ्नित न हो इस लिए जनता ने रास्ता छोड़ दिया था। हम सब अपने अपने वासस्थान पर वापस आये। आकर देखा कि हमारे परिचित बहुत से लोग उस कमरे में ठहरने के लिए आ गये थे और आ रहे थे। बंगाली तथा गैर बंगाली सबने मिलकर बड़े ही आनन्द से रात्रि व्यतीत की।

दूसरे दिन शीघ्रातिशीघ्र स्नान पूजा समाप्त कर हम आश्रम पहुँच गये। मां को समर्पित करने के लिए मैंने माला खरीदी थी। जी चाह रहा था कि प्रातः काल मां को माला देकर प्रणाम करूँ। मौका ढूँढ़ ही रही थी कि मां अन्नपूर्णा के मन्दिर में पहुँच गयीं। तब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माला देकर मां को प्रणाम किया। मां की प्रसादी-माला गले में पहनकर बाहर आते ही देखा कि नीचे चंडीमंडप के सामने अहरहः श्री श्री मातृ नाम कीर्तन चल रहा है। बाटूदा तथा उनके साथ और अनेक ब्राह्मण यज्ञ कुंड के सामने यज्ञ कर रहे थे। उस दिन यज्ञ की पूर्णाहुति थी।

पूर्णाहुति देखने के लिये बड़ी भीड़ हो गई थी। आँगन मानों लोकारण्य बन गया था। श्री श्री मां, श्री चैतन्य गिरि जी महाराज, श्री शरणानंद जी इत्यादि साधु महात्मा बैठे हुए थे। पूर्णाहुति हो जाने के पश्चात् श्री श्री माता व सन्तों के ललाट पर यज्ञ का टीका लगा था। मुझे इच्छा हुई कि दूसरे दिन मंगलवार को मैं नूतन वस्त्र इत्यादि द्वारा मां को पूजा करूँ। सांयकाल मैं बाजार गई और अपने पसन्द के अनुसार नारियल तथा अन्यान्य फल, मिश्री, माला इत्यादि पूजा की सामग्रियों को खरीद कर घर में लाकर रख दिया। लखनऊ से मैं माला, साड़ी, आरती के पंच प्रदीप, बत्ती इत्यादि पूजा की सामग्री अपने साथ ले आयी थी। यदि जन्म-दिन से कुछ पहले ही हमलोगों की पूजा न हो जाय तो बाद में आने वालों को आरती करने का मौका नहीं मिलेगा। इसलिये दूसरे दिन मंगल को सवेरे गंगा स्नान करने के बाद एक बोतल गंगाजल लेकर घर लौटी।

तत्पश्चात् पूजा की सब सामग्रियों को लेकर कन्यापीठ के ऊपर बरामदे में बैठी रही। दीदी ने कहा था "चंचल मत होना धीरज के साथ बैठी रहो।" मेरी जैसी और दस पन्द्रह बहिनें भी पूजा की सामग्री लिये बैठी रहीं। बैठे-बैठे हम सब मां की ही चर्चा करती रहीं। मैंने उस दिन मन में ठान लिया था कि मां के चलते-चलते रास्ते में मां की पूजा जैसे तैसे नहीं करूंगी। माँ के बैठने पर अच्छी तरह आरती करूँगी। मां तो प्रायः ही कहती हैं कि मैं तुम्हारी छोटी लड़की हूँ। तो यदि मैं सत्य ही मां की माता हूँ तो आज इच्छानुसार मैं अपनी छोटी सी लड़की की आरती करूँगी। इसकी मेरे मन में बड़ी ही आशा थी। प्रातः ८ बजे से पूजा सामग्री लेकर बैठी थी। एक बज गया था। मां कभी पंडाल में चली जातीं तो कभी अन्नपूर्णा के मन्दिर में और कभी अपने अनगिनत भक्तों की पूजा, माला, साड़ी इत्यादि जो जहाँ जिस प्रकार से, जिस भाव से दे रहा था, उनका ग्रहण कर रही थीं। मां मानो सर्व दिशाओं में आनन्दमयी रूप से विराजित थीं। कभी गोपाल मंदिर में, तो कभी मामा के घर में, फिर कभी नीचे चंडीमंडप में घूम-घूमकर पूजा ले रही थीं, और कृपा का वितरण करती फिर रही थीं। सब की बोली एक थी, केवल मां, मां। मां चाहिये, इस लिये विश्व जननी महामाया चारों ओर कृपा का वितरण करती हुई घूम फिर रही थीं। जब दोपहर हो गया, तब मैं और धीरज नहीं धर सकी।

हम सब माँ के कमरे के दरवाजे पर जाकर लाईन में खड़ी हो गईं। लछमी दीदी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ने कहा—विजनदी, दीदी भीतर से कह रही थीं—'अभी ठहरो, मत आओ। खैर, कुछ क्षण में माँ का स्मरण करती हुई कमरे में घुस गई। उस समय एक महिला माँ की आरती कर रही थी। वह माँ के मुँह में एक बड़ा बताशा दे रही थी कि दीदी ने उनको मना किया। उनकी पूजा समाप्त होते ही दीदी उनको लेकर दरवाजे तक पहुँचीं कि मैंने मौका पाते ही नई साड़ी माँ के चरणों पर रख दी। शरीर पर लपेटने से पहले ही माँ ने एक चढ़ाई हुई साड़ी मेरी गोद में दे दी। मैंने दो बड़ी मालायें माँ को तब तक पहना दीं। (उस दिन मेरे दो पोतों का—जो कि जुड़ुआँ थे—जन्मदिन था)। पुनः मैंने अपने हाथ से माँ के श्रीचरण की उँगली गंगाजल की शीशी में डुबोकर चरणामृत बना लिया। ललाट पर चन्दन का तिलक रच दिया, पंच प्रदीप जलाकर आरती का गाना गाकर अच्छी तरह आरती कर ली। मिश्री का छोटा सा एक टुकड़ा माँ के मुँह के पास ले जाते ही माँ ने मुँह खोलकर उसे ले लिया, और बड़े टुकड़े का प्रसाद बना दिया। तब मैं उठकर खड़ी हुई और माँ के मस्तक को अपनी छाती पर लगाकर माँ के मस्तक पर इष्ट नाम का जप कर दिया। मेरे मनमें ऐसा करने की भी बड़ी इच्छा थी। मैंने कहा, 'माँ तुम तो कहती हो कि तुम मेरी छोटी-सी बिटिया हो, इसलिये आज तुम्हारे जन्मदिन पर तुम्हारे मस्तक पर अपने इष्ट नाम का जप किया।' सुनकर माँ शिशु की तरह मेरी छाती पर मस्तक टेककर पड़ी रहीं, मानो एक छोटी लड़की हों। जप के बाद मैंने कहा, 'मां, तुम अच्छी तरह रहना।' तीन बार मैंने यह बात कही। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मेरी पूजा व मन की इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी।

अब दीदी ने मधुर हँसकर कहा, 'कहो भाई, 'तुम्हारा हो गया ?' मैं अब माँ की दी हुई माला गले में डालकर, प्रसादी, साड़ी, फल, मिठाई, पादोदक इत्यादि लेकर हृदय में अति आदर के साथ लगाकर घर ले आयी। मनमें हो रहा था मानो आज मैं विश्व को जीत आयी। मुझे आशा है कि हमारे इस लेख को पढ़नेवाले सब ही मुझे क्षमा करेंगे। इस रचना में त्रुटियाँ बहुत हैं। मुझे पढ़ना-लिखना नहीं आता, केवल माँ के लिये प्यार है, अत्यन्त प्रेम है। यही चरम सत्य वाक्य है। इसीलिये अपनी सहज भाषा में मैं माँ ही की बातें लिखती जा रही हूँ। बड़े-बड़े साधु महात्मा माँ के स्वरूप का वर्णन नहीं कर सकते हैं, केवल चेष्टा मात्र करते हैं। मैंने भी अपनी क्षुद्र बुद्धि के द्वारा माँ को जितना जान पाया उतना ही लिखने का प्रयत्न करती जा रही हूँ। मुझे माँ की असीम कृपा मिली है। उनकी दया का कोई आरपार नहीं है। यदि माँ मुझे अपनी छाती से चिपकाये न रखतीं तो न मालूम मैं किस अतल समुद्र में डूब जाती।

दूसरे दिन गोपाल मन्दिर में १०८ कुमारियों को सुन्दर रूप से सजाने की व्यवस्था

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुई थी। नयी साड़ियाँ पहनाकर पैर में आलता लगा दिया गया था। मस्तक पर रेशमी रिबन बँधाकर माथे पर चन्दन और आँखों में काजल लगाया गया था। माला इत्यादि पहना दी गयी थी। लड़कियाँ कितने सुन्दर तरीके से सजाई गई थीं। माँ के जन्मोत्सव पर कुमारी पूजा मुझे बहुत ही अच्छी लगती है। मैं भी बच्चों के पैर में आलता लगाने लगी। छोटी-लड़कियों के चरणों को आलता से रँगने का काम करना मुझे बड़ा ही अच्छा लग रहा था। बच्चे क्या प्रसन्न थे! किसी की साड़ी लाल थी, किसी की गुलाबी, किसी की पीली तो किसी की नीली और किसी की बदामी थी। मानो श्रेणीबद्ध रूप से चारों ओर प्रकाश डालती हुई देवियाँ बैठी थीं। देवी भगवती की तरह सजने के बाद कुमारियाँ उस स्थान पर लायी गईं जहाँ उनकी आरती तथा पूजा की व्यवस्था हुई थी।

पंडाल के भीतर गोलाकृति में उनके लिए आसन बिछाये गये थे। उस पर वे लड़-कियाँ बिठायी गई थीं। प्रत्येक के सम्मुख पत्तल रखी हुई थी जिसपर नाना प्रकर के व्यंजन इत्यादि तथा पूड़ी व पापड़ परोसे गये थे। साथ ही साथ 'दक्षिणा एक रुपया तथा फल व मिठाई रखी हुई एक एक छोटी स्टील की थाली भी रखी गई थी। चारों ओर खड़े होकर सबलोग कुमारी पूजा देखने लगे। अन्त में माँ आईं और एक-एक के मस्तक पर एक एक लाल कमल का फूल रखती गईं।

कुमारियों का जीवन ही सार्थक है। भगवती ने स्वयम् आकर भगवती के मस्तक पर पुष्प रखा। मानो गंगाजल से ही गंगा पूजा हो रही थी। उस दिन मन अत्यन्त ही प्रसन्न था। श्री श्री मां का जन्म दिन था। चारों ओर आनन्द की मानो बाढ़ आयी थी। एक ओर कुछ उत्सव हो रहा था तो दूसरी ओर और कुछ। एक उत्सव देखकर ही दूसरे को देखने के लिये भागना पड़ रहा था ताकि वह न 'मिस' हो जाय। कई एक छोटे लड़के 'बटु' बने थे। नई धोतियाँ उन्हें भी पहना दी गई थीं। नये कुर्ते व माला पहनकर बच्चे कितने प्रसन्न हो रहे थे। 'बटु' तथा 'कुमारियों' की आरती बड़े ही सुन्दर रूप से सम्पन्न हुई थी। दिन में भोजन इत्यादि समाप्त होने के बाद ही हमलोग जाकर बहुत पहले ही से मामा के घर के सामने उस यज्ञ कुण्ड के पास बैठ गये जहाँ श्री श्री मां की जन्म तिथि के उपलक्ष्य में चण्डी देवी का यज्ञ हो रहा था। उसी दिन चार बजे यज्ञ की पूर्णाहुति थी, जो कि हम सब देखना चाह रहे थे। कई ब्राह्मण तिल, जौ इत्यादि से उस कुण्ड में आहुति प्रदान कर रहे थे।

पूर्णाहुति के समय मां आ गईं। मां ठीक हमलोगों के सामने ही बैठी थीं। एक बहुत सुन्दर बड़ी माला मां को पहनाई गई। तत्पश्चात् एक लाल वस्त्र से नारियल को लपेट कर, लकड़ी की एक लम्बी कर्छी से मंत्रोच्चार के साथ घी डालकर आहुति दी गई। जिन्होंने पूर्णाहुति प्रदान की उनको छू कर मां बैठी रहीं। इसके बाद एक वृद्ध ब्राह्मण ने उठकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संस्कृत में कहा—"माँ, तुम तो विश्व विभूषण, जगत् की पालयित्री मां हो। फिर भी मैं ब्राह्मण हूँ, इसलिये तुम्हारे जन्मदिन पर तुम्हें आशीर्वाद देने का अधिकार मेरा है। मां, तुम शतायु हो, चिरंजीवी हो। इसी प्रकार और भी सुन्दर-सुन्दर शब्द-विन्यास के साथ उन्होंने पूजा की समाप्ति की। रात में आरती के बाद श्री निर्मलानन्द जी ने श्री श्री मां के शुभ जन्म तिथि उत्सव के दूसरे दिन का प्रोग्राम बता दिया।

दूसरे दिन हम बहुत जनों ने अन्नाहार नहीं किया। थोड़े से फल इत्यादि खाकर हम संयम के साथ रहे। आज मां की जन्मतिथि है, आज शुद्ध भाव से दिन व्यतीत करेंगे यही आशा मन में थी। प्राय: प्रतिदिन ही हम लोग श्रीमती छवि बन्द्योपाध्याय का अपूर्व कीर्तन सुना करते थे। हरिद्वार से महात्मा स्वामी गोविन्द प्रकाश जी आये थे। इसके अतिरिक्त श्री चैतन्य गिरिजी महाराज, स्वामी सर्वानन्द जी महाराज, श्री कृष्णानन्द जी महाराज, श्री अवधूत जी महाराज, श्री विष्णु आश्रम जी महाराज, श्री आनन्द स्वामी, श्री योगेश ब्रह्मचारी इत्यादि सन्त महात्माओं का समागम हुआ था। मां की शुभ जन्मतिथि के अवसर पर सब ही पधारे थे।

प्रतिदिन प्रात: ७ से लेकर ११॥ बजे तक रासलीला हुआ करती थी, तथा सायंकाल ३ से ६ बजे तक रामलीला। इन लीलाओं के देखने के लिये विराट जनता आती थी। पंडाल में बहुत से सीलिंग फैन होने के कारण सब ही को आराम से बैठकर लीला देखने का मौका मिला था।

पूज्य श्री हरिबाबा जी की परम प्रिय यह रासलीला उन्हीं की कृपा से अभी तक चली आ रही है। यह लीला इतनी सुन्दर तथा इतनी प्रगाढ भावमयी हुआ करती है कि मानो सही में भगवान् ही मर्त्य धाम में अवतीर्ण होकर हम लोगों को अपनी अपरूप लीला माधुरी का दर्शन करवा रहे हैं। जन्मतिथि की रात में भी महात्माओं के भाषण होते थे। बाद में बहुत देर तक श्री मां का गाना व कीर्तन चला। रात को बारह बजे तक मां की लीलायें चल रही थीं। तत्पश्चात् शोभन ब्रह्मचारी ने आरती का गाना आरम्भ किया तथा ब्रह्मचारी श्री निर्मलानन्द ने आरती शुरू की। उस दिन मैंने एक नई धोती पहनी थी। आरती लेने के बाद उस धोती के पल्ले को हाथ से छूकर मैंने उसमें एक गाँठ बाँधकर रखी थी। इच्छा थी कि घर लौटने के बाद सबसे उसका स्पर्श करवाऊँगी ताकि सबको आशीर्वाद मिल जाय। बड़ी श्रद्धा से मैंने रखा था। मैं नहीं जानती थी कि इसमें से ऐसी अलौकिक बात निकलेगी।[1] उस दिन की आरती सब ही को बड़ी अच्छी लगी थी। प्रणाम मंत्र के बाद

१. पद्मगंध की भाँति एक अपूर्व सौरभ उस पल्ले में से महीने भर तक निकलता गया। ऐसा अलौकिक व्यापार का प्रत्यक्ष अनुभव मैंने अपने जीवन में कभी नहीं किया था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माईक पर बताया गया कि मंडप रात को दो बजे तक बन्द रहेगा। रात दो बजे के बाद सब आसन ग्रहण करेंगे।

श्री श्री मां की शुभ जन्मतिथि पूजा

रात में दो बजे के बाद हम शुद्ध वस्त्र पहन कर भक्तिप्लुत चित्त से आकर मंडप में बैठे। रासलीला के मंच पर श्री श्री मां की तिथि पूजा के लिये स्थान बनाया गया था। केले के पेड़ के सफेद परतों से इतनी सुन्दर शिल्प कला की सृष्टि की गयी थी कि बिना देखे वह समझ में नहीं आ सकता। दूर से लग रहा था कि श्वेत प्रस्तर के कारु कला मंडित दरवाजे। बेल फूलों से सुसज्जित पार्टिशन के दरवाजे की तरह सजाये हुए, उस मंच की सुन्दरता का वर्णन करने की कोई भाषा मेरे पास नहीं है। मां का पलंग लगा हुआ था। मस्तक के पास (दीदी मां) पूजनीय गिरि महाराज जी का एक सुन्दर चित्र जोगिया वस्त्र से सुसज्जित रखा हुआ था। दूर से लग रहा था कि सदा की तरह दीदीमां यथास्थान बैठी हैं। श्री श्री मां का पलंग फूलों के हारों से चारों ओर से सजा हुआ था। १०८ प्रकार के फल मिठाई इत्यादि का भोग सजाया जा रहा था। पंडाल के दूसरे मंच पर सुन्दर आसन रखे हुए थे। प्रत्येक आसन के पीछे गोल तकिया लगा हुआ था। साधु महात्मा सब आकर बैठे थे। प्रत्येक के पास यथायोग्य फल वस्त्र इत्यादि विविध द्रव्य बड़ी टोकरियों में रखे हुए थे। समय पर महात्माओं के आसन ग्रहण करते ही कई ब्राह्मण कुमार शुभ्र वस्त्र पहन कर थालियों में प्रदीप सजाकर उनकी आरती करेंगे ऐसी व्यवस्था थी। ३ बजने के पूर्व ही शंखध्वनि, हुलूध्वनि तथा असंख्य कण्ठों से उच्चारित माता जी की जय ध्वनि से सभास्थल मुखरित हो उठा। फूलों की एक चतुर्दोला, कमल की मालाओं से चारों ओर से सज्जित थी। क्या उसकी शोभा थी उन फूलों के बीच शुभ्र वस्त्र पहिनी हुई हमारी जननी श्वेत कमल की तरह शोभायमान थीं। श्री नारायण स्वामी जी तथा गौरीनाथ शास्त्री जी ने मां को उठाया और धीरे से मां को पलंग पर बिठाया। एक रेशमी नामावली, बिछा दी गयी। उसी पर मां लेट गयीं। एक चद्दर ऊपर से ओढ़ा दी गई। ब्रह्मचारिणी पुष्पादी का मधुर कीर्तन यथा समय आरम्भ हो गया था। सभास्थल मानो अमरावती बन गया। चारों ओर धूप धूना गुगुल की सुगन्ध फैली हुई थी। श्री निर्वाणानन्द जी मां की पूजा के लिए उपविष्ट हो गये थे। जन्म मुहूर्त उपस्थित हुआ। सभी ने मिलकर शंख ध्वनि तथा मांगलिक उपचारों से श्रद्धा के साथ मुहूर्त का स्वागत किया। पूजा का आरम्भ हो गया था। मां के शुभ आविर्भाव मुहूर्त पर सभा के सब लोग एक चित्त होकर ध्यान करने लगे। श्री मां की आरती के साथ ही ब्राह्मण कुमारों के द्वारा साधु सन्तों की भी आरती की गई।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ के लेटते ही उनका हिलना डोलना सब बन्द हो गया था। श्री निर्वाण जी पूजा करते समय न मालूम कितनी बनारसी साड़ियाँ एक के बाद एक माँ के ऊपर रखते गये। हमारी राज राजेश्वरी माँ ने कितने भक्तों के मन की इच्छायें पूरी कीं। जरा स्पर्श पाते ही साड़ियाँ धन्य हो गईं। बिना देखे इस जन्मोत्सव की धारणा नहीं होती।

कीर्तन व पूजा की समाप्ति होते होते सवेरा हो गया। तब माँ को प्रणाम करने के के लिए एक बड़ी लाईन बन गयी। सुश्रृंखल लाईन होने से देर नहीं लगती है, इसलिए यह व्यवस्था थी। दो लाईन बनी, एक पुरुषों की, एक स्त्रियों की। एक एक कर प्रति भक्त ने माँ के चरणों पर पुष्पांजलि अर्पित की और रूमाल में बँधा हुआ प्रसाद लेकर निकल आया। इस तरह दस बज गये।

माँ पूर्ववत् समाधि ही में थीं। साढ़े बारह बजे शास्त्री जी ने माँ के सम्मुख कृष्ण नाम करना शुरू कर दिया था। दीदी व्याकुल होकर माँ का हाथ रगड़कर सतेज बनाने का प्रयत्न कर रही थीं। हम लोग बाहर दो लाईनें बनाकर खड़े थे। अनेक प्रयत्न के बाद किसी प्रकार माँ को चतुर्दोला में तकियों के सहारे लिटाकर बाहर ले आये। वह दृश्य कैसा था। माँ अब भी समाधि में से नहीं जाग्रत हुई थीं। चेहरा लाल भरा हुआ, आँखें बन्द थीं। मुँह एक ओर तकिया पर शिथिल झुक गया था। देखकर मुझे बड़ा कष्ट हो रहा था।

रात को जब माँ गोपाल मन्दिर की छत पर लेटी हुई थीं, तब मैं माँ के पास गई। मैंने माँ को दीदी से कहते सुना "दीदी, इस शरीर को लिटा दे, बड़ी थकावट मालूम होती है।" उस समय भी माँ कितने स्त्री पुरुषों की पूजा, माला इत्यादि ले रही थीं। दयामयी माँ, ऐसे ही क्या वह 'विश्व जननी' पुकारी जाती हैं? मधुर मुसकान व अन्तर के आशीर्वाद के वर्षण से उन्होंने इतने सन्तानों को प्रसन्न किया, पूर्ण कर दिया है।

दूसरे दिन स्त्रियों का अखण्ड कीर्तन था। इस कारण हम लोग भी रुक गये। भंडारा भी था। न जाने कितने साधु महात्मा ब्राह्मण ब्रह्मचारियों ने भोजन किया। दक्षिणा भी उनको मिली। विश्वजननी माता आनन्दमयी के भंडारे में उस दिन पूड़ी, कचौरी, दही मिठाइयों का कहीं अन्त नहीं था। सुना रात में स्त्रियों का अखंड कीर्तन होगा। कीर्तन में योगदान करने का तो सोच लिया, पर मन की इच्छा यह भी थी कि रात भर तो जग नहीं सकेंगे, इसलिये बारह बजे के बाद ही चले जायेंगे।

गोपाल मन्दिर में नामयज्ञ का विराट् मंच बना था। गोपाल जी की आरती के बाद ही श्री श्री माँ के सामने अधिवास हुआ। अब माँ की लीला सुनिये।

दरवाजे के पास ही माँ बैठी थीं। नाम कीर्तन जब जोर से होने लगा तब पुरुष लोग प्रणाम करके बाहर निकल गये। माँ स्वयं उठकर छवि व हमलोगों के साथ ताली बजाती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुई कीर्तन करने लगीं। अपने हाथ से सबको माला पहनाईं। कभी किसी के कंधे पर हाथ रखकर, कभी किसी का हाथ पकड़कर, घूम घूमकर नाचती हुई हम सबके संग माँ कीर्तन करने लगीं। बीच बीच में रुककर दरवाजे के पास बैठ जाती थीं। फिर उत्साहित करती जाती थीं। २, ३ परदेशी लड़कियाँ करताल बजाकर क्या सुन्दर कीर्तन कर रही थीं। उस समय माँ गुजराती लड़कियों के साथ ताली बजा बजाकर गोल गोल घूम रही थीं और कीर्तन कर रही थीं। उस आनन्द का वर्णन नहीं हो सकता है। रात को एक बजे माँ विश्राम के लिए शयनमन्दिर में चली गईं। हम लोग भी रात भर कीर्तन करते रहे। मैं बता नहीं सकती हूं कि उस अखण्ड कीर्तन से क्या आनन्द मुझे मिला था। २०० स्त्रियों ने इस नाम यज्ञ में भर सक भाग लिया था। सूर्योदय के पूर्व जब वीरेन दादा इत्यादि नाम लेने के लिए आये तब भी कीर्तन बड़ा जमा हुआ था।

कीर्तन मंच पर प्रणाम करने के बाद सब गोपाल मन्दिर में मां के शयनागार में आ गये। माँ उठकर बैठ गईं। प्रणाम करते ही माँ ने एक एक के मस्तक पर अपना वरद हस्त रखा। मुझे लगा कि मेरा जनम सफल हो गया। ऐसा वरमय स्पर्श युग युग व्यापी तपस्या के बाद भी कम ही लोगों को मिला करता है। प्रसाद के बताशे हाथ में लेकर हम लौट आये।

दूसरे दिन वाराणसी से हम लखनऊ जा रहे थे। प्रणाम करते समय लगा जैसे माँ हमारे लिए प्रतीक्षा ही कर रही थीं। माँ का स्नेह अबाधित रूप से सदा ही सबके लिये प्रवाहित हो रहा है।

माँ, तुम कृपामयी हो। कृपा करके हमारे अज्ञान को नाश करो। श्री गुरु के रूप से तुम मेरे हृदय में सदा ही विराजित रहो। तुम्हारे श्री चरणों में यही मेरी प्रार्थना है कि तुम्हारे लिये यह प्रेम हमारे मन में सदा जागृत रहे। मेरे प्रणाम को ग्रहण करो मेरी माँ। विश्वजननी माता आनन्दमयी के शुभ जन्मोत्सव में योगदान के बाद परिपूर्ण चित्त लेकर लखनऊ पहुँची।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महात्माओं के श्रीमुखसे

[संयम सप्ताह महाव्रत के शुभ अवसर पर नैमिषारण्य के श्री १०८ दण्डी नारदानन्दजी महाराज के दिये हुए प्रवचनों का सारांश]

[१]

यह साधन सप्ताह बड़े पुण्य से प्राप्त होता है। साधारण मनुष्यों को यह प्राप्त नहीं हो सकता। जब बहुत जन्मों का पुण्य जमा होता है तब ऐसा सत्संग प्राप्त होता है।

देवर्षि नारद जी विद्या-अध्ययन में संलग्न थे। उन्होंने आचार्य्य के चरणों में रह कर, विधि विधान से, वेद और उपवेदों का अध्ययन किया। भौतिक ज्ञान भी प्राप्त किया। मंत्र विद्या-तंत्र विद्या। आजकल यंत्र के द्वारा वायुयान चलते हैं। पहले मंत्रों द्वारा भी चलते थे। देवर्षि नारद ने चौदह विद्याओं का अध्ययन किया पर शांति नहीं मिली। मनुष्य जीवन का लक्ष्य होना क्या चाहिये और है क्या? वास्तव में ब्रह्म सबका लक्ष्य है—जानते हों या न जानते हों। मनुष्य चाहता है मुझे जो मिले-पूर्ण मिले। जितने अभाव की प्रतीति होती है उतना मनुष्य दुःखी होता है। जो भौतिकवादी हैं उन्हें हर समय दुःख होता है। एक तो अभाव-फिर जो है उसका भी जाने का भय, (और उसको रोकने की सामर्थ्य नहीं।) भगवान् शंकराचार्य कहते हैं। आगे वासना में लगे हुए पुरुष कभी-कभी विचारते हैं कि वासना की पूर्ति कैसे हो-अनुकूल परिस्थिति कैसे हो? (वे समझते हैं अनुकूल परिस्थिति से सुख होता है।)वे न पाकर अक्सर निराश होकर आत्म-घात तक कर लेते हैं।

विश्व में अणु, परमाणु सब घूम रहे हैं। और वे भी विनाश हो जाते हैं। Scientist कहते हैं Energy से पैदा होते हैं व उसमें लय हो जाते हैं। तो ज्ञान कहां पैदा हुआ—जब Energy ही अन्तिम तत्त्व है तो ज्ञान भी Energy से पैदा हुआ? तो Energy जड़ वस्तु नहीं हो सकती है। यदि कोई कहे 'मैं अपने ज्ञान को जानता हूँ' तो ज्ञान से भिन्न कोई और है। यदि कोई कहे 'मैं अपने अज्ञान को जानता हूँ' तो जो ज्ञान को जानता है वह अज्ञान को भी जानता है-तो दोनों का द्रष्टा है। जो सत् है उसका अभाव कभी नहीं हो सकता। जो नारद जी ने विद्या पढ़ी थी वह लौकिक ही थी। इसलिये पूर्ण शान्ति-पूर्ण शाश्वत सुख नहीं प्राप्त हुआ। अनित्य सुख से न कभी कोई सुखी हुआ है न होगा जब अनित्य सुख से कोई सन्तुष्ट नहीं होता, तो इससे साबित हुआ कि उसका ध्येय कुछ और है। वह नित्य सुख को प्राप्त करना चाहता है व प्रयास करता है। जो हमसे भिन्न है उसकी प्राप्ति का प्रयास किया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाता है पर जो हमसे भिन्न नहीं—उसका प्रयास बनता नहीं। राजसी, तामसी बुद्धि द्वारा नहीं होगा-बिल्कुल सात्त्विकी बुद्धि चाहिये। जो नहीं जानता है उसको मार्ग कैसे मिले ? ज्ञाता मार्ग बताने वाला हो और जो नहीं जानता वह उसके पीछे पीछे चले। समाज मोह से अंधा हो रहा है और यदि मार्ग-दर्शक भी अंधा हो, और कहता हो मेरे साथ आओ मैं तुम्हारे दुःख दूर कर दूँगा। यह देख लेना चाहिये मार्ग-दर्शक अंधा है या नहीं—पर वे स्वयं अंधे हैं, देखें कैसे ?

कुछ काल नारद जी भटकते रहे तो महर्षि सनत्कुमार मिले। उन्होंने उनसे कहा—मैंने अनेक काल विद्याओं का अध्ययन किया पर शान्ति नहीं मिली। सनत्कुमार जी ने पूछा—क्या तुमने भूमा विद्या, (ब्रह्म विद्या) का अध्ययन किया ? श्री सनत्कुमार जी ने कहा, मुझे आश्चर्य है कि तुमने इतना अध्ययन किया पर अभी तक भूमा तत्त्व का अध्ययन नहीं किया। भूमा तत्त्व सुख रूप ही है—जहाँ अन्य को नहीं जानता है। सारा संसार अल्प में सुख को ढूँढ़ता है पर मिलता नहीं है—जब वहां है ही नहीं तो मिलेगा कहां से ? मृगतृष्णा के जल की ओर हिरण दौड़ा करें पर जल नहीं मिल सकता। जहाँ अन्य को देखता-सुनता-जानता है वह अल्प है-उसमें सुख नहीं है। वासना की पूर्ति अनित्य सुख से नहीं होती। परमात्मा में जिसको सुख की प्रतीति होगी-वह परमात्मा की वासना रखे—परमात्मा की वासना, वासना नहीं उपासना है। उप माने समीप-जिसकी उपासना करते हो वह समीप है। हृदय सुख चाहता है व वह सुख के सागर को ढूँढ़ रहा है। महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र आनन्द के सिंधु हैं—सुख के धाम हैं. जिन्होंने महाराज दशरथजी के यहाँ जन्म लिया है। जन्म तो केवल प्रतीत हो रहा है—सुख धाम हमारे हृदय में हैं—और उपासना हृदय में होती है। महर्षि सनत्-कुमार जी ने नारद जी से कहा तुमको उपासना करनी चाहिये।

जैसे गऊ का दूध सब प्रकार से अमृत-तुल्य होता है वैसे ही (मृत्यु से सभी डरते हैं—मृत्यु से वही छुड़ा सकता है जो अमृतत्व दे सके) यह उपनिषद् है। मृत्यु से डरने वाले के लिये यह ज्ञानामृत है। अन्य कोई उपाय नहीं। यही एक मार्ग है। वह गुरु गुरु नहीं जो अपने प्रिय शिष्य को मृत्यु के भय से न छुड़ा सके। माता वह माता नहीं पिता वह पिता नहीं —जो अपने पुत्र को मृत्यु के भय से छुड़ाने के लिये सहयोग न करे। जो मृत्यु के भय को बढ़ाता है वह प्रतीत तो होता है मित्र पर है शत्रु, कुछ मित्र हमारे ऐसे हैं जो शरीर के अङ्ग होते हुए भी अमृतत्व को प्राप्त करने में बाधा पहुंचाते हैं। इनको आज्ञाकारी बनाओ—इनको जीत लो। यदि इन्द्रियाँ हमारे वश में न रहें तो प्रलय कर डालें। मोटर यदि चालक के वश में न रहे तो इस से बड़ा भय और क्या ? यदि घोड़े चालक के वश में न हों तो भी भय ! आत्मा को रथी कहा गया और शरीर को रथ—यह शरीर रथ है जिसमें इन्द्रिय-रूपी घोड़े

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लगे हैं। तो क्या घोड़े जहां चाहें रथ को ले जायं ? यदि घोड़े सारथी की आज्ञा में नहीं चलते तो वे शत्रु हैं। सारथी है बुद्धि—लगाम सारथी के आधीन है और सारथी रथी की आज्ञा में चलाता है। भोगी मनुष्य की बुद्धि रजोगुण से दुर्बल होती है—वह इन्द्रियों के आधीन हो जाती है। लगाम को खींच नहीं सकता—चाहे घोड़े जहां ले जायं—विवश है। इन्द्रिय-रूपी घोड़े यदि प्यासे हैं—और पानी देख लिया—वह जानते हैं सारथी दुर्बल है—तो रोके कौन ? वे पानी को तरफ दौड़ते हैं। सारथी रोकने के लिये औरों की सहायता मांगता है तो कौन रोके—घोड़े दौड़कर पानी में घुस जाते हैं। रथ टूट गया या पहिया कीचड़ में घुस गया तो सबकी मुश्किल।

भोगी मनुष्य निरन्तर चिन्ता करता है कि उसको भोगों की प्राप्ति अधिक से अधिक हो। यदि आधा राज्य भी किसी भोगी को दे दिया जाय तो भी सोचेगा चचेरे भाई को विष दे दें तो पूरा राज्य मिल जाय। जो सुख चाहते हैं उनको चाहिए भोग वासना कम कर दें। परिपूर्ण रूप से कामनाओं का त्याग करें—इसमें सब ऋषि, मुनि, सन्त, ग्रन्थ यही कहते हैं।

कामनाओं में परिणाम में दुःख। जब भोगी सत्संग में जाता है तो भोग-वासना की निवृत्ति की कोशिश करता है। सब प्राणी मोहनिशा में सो रहे हैं। इन असंख्य योगियों के मध्य में कोई योगी जागता है।

ऋषियों का विधान सबसे पहले बना है। पहला ग्रन्थ जो दुनियाँ में रचा गया है वेद। धर्मनीति के अन्तर्गत राजनीति है—राजनीति के अन्तर्गत अर्थ-नीति है। जितने व्यापारी लोग हैं वे अर्थनीति से पैसा बढ़ाते हैं—चाहे धर्म से चाहे अधर्म से उनका साध्य धन है। दुर्योधन ने कुछ दिन धर्मनीति का पालन किया—सब गुरुजनों ने जब दुर्योधन को समझाया तो उसने आधा राज्य भाइयों को दे दिया। धीरे-धीरे वह भोग में इतना आसक्त हो गया कि धर्मनीति व राजनीति से उसको अपने ध्येय की पूर्ति होती नहीं दिखी अतः उसने अपनी नीति बदल दी, सोचा अधर्म से काम लूँ। दुर्योधन ने आधी उम्र तो धर्म का सहारा लिया बाद में बदल गया। जिसका लक्ष्य ब्रह्म प्राप्ति हो उसे कोई भय नहीं, क्योंकि वह धर्म-नीति का ही पालन करेगा।

एक बार अपने साथियों के साथ दुर्योधन बैठा था तो उसने साथियों से कहा, "देखो जब तक धर्म पर चले हमारे पास आधा ही राज्य था—अब दुगुना हो गया !"

पाण्डव धर्म्म पर चल कर गरीब थे, क्योंकि उनका लक्ष्य ब्रह्म प्राप्ति था। एक बार भगवान् ने द्रौपदो से पूछा कि कैसी हो तो वह बोली मैं तो अब नास्तिक हो गई ! धर्म्म पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चलने से क्या यही होता है कि पीने को पानी तक न मिले। दुर्योधन ने आसपास के तालाबों में विष डलवा दिया था। ओढ़ने बिछाने को भी नहीं। भगवान् ने पूछा तुमने कभी अपने पति धर्म्मराज से अपना दुःख कहा है ? उन्होंने कहा वे असन्तुष्ट होंगे। भगवान् ने धर्म्मराज को बुलाकर कहा—तुम्हारी पत्नी रो रही है।

धर्म्मराज ने द्रौपदी से कहा, "तुम इतनी घबरा गई कि अपने जीवन का लक्ष्य भूल गई—हम लोगों के जीवन का लक्ष्य धर्म्म है, भोग नहीं। जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि देखकर वैराग्य होता है। बिना वैराग्य के इन्द्रियां, मन, मैं, कुछ वश में नही होता। अभ्यास व वैराग्य से वश में हो सकता है। योगी का परिणाम पाण्डवों को मिला व भोगी का परिणाम दुर्योधन को मिला। कष्ट से वैराग्य पैदा होता है—कष्ट भी भगवान् की कृपा है।

"मुझको माँ ने मारा"

एक बार एक मातृभक्त महात्मा रास्ते में चले जा रहे थे। वह अपने सम्पूर्ण ज्ञान की मस्ती में विभोर होकर चले जा रहे थे। वह कभी हँसता कभी नाचता। उसी समय रास्ते में एक फैशनेबल पति-पत्नी जा रहे थे। महात्मा तो अपनी मस्ती में आस्ते-आस्ते चले जा रहे थे। उस स्त्री को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह महात्मा मुझे देखकर हँस रहे हैं व मजाक कर रहे हैं। उन्होंने अपने स्वामी से शिकायत की। पति को बहुत गुस्सा आ गया और उन निर्दोष महात्मा को मारने लगा। उनके शरीर से बहुत रक्त निकला। इतनी मार खाने पर भी महात्मा जी तो हँस ही रहे थे। इतने में एक भक्त उसी रास्ते से निकला। भक्त ने महात्मा जी से पूछा—महाराज आपको किसने मारा और इतना खून कैसे निकला। महाराज जी ने हँसते-हँसते उत्तर दिया—मुझको माँ ने मारा। ऐसा सुन्दर निस्पृह उत्तर सुनकर उस फैशनेबल दम्पति को आश्चर्य एवं दुःख हुआ। वह दोनों ही महात्मा जी के चरणों में गिर कर क्षमा याचना करने लगे। शत्रु भाव से भी यदि कोई भगवान् की शरण में जाता है तो उसका काम हो जाता है।

(श्री श्री माँ की एक छोटी सी कथा)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानव जीवन का परम आदर्श : सांख्य, वेदान्त और आगमदृष्टि

महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज एम० ए०, डी० लिट्

साधन के मार्ग पर अग्रसर होने से यह दृष्टिगोचर होता है कि पूर्णता प्राप्त करने के इच्छुक मानव का मन कैवल्य से भी तृप्त नहीं होता। सांख्य की दृष्टि से पुरुष वह है, अतः एक का कैवल्य होने पर भी अगणित पुरुष बद्धावस्था में ही रह जाते हैं। बहुत्व की निवृत्ति के अनन्तर एक परम पुरुष की प्राप्ति एक उच्चतम प्राप्ति कही जा सकती है। यही परम-पुरुष वेदान्त का ब्रह्म है। सांख्य आदि की दृष्टि के अनुसार इस विशाल संसार से मुक्ति मिलने पर और जन्म-मृत्यु के चक्र से रिहा हो जाने पर भी जब तक इस परम-पुरुष रूपी ब्रह्म को अपनी सत्ता के साथ अभिन्न रूप से प्राप्त नहीं किया जा सकता तब तक केवली अवस्था में ही सन्तुष्ट रहना पड़ता है अर्थात् सांख्य के कैवल्य को परम पुरुषार्थ के रूप में ग्रहण करना पड़ता है। सांख्य की ज्ञानभूमि से उत्तीर्ण होकर वेदान्त उपदिष्ट ज्ञानभूमि में आरूढ़ होने पर ही उसके परिणाम स्वरूप परमपुरुष या ब्रह्मभाव की प्राप्ति होती है। कहना अधिक नहीं होगा कि यह स्थिति भी एक दृष्टि से कैवल्य ही है। पहले अर्थात् सांख्यदृष्टि में चिद्भाव का बहुत्व था—अब अर्थात् वेदान्त दृष्टि में एकमात्र अखण्ड चित्सत्ता ही वर्तमान है। यही निरञ्जन अवस्था है। अद्वैत वेदान्त दृष्टि से यह स्थिति ही आत्मा के परम पुरुषार्थ के रूप में परिगणित होती है। सांख्य के ज्ञान से वेदान्त के ज्ञान की कल्पना भिन्न प्रकार की है। उसी प्रकार सांख्य की अज्ञान कल्पना भी वेदान्त की अज्ञान या अविद्या की कल्पना से भिन्न है। इसके फलस्वरूप सांख्यदृष्टि में यहाँ अविद्या लक्षित नहीं होती, वेदान्त दृष्टि में वहाँ पर भी अविद्या दिखायी पड़ती है। यह केवल अविवेक रूप अज्ञान नहीं है। यह मूल विद्या की निवृत्ति जब तक नहीं होती जीवों को परमपुरुषार्थ की प्राप्ति तब तक नहीं होती। साधारणतया यह विचार मन में उठना स्वाभाविक है कि इस अद्वैतभूमि की प्राप्ति के अनन्तर और कुछ प्राप्तव्य नहीं है अर्थात् अन्य कुछ प्राप्त करने को सम्भावना की ओर लक्ष्य करना भी बुद्धि का संकोच ही है। साधक या योगी की दृष्टि के सम्मुख इसी समय ही आगम की दृष्टि अपनी महिमा तथा उज्ज्वलता के साथ प्रकाशमान होती है। आगम या तन्त्र शब्द से तन्त्र की आगमबुद्धि को ही ग्रहण करना चाहिए। वेदान्त साधना के फलस्वरूप 'एकमेवाद्वितीयम्' इस प्रकार अद्वैत साधना में आत्मा परिनिष्ठित होती है। लेकिन तांत्रिक मत में यह पूर्णता नहीं, पूर्णता का

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आभास मात्र है, क्यों कि इस स्थिति में संवित्रूपिणी चित् शक्ति में स्फुरत्ता के अभाव के कारण यह वास्तविक पूर्णावस्था के रूप में वर्णित होने योग्य नहीं है। कारण यह है कि जहाँ यथार्थ पूर्णता है वहाँ पूर्णनिरपेक्ष-भाव का उदय होता है। वेदान्त दृष्टि में आत्मा स्वयं प्रकाश शिवस्वरूप है, इसमें सन्देह नहीं, लेकिन उसमें स्वातन्त्र्य नहीं है, क्यों कि वह माया शक्ति के अधिष्ठान रूप होकर भी स्वातन्त्र्य रूपी परासंवित् के साथ उसकी अभिन्नता नहीं है। माया वेदान्त में है, और वह अघटनघटनसमर्थ है यह भी बात सत्य है, लेकिन वेदान्त दृष्टि में वह माया आत्मा के साथ अभिन्नरूपा नहीं है। यह अनिर्वचनीय या मिथ्या है। वेदान्त दृष्टि में ब्रह्म रूपी आत्मा में अहन्ता नहीं है, अहन्ता मायाप्रसूत है और माया के मिथ्या होने के कारण वह भी मिथ्या है। तांत्रिक दृष्टि में अहन्ता आत्मा की स्वरूपशक्ति है और वह विमर्श नाम से परिचित है। अहन्ता न रहने पर आत्मा प्रकाश स्वरूप होकर भी प्रकाशमान नहीं हो सकती है। भर्तृहरि ने लिखा है—

> वाग्रूपता चेदुत्क्रामेदवबोधस्य शाश्वती।
> न प्रकाशः प्रकाशते सा हि प्रत्यवमर्शिणी॥

यह वाक् या परावाक् विमर्शरूपा स्वातन्त्र्यशक्ति है।

तांत्रिक आचार्य कहते हैं कि वेदान्त का ज्ञान-ज्ञान का पूर्ण विकास नही, जब ज्ञान का परिपूर्ण विकास होता है उस समय आत्मा अपने को केवल अद्वैत स्वरूप में ही प्राप्त नहीं करती है, उस समय आत्मा को यह अनुभव होने लगता है कि आत्मस्वरूप अद्वैत है तथा वह पूर्ण स्वातन्त्र्यमय है। यही पूर्ण अहम्भाव है। जिसे हम सृष्टि कहते हैं या विश्व कहते हैं वह भी आत्मा के साथ अभिन्नरूप में विद्यमान हैं। आत्मा स्वतन्त्र है इसलिए कर्तृत्वसम्पन्न है। आत्मा केवल अधिकरण या अधिष्ठान चैतन्य मात्र नहीं है। एक ही आधार में आत्मा शिव और शक्तिरूप है। शिव भी चिद्रूप है, शक्ति भी चिद्रूपा है। आत्मा शिव रूप में अस्पन्द है और शक्ति रूप में स्पन्दमय है। आगमिक आचार्यगण विश्व रचना के मूल में शिव और शक्ति नाम के जो तत्त्वद्वय स्वीकार करते हैं उन्हें अभिन्न रूप में ग्रहण करने पर जिसका ग्रहण होता है वही आत्मा है। छत्तीस तत्त्वों के मूल में जो तत्त्वद्वय हैं उनमें एक है शिव, दूसरा है शक्ति। शिव स्वातन्त्र्य हीन बोधात्मक हैं। और शक्ति बोधहीन तथा स्वातन्त्र्यमय है। दोनों ही अपूर्ण हैं। जब दोनों का अभिन्न रूप से ग्रहण होता है उसी समय पूर्णता है कहा जा सकता है। इसी को परमशिव या परासंवित् कहा जाता है। यही सत्य की तत्त्वातीत स्थिति है अर्थात् अखण्ड स्वरूप है। अद्वैत शैवदृष्टि में इसे हम स्वातन्त्र्यमय परमशिव कहेंगे और अद्वैत शाक्तदृष्टि में यही परमबोधमय स्वातन्त्र्य या महाशक्ति है।

जिन्होंने इस स्थिति को प्राप्त कर लिया है उन्होंने अनुभव किया कि मानव जीवन की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पूर्णता इस स्थिति में न पहुंचने तक हो नहीं सकती। सांख्य और वेदान्त और अन्य अन्य प्रस्थान सोपानपरम्परा मात्र है। चरम अवस्था में यह स्वातन्त्र्यमय पूर्णता की प्राप्ति करना ही साधना का परमलक्ष्य है। इस स्थान में उपनीत होने पर दिखाई पड़ता है कि सांख्य का ज्ञान वास्तविक ज्ञान नहीं है, और उसका अज्ञान भी वास्तविक अज्ञान नहीं। अतः सांख्य के ज्ञान से सांख्य के अज्ञान की निवृत्ति यद्यपि भ्रान्त नहीं है, तो भी वह आपेक्षिक है। वेदान्त के ज्ञान तथा अज्ञान के सम्बन्ध में भी यह एक ही बात है। तांत्रिकों के सिद्धान्त के अनुसार वास्तविक ज्ञान वही है जिससे जीवों का आणवमल कट जाता है और जिससे जीव शिवभाव प्राप्त होकर स्वातन्त्र्य प्राप्त करने में समर्थ होता है।

अब प्रश्न है—इस ज्ञान का स्वरूप क्या है? सांख्य दृष्टि से ज्ञान का स्वरूप है कि आत्मा चिन्मात्र पुरुष है और वह त्रिगुणात्मिका प्रकृति से विलक्षण है। इस प्रकार विवेकज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है। इस प्रकार विवेकज्ञान से पुरुष प्रकृति के ऊर्ध्व में अवस्थित होकर जन्म मृत्यु के अतीत होकर केवली हो जाता है। तांत्रिक कहते हैं सांख्य की ऊर्ध्वगति की सीमा इतनी ही दूर तक है। उसी प्रकार तन्त्र मत से वेदान्त के ज्ञान का स्वरूप ऐसा है कि—मैं मायातीत ब्रह्मस्वरूप तथा सच्चिदानन्दमय हूँ। आत्मा का यह कूटस्थ स्वरूप है। माया से मुक्त होकर इस स्थिति को प्राप्त करना सम्यक् ज्ञान का फल है। इस दृष्टि में आत्मा सत्य है और माया तथा उसके कार्य अनिर्वचनीय होने के कारण मिथ्या हैं। आत्मा में विश्व-जगत् का कर्तृत्व अध्यास रूप में आरोपित होता है। उस समय ईश्वर और मायाभाव विकास को प्राप्त होता है। माया के अतीत ब्रह्मस्वरूप ही आत्मा का स्वरूप है। लेकिन तांत्रिक आचार्य कहते हैं यह भी ज्ञान की परिसमाप्ति है ऐसा कहा नहीं जा सकता है, क्यों कि इस ज्ञान में आत्मा अहन्ताशून्य है। पूर्णप्रकाश में अहम्भाव को ही तांत्रिकगण विमर्श कहते हैं उसी का नामान्तर अहन्ता है—जिसके कारण आत्मा ही परमात्मा के रूप में प्रकाशित होता है। प्रत्येक जीव की आत्मा इस स्वरूप को प्राप्त किये विना उसका जो पूर्णस्वरूप है उससे वंचित होती है।

तांत्रिक मत में शुद्ध विद्या ही ज्ञान का स्वरूप है—जो प्रकृति से, माया से और महामाया से भी विलक्षण है। परमशिवरूपी गुरु से पशु जीव इस शुद्ध विद्या को प्राप्त कर सकता है। शुद्ध विद्या रूपी ज्ञान की प्राप्ति के विना जीव शिव नहीं बन सकता—पशु पशुपति के पद पर आरूढ़ नहीं हो सकता। जब तक शुद्ध विद्या की प्राप्ति नहीं होती तब तक जीव को क्षुद्र कैवल्य आदि को ही आदर्श बनाकर सन्तुष्ट रहना पड़ता है।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारतीय संस्कृति और सन्त जीवन

श्री श्री माता आनन्दमयी के जीवन के आधार पर

महेशकुमार पाठक

[खण्ड—'अ']

प्रत्येक देश की अपनी एक संस्कृति होती है, जो उसकी मौलिक विशेषता के रूप में प्रकाशित होती है। उसे ही उसकी आत्मा, बीज व प्राण कहते हैं। प्राचीन गल्प व पौराणिक कथाओं में ऐसा उल्लेख आता है कि अमुख राक्षस का प्राण, अमुक हीरामन तोते में रहता था। उस हीरामन तोते की हत्या होते ही उस राक्षस की जान चली जाती थी। यही बात किसी देश या जाति की संस्कृति के लिये भी सत्य है। किसी देश का प्राण उसकी अपनी संस्कृति में सन्निहित होता है, उसके नष्ट हो जाने पर वह देश या जाति भी मृतप्राय हो जाती है। अपनी उसी संस्कृति का अवदान ही विश्व को उसकी देन होती है। उस देश के जीवन का वही प्राण रहता है।

भारतीय संस्कृति धर्म प्राण है, अर्थात् भारतीय-संस्कृति एवं भारतीय जीवन की मौलिक विशेषता धर्म है। धर्म ही इस संस्कृति का प्राण, बीज व आत्मा है। 'धर्म' का अर्थ मात्र 'रिलीजन' नहीं है अपितु वह बहुत ही व्यापक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। 'जिससे इस लोक में और परलोक में अन्यतम कल्याण साधित हो वह धर्म है।' 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस-सिद्धिः स धर्मः।' (वैशेषिक-दर्शन) धर्म को वस्तुओं का स्वभाव और मौलिक स्वरूप भी कहा गया है। 'धर्मो हि वीर्यं ध्रियते हि धर्मो धर्मो धृतो धारयते हि रूपम्।' धर्म एक शक्ति है। स्वरूप लाभ तथा स्वरूप की रक्षा के लिये पदार्थ द्वारा धृत होने से वह धर्म है। इसलिये 'धिन्वाद् धर्मः' या 'धारणाद् धर्मः' भी धर्म की परिभाषा की गई है। इसी भाव से अनुप्राणित होकर भारतीय आप्त जनों ने वस्तु जगत् के मौलिक तथा मूलस्वरूप का पता लगाने की चेष्टा की है और वे इससे सफल भी रहे। उनका दावा है कि उन्होंने परमतत्त्व को जान लिया है—

"शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः, आ ये धामानि विश्वानि तस्थुः।
वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्, आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्॥"

(शुक्लयजुर्वेदः पुरुषसूक्त)

विश्व भर के मानव मात्र के लिये यह ऋषि का सिंहनाद है। प्राणीमात्र को इसके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिये आवाहित किया गया है। भारतीय संस्कृति को अखण्ड सत्य का पता है। सम्पूर्ण जीवन का लक्ष्य इस अखण्ड सत्य का अन्वेषण है। कह सकते हैं कि ब्रह्मप्राप्ति या आत्मलाभ ही जीवन का परम उद्देश्य है।

'यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।'

इस संस्कृति की जीवन्त धारणा है कि आत्मलाभ होने पर अन्य किसी वस्तु की प्राप्ति शेष नहीं रहती—

'एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते।'

नित्य, निर्मल, चिरस्थायी आनन्द प्राप्त होने पर जीवन का सर्वविध अभाव सदा के लिए मिट जाता है। जो भूमा या अनन्त है, वही आनन्द स्वरूप है—'भूमैव सुखं नाल्पे सुखमस्ति।'

भारतीय संत जीवन का मूल उत्स धर्म है। धर्म का परिपूर्णतम प्रकट स्वरूप ही सन्त-जीवन है। संतों ने अपने जीवन-बलिदान के द्वारा उस अखण्ड परिपूर्णतम सत्य का पता लगाया है और यह जाना है कि उस एक की सत्ता के अतिरिक्त दूसरे किसी की सत्ता नहीं है। 'आत्मा एव इदम् अग्रे आसीत्।' (छांदोग्य ७।२५।२)'आत्मा एव इदं सर्वम्।' (बृहदारण्यक १।४।१)

सारा व्यक्त जगत् उसका लीला-विकास है। इस प्रकार उन्होंने जीवन के मूलभूत रहस्य का पता लगाया और मानव-जीवन की सार्वभौम-समस्याओं का समाधान प्राप्त किया है। सन्त उस अखण्ड-सत्य से एकाकार होकर प्रकाशित होते हैं जिसे हम सम्पूर्ण विश्व का केन्द्र-बिन्दु कह सकते हैं। वे उस निर्गुण निराकार अखण्ड तत्त्व के मूर्तिमन्त निदर्शन हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में—

'संत भगवंत अन्तर निरन्तर नहीं किमपि मति मलिन कह दास तुलसी।'

(विनय-पत्रिका पद-५७)

भारतीय संत जीवन की प्रमुख चार-पाँच विशेषतायें हैं जिन्हें हम मानव मात्र को उनकी देन कह सकते हैं।

प्रथमतः जीवन के मूलभूत सत्य के अन्वेषक के रूप में साक्षात् आदर्श उदाहरण के रूप में वे जन-जीवन के समक्ष अपने को प्रस्तुत करते हैं, जिससे सामान्य-जन को उस लक्ष्य और मार्ग पर विश्वास होता है और सहज ही प्रेरणा प्राप्त होती है। सन्त का शांत, निरपेक्ष, निर्मम, निरामय, आनन्दमय और विश्व उपकार हित सर्वदा व्यग्रचित्त जीवन देखकर सहज प्रेरणा प्राप्त होती है। शास्त्रों के वचन पर विश्वास होता है। शास्त्र सिद्धान्तों का

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिपादन तो कर देते हैं पर उन पर विश्वास तब तक नहीं होता जब तक किसी आधार में हम उन सिद्धान्तों को सजीव रूप में नहीं देख लेते।

द्वितीयत: उनका यह भी कहना रहता है कि जिस तरह मैंने उस परम-तत्त्व का लाभ किया है, उसी तरह कोई भी व्यक्ति उस पथ पर चलकर उसका लाभ कर सकता है। ईश्वर केवल मान लेने का तथ्य मात्र नहीं है, अपितु वह जानकर मानने की चीज है। अगर ईश्वर है तो उसका साक्षात्कार करना ही होगा। मन्दिर, गिरजाघर, शास्त्र, सम्प्रदाय धर्म नहीं बल्कि ईश्वर साक्षात्कार ही धर्म है ईश्वर अनुभूति का विषय है। व्यक्तिगत अनुभूति ही उनका अंतिम प्रमाण है। 'आओ और देखो' उसका मूलमंत्र है।

तृतीयत: उनका पवित्र, सीधा-सदा, सुलझा हुआ चिन्तामुक्त निर्द्वन्द्व जीवन मानव-मात्र को एक सन्देश देता है कि जीवन में यह धारा वास्तविक परिवर्तन ला सकती है और मानव जीवन की चिरन्तन समस्याएँ—अमरत्व, ज्ञान, अविच्छिन्न सुख (आनन्द), अन्यतम-पद और परम-स्वातंत्र्य की कामनाओं का समाधान हो सकता है।

चतुर्थत: विश्व भर को अपनी सेवा से आप्लावित करना और विश्व के साथ ऐक्य संस्थापित करना मानव-मात्र को सदैव यह प्रेरणा देता है कि हम व्यष्टि होते हुए भी व्यष्टि ही नहीं वरन् समष्टिगत हैं। सम्पूर्ण जगत् से हमारा नित्य संबंध है। इस प्रकार अणु होते हुए भी हम विभु हैं! प्रत्येक जीवन का महत्त्व और वैशिष्ट्य है। व्यक्ति का जीवन नगण्य नहीं है।

पंचमत: विश्व के भेद और वैभिन्न्य के मध्य एकता का सूत्र निकाल लेना और सबका ऐक्य प्रतिपादित करना, सबमें सामंजस्य बैठाना, सबका उचित मूल्यांकन उनका सहज स्वभाव होता है जिससे मानव-मात्र को द्वन्द्व रहित समाधान प्राप्त होता है।

[खण्ड—'ब']

भारतीय वाङ्मय में यह एक स्वीकृत तथ्य है कि परमतत्त्व महाशक्तिधर रूप में प्रकट होकर जगत् में मार्ग-दिग्दर्शन करता है, साथ ही कुछ उच्चकोटि के भक्तों की विशिष्ट कामनाओं की पूर्ति भी करता है। 'भगत हेतु लीला तनु धरहीं।' (श्रीरामचरितमानस) परमात्मा के दस अवतार स्वीकृत किये गये हैं, फिर भी साथ ही अनेक अवतार भी माने गये हैं—

'तब प्रभु धरि-धरि विविध सरीरा।
हरहिं सदा सज्जन भव भीरा॥'

(श्रीरामचरितमानस)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस तरह परम्परया यहाँ भगवद्रूप उच्चकोटि के संतों का बराबर प्राकट्य होता रहा। इसी सन्त धारा की चूड़ान्त-निदर्शिनी के रूप में श्री श्री माँ आनन्दमयी हैं। माँ के तपःपूत अलौकिक जीवन के संबंध में दो मत नहीं हैं। अपने दिव्य आनन्दमय जीवन के द्वारा प्राणिमात्र का रंजन करना ही उनका उद्देश्य प्रतीत होता है, जिसके मूल में उनकी असीम करुणा है। नित्य स्वरूप में स्थित रहते हुए भी भक्तों की भावना के अनुसार सबका मंगल साधित करना एवं सबको आनन्द प्रदान करना ही उनका एकमात्र कार्य दृष्टिगोचर होता है। लौकिक दृष्टि से उनके जीवन में उत्कर्ष होता हुआ दिखता तो है पर माँ उसे स्वीकार नहीं करतीं। माँ कहती हैं—"मैं पहले जो थी, आज भी वही हूँ, आगे भी वही रहूँगी। तुम जिस समय जो कहो, जो सोचो, वही मैं हूँ। फिर भी यह सत्य जानना कि इस शरीर का जन्म प्रारब्ध-भोग के लिए नहीं हुआ है। तुम यही समझना कि यह शरीर भावों का मूर्तिमान स्वरूप है। तुमने इसकी अभिलाषा की इसलिये इसे पाया अथवा तुमने चाहा, इसलिये पाया भी।" इसी सन्दर्भ में एक अन्य स्थान पर माँ कहती हैं—

"मेरा लक्ष्य कहीं भी केन्द्रित नहीं है, इसका मुझे कोई प्रयोजन भी नहीं है। जैसा देखना चाहते हो—वैसा देखते हो।"

स्पष्ट है—माँ का जीवन व्यक्तित्व से ऊपर उठा हुआ है, उनका कोई भी कार्य व्यक्तिगत हित या लाभ के लिए नहीं है बल्कि 'बहुजनहिताय बहुजन सुखाय' है।

उनके जीवन में यद्यपि हम साधक जीवन का दर्शन पाते हैं, पर वस्तुतः ऐसा नहीं है। शास्त्रों की सत्यता को प्रभावित करने और उसके मूर्तिमन्त विग्रह को सत्यापित करने करने के लिए अपने अखण्ड-स्वरूप में स्थित होते हुए भी उन्होंने साधक जीवन का अभिनय किया है। साधक अपने जीवन का आदर्श उनके चरित्र में पा सकता है। साधक-जीवन में दीक्षा-प्राप्ति के पश्चात् साधक जिस क्रम से प्रगतिशील होता है वह और पालनीय समस्त नियम जैसे मौन, व्रत, उपवास, तप, संयम, सदाचार व शांत-समर्पण भाव उनमें दृष्टिगोचर होते हैं। दीक्षा गुरुशक्ति का साधक में प्रवेश है। गुरुशक्ति जो चैतन्यमय है अपना कार्य स्वयं करती है। साधक का कर्तव्य मात्र इतना ही होता है कि वह अपनी ओर से बिना विघ्न डाले उसे होने दें। जीव का 'अहं' ही गुरुशक्ति के कार्य की बाधा है। 'अहं' का समर्पण ही उस चिदाग्नि की हवि है। माँ के जीवन में पदे-पदे हम इस समर्पणभाव को देख सकते हैं। माँ अक्सर कहती हैं—'जो कराना होगा करा लेंगे'। 'जो होना होगा हो जायगा।' 'भगवान् की जैसी इच्छा।' 'जैसा योगायोग होगा वैसा होगा।'

साधक जीवन में सचाई (Sincerty) बहुत आवश्यक है और साधक-जीवन की यह एकमात्र माँग है। अपनी त्रुटियों को स्वीकार लिये बिना आगे बढ़ने का कोई मार्ग नहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। आत्म-प्रवंचना (Self Decaphion) इस मार्ग का सबसे बड़ा शत्रु है। अपना मन ही अपने को नानाविध ठगता है। अगर साधक अपने प्रति सच्चा न हो और इस पथ पर चलने की वास्तविक अभीप्सा न हो तो पथभ्रष्ट होते देर नहीं लगती। महात्मा सुकरात ने कहा था—"अपने को जानो (Know Thy Self), अपने को स्वीकार करो (Accept Thy Self) और स्वयं हो जाओ (Be Thy Self)।" बिना अपने को स्वीकार किये (इस समय जिस स्थिति में हम हैं) जो हम वस्तुतः हैं, हो नहीं पाते। बन्धन की वास्तविक अनुभूति ही मोक्ष की उपलब्धि है। इसलिये माँ अकसर कहती हैं—'जो करना सचाई से मन लगाकर करना।' इसी ओर इंगित करते हुए कभी व्यंग में कहा—"हाँ-हाँ, माँ-माँ किए जाओ और जो मनमें आये सो किये जाओ।' जिस प्रकार साधक उस परमतत्त्व (अधरा) को किसी पथ (धारा) से पकड़ता (धरता) है उसी प्रकार माँ के जीवन में भी दिखता है कि भक्तिमार्ग के द्वारा उन्होंने उस परमतत्त्व को स्वायत्त किया। उनमें भक्त की यह परिभाषा पूर्णरूपेण घटित होती है—

"तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेयः कीर्तनाय सदा हरिः॥"

(चैतन्याष्टक)

भक्तिमार्ग में आनेवाली समस्त अवस्थाएँ—नित्य स्मरण, कीर्तन, भाव, महाभाव इत्यादि उनमें परिलक्षित होती हैं। भाव की अनेकानेक विलक्षण अवस्थायें माँ के जीवन में परिलक्षित होती हैं। उनकी भक्ति पराभक्ति या प्रेमाभक्ति है। जिसका सिद्धान्त है—

'चहौं न सुगति सुमति संपति कछु, ऋधि, सिधि, विपुल बड़ाई।
हेतु रहित अनुराग रामपद बाढ़ै अनुदिन अधिकाई॥'

(विनयपत्रिका पद–१०३)

इसी भक्ति को पाना उच्चकोटि के साधक का अभिप्रेत होता है।

साधक के लिए शास्त्रविधि का त्याग वांछनीय नहीं है—

'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥'
'तस्मात् शास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मकर्तुमिहार्हसि॥'

(गीता—१७।२२-२३)

माँ के जीवन में शास्त्रीय परंपरा का उल्लंघन होते हुए कभी नहीं पाया गया जबतक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि वह नितान्त आवश्यक न हुआ। साधनाकाल में उनके श्रीमुख से निकले हुए बीज मंत्र, स्तुतियाँ, वाणियाँ शास्त्रीय पक्ष व विधानों की पुष्टि करते हैं। बचपन से लेकर कुलवधू के रूप तक उन्होंने अपने लौकिक कर्तव्य का पूर्णरूप से निर्वाह किया। कुलवधू के रूप में उनकी पति भक्ति आदर्श कही जा सकती है। पति की आज्ञापालन हेतु कई बार उन्होंने अपने गृहीत नियम भी भंग कर दिये। कुलाचार, समयाचार और देशाचार का कभी उच्छेद नहीं किया। जिज्ञासुओं के द्वारा इस संबंध में प्रश्न किये जाने पर उन्होंने कभी भी शास्त्रीय परंपरा का उच्छेद करने की सलाह नहीं दी। विद्वानों और मनीषियों के द्वारा विधान जानकर ही कार्य करने की आज्ञा दी। इसकी पुष्टि तब और हो जाती है जब हम उनके निर्देशित अनुष्ठानों व यज्ञों में शास्त्रीय-विधानों का व्यक्त स्वरूप देखते हैं।

आचार-पालन में उनकी दृष्टि रुढ़िवादी नहीं है वरन् उदार (liberal) है—मानों साधक वृन्द के लिए उनका यह संकेत है कि निष्ठा में कमी न आने देते हुए आचार-पालन में उदारता बरती जाय। साधक सर्वस्व त्याग मार्ग का ग्रहण करे अथवा संसार में रहे— इसका निर्णय माँ के जीवन को देखकर किया जा सकता है क्योंकि माँ का दोनों ही जीवन रहा और दोनों के लिए ही वे आदर्श रही हैं। चाहे गृहस्थ जीवन हो या विरक्त जीवन— दोनों में भगवत्प्रेम ही मुख्य है। वही जीवन धन्य है, जिसमें व्यक्ति 'प्रेमपुर' में निवास करता है। जैसा कि गो० तुलसीदास जी का अभिमत है—

घर छांड़े घर जात है, घर कोन्हें घर जाय।
तुलसी घर वन बीच ही, रहहु प्रेमपुर छाय ॥ (दोहावली)

प्रत्येक साधक चाहे वह किसी भी मार्ग का क्यों न हो उसे 'शब्द तत्त्व' की शरण लेनी ही पड़ती है। शब्द ब्रह्म में निष्णात होने पर शब्द का अतिक्रमण कर सकने पर परब्रह्म की प्राप्ति होती है।

'शब्दब्रह्मणि निष्णातः परमब्रह्माधिगच्छति।' शब्द के माध्यम से शुद्धि से लेकर तत्त्व पर्यन्त कार्य होता है। समस्त साधन का फल शब्द निष्ठा है इसीलिये माँ नाम-साधना पर बहुत अधिक बल देती हैं और अक्सर कहती हैं—"नाम करो सब हो जायगा।" साधक जीवन में यह भी आवश्यक है कि व्यक्ति अपने मार्ग में व निष्ठा में दृढ़ रहते हुए भी न किसी से घृणा करे और न किसी की निन्दा करे क्योंकि समस्त साधक चाहे वह जिस किसी सम्प्रदाय या मार्ग के हों उस परमतत्त्व की ओर जा रहे हैं।

'नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।' (महिम्नः स्तोत्र)

माँ के पास सम्प्रदाय का भेद नहीं है। सभी का आदर करना, सबको अपने पथ में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निष्ठा रखने की प्रेरणा देना, सबकी अच्छी बातों को ग्रहण करना और किसी की निन्दा न करना माँ का सहज स्वभाव है। माँ कहती हैं—"यहाँ का भाव है सबको आदर देना सबको सम्मान देना।"

साधक का भाव होना चाहिए सबके सम्मुख विनम्रता और सबसे भगवत्प्रेम होने के आशीर्वाद की कामना। जैसा कि गो० तुलसीदास जी कहते हैं: 'चरन वंदि विनवौं सब काहू। देहु राम पद नेह निबाहू ॥' साधक जीवन के लिए किसी संत के द्वारा उसके स्वतः के जीवन द्वारा इससे अधिक और क्या निर्देश हो सकता है ?

माँ की सहज बातचीत के दौरान उनकी स्वानुभूति स्वाभाविक रूप में कभी-कभी प्रकट भी हो जाती है जो यह प्रेरणा देती है कि साधना का तात्पर्य ही अनुभूति (परोक्ष) है। यदि जीवन में ठीक क्रम का अवलम्बन किया जाय तो यहाँ और इसी जीवन में साधक अनुभूति सम्पन्न हो सकता है। माँ कहती हैं—"वहाँ वह प्रकाश स्थान-स्थान पर तत्तद् व्यक्तियों के कर्म और भाव के अनुसार प्रकट होने को बाध्य होता है।" एक अन्य स्थान पर प्रसंगवश इसी सन्दर्भ में कहती हैं—"जिसका जितना भक्तिभाव है, उसको उतना लाभ भी होता है। जो जितना उत्कर्ष लाभ करेगा उतना अपनी इष्ट मूर्ति का विकास उसकी दृष्टि में अभिव्यक्त होगा। एकदम वह पृथक् नहीं रहेगा, भगवान् उसे अपने अनन्त रूपों में अपने को पकड़ा देंगे। अपने संस्कारों के बल से जब पूर्ण प्रकाश होगा, तब फिर सबमें अपना संस्कार दीख पड़ेगा।"

प्रकट रूप में 'आओ और देखो' का मूलमन्त्र माँ के जीवन और उक्तियों से क्या उद्भासित नहीं हो रहा है ?

माँ के जीवन की अक्षुब्ध शांति और असीम आनन्द इस बात का द्योतक है कि मानव जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन सम्भव है और मनुष्य जागतिक झंझावात के मध्य ही चिर अशांति और दुःख से छुटकारा पा सकता है। माँ का सामीप्य लाभ करने पर अनेक संसारासक्त और विषयासक्त व्यक्तियों के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ और वे सन्मार्ग पर अग्रसित हुए हैं। उनके सरल, सहज व स्वाभाविक जीवन ने अनेकों के जीवन को आकर्षित किया है और उनमें परिवर्तन घटित हुए हैं।

माँ के जीवन में मानव मात्र की चिरन्तन कामनाओं की परिपूर्णतम अभिव्यक्ति झलकती है जो सदैव इस दिव्य जीवन की ओर आकर्षित करती है। कौन व्यक्ति अमरत्व नहीं चाहता ? अस्तित्व के लिए संघर्ष का नाम ही जीवन है। यद्यपि व्यक्ति प्रत्येक क्षण मर रहा है, पर फिर भी जीने का प्रयास कर रहा है। जीव अमरत्व चाहता है, पर अमर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पथ का अनुसरण नहीं करता। देह-भाव के रहते हुए अमरत्व लाभ नहीं हो सकता। आत्म-भाव में स्थित होते ही व्यक्ति अमरत्व लाभ करता है। माँ का जीवन यह दर्शाता है कि आत्म-भाव में स्थित होना ही नित्य जीवन है। शास्त्र वचन भी है : 'देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।' (गीता २।३०) और : 'अजो नित्यं शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।' (कठोपनिषद्)

कोई भी व्यक्ति मूर्ख नहीं रहना चाहता। ज्ञान स्पृहा जीव का सहज स्वभाव है। जीवन पर्यन्त उसका जानने का प्रयास चलता ही रहता है। माँ यद्यपि पढ़ी लिखी नहीं हैं, फिर भी उनमें ज्ञान की परिपूर्णता दृष्टिगोचर होती है। विद्या के दो विभाग किये गये हैं-- अपरा-परा! माँ परा विद्या में निष्णात हैं। शास्त्र वाणी उनके मुख से अपने आप निःसरित होती है, मंत्र स्वयं स्फुरित होते हैं। उनके विचार गम्भीर, सुस्पष्ट और सुलझे हुए हैं। जो व्यक्ति परा विद्या में निष्णात है उसका अपरा में पूर्ण अधिकार सहज ग्राह्य है, क्योंकि श्रुत-वचन है—'एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते।' (कठोपनिषद्)

श्रुतिवचन के अनुसार यह कहा जा सकता है कि माँ ने उसे जान लिया है जिसे जानने पर सब जानना हो जाता है—'येन ज्ञातेन सर्वमिदं विज्ञातं भवति।'

जीवन काल सीमित है और 'अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्याः।' को पृथक्-पृथक् भाव से जानना सम्भव नहीं है। अतः उनके आधार में पहुँचने पर सब जानना हो जाता है।

मनुष्य आनन्द के लिए नित्य व्याकुल है। उसकी समस्त क्रियाएँ आनन्द के लिए ही हैं क्योंकि आनन्द ही जीव का वास्तविक स्वरूप है। पर अविद्यावश जीव अपने मूलस्वरूप—जो आनन्द रूप है, को भूल जाता है और अपने से पृथक् भासित इस जगत् में आनन्द तत्त्व की खोज करता है, जिसमें प्रायः असफल ही रहता है। वह इस तथ्य को विस्मृत कर देता है : 'तमात्मस्थं येऽनु पश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वती नेतरेषाम्।' (कठोपनिषद्)

माँ आनन्द रूप हैं—इसमें दो मत नहीं। कभी भी किसी ने उनको शोकमय और उदास नहीं देखा। अपने प्रियजनों व बन्धुजनों के जीने मरने, हर्ष-विषाद, उन्नति-अवनति ने उनके जीवन को कभी प्रभावित नहीं किया। 'स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते।' (गीता) ब्रह्मरूप माँ को दुःख की छाया स्पर्श नहीं करती। नित्य ही वे क्रीड़ा परायण हैं।

प्रत्येक जीव ऐसा पद चाहता है, जिसके समान दूसरा कोई पद न हो जिससे च्युति न हो। पर ऐसा श्रेष्ठ पद उसके आत्म-स्वरूप के अलावा और कौन हो सकता है ? 'वरणीयः स एव'—एक मात्र वही पद वरणयोग्य है। किसी सामाजिक पद पर अवस्थित हुए बिना माँ में जिस शालीनता, श्री, और गौरव का अनुभव होता है, वह इस बात का द्योतक है कि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इन्होंने अन्यतम पद को प्राप्त किया है। अन्यतम-पद को प्राप्त किये बिना जीव की पदलिप्सा जायगी नहीं।

जीव यद्यपि स्वातंत्र्य का इच्छुक है—स्वातंत्र्य प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है फिर भी प्रत्येक क्षण वह अपने को बद्ध अनुभव करता है; पूर्ण स्वातंत्र्य की उपलब्धि उसे कभी नहीं होती। ब्रह्मरूप हुए बिना पूर्ण स्वातंत्र्य की उपलब्धि होगी भी कैसे ? ब्रह्म रूप होने के पश्चात् दूसरे की सत्ता रहती ही नहीं—तब 'आत्मा वा इदं सर्वम्'—फिर बाँधेगा कौन ? 'पर' रहा ही नहीं। 'स्व' ही 'स्व' है। माँ के जीवन में पूर्ण स्वातंत्र्य की झाँकी प्राप्त की जा सकती है। वे जब जो चाहती हैं कर लेती हैं। वहाँ विकल्प है ही नहीं। माँ कहती भी हैं—"यहाँ से जब जो होना होता है हो जाता है।" कामनाओं की परिपूर्णता के इस दृश्य को माँ के जीवन में देखकर व्यक्ति स्वतः ही ईश्वरोन्मुख होगा।

आत्म-विसर्जन में सुख है। परम आनन्द में स्थित होकर व्यक्ति सहज ही अपने छलकते हुए आनन्द से सबको आप्लावित करता है। इस अवस्था में स्थित होकर व्यक्ति वस्तुतः सेवा करता है क्योंकि उस समय ही वह जीव मात्र की दुःख निवृत्ति और आनन्द प्रदान में सफल होता है। इस तरह वह समष्टि के साथ एकाकार होता है। माँ के जीवन में आनंद के उल्लास के द्वारा व्यक्त हुई सेवा को हम स्पष्टतः देख सकते हैं। सेवा करने के भाव से वे सेवा नहीं करतीं। माँ कहती हैं—"यहाँ सेवा भाव नहीं है, जो होना होता है हो जाता है।"

एक ओर जीव की सहज प्रवृत्ति उसे प्रेय की ओर परिचालित करती है तो दूसरी ओर उसकी चिन्तन-शक्ति श्रेय की ओर। जीवन-पर्यन्त इस द्वन्द्व से व्यक्ति आच्छादित रहता है। किसे छोड़े और किसे ग्रहण करे यह एक समस्या रहती है। सन्त जीवन में इन दोनों का सम्मिलन दिखता है। तब सत्य और सौन्दर्य दो नहीं रह जाते। जीवन में 'सत्यं शिवं सुन्दरं' की प्रतिष्ठा हो जाती है, जीवन रसमय हो जाता है। माँ के जीवन में समन्वय के इस सूत्र को हम देख सकते हैं। यह भेदातीत अवस्था है। जो भेद में ऐक्य का दिग्दर्शन कराती है। माँ का वचन है—

"सेइ स्थितिते ऐ भिन्न आर कि दुइ नाइ—या 'ता'।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्री श्री माता आनन्दमयी का जीवन भारतीय-संस्कृति और सन्त जीवन का साक्षात् विग्रह है। भारतीय संस्कृति को उनसे बल प्राप्त है। सन्त जीवन का परिपूर्णतम प्रकाश उनमें उपलब्ध है। उनका दिव्य अलौकिक जीवन दुःखित मानवता के लिए सदैव प्रकाश स्तम्भ रहेगा और अपने चिर पूरित यशःकाय से वे सदैव हमारे सम्मुख ज्योतिमय रूप में विद्यमान रहेंगीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्रीं मुक्तानन्द-स्मरणांजलि

'भक्तदास'

परम पूजनीया प्रातः स्मरणीया दीदी माँ के श्री चरणों के प्रान्त में बैठने का सौभाग्य मुझे वर्षों से प्राप्त था। उनके असंख्य शिष्य-शिष्याओं और भक्तों के बीच मेरी उपस्थिति उनको हर समय याद रहती थी। जब कभी उनके पास जाकर उनके कोमल चरणों में शिर झुकाकर प्रणाम करके चुपचाप बैठ जाता तो आप कृपामयी होकर अपने चिरशान्तिमय वरद हस्त माथे पर रख देती थीं, कुशल पूछती थीं और प्रसाद भी देती थीं। मुखमण्डल पर सदा ही पवित्र मीठी मुस्कान की झलक रहती थी। उनके पास बैठने पर सारी सांसारिक भावनाएँ कपूर की तरह विलीन हो जाती थीं और हृदय में एक शांति और प्रेम का साम्राज्य, छा जाता था। ऐसा मालूम होता था मानों युगयुगान्तर से यह मेरे 'आपनजन' है। ऐसा स्वाभाविक स्वच्छन्द अथच निर्वैयक्तिक स्नेह देखकर चकित रह जाता था।

आज से प्रायः तेरह साल पूर्व सन् १९५८ में अक्टोबर के महीने में श्री श्री मां की पवित्र उपस्थिति में एलाहाबाद में नवरात्र और दुर्गा पूजा महोत्सवका आयोजन खूब समारम्भ और धूमधाम से किया गया। उस समय कलकत्ते से उस उत्सव में सम्मिलित होने के लिये मैं भी एलहाबाद पहुँचा। इससे पहले परमाराध्यतमा श्री श्री मां के पुनीत दर्शनों का सौभाग्य मुझे कई बार प्राप्त हुआ था। परन्तु भक्तों की भीड़ के व्यूह को तोड़कर उनके बिल्कुल सम्मुख में जाकर प्रणामादि करना संभव नहीं हो पाया। मैं सदा ही भीड़ से डरता हूँ यह भी एक कारण है। उस समय मालूम नहीं था कि पूज्या श्री श्री माँ की गर्भधारिणी माँ मर्त्यधाम में विराज रही हैं। उस महोत्सव के मण्डप पर मैं सबसे पहले दीदी माँ के दर्शनों से अपने को धन्य माना। गैरिकवसना स्नेहशीला संन्यासिनी सदा मातृसहचारिणी दीदी मां क्या किसी परिचय की अपेक्षा रखती थीं? पूजा मण्डप में दिव्य चिन्मयी श्री श्री माँ के पास संन्यासिनी शान्ति की प्रतिमूर्ति दीदी माँ की एक झलक स्नेहदृष्टि पाकर ही मैं चिरकाल के लिए उनके चरणों बिक गया।

दुर्गापूजा के चार दिन दिव्य आनन्द के उपयोग से कैसे बीत गये मालूम नहीं पड़ा जभी जभी दीदी माँ को देखा तभी तभी वही शान्त दिव्य मूर्त्ति का दर्शन! सब के प्रणाम स्वीकार कर रहीं। सबको प्रसाद दे रहीं सब के माथे पर स्नेह स्पर्श दे रहीं। क्या अपूर्व दृश्य! जीवन में वे क्षण अमूल्य निधि के रूप में आज भी संचित हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साधु ब्रह्मचारी भक्तों के पास दीदी माँ गिरिजी नाम से पुकारी जाती थीं। श्री श्री माँ भी उन्हें गिरिजी कहकर सम्बोधन किया करती थीं। दीदी माँ का संन्यास आश्रम का पूरा नाम था श्रीमत्स्वामी मुक्तानन्द गिरि। 'मुक्तानन्द' नाम स्वयं सार्थक हो गया दीदी माँ के पार्थिव शरीर के साथ सम्बन्ध होने से। गृहस्थाश्रम में दीदी माँ का नाम था 'श्री मोक्षदा-सुन्दरी देवी'। तभी मोक्ष देने में समर्थ थीं। अब तो मुक्ति का स्वरूप स्वयं बन गईं। स्वयं अमृत स्वरूप हो गयीं।

और एक नाम से भी दीदी माँ गृहस्थाश्रम में परिचित थीं। वह नाम था श्री मती विधुमुखी देवी। सच है दीदी मां का मुख मण्डल उस समय सुन्दरता में चन्द्रमा से भी बढ़कर था। सुन्दर गौरवर्ण शरीर सुकोमल अंगसौष्ठव की अधिकारिणी थीं। बंगला १२८४ साल के शुभ वैशाख के महीने में त्रिपुरा जिले के सुलतानपुर गाँव में दीदी माँ की दिव्य तनु का आविर्भाव हुआ था। हिन्दू ब्राह्मण परिवार में उनका आगमन होने से स्वाभाविक रूप से संस्कार अच्छे पड़े थे बचपन से ही। श्री श्री माँ का आविर्भाव भी वैशाख के महीने में हुआ है।

दीदी माँ के पिता श्री रमाकान्त भट्टाचार्य महाशय जी सदाशय, धार्मिक तथा आचार-वान ब्राह्मण थे। नित्य सन्ध्यावन्दन पूजा पाठ में उनकी स्वाभाविक रुचि वंशपरम्परा से ही मानो प्राप्त थी। इसी सद् ब्राह्मण कुल में बहुत से साधु-संन्यासी तथा शिक्षित व्यक्तियों का शुभागमन हुआ था। माता हरसुन्दरी देवी तो मानो साक्षात् हरसुन्दरी ही थीं। शान्त सुशीला पति-सेवा-परायणा हरसुन्दरी की अटूट भक्ति भी देवद्विज में थी, अतिथि को नारायण स्वरूप मानती थीं और उनकी सेवा परिचर्या में निपुण थीं। आर्थिक अवस्था उतनी स्वच्छल न होने पर भी देवसेवा और द्विज-अतिथियों की सेवा में त्रुटि नहीं हो पाती थी।

दीदी माँ अपने माता पिता की आठवीं सन्तान। बचपन से ही दीदी माँ बहुत ही शान्तस्वभावा और एकान्तप्रिय थीं। घर में गाँव में धार्मिक वातावरण में ही उनके बचपन के दिन बीत गये। पढ़ाई-लिखाई ज्यादा दूर तक नहीं चली। कुछ दिन के लिए गाँव की पाठशाले में पढ़ने जाती थीं। परन्तु बचपन में ही पिता रमाकान्तजी तथा माता हरसुन्दरी की स्नेहां-चल छाया खो बैठीं। और संसार में विकट परिस्थिति आ गई। पाठशाला जाना, पढ़ना-लिखना छूट गया। बंगला में लिखे हुए रामायण–महाभारत पुराणादि ग्रन्थों को स्वयं पढ़ लेती थीं और कभी कभी अपने हृदय की अध्यात्मभावना सहज सरल मार्मिक ढंग से बंगला कविता और लोकगीत के माध्यम से प्रकाशित कर देती थीं। दीदी माँ के स्वतःस्फूर्त स्वरचित गीतों और कविताओं का संग्रह सम्भव होने पर 'आनन्द वार्ता' के प्रेमी पाठकों के सामने भविष्य में प्रकाशित करने का प्रयास किया जायगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दीदी माँ की आयु जब केवल मात्र बारह वर्ष की थी तभी आपका विवाह संस्कार कराया गया। उस समय छोटी आयु में ही कन्यादान समाज में अच्छा समझा जाता था। प्रथा भी यही थी। श्री विपिनविहारी भट्टाचार्य महाशय पतिरूप में दीदी माँ के जीवन में आये। आपकी चारित्रिक दृढ़ता, भगवद्भक्ति प्रशंसनीय थी। स्वभाव के आप खेयाली थे। कभी कभी घर गृहस्थी में ज्यादा मन नहीं लगा उनका। एक तारा लेकर भगवन्नाम संकीर्त्तन में जब मग्न हो जाते थे तब आप का बाह्य ज्ञान लोप सा हो जाता था। आपका स्वर भी अच्छा था। देखने में आप सुपुरुष और गम्भीर प्रकृति के थे। संसार का सारा काम काज दीदी माँ स्वयं सम्भाल लेती थीं। आर्थिक अवस्था कभी कभी स्वच्छल नहीं थी। परन्तु उसके लिए दम्पति के मन में कोई चिन्ता भावना की बात नहीं थी। जो भगवान् देंगे उसीसे ही संसार का खर्च चलेगा ऐसी मानसिक स्थिति में सदा अटल रहते थे।

दीदी माँ की गोद आलोकित कर आठ सन्तानों ने जन्म लिया। परन्तु उनमें से कई तो स्वल्प काल तक मर्त्यधाम में रहकर परलोक को सिधार गये। परम पूजनीय श्री श्री माँ निर्मला सुन्दरी दीदी माँ की दूसरी सन्तान। श्री श्री माँ की दो बहिनें काफी दिन मातृ संघ में रहीं। पीछे उनका भी देहान्त हो गया। अब श्री श्री माँ के भाई श्री यदुनाथ भट्टाचार्य जी जो हमारे आश्रम में 'मामाजी' नाम से पुकारे जाते हैं माँ की सेवा में वानप्रस्थी होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

दादा महाशय और दीदी माँ के पवित्र सान्निध्य में भगवत् परिवेश में स्वयंसिद्धा-जीवन्मुक्त श्री श्री माँ के दिव्य जीवन लीला साधना के खेल के बहाने आरम्भ हुई। भोला-नाथ जी पति के रूप में आये। साधन-भजन का खेल खूब चला। अनेक श्रेणी के भक्त श्री श्री माँ की शीतल शान्तिदायिनी चरण छाया में आकर जमने लगे। दीदी माँ भी इसी समय वानप्रस्थी होकर श्री श्री माँ के साथ रहने लगीं। दादा महाशय का अकस्मात् स्वर्गवास हो गया। वैराग्य अपनी चरमसीमा पर पहुँच चुका। इसके बाद श्री श्री माँ के निर्देशानुसार हरिद्वार में पूर्णकुम्भ के समय १३ अप्रैल १९३८ ईसवी में चैत्र संक्रान्ति के शुभ पर्व पर कनखल के उच्चकोटि के ब्रह्मनिष्ठ संन्यासी श्री १०८ मंगलगिरि महाराज से संन्यास दीक्षा हुई। गुरु महाराज श्री मंगलगिरि जी स्त्रियों को संन्यास दीक्षा नहीं देते थे। परन्तु दीदी मां आनन्दमयी मां की माता हैं, इसलिए उन्होंने सहर्ष दीदी मां को संन्यास दीक्षा देना स्वीकार किया। संन्यास के बाद उनके श्री मुख से ये शब्द निकले—"बेटी ! मैं ने तुझे संन्यास के सारे मन्त्र और तत्त्व विधिवत् प्रदान किये हैं, मन में शंका न रखना।"

दीदी मां—मोक्षदा सुन्दरी देवी का संन्यास नाम 'मुक्तानन्द गिरि' हो गया। और उनके सब भक्त और शिष्य समाज में उनका इसी नाम से परिचय होने लगा। संन्यास-जीवन के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुण के भीतर प्रफुल्लित होकर उठे उनकी सेवा और सहनशीलता, सबके लिए विशेष रूप से गरीबों के लिए, असहायों के लिए, उनका त्याग और प्रेम अतुलनीय था। जो उनके दिव्य सम्पर्क में आया वही उनके सरल और निष्कपट व्यवहार पर मुग्ध हो गया है। श्री श्री मां तो सांसारिक बातों से अपने को दूर रखकर उच्चस्तर पर अपने खेयालों में रहती हैं। जनकल्याण स्वाभाविक रूप से उनसे हो रहा है। प्रचलित रीति से दीक्षा भी नहीं देती हैं। अतः उन्हीं के निर्देशानुसार दीदी मां दीक्षाप्रार्थियों को दीक्षा देती थीं। दीदी मां जीवन्मुक्त उच्चकोटिके सद्गुरु के रूपमें सामने आयीं। बहुत से लोगों ने उनको अपने गुरु के रूप में वरण किया। कुछ समय से शरीर वृद्ध होने के कारण स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था। परन्तु उनकी एक ही इच्छा प्रबल रहती थी कि श्री श्री मां का मधुरसंग उनको सदा ही प्राप्त रहे और इसी कारण सदा ही श्री श्री मां के साथ रहती थीं। परमस्नेहमयी संन्यासिनी दीदी मां श्री श्री दीदी मुक्तानन्द गिरि महाराज ने ९४ वर्ष की आयु में पुण्यसलिला भागीरथी के तटपर हरिद्वार में ९ अगस्त, १९७० को श्री श्री मां के सान्निध्य में सहज स्वाभाविक रूप से महाप्रयाण किया।

शास्त्र में लिखा आदर्श संन्यासी मृत्यु से परे हैं। आज दीदी माँ प्रत्यक्ष से परोक्ष में–मूर्त्त से अमूर्त्त में, व्यक्त से अव्यक्त में लीन हो गई हैं। सीमा के बन्धन से असीम में मिल गई हैं। ज्ञानस्वरुप-ब्रह्मस्वरूप हो गई हैं। यद्यपि शरीर में नहीं फिर भी भक्तों के प्रति, शिष्यों के प्रति उनकी असीम कृपा और आशीर्वाद सर्वदा ही अनुभव में आयेगा। प्रार्थना करता हूँ कि पवित्र राह चलते हुए हमलोग उनका सायुज्य प्राप्त कर सकें, एक दूसरे का सहायक बनकर साथ ही साथ भगवत् जीवन को इस मर्त्यधाम पर ला सकें तथा उन्हीं की कृपा से दिव्य जीवन के मूर्त्त विकास की उपलब्धि कर सकें।

"महापुरुषों को पहचानना और उनकी लीला को समझना साधारण जीवों के लिये सम्भव नहीं होता यदि वे स्वयं कृपा कर अपने को न समझावें। उनके उपदेशों का पालन करना ही मंगल है। भगवान् की इच्छा और उनकी लीला को समझने के लिए उनके प्रति पराप्रीति, परम प्रेम और पूर्ण आत्मसमर्पण की आवश्यकता है।"

—मुक्तानन्दगिरि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माता आनन्दमयी के आविर्भाव की विशेषता

श्री प्रियकान्त भट्टाचार्य

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ ४।१ ॥

धर्म की ग्लानि तथा अधर्म का अभ्युदय होने पर श्री भगवान् जीव रूप में आविर्भूत होते हैं। इसलिए, शास्त्रों में दस अवतारों का वर्णन मिलता है। लेकिन वास्तविकतया हम लोग अवतारों की संख्या दस में सीमित रखना नहीं चाहते हैं। इस समय भारत में शताधिक महापुरुष हैं जिन्हें उनके अनुयायी गण अवतार के रूप में पूजते हैं। शास्त्र में अनुराग रखने वाले कुछ लोग इस सिद्धान्त के विरोधी हैं। उनका सिद्धान्त मान लेने पर श्री श्री माता आनन्दमयी जैसे सर्वकल्याणमयी महान् विभूति परायणा को भी अवतार कहा नहीं जा सकता जिन्होंने स्वयं अपने को परब्रह्म नारायणी रूप में व्यक्त किया। श्री चैतन्य, श्रीरामकृष्ण आदि असाधारण शक्तिमान महापुरुषों को उनके असंख्य भक्तगण अवतार के रूप में मानते हैं, प्रश्न उठता है क्या यह संगत नहीं है? इस प्रश्न का सही उत्तर हमलोग गीता में ही प्राप्त कर सकते हैं। विभूति योग में स्वयं भगवान् ने कहा है—

यद् यद् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ॥ १०।४९

विभूति योग में उदाहरण के रूप में उल्लिखित सबको अवतार के रूप ग्रहण हो इस तर्क को विरस्त करने के लिए ३१ वाँ श्लोक का उल्लेख किया जा सकता है।

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥१०।३१

यहां प्रतीत हो रहा है कि पवन, मकर तथा जाह्नवी को और मर्यादा पुरुष श्री रामचन्द्र को एक ही पर्याय में रखा गया है। लेकिन एकमात्र श्रीरामचन्द्र को छोड़कर अन्य कोई दस अवतारों में नहीं आता है।

श्रीमद्भागवत के प्रथम स्कन्ध के तीसरे अध्याय में छः से २५ श्लोकों में २२ अवतारों

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

का उल्लेख हुआ है और २६ संख्या के श्लोक में कहा जा रहा है—

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्त्वनिधेर्द्विजाः।
यथा विदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥ ३।२६ ॥

यहाँ स्पष्टतया अवतार असंख्य हैं स्वीकृत हुआ है और उल्लिखित २० श्लोकों में जिन २२ अवतारों का उल्लेख किया गया है उनमें प्रसिद्ध दस अवतारों के साथ, श्रीकृष्णजी का नाम भी आता है। इस आधार पर श्रीश्री आनन्दमयी माँ को अवतार के रूप में ग्रहण करनेमें किसी की आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यद्यपि श्रीश्री माँ को अवतार के रूप में ख्यापित करने से उनकी महत्ता अधिक नहीं बढ़ती है, तो भी उन्हें अवतार के रूप में ग्रहण करना ही पड़ता है। क्योंकि मूर्ति धारण करती हुई उनका अवतरण इस मर्त्य-भूमि में हुआ है—जैसे कृष्णजी यहाँ स्वयं अवतीर्ण हुए थे। इसीलिए २२ अवतारों के नामों की सूची में उनका भी नाम आया, लेकिन उससे उनका महत्त्व सम्यक् रूप से प्रकट नहीं हुआ इसीलिए कहा गया—'एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्', ठीक उसी प्रकार अवतार कहने से माँ का यथार्थ परिचय नहीं हो सकता। उनका परिचय उन्होंने अपने मुँह से व्यक्त किया—'मैं पर-ब्रह्म नारायण हूँ।'

कोई कोई अपने गुरु के सिवा अन्य किसी को अवतार मानने को तैय्यार नहीं हैं। फिर किसी-किसी के मत में अपने गुरु को अवतार कहने से उन्हें सीमित कर दिया जाता है। दोनों ही सिद्धान्त भ्रामक हैं, यही दिखलाने के लिए उपर्युक्त प्रमाण उपस्थित किया गया और माँ को अवतार मानते हुए उनकी विशेषता के बारे में कुछ बतलाने का आग्रह कर रहा हूँ।

श्रीश्री माँ के जन्म से विवाह काल तक ऐसी कोई विशेषता दिखाई न पड़ी जो महापुरुषों के बाल जीवन में न हुई हो। लेकिन विवाह जीवन से प्रारम्भ होकर जिन जिन अतिलौकिक घटनाओं का समावेश हुआ है उन्हीं से उन्हें अन्य महापुरुषों से विशेषता-मंडित कर दिया है। उनमें पहला यह है कि अपने पति को दीक्षा देने की घटना में यह प्रतीत होता है कि एक नव विवाहिता बालिका वधू ने पति की इच्छा के विरुद्ध अपने भीतरी प्रभाव से उन्हें दीक्षा दी और पद्धति भी अभिनव है। इसके बाद उल्लेख योग्य बात—यह उनकी स्वभाव से प्राप्त साधना है। पाठशाला की स्वल्प विद्या जिनकी विद्या की सीमा है उन्हीं ने शास्त्रों में वर्णित कष्टकर आसन मुद्रा आदि का अभ्यास गुरु के उपदेश के बिना ही आयत्त किया। जो षट्चक्र शास्त्र गुरु के उपदेश से तथा दुष्कर तपश्चर्या से थोड़े इने गिने योगियों के ज्ञान नेत्र के सम्मुख प्रकाशित होता है वह भी श्रीश्री माँ अपने भीतर अनुभव करती हुई उनकी चित्त भूमि पर अंकित करती थीं, उस समय उनकी आहार की मात्रा सुनकर आश्चर्य लगता है। अपने पति तथा अतिथि अभ्यागतों के लिए उन्हें उस समय दिन रात असाधारण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रम करना पड़ता था अथच वे अपने शरीर की रक्षा के लिए २।४ दिन बाद १।२ अन्नों के कण भोजन करती थीं। बहुत से साधकों के जीवन में एकान्त साधन काल में स्वल्पाहार तथा अनाहार का उदाहरण मिलना असम्भव नहीं, लेकिन इस प्रकार दीर्घकाल तक अनाहार में रहने का उदाहरण हमें मालूम नहीं है।

इसी समय चुम्बक पत्थर के आकर्षण से लौहे जैसे आकर्षित होते हैं उसी प्रकार एक एक कर भक्तों का समागम होने लगा और नाम कीर्तन भी प्रारम्भ हुआ। कीर्तन के समय दोनों पैरों के अँगूठे के सहारे कीर्तन के स्थान में नृत्य के भंगी से चलना एक आश्चर्यकारी घटना है। परवर्ती काल में वैद्यनाथ धाम में श्रीश्री बालानन्द ब्रह्मचारी जी के आश्रम में इसी ढंग से चलकर उन्होंने स्वामीजी से साक्षात्कार किये थे और ब्रह्मचारी जी ने उन्हें स्वयं भगवती कहकर सम्बोधित किया था।

गीता में श्रीकृष्णजी ने कहा है—

> वहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
> तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥ ४।५॥

भोलानाथ के पूर्व जन्म के स्थान का प्रदर्शन तथा असम्पूर्ण साधन की पूर्ति का निर्देश उनके कालातीत अविलुप्त ज्ञान का परिचय प्रदान करता है। भारत के भिन्न भिन्न प्रान्तोंके दूरवर्ती तथा दुर्गम स्थानों में लुप्त देवस्थान तथा मन्दिर आदि के यथायथ स्थानों का निर्देश तथा उनका संस्कार उनके ज्ञान का परिचय तथा आविर्भाव की सार्थकता प्रदान करते हैं।

नित्य ही ब्रह्मज्ञान में स्थित होने के कारण श्रीश्री माँ कदापि भोलानाथ का 'इस शरीर के पति' के रूप में परिचय देती थी, कभी 'मेरे पति' नहीं कहती थीं। क्योंकि द्वैतज्ञान देहधर्मी है। उनके दुर्गम कैलास मानस सरोवर की यात्रा का विवरण जिन्होंने पढ़ा है अवश्य ही लक्ष्य किया है कि कैसे वे पर्वतीय लोगों की भाषा न जानती हुई भी वहाँ के बालवृद्ध स्त्रियों को अपने संग के द्वारा क्षणभर में निजी बना ली थीं। दूसरी ओर उनकी निभृत स्थिति में सूक्ष्मदेही महात्माओं के साथ दिव्यभाषा में आलोचन भी अनन्य साधारण बात है।

श्रीश्री माँ की मर्त्यलीला में लेखक के मतानुसार अतीव आश्चर्यपूर्ण घटना वह है जब वे बालिका वधू थीं उस समय सबके अज्ञात ही गाँव के एक ब्राह्मण पंडित और अपने पिता को साथ लेती हुई दूर उत्तर प्रदेश की यात्रा करना था। उस समय माँ कीर्तन में भावावेश के समय छोड़कर कभी अपनी घूँघट नहीं खोलती थीं। अपनी बोलचाल की भाषा छोड़कर अन्य भाषा भी नहीं जानती थीं। तिस पर भी दुर्गम पर्वत प्रदेश के राजा महाराजा से लेकर साधारण मनुष्य स्तर के आबालवृद्ध वनिताओंके हृदय में अपना आसन बिछायी हैं। जो सब भूतों का आत्मस्वरूप है एकमात्र उन्हीं के द्वारा यह सम्भव है। परवर्ती समय में भारत के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भ्रमण करते समय भी यह दृष्टिगोचर हुआ है। लेकिन उस समय उनका अलौकिक प्रभाव सर्वविदित था और जनमान्य महापुरुषगण भी उनके साथी होते थे। इन्हीं सब कारणों से पहले कही गयी घटना उनके दिव्य जीवन की सबसे अधिक आश्चर्यजनक घटना है और अन्य अवतारकल्प महापुरुषों से उनकी यह विशेषता है।

श्रीश्री माँ की हीरक जयन्ती के उपलक्ष में लिखित इस निबन्ध के बहुत से श्रोता श्रीश्री माँ के अलौकिक दिव्य जीवन के प्रत्यक्षदर्शी हैं। अन्य सभी श्रीश्री माँ के श्रीचरण-कमलों के दर्शन के सुख से वंचित लेखक की अपेक्षा उनके दिव्यचरित के सम्बन्ध में अधिक परिचित हैं। इसलिए उनके सुदीर्घ तथा घटनापूर्ण दिव्यजीवन की विस्तृत आलोचना करने में अपनी अयोग्यता समझकर इस पावन क्षण में हृदय की भक्ति निवेदन करने के अवसर प्राप्त करने के लिए श्रीश्री माँ के चरणों में वाक्यरूपी पुष्पांजलि अर्पित कर रहा हूँ।

कामना कष्ट दायिनी !

सन्त इब्राहीम किसी पर्वत पर जा रहे थे। रास्ते में अनार के वृक्ष पर सुन्दर सुन्दर फलों को देख कर उनके मन में फल खाने की इच्छा जागी। उन्होंवे एक फल तोड़ा किन्तु वह खट्टा निकला, अतः उसे फेंक कर आगे बढ़े। कुछ आगे जाने पर एक मनुष्य मार्ग के पास लेटा हुआ मिला जिसे मक्खियाँ काट रही थीं; किन्तु वह उन्हें भगाता नहीं था।

मनुष्य ने कहा,—कहो इब्राहीम कैसे आये ?

इब्राहीम ने पूछा—आप मुझे कैसे पहचानते है ?

"एक भगवत्-प्राप्त व्यक्ति से कुछ छिपा नहीं रहता।"

"आप भगवान् से क्यों नहीं प्रार्थना करते कि इन मक्खियों को आप से दूर कर दें ?"

"तुम क्यों नहीं प्रार्थना करते कि तुम्हारे मन में अनार खाने की कामना न हो। मक्खियाँ तो शरीर को ही कष्ट देती हैं, किन्तु भावनायें तो हृदय को पीड़ित करती हैं।"

(साभार कल्याण से)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुक्ति बाबा की मुक्ति यात्रा

तपकुमार

आज मुक्ति बाबा हमारे बीच नहीं हैं। उनका नश्वर शरीर आज माँ गंगा के पुण्य सलिल में समाहित हो गया है। और उनकी आत्मा ब्रह्मलीन आत्मलीन मातृलीन हो गयी है। शास्त्रों में पढ़ा, महात्माओं की चरणछाया में सुना कि सर्वत्यागी सर्वभूत के हित में रत संन्यासी की मृत्यु नहीं होती है। समय आने पर शरीर ही छूट जाता है। जाड़े के अन्त में वसन्त के पहले सूखे पत्तों की तरह झर जाता है, झरने की जल की तरह बहता जाता है, पिघल जाता है, लेकिन आत्मा नारायण शिवस्वरूप-ब्रह्मभूत हो जाती है। वे थे सच्चिदानन्दघन अजर-अमर, ब्रह्म में ही उनकी गतिस्थिति लय है। चिरन्तन सृष्टि की यह स्वच्छन्द लीला है। मुक्तिबाबा आज हम सबके साथ मिल गये हैं—फिर हम सब तो हैं माँ में और रहेंगे भी। बाहर से उनका वह उन्नत ललाट, रस तथा कौतुक से भरे उज्ज्वल नयन, दीर्घ, बलवान बुद्धि, प्रोज्ज्वल आकृति देखने को नहीं मिलेगी। दीर्घकाल तक वे हमारे बीच रहे तथा माँ के विशेष कृपा पात्र थे—उनकी स्मृति हमारे मानस-पट से कभी मिट नहीं जायेगी। भक्तों के हृदयरूपी मणिकक्ष में उनकी स्मृति के हीरक कण अपनी महिमा के साथ जगमगाते रहेंगे।

मुक्तिबाबा दीर्घायु थे। नब्बे वर्ष के लगभग पहुँचकर उन्होंने अपने शरीर को छोड़ा। कई वर्षों से उनका शरीर ठीक नहीं चल रहा था। माँ के खयाल से दवा तथा सेवा आदि का प्रबन्ध हो रहा था। अन्तिम दिनों को मुक्तिपुरी वाराणसी में ही बिताये। यहाँ उनके दीर्घ जीवन के आलेख्य का सम्पूर्ण चित्रण करना सम्भव नहीं। फिर भी महान् पुरुषों के जीवन के सभी भाग सुन्दर तथा प्रकाशमय हैं। इसलिए जितना जाना जा सकता है उसी से हमारा मंगल है। क्योंकि भक्तों के जीवन से ही लीलामय भगवान् का नित्य लीलाविलास चलता रहता है।

वे शिशुकाल से ही वैराग्यशील थे, संसार के प्रति अनासक्ति तथा सेवाधर्म के प्रति उनका स्वाभाविक आकर्षण था। मन ही मन समझ लिये थे कि मायामय संसार का पथ उनके लिए नहीं—महान् कार्यों के आह्वान से महान् कार्यों के लिए उनका जीवन नियत था। आध्यात्मिक आनन्द के अनुभव से जीवन को सत्य-शिव आनन्दमय करेंगे, निःस्वार्थ सेवा से सब जीवों में परमेश्वर को देखेंगे, जीवन के सब क्षेत्रों में इसी भावना को प्रस्फुटित करेंगे। जीवन भर इस प्रकार उपासना में उनका जीवन उत्सर्गित हुआ था। वे थे सत्यवाक्, स्पष्टवक्ता जितेन्द्रिय। साधक के इस व्रत के पालन में जीवन के अन्तिम दिन तक वे लगे थे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने पूर्व जीवन के सम्बन्ध में पूछने पर मुक्तिबाबा उत्तर नहीं देते थे, या थोड़े इशारे से कहते—संन्यासियों का पूर्व आश्रम मृत है। जो कुछ भी हमलोंगों ने इधर-उधर से संग्रह किया वह इस प्रकार है, मुक्तिवावा के पूर्व आश्रम का नाम था कामिनी कुमार चक्रवर्ती साधारण नाम था चन्द्र। संन्यास ग्रहणके बाद उनका नाम पड़ा निर्गुणानन्द। जब वे रामकृष्ण मिशन में थे तब वे मुक्ति महाराज नाम से परिचित थे। माँ के दरबार में आने पर वे मुक्तिवावा नाम से सम्मानित होते थे। उनके पिता काशीचन्द्र चक्रवर्ती और माता कालीतारा देवी नैष्ठिक ब्राह्मण दम्पति थे। उनका जन्म नोआखाली जिले के अन्तर्गत खाटला ग्राम में हुआ था। उनके तीन भाई और चार वहन थे। इस समय उनकी छोटी बहन जीवित हैं। सुनने में आया कि मुक्तिवावा के जन्म के पहले उनके पिता माता एक बार चट्टग्राम में चन्द्रनाथ तीर्थ के दर्शन के लिए गए थे और वहाँ शिवजी से रूप गुणों में उनके समान एक पुत्र की प्रार्थना की। इसके बाद कालीतारा देवी के गोद को प्रकाशित कर एक पुत्र का जन्म हुआ—स्नेह से नाम रखा गया चन्द्र।

पढ़ने लिखने में वे तेज थे, बुद्धि भी तेज थी। उस काल में Entranec परीक्षा में उत्तीर्ण होकर ढाका में पढ़ने गये और Daeca ashanaua sehool of Enginecring में भरती हुए। उसी समय में वैराग्य आया। Final परीक्षा देने के बाद वे एक साधु के साथ घर छोड़ दिये। बड़े भाई नन्दकुमार जी नाना स्थानों में खोज करते हुए खबर पाते ही उन्हें फिर घर लौटा लाये। लेकिन विश्व संसार के जो मालिक हैं अगर वे किसी को बुलावें तो उनकी पुकार कौन नहीं सुनता है। संसार की अनित्यता के बारे में जो जान गया है क्या वह फिर संसार के बन्धन में पड़ सकता है? तीन दिन बाद 'चन्द्र' फिर गंभीर रात में संसार की माया छोड़कर अनिर्दिष्ट की ओर चल पड़े। इसके बाद कामिनी कुमार की और कोई खोज नहीं मिली। चेष्टा चलती रही और कई साल बाद समाचार मिला। बड़े भाई जाकर फिर उन्हें घर लौटा लाये। कुछ काल तक नोआखाली के चंण्डीपुर के M. E. Sehool में प्रधान शिक्षक का काम करते रहे, लेकिन मन संसार में नहीं बैठता था। बार बार चले जाते थे, फिर लौटा कर लाये जाते थे। अन्त में सब से उन्होंने कह दिया कि अब गुरु के आश्रम में रहकर साधन भजन करेंगे।

एक अपूर्व अवसर मिल गया। किसी काम से कलकत्ता आना पड़ा और बाग बाजार में श्री श्री माता सारदामणि का स्नेहस्पर्श लाभ हुआ, शरण मिला और चिरकाल की अभिलषित वस्तु दीक्षा भी मिली। जीवन उनके लिए धन्य हो उठा, और बेलुड़ मठ में अन्य त्यागी संन्यासी भाइयों के साथ साधना तथा सेवा में अपने को लगा दिये। जीवन के दीर्घ २५ साल रामकृष्ण मिशन की भिन्न भिन्न शाखाओं में रहकर सेवा तथा साधना के कार्य चलते रहे। वे काशी अद्वैत आश्रम में लगभग १२ वर्ष रहे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

१९४० साल में किसी समय श्री श्री माँ का काशी में आगमन हुआ और दिवंगत निर्मलचन्द्र चट्टोपाध्याय जी के रामापुरा के भवन के प्रांगन में स्थित कुटी में रहती थीं। इसी स्थान में मुक्तिबाबा को पहले-पहल माँ का दर्शन मिला। उस समय श्री माँ भाव समाधि में स्थित रहती थीं। सर्वदा नयन भावावेश में आविष्ट रहते थे। सर्व अंग अपार्थिव स्निग्ध ज्योति से मण्डित रहता था। कभी कभी मधुर स्वर से कुछ बातें करती थीं। श्री माँ के प्रथम दर्शन से ही मुक्तिबाबा मोहित हो गये थे। मन ही मन उसी दिन माँ के चरणकमलों में अपने को सौंप दिये थे। धीरे धीरे आना जाना बढ़ने लगा; अन्त में एक दिन सब गुरु भाइयों से छुट्टी लेकर श्री माँ के पास चले आये।

इसके बाद श्री माँ के साथ वे भारत के विभिन्न तीर्थों का दर्शन करने लगे, अपनी साधना भी चलती रही। विन्ध्याचल और राजगीर में श्री माँ की बहुत कृपा मिली। राजगीर से पुरीधाम गये। वहां मन्दिर में दर्शन करते समय साथी अमेरिका के युवक जयानन्द के साथ पंडाओं के प्राप्य लेकर झगड़ा हुआ। मुक्तिबाबा जब समझौता करने गये तब पंडा लोगों ने उन्हें ऊपर से गिरा दिया। फलस्वरूप उनके कमर के नीचे वाली हड्डी टूट गयी, दर्द से वे कातर हो गये।

खबर पाते ही श्री माँ ने स्वयं जाकर मुक्तिबाबा को कलकत्ता लाकर पी. जी. अस्पताल में भरती कराया। आपरेशन हुआ, सेवा यत्न भी होने लगा। जब अच्छे हुए काशी के आश्रम में आकर रहने लगे। विगत कई सालों से आश्रम के बासन्ती मंडप के बरामदे को शोभित करते हुए रहते थे।

मुक्तिबाबा के बाहरी व्यवहार को देखकर उनके हृदय में धर्म तथा भक्तिभाव का जो निरन्तर अन्तःस्रोत बहता था उसे जानना सम्भव न था। बाहरी व्यवहार कठोर या अन्य प्रकार मालूम पड़ता था। श्री माँ कभी-कभी काशी के आश्रम में आकर जब यज्ञशाला के सामने के आँगन में बैठती थीं उस समय मुक्तिबाबा लाठी के सहारे श्री माँ के सामने आकर बालक जैसे मस्तक झुकाते हुए प्रणाम करते थे और माँ से प्रार्थना करते—'माँ मुझे पार कर दो।' श्री माँ अपनी स्वाभाविक मधुर वाणी से कहतीं—'बाबा, तुम तो नित्यस्थित हो, तुम्हारे लिए परापार क्या है? सर्वदा तुम पार होकर ही हो। यह छोटी लड़की सर्वदा तुम्हारे पास ही है। काशी विश्वनाथ अन्नपूर्णा के आश्रम में मुक्तिक्षेत्र में मुक्तिबाबा स्वयं मुक्त-स्वरूप तुम हो।' आदि सुमधुर वाणी श्रीमाँ के मुँह से निकल आती। मुक्तिबाबा और अन्य भक्तमण्डली मोहित होकर श्रीमाँ की ओर देखते रहते, और हमलोगों की श्रीमाँ मुस्कराती हुई कहतीं—"इस छोटी लड़की को बाबा प्यार करते हैं, इसलिए उसकी टूटी-फूटी बोली भी उन्हें अच्छी लगती है, बाबा को आनन्द मिलता है, सभी तो एक ही है जो स्वयं है।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुक्तिबावा हास्य रस प्रिय और उपस्थित बुद्धिवाले थे। जीवन के आनन्द के प्रति उनका स्वाभाविक आकर्षण था। जिस वस्तु को यथार्थ तथा सत्य समझते थे उसे ग्रहण करने में कुण्ठा नहीं होती। श्री माँ के दर्शन के बाद ज्यों ही मन में धारणा हुई यही सच्चिदानन्दमयी माँ हैं, इनके दर्शन स्पर्शन तथा संग होने में ही जीवन की सार्थकता है, तुरन्त अपने स्थान के सब आकर्षण और पद की मर्यादा छोड़कर श्री माँ के पास चले आये। यह कम महत्त्व की बात नहीं है।

एक बार की बात है। श्रीमाँ काशी में आयीं। ऊपर अन्नपूर्णा मन्दिर के सामने बरामदे में सत्संग शुरू होने जा रहा है। श्री माँ बैठी हैं, भक्तगण फलमूल उपहृत कर प्रणाम करते हुए अपने स्थान में जाकर बैठ रहे हैं। उपस्थित सज्जनों में देवशंकर सान्याल जी भी हैं। आज कई दिनों से माँ से अधिक बात पूछने का उनको अवसर मिला है। आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर श्रीमाँ के श्रीमुख से सुनने का सौभाग्य हमलोगों को प्राप्त हुआ है। भूपेन दादा और उनकी नवविवाहिता पत्नी पूर्णिमा दीदी आकर श्रीमाँ को प्रणाम किये। श्रीमाँ उनसे नाना विषयों के बारे में पूछने लगीं। कभी भूपेन दादा से और कभी पूर्णिमा दीदी से जागतिक विषय लेकर बातचीत होने लगी। श्रीदेवशंकर जी ने इससे श्रीमाँ से नाराज होकर कहा—"माँ, बहुत देर तक जागतिक बातें हुईं, यह आध्यात्मिक बातें करने का समय है, यह सत्संग का समय है।" उनकी इस बात को सुनकर श्रीमाँ के भाव में कैसी एक विशेषता दिखाई पड़ी। अन्य सभी के मन में बात अच्छी न लगी। सबका मुँह गम्भीर हो उठा, सभी चुपचाप बैठे रहे। मुक्तिबाबा ने देवशंकर जी की ओर ताककर कहा—माँ जो कुछ हमलोगों से कहती हैं सभी आध्यात्मिक बात है। हमलोगों की माँ के बारे में कोई दिशा नहीं है, दिशा एक ही है—आध्यात्मिक-जागतिक आदि भिन्न-भिन्न दिशाएँ नहीं हैं, उनके सामने सब तत् स्वरूप है, वे ही स्वयं इस रूप में।' थोड़े बाद मुस्कराकर कहा—शास्त्र में हम लोगों ने पढ़ा, भूमा में ही सुख है। अल्प में सुख नहीं—इसलिए भूमा की चर्चा होनी चाहिए। श्रीमाँ के दरबार में अब तक 'भूमा' की ही चर्चा होती रही। यह सुनकर सभी आश्चर्य में पड़ गये। मुक्तिबाबा जैसे बहुत नाराज हुए ऐसा दिखला कर कहा, "क्यों? भूपेन का 'भू' और पूर्णिमा का 'मा' उन दोनों के मिलने से 'भूमा' बनती है, इनकी ही तो बात हो रही थी न?" सुनकर श्रीमां के साथ सभी हँसने लगे। देवशंकर जी भी इसमें बाकी न रहे। वातावरण फिर पहले जैसा शान्त सुन्दर हो उठा। मुक्तिबाबा के प्रसंग में इस प्रकार की बहुत सी बातें हैं। यहां सब कहने का अवसर कम है।

श्रीमां काशी के बाहर जब रहती थीं। मुक्तिबाबा के बारे में समाचार लेती थीं और उनकी सेवा आदि का प्रबन्ध अपने निर्देश से कराती थीं। करीब दो वर्षों से उनके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्तिम दिन तक श्रीमां के आदेश से आश्रम के त्यागी सेवानिष्ठ ब्रह्मचारी श्रीमान् देवदत्त जी ने मुक्तिबाबा की सेवा में अपने को नियुक्त कर रखा था। दवा आदि का प्रबन्ध पानुदादा स्वयं करते थे।

मुक्तिबाबा की मुक्तियात्रा से समय श्रीमां देहरादून में थीं। लेकिन उनका अन्तिम दिन सन्निकट है श्रीमां को ज्ञात था। इसलिये समाचार पाने से पूर्व ही २४ घंटे पहले अखंड नाम कीर्तन, जप, मौन आदि प्रारम्भ करायी थीं। स्पष्ट रूप से प्रकाशित नहीं किया। समाचार मिलने पर श्रीमां ने कहा—"मुक्तिबाबा मुक्त हो गये। इस शरीर से जो प्रार्थना किया था उन्हें वह प्राप्त हुआ। काशी वास विश्वनाथ अन्नपूर्णा का धाम। सज्ञान में सब कुछ। यह शरीर भी वहाँ है।"

मुक्तिबाबा के अन्तिम समय का जो वर्णन हमें श्रद्धेय ब्रह्मचारी जी के पत्र से मिला उसके कुछ अंशों का उद्धरण देकर यह लेख समाप्त करूँगा।

"आप अस्पताल में जाना चाहते हैं क्या?" मुक्तिबाबा ने अपनी सम्मति दी। सब लोग कहे—"आप वयोज्येष्ठ वृद्ध महात्मा हैं, आज अस्पताल का अन्तर्विभाग आपसे उद्घाटित हुआ। यह हमारा सौभाग्य है और आपकी एक स्मरण रखने योग्य कीर्ति है।" शय्या पर लेटे हुए आप जब वाहकों द्वारा ढोते हुए जा रहे थे, आपकी आँखों से आँसू बह रही थी। बहुतों के द्वारा अभ्यर्थित होते हुए जब दो मंजिल के अपने नियत कमरे के खाट पर आप सुलाये गये उस समय भी आँसू बह रही थी। बगल में स्थित सेविका ने उनकी आँसू पोंछ दी। आश्रम में अन्तिम दिन तक दिवा रात्रि कठोर श्रम से सेवा कर रहे थे ब्रह्मचारी देवदत्त। उन्होंने दूध से मिला हुआ अन्न का मंड उन्हें खिलाया।

दूसरे दिन मुक्तिबाबा ने सोचा—"माँ ने इस अस्पताल को बनाया, इसके अन्तर्विभाग में लाकर, मिशन अस्पताल में जाने की आवश्यकता दूर की, मेरे संशय को भी हटाया। आज से मैं सब प्रकार जागतिक चिन्ता से भी मुक्त हुआ। आज ही मेरा अन्तिम क्षण हो उपस्थित हो, मैं देखूँ कैसे माता आनन्दमयी मेरे प्राणों को देह से मुक्त करे।" प्रकाश से कहा—"दीदी, आज ही मैं जा रहा हूँ।"

दोपहर के पथ्य लेने के बाद विश्राम में कुछ समय बीता। दिन के दो बजे उनका नाभिश्वास चलने लगा। डा० माथुर खबर पाते ही चले आये। सेविकाओं में प्रधान प्रवीण सुईस महिला, अंग्रेज सिस्टर, कार्य में कुशल भारतीय महिला मुक्तिबाबा के तीनों ओर खड़ी हो गयीं। डाक्टर साहब भीतर और बाहर देख-रेख में लगे थे। आधे घंटे में सब लोग जान गये। आश्रम से दण्डी, महात्मागण, ब्रह्मचारीगण, पानुदादा, पटल दादा, शक्ति, बहन बिन्दु और बहुत सहृदय सज्जन आकर उस कमरे के सामने एकत्रित हुए।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आक्सिजेन के नल को एक ने नाक और मुँह के सामने पकड़ रखा, डाक्टर साहब मात्रा बढ़ाने के लिए समय पर आकर यन्त्र में हाथ लगा रहे थे। आरामकुर्सी की तरह तकिया को पूरब की ओर कुछ ऊँचा कर दिया गया, इससे श्वास लेने तथा छोड़ने में कम कष्ट हो रहा था। श्वास लेते समय थोड़ी आवाज हो रही थी, कफ की घर्घर आवाज न थी। पैर स्तब्ध से हो गये, श्वास के दबाव से नाभि, पेट, छाती हिलते रहे। आँखों की पुतलियाँ ललाट की ओर उठ गयीं, मालूम हो रहा था कि उन्होंने शंखिनी मुद्रा में आँखों को बाँध लिया है। कभी कभी देवदत्त उनके मुँह में रुई भिगोकर पानी दे रहे थे। वह गंगाजल था। पंखा धीमे गति से चल रहा था। सभी निर्वाक् हो खड़े हैं। एक सेविका कोमल रूमाल मस्तक में फेर रही है। पानी की मात्रा कुछ ज्यादा होने के कारण खांसी आ गयी। क्रमशः उदर का स्पन्दन भी रुक गया, आंखें भी बन्द हो गयीं, मालूम हुआ, ध्यान में कुछ अनुभव हो रहा है। इसी बीच में दो एक बार इनजेकसन लगाया गया। राजगीर तथा पुरी के मुक्तिबावा के साथी जो यहां उपस्थित थे, पानुदादा ने उन्हें कमरे के भीतर जाकर मन ही मन नाम करने को कहा। उन्होंने समझा और १०।१२ मि० समय बाकी है।

डाक्टर साहब ने स्थिति समझकर आक्सिजेन देना बन्द कराया। जो नाम कर रहे थे, अभी दीर्घ प्लुत स्वर से ॐकार ध्वनि की उच्चैःस्वर से आवृत्ति करने लगे। पाँच मिनट बाद मेट्रन (मेम साहब जी) और निकट जाकर प्रणव ध्वनि करने को कहीं, ध्वनि और गम्भीर होकर गायत्री छन्द जैसे उच्चारित होने लगी। मालूम होने लगा। मुक्ति मार्ग के यात्री ने—असीम की ओर चलने वाले ने अब शरीर के साथ स्वल्प मात्रा में ही प्राणों का सम्पर्क रख लिया है। यात्रा के मार्ग में संसार के कोलाहल, नाना विचित्र दृश्य के जगत् को धूम के समान निरर्थक तथा त्याज्य समझ लिया है, आहार निद्रा आदि जीवों के लिए आवश्यक स्वभाव अब अदृश्य हो गये। शब्द ही उनका आश्रय, रथ या विमान है, भोजन का संस्कार भी शब्द ही पूरा कर रहा है, अनुराग की पाली जो थी वह भी समाप्त प्राय है इतने दिनों तक शरीर को 'मैं' या 'अहं' या 'मेरा' समझकर जिस दृढ़ संस्कार से बांध लिया गया था, मुक्ति होगी उसी की। इस अहं को जो लोग आकाश वायु तथा महाशून्य में मिला सकते हैं उनकी बात बढ़िया है। जो लोग वासनालय या मनोलय कर सकते हैं वह भी अच्छी बात है—जितना हो सके।

जो लोग बर्फ के टुकड़े को जल में मिला देना चाहें, वे लोग निराधार का कोई आधार ढूँढ़ लें, जो लोग वेदान्त के प्रान्तीय सूत्र को लक्ष्य बनाकर समझते हैं मन के साथ प्राण भी विलीन हो जाते हैं—उसे एक दृष्टि से 'प्राणस्तम्भन क्रिया' कहा जा सकता है—वे लोग वैसा ही करें—लेकिन प्रतीत होता है यह जो प्राणरश्मि या गायत्री प्रकरण का 'भर्ग'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

या प्राणों का तेज, जहाँ से निर्गत हुआ है या विकीर्ण हुआ है—वहां जाकर अपने को आहुति न दिये बिना उसे शान्ति न मिलेगी। जो अशान्त है उसका मिलन कहां ? बात जो भी हो, प्राण के त्याग या देहभूमिका के त्याग के समय मुक्तिबाबा को इतने विचार का अवसर नहीं मिला। उनका दृढ़ विश्वास था यह प्रणवध्वनि ही गुरुदत्त बीज है। यह ध्वनि जहां से आयी है उस परम सूक्ष्म शब्द के भंडार में मुझे ले जायगी। प्राणरूप हंस है जिसका बीज वह प्रणवरूपी शब्दमंडल से घिरे रहकर इतने दिनों तक श्वास प्रश्वास का खेल खेल रहा था। अब मैं माँ का पुत्र माँ की गोद में लौट जा रहा हूँ।

नीचा सिर क्यों ?

एक सज्जन बड़े दानी थे, उनका हाथ सदा ही ऊँचा रहता था; परन्तु वे किसी की ओर नज़र उठाकर नहीं देखते थे। एक दिन किसी ने कहा—आप इतना देते हैं पर आँखें नीची क्यों रखते हैं ? चेहरा न देखने से आप किसी को पहिचान नहीं पाते, इसलिये कुछ लोग आप से दुबारा भी ले जाते हैं। इस पर उन्होंने कहा—भाई !

देनहार कोउ और है देत रहत दिन रैन।
लोग भरम हम पर धरैं, याते नीचे नैन ॥

देने वाला तो कोई दूसरा (भगवान्) ही है। मैं तो निमित्तमात्र हूँ। लोग मुझे दाता समझते हैं, इसलिये शर्म के मारे मैं आखें ऊँची नहीं कर सकता।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भोपाल में श्रीमद्भागवत सप्ताह महायज्ञ

कुमारी गुपिता

मध्य प्रदेश की राजधानी 'भोपाल' छोटी-छोटी पहाड़ियों के बीच में बसा हुआ एक अत्यन्त रमणीय नगर है, 'भोपाल का ताल' इसकी प्राकृतिक शोभा में चार चाँद लगा देता हैं। राजधानी होने पर भी अन्य शहरों की भाँति यहाँ आडम्बर का अभाव है, चारों ओर पहाड़ी होने के कारण प्रकृति में एक स्वाभाविक गम्भीरता है, प्रत्येक पहाड़ी पर बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ खड़ी हैं, कहीं 'सेक्रेट्रियट' कहीं 'बिरला मंदिर' कहीं 'मेडिकल कॉलेज' तो कहीं पर महल हैं। रात्रि के समय सारा शहर वैद्युतिक प्रकाश से जगमगा उठता है। दूर से ऐसा प्रतीत होता है, मानों किसी ने दीपमाला से सजावट की हो। यह शहर यद्यपि अपनी प्राकृतिक सुषमा से सर्वथा परिपूर्ण है, परन्तु यहाँ पर भागवत धर्म का सर्वथा अभाव है, इसका कारण यह है कि यह प्रारम्भ से नवाबों का विलास-स्थान रहा। इसके आसपास अनेक ऐतिहासिक स्थान हैं, जैसे उज्जैन (अवन्तिपुर), साँची, खजुराहो आदि।

भोपाल से उज्जैन जाने के रास्ते में 'बैरागढ़' नामक एक स्थान है। यह भोपाल से प्रायः चार पाँच मील की दूरी पर है। वर्तमान समय में जन संख्या इतनी तीव्र गति से बढ़ रही है कि जो स्थान आठ दस साल पहले जनशून्य था वह आजकल जनबहुल हो गया एवं नया शहर बसने लगा। यहाँ पर एक ही 'इमली' का पेड़ है। पहाड़ी के अन्यत्र कहीं पर किसी भी वृक्ष का नाम-निशान तक नहीं है, अतः इसे One tree till कहते हैं। पहाड़ी के नीचे चारों ओर काफी मैदान है। बीच बीच में अनेक मकान हैं। यह स्थान अन्य सब स्थानों से एकान्त में है। पहले भोपाल के नवाब की यह जायदाद थी। यहाँ पर उनके व्यायाम का अखाड़ा था। बाद में उन्होंने अपनी यह सम्पत्ति अपने मित्र 'सर दातार सिंह जी' को दे दी। यह बिलकुल ताल के ऊपर बसा हुआ है। नीचे ताल के किनारे तक दातार सिंहजी के खेत हैं। संक्षेपतः यह जगह अत्यन्त रमणीय, एकान्त एवं शान्त है। सम्पूर्ण भोपाल की शोभा का अवलोकन यहाँ से किया जा सकता है।

सर दातार सिंह जी सपरिवार माँ के भक्त हैं। शाम के समय प्रायः अपने बँगले के सामने के उद्यान में वे सपरिवार बैठा करते हैं। उस समय प्राकृतिक सुषमा के अवलोकन के साथ धर्म विषयक आलोचनाएँ प्रायः हुआ करती हैं। यहाँ की प्राकृतिक छवि एव शान्त

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वातावरण देखकर उनके परिवार वालों के मन में यह विचार प्रायः उठता था कि क्या ही अच्छा होता यदि माँ यहाँ आतीं, या माँ के लिए एक आश्रम यहाँ हो जाता। इस प्रकार की भावना कई वर्षों से परिवार वालों के मन में उदित होती थी। एक बार माँ का आश्रम बनाने का निश्चय करके श्रीमान् दातार सिंह जी श्रद्धेय स्वामी परमानन्द जी को अपने घर ले आये। स्वामीजी से उन्होंने अपने मन की अभिलाषा व्यक्त की, स्वामी जी को भी वह स्थान पसन्द आया। उन्होंने आश्रम के उपयुक्त एक निर्दिष्ट स्थान बता दिया। तभी से वहाँ मां के रहने निमित्त कुटिया का सूत्रपात हुआ। इसके बाद एक दो वर्ष और व्यतीत हो गये। माँ की कृपा से पंचांग से एक अच्छा दिन निकालकर आश्रम की नींव डाली गई। उस समय थोड़ा कीर्तन हुआ। नींव में माँ के प्रसाद का पुष्प एवं और भी कुछ शुभ चीजें रखी गईं। इस प्रकार आश्रम की शुरुआत हुई। प्रायः एक वर्ष के भीतर वह पूरा हो गया। एक मंजिला मकान बनाया गया। केवल तीन बड़े कमरे एवं एक रसोईघर। दूर से वह नवनिर्मित आश्रम एक तसवीर की भांति लगता है। दरवाजों एवं खिड़कियों पर आसमानी रंग कराया गया है जिससे इसकी शोभा और भी निखर उठती है। इस प्रकार आश्रम के हो जाने पर सभी के मन में एक अपूर्व आनन्द हुआ। इतने सालों की अभिलाषा आज प्रत्यक्ष सफल हुई है। अब असली उद्देश्य की तैयारियां होने लगीं। मां भक्तों के आह्वान पर वहां पधारीं, एवं दो तीन रात्रि वहां रहकर सबको कृतार्थ किया। इसके बाद भी मां भक्तों के आह्वान पर वहां दो तीन बार गईं, पर किसी भी समय मां छह सात दिनों से अधिक ठहर न पायी थीं। मां को अधिक रहने का अवकाश कहां? विश्वजननी हैं न! सम्पूर्ण विश्ववासियों का आकुल आह्वान माँ को विचलित कर देता है। अतः एक स्थान पर अधिक दिन नहीं रह सकतीं, सभी की मनोवाञ्छाएँ पूर्ण करती हैं। अपने चरणों से सभी स्थानों को पवित्र करती हैं। श्री दातारसिंह जी के मन में यह इच्छा सर्वदा होती थी कि माँ कुछ ज्यादा दिन तक रहें जिससे वे सब मातृ सत्संग का लाभ उठा सकें। वृद्धावस्था होने के कारण वे माँ के पास इधर-उधर अधिक जा भी नहीं सकते थे। अतः ऐसी इच्छा होनी स्वाभाविक ही है। इस प्रकार विचार विमर्श करके यह प्रस्ताव रखा गया कि 'श्रीमद्भागवत सप्ताह' किया जाय, इससे माँ का सान्निध्य भी सबको प्राप्त होगा और भागवत की पवित्र कथा-रस का पान भी सब कर सकेंगे। उन्होंने सोचा कि भागवत की व्याख्या भी ऐसे व्यक्ति के द्वारा कराई जाय जो कि सर्वथा योग्य वक्ता हों। अतः भागवत की व्याख्या श्री १०८ स्वामी विष्णु आश्रम जी महाराज द्वारा कराई जाय सभी का यही मत था। क्योंकि स्वामीजी का प्रवचन अत्यन्त सरल एवं हृदयस्पर्शी है। सभी के सामने यह प्रस्ताव रखा गया। सभी ने इसे सहर्ष स्वीकार किया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अब यह बात माँ से कही गई, माँ तो कभी शुभ कार्य में 'नहीं' करती ही नहीं। इसके बाद श्री १०८ स्वामी विष्णुआश्रम जी से पूछा गया उन्होंने भी इस निवेदन को सहर्ष स्वीकार किया। अब पूरी तौर से उत्सव का आयोजन होने लगा। सभी स्थानीय भक्त इसमें उत्साहित थे। सभी की यह इच्छा हुई कि ऐसा अवसर और कभी आयेगा कि नहीं, अतः इस उत्सव को सर्वाङ्गसुन्दर अवश्य ही करना है। अभी तक तिथि निश्चित नहीं हुई थी, फिर भी सभी यथायोग्य सेवाकार्य में लग गये। माँ से एवं स्वामीजी महाराज से पूछकर उनकी सुविधा के अनुसार सप्ताह की तिथि २३ नवम्बर से ३० नवम्वर तक रखी गई। यह निश्चित सूचना ३ माह पहिले प्राप्त हुई जैसे जैसे समय नजदीक आ रहा था वैसे वैसे जोर-शोर से तैयारियां होने लगीं। पहले ही कह चुकी हूं कि वह स्थान वीरान है, और उत्सव के लिये सुव्यवस्था की आवश्यकता होती है।

इधर मां के भी सब कार्यक्रम जैसे दुर्गापूजा एवं संयमसप्ताह आदि समाप्त हो गये। अब मां कब भोपाल पधारेंगी ? यह पूछने पर पता लगा कि मां यथा सम्भव १८ ता० को एवं स्वामीजी महाराज २१ ता० को पहुँच जायेंगे। १३ ता० को स्वामी परमानन्दजी वहाँ पर पण्डाल आदि की व्यवस्था करने पहुँच गये। उन्होंने आकर सत्संग के पण्डाल के लिए स्थान निर्दिष्ट किया। उस स्थान को खुदवाकर समतल किया गया। १७ ता० को प्रातः वृन्दावन से आश्रम के ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारिणियां वहां पर पहुँच गईं। संध्या से ही आश्रम की सजावट फूलों की माला एवं विद्युत् की माला से होने लगी। फूलों का तो कोई अभाव ही नहीं है। नीचे के खेत में पीले गेंदे के फूलों का मानों सागर उमड़ रहा था। रात तक सब सजावट हो गई, क्योंकि प्रातः नौ साढ़े नौ बजे मां पधार रही हैं। अब यह एक ही रात्रि बीच में है; कल प्रभात होते ही यहां मानो आनन्द का सागर उमड़ पड़ेगा। यह रात सभी की कैसी उत्तेजना में व्यतीत हुई होगी इसे तो सभी जानते ही होंगे। रात्रि के तीन बजे से चहल-पहल आरम्भ हो गई। कहीं पर आंगन गोबर से लिपाया जा रहा है, तो कहीं पर फूलों एवं झंडियों से रास्ते सजाये जा रहे हैं कहीं तो सीढ़ियों पर फूलों से 'स्वस्तिक' आदि मंगल चिन्ह रचे जा रहे हैं। इस प्रकार देखते देखते ही सम्पूर्ण दिङ्मण्डल को प्रकाशित करते हुए भगवान् सूर्य उदित हुए। अभी भी मां के आने में एक दो घण्टे की देर है। फिर भी जैसे ही किसी मोटर की ध्वनि सुनायी देती सभी के कान एवं दृष्टि सजग हो जाती, जब भी कोई मोटर वहाँ से निकलती तत्क्षण सब अपनी पैनी दृष्टि से दूर से ही उसका निरीक्षण करते, "कहीं हमारी माँ तो नहीं आ रही हैं।" इस प्रकार प्रतीक्षा करते करते काफी समय हो गया। प्रायः ९ बजने ही वाले थे ऐसे समय दूर से एक मोटर दिखाई दी जिस पर एक फूल की माला लगी हुई थी। फूल की माला पहने से सब पहचान लिया कि यह अवश्य ही माँ की मोटर होगी। सभी एक टक माँ की मोटर को ही देखते रहे। देखते-देखते माँ की मोटर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गेट के सामने आ गई। जैसे ही मोटर ने आश्रम में प्रवेश किया वैसे ही शंख ध्वनि हुई। माँ को अन्दर ले जाया गया। सरदार जी के परिवार की महिलाओं के द्वारा माँ की आरती उतारी गयी। फूलों की माला दी गई, माँ थोड़ी देर बैठने के बाद उठ गईं। वहाँ से उठकर माँ चारों ओर की व्यवस्था का निरीक्षण करने लगीं। माँ की तो यह विशेषता है कि माँ जहाँ भी जाती हैं सबसे प्रथम माँ यह देखती हैं कि व्यवस्था में कहीं कोई त्रुटि तो नहीं है। त्रुटि होने से तत्काल ही सब ठीक कर देती हैं, यदि माँ के कथनानुसार ठीक काम न हो तो माँ स्वयं अपने हाथ से उसे करके दिखा देती हैं। माँ सर्व प्रथम रसोई घर, फिर मूलपाठ के लिये जो मण्डप का निर्माण हुआ है वहाँ गईं; इस प्रकार सम्पूर्ण व्यवस्था का निरीक्षण करने के पश्चात् माँ अपने कमरे में आईं। माँ के विश्राम करने का समय देख कर सभी अपने-अपने स्थान को चले गये। २३ ता० तक साढ़े पाँच बजे का समय माँ के दर्शन के लिये रखा गया। माँ नित्य प्रातः काल पैदल घूमने को जाती थीं। उस समय जो भाग्यवान् उपस्थित रहते थे वे तब माँ के दर्शन का लाभ उठाते थे।

२१ ता० संध्या को श्री १०८ स्वामी विष्णु आश्रम जी महाराज पधारे। सर्वप्रथम वे माँ से मिलने के लिए आये। माँ के पास थोड़ी देर बैठने के बाद वे अपने स्थान को चले गये, उनके जाने के बाद माँ अपने कमरे से बाहर आईं एवं जहाँ पर स्वामी जी के लिए फलाहारी भोजन बन रहा था, वहाँ गईं। वहाँ पर माँ स्वयं अपने हाथों से पूरी, तरकारी आदि टोकरी में सुन्दर तरह से सजाने लगीं यहाँ तक कि निम्बू के टुकड़ों को भी माँ ने मिट्टी के सकोरे में अपने हाथ से सजा कर रखा। माँ किसी भी काम में बिन्दु मात्र भी अभाव नहीं रखतीं, अतः भोजन में जिन जिन सामग्रियों का अभाव था माँ ने सामने खड़े होकर सब बनवाई एवं परिपूर्ण रूप से सब हो जाने के बाद आश्रमस्थ ब्रह्मचारी के हाथ से भिजवाया। माँ के प्रत्येक काम में परिपूर्णता एवं निपुणता रहती है। प्रायः ही देखा जाता है कि माँ साधु-महात्माओं का अत्यन्त आदर करती हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यदि अचानक कोई महात्मा आ जायँ तो माँ स्वयं झट से खड़ी हो अपने आसन पर उन्हें आदर से बिठाती हैं। माँ के सभी कार्य लोक शिक्षा के निमित्त होते हैं।

२३ को भागवत सप्ताह आरम्भ होने वाला है अतः पहले दिन सब तैयारियाँ होने लगीं। पण्डाल के चारों ओर बत्तियाँ लगाई गयीं। प्रवेश द्वार पर शंख, चक्र, गदा, पद्म के चिह्न अङ्कित किये गये। पूजा का मण्डप एवं व्याख्या का मंच आदि सजाया गया। इस सप्ताह के लिए वृन्दावन से पाँच पण्डित विशेषरूप से बुलाये गये हैं जो कि मूलपाठ एवं यज्ञादि का सारा प्रबन्ध करेंगे।

आज वह शुभ दिन उपस्थित है। अतः सभी के हृदय में उत्साह एवं आनन्द की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सरिता लहरें ले रही है। प्रातः चार बजे से ही पूजा की तैयारियाँ होने लगीं। आज माँ की भी विशेष पूजा होने वाली है। आठ बजे पण्डितों द्वारा मंगल कार्य आरम्भ हुआ। माँ मण्डप में पधारीं वहाँ हर पण्डितों ने मंगल वेदमंत्रों का उच्चारण किया, चारों ओर का वातावरण शंख-ध्वनि एवं वेद ध्वनि से गूँज उठा, धूप की दिव्य सुगन्धि चारों ओर व्याप्त हो गयी। वातावरण में एक अपूर्व पवित्रता की छटा झलक उठी। इस प्रकार माँ के सान्निध्य में भागवत की विधि अनुसार पूजा आरम्भ हुई। पूजा के उपरान्त माँ भीतर आईं। भीतर हॉल में माँ की पूजा का आयोजन किया गया था। मां पूजा के कमरे में आईं। मां को लाल रंग की एक बनारसी साड़ी पहनाई गई। मां जाकर खाट पर बैठीं, षोडशोपचार विधि से मां की पूजा आरम्भ हुई। आश्रम के नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्रद्धेय निर्वाणानन्द मन्त्रविधि से मां की पूजा करा रहे थे। मां अविचल भाव से लेटी हुई थीं। चारों ओर एक दम शान्त वातावरण था—जरा भी शब्द नहीं हो रहा था, यद्यपि काफी लोग थे पर सब मानो एक अपूर्व आनन्द रस में मग्न थे। डेढ़ घण्टे तक मां की पूजा होती रही, आरती के समय मां उठकर बैठीं। मां को भागवत की पुस्तक दी गई, माँ आँख बन्द करके पुस्तक को अपने हाथ में लेकर अविचल भाव से बैठी थीं। उस समय माँ के मुख मण्डल की जो दिव्य छवि थी उसे देखकर सभी अपनी सुध-बुध भूल कर माँ की इस अपूर्व रूप की कान्ति पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर देने को बाध्य हो रहे थे उसमें अद्भुत आकर्षण का अनुभव होता है। आरती समाप्त होने के बाद माँ ने भागवत को पुनः भास्करानन्द के द्वारा यथा स्थान पहुँचा दिया। इसके उपरान्त सभी ने माँ को पुष्पाञ्जलि दी, माँ ने सबको अपने हाथों से भर-भर कर प्रसाद दिया। सभी का मन यह सोच कर प्रफुल्लित हो रहा था कि जब अनुष्ठान के प्रारम्भ में सब कार्य विधिवत् सुसम्पन्न हो गया तब यह कार्य अन्त तक अत्यन्त सुन्दर भाव से ही सम्पन्न होगा यह निश्चित ही है। पूजा के बाद माँ भीतर गईं, इतने में १०८ स्वामी श्री विष्णु आश्रम महाराज पधारे। माँ और स्वामी जी के सांनिध्य में श्रीमद्भागवत का मूलपाठ आरम्भ हुआ। श्रीमद्भागवत के माहात्म्य पाठ होने के अनन्तर आरती हुई। आरती के पश्चात् स्वामीजी अपने स्थान को चले गये एवं माँ भी भीतर आ गईं। शाम को ३ बजे से ५ बजे तक व्याख्या होगी। अतः सभी शीघ्रातिशीघ्र भोजन आदि से निवृत्त हो गये। माँ पुनः ढाई बजे पण्डाल में पधारीं। माँ के आदेशनुसार आश्रम की ब्रह्मचारिणियों ने मधुर स्वर में मंगल स्तवगान आरम्भ किया। लग-भग पौने तीन बजे के करीब स्वामीजी पधारे। स्वामीजी ने सर्वप्रथम हाथ जोड़कर माँ को प्रणाम किया। इसके उपरान्त पण्डितों द्वारा स्वामीजी का वरण किया गया एवं स्वामीजी व्यासासन पर विराजे। भागवत का पूजन और आरती के पश्चात् श्रीमद्भागवत की व्याख्या आरम्भ हुई। सारी भक्त मण्डली निस्तब्ध होकर बैठी हुई थी। चारों ओर एक अपूर्व निस्त-ब्धता छायी हुई थी। निस्तब्धता को भंग करते हुए स्वामीजी ने मंगलाचरण आरम्भ किया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पण्डाल से झील का पूरा दृश्य दिखाई देता था अतः ऐसा प्रतीत होता था मानो भागीरथी के किनारे स्वयं शुकदेव राजा भगीरथ को भगवत् कथामृत का पान करा रहे हों। ३ से ५ दो घण्टे का समय इतनी शीघ्रता से व्यतीत हो गया कि किसी को पता भी नहीं लगा। इसके बाद से नित्य प्रातः ८ से ११ एवं दोपहर को दो से पाँच बजे का समय भागवत की व्याख्या के लिये निश्चित किया गया। यद्यपि माँ का शरीर स्वस्थ नहीं था तथापि माँ दोनों समय आदि से अन्त तक उपस्थित रहती थीं। २८ ता० को भागवत के दशमस्कन्ध की कथा के अनुसार श्रीकृष्णजन्म का प्रसंग होने वाला था। अतः माँ के आदेशानुसार छप्पन प्रकार के भोग की व्यवस्था की गई थी। आज व्यास गद्दी को विशेष प्रकार से फूलों से सजाया गया था। पत्र एवं पुष्पों से एक मंडप रचा गया था। मंच पर नन्दनन्दन श्री कृष्ण की रजत निर्मित मूर्ति सजा कर रखी गई थी। सामने एक तख़्त पर नाना प्रकार के भोग सजाकर रखे गये थे। नित्य की भाँति दोपहर के समय व्याख्या आरम्भ हुई। व्याख्या प्रसंग में जब कृष्णावतार का प्रसंग आया उसी समय चारों ओर से शंख ध्वनियाँ हुईं, पुष्पवृष्टि हुई, भगवान् की पूजा भोग एवं आरती हुई। इस प्रकार उस दिन की व्याख्या वहीं समाप्त हुई। माँ ने यह सब व्यवस्था पहले से ही करा कर रखी थी। इस प्रकार देखा जाता है कि माँ के सान्निध्य में सब कार्य सर्वाङ्गपूर्ण रूप से सुसम्पन्न होता है। माँ तो स्वयं पूर्ण हैं न। इसलिये माँ के सभी कार्यों में परिपूर्णता रहती है। अब तो केवल दो ही दिन रह गये और अब तो श्रीकृष्ण की लीला प्रसंग व्याख्या चल रही थी। स्वामी जी जब श्री कृष्ण की लीला का गान गद्गद भाव से करते थे तब मानों एक अपूर्व अलौकिक रस की सृष्टि होती थी। सभी के तन-मन कथा के रस से झूम उठते थे। इस प्रकार अन्तिम दिन भी आ गया। उस दिन रोज से शीघ्र साढ़े चार बजे ही व्याख्या समाप्त हो गयी। समाप्ति के अनन्तर आरती हुई, भागवत पर फल फूलों की भेंट चढ़ाई। इस प्रकार सात दिन का समय मानो पल भर में ही व्यतीत हो गया। इन दिनों प्रातः साढ़े पाँच बजे से ही सत्संग प्रारम्भ हो जाता था। एवं रात्रि के आठ-नौ बजे तक सत्संग के कार्यक्रम चलते थे। आश्रम के ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारिणियों के द्वारा नित्य का संध्याकालीन कीर्तन होता था। निस्तब्ध वातावरण में कीर्तन का गम्भीर एवं मधुर स्वर सम्पूर्ण दिशाओं में मुखरित होकर एक अलौकिक वातावरण की सृष्टि करता था। इन दिनों वहाँ सभी के हृदय में मानो नवजीवन का संचार हुआ है।

माँ की अलौकिक कृपा से सब कार्य निर्विघ्नरूप से विधिवत् समाप्त हो गया अतः सभी के मन में एक अपूर्व आनन्द का अनुभव हो रहा था। अब केवल पूर्णाहुति यज्ञ का सम्पादन शेष रह गया। पहली तारीख को पुनः माँ की पूजा का आयोजन किया गया। प्रातः काल श्रीविष्णु आश्रमजी महाराज माँ से भेंट करने के लिए आये। आज वे उज्जैन में महा-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

काल का दर्शन करने जा रहे हैं। वहाँ से ओंकारेश्वर महादेव का दर्शन कर तीन रात्रि रहने का विचार है। अतः वे माँ से विदा लेकर चले गये। आज माँ की पूजा एवं पूर्णाहुति यज्ञ का अवलोकन करने के लिए काफी लोग आये थे, जिन्होंने कि आज के लिए अपने अपने कार्यालयों से विशेष रूप से अवकाश दिया था। सभी कोई माँ की प्रतीक्षा में बैठे रहे, इधर पूर्णाहुति यज्ञ भी आरम्भ हो गया पर मां अभी तक नहीं आईं। सभी को यही आशंका हो रही थी कि ऐसा न हो कि माँ की पूजा अधूरी ही रह जाय एवं पूर्णाहुति का समय उपस्थित हो जाय, तब तो सारा आनन्द हो मिट्टी में मिल जायेगा, क्योंकि पूर्णाहुति का समय होते ही माँ उठ जायेंगी। काफी देर के पश्चात् मां भक्तों पर कृपा करके पूजा घर में पधारीं। मां को आज भक्तों की ओर से चढ़ाई गई पीली साड़ी पहनाई गई थी। आज माँ का आसन विशेष रूप से सजाया गया। माँ जाकर अपने आसन पर विराजीं। प्रायः देखा जाता है कि माँ की जब भी पूजा या आरती की जाती है तभी मां अपने हाथ में या तो भगवान् का कोई भी चित्र जो सामने रहता है वह लेती हैं या तो जो भी धर्मग्रंथ सामने मिले उसे ही हाथ में लेकर बैठ जाती हैं। मां की लीला को मां ही जानती हैं। अतः आज भी मां ने श्रीमद्-भागवत का ग्रंथ हाथ में उठा लिया, पर भक्तों के अनुरोध से उसे रख दिया, एवं पुनः शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी, नारायण का चित्र लिये पर पुनः भक्तों के अनुरोध से निर्वाणानन्द जीने उसे भी मां के हाथ से लेकर दूर रख दिया। अब मां ने शिशु की भांति भोली मुसकराहट से सभी की ओर कृपा दृष्टि डाली फिर नेत्र बन्द करके गम्भीर मुद्रा में बैठ गईं। पूजा प्रारम्भ हुई। आज भक्तों के अनुरोध से पूजा के समय माँ को मनमोहन वृन्दावन-विहारी के वेष में सजाया गया। माँ ने तो पीला वस्त्र धारण किया ही था। मां के मस्तक पर मोर मुकुट रखा गया, गले में फूलों एवं स्फटिक की मालाएँ पहनाई गईं, हाथ में कंगन पहनाए गये, इतना सब किया जा रहा था, परन्तु माँ अविचल भाव से बैठी हुई मूर्ति की भाँति प्रतीत हो रही थीं। माँ की ऐसी भावावस्था को देखकर बार-बार योगेश्वर श्री कृष्ण का स्वरूप सामने आता था, माँ के मुख कमल पर एक दिव्य प्रकाश चमक रहा था। माँ अपने भाव राज्य में निमग्न थीं। इस प्रकार काफी देर तक माँ की पूजा हुई पर माँ अपनी भावा-वस्था में ही पड़ी रहीं। सब भक्त मण्डली शान्तचित्त एवं अपलक दृष्टि से माँ की नैसर्गिक छटा का अवलोकन कर रहे थे, पूजन एवं आरती के उपरान्त सभी ने आकर माँ के चरणों में भक्ति पुष्पाञ्जलि अर्पण की।। इधर पूर्णाहुति का समय भी हो गया। माँ को धीरे-धीरे उठा-कर पूर्णाहुति के स्थान पर लिवा ले जाया गया।। माँ के द्वारा पूर्णाहुति की सामग्री का स्पर्श कराकर पूर्णाहुति प्रदान की गई। चारों तरफ ब्राह्मण पण्डित वेद ध्वनि कर रहे थे, यज्ञ की पवित्र गन्ध से चारों ओर एक सात्त्विकता का अनुभव हो रहा था। पूर्णाहुति के बाद माँ को भोग के लिए ले जाया गया। आज उत्सव का अन्तिम दिन था अतः सभी को प्रसाद पाने के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिए निमन्त्रित किया गया था। माँ के भोग के बाद सभी प्रसाद पाने के लिये पंक्ति बद्ध हो कर बैठ गये। राजा और रंक कोई भी भेद भाव नहीं था। माँ का दरबार तो सभी के लिए उन्मुक्त है। यहाँ पर सभी आने के अधिकारी हैं, जो चाहे आवे, जो चाहे ले जावे, कहीं पर रोक-टोक नहीं है। सभी पर समानरूप से पूर्ण चन्द्रमा की निर्मल चाँदनी की भाँति माँ की अविरल कृपा धारा की वर्षा हो रही है। सभी ने तृप्त होकर प्रसाद पाया। आज के प्रसाद में अमृत का स्वाद था, प्रसाद पाने के बाद कृतार्थ एवं धन्य होकर सभी अपने-अपने स्थानों को चले गये।

इस प्रकार माँ के सान्निध्य में उत्सव की समाप्ति भली-भाँति हो गई, माँ ने अपनी कृपा से सबको कृतकृत्य एवं धन्य किया, माँ की कृपा अपरम्पार है, माँ की अलौकिक कृपा से ही इतना बड़ा उत्सव भली भाँति सुसम्पादित हो गया।

माँ आज बनारस रवाना होंगी। अतः जाने की तैयारियाँ होने लगीं। स्थानीय भक्तों के मन में उदासी छा गई। देखते-देखते दोपहर तक का समय व्यतीत हो गया। माँ के प्रस्थान का समय प्रायः हो गया। माँ तीन बजे के करीब पण्डाल में गईं। वहाँ पर माँ की आरती उतारी गई। माँ ने सबको प्रसाद बाँटा। सभी से प्रसन्नमुख से विदा लेकर माँ मोटर पर बैठ गईं। सभी ने पुनः माँ को प्रणाम किया। माँ ने सभी को अपना स्नेहस्पर्श प्रदान किया। सभी के हृदय को विदीर्ण करके माँ की मोटर चल दी।

माँ में कितनी अलौकिक शक्ति है इसका परिचय सभी को प्राप्त हुआ। माँ की अलौकिक कृपा से ही जंगल में यह मंगल कार्य सम्पन्न हुआ। आज से वह स्थान कितना पवित्र एवं धन्य हो गया इस बात के स्मरण मात्र से ही श्रीमद्‌भागवत का एक पुण्य श्लोक स्मरण आता है :—

"तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि, दयां कुर्वन्ति साधवः॥"

और यहां का तो कहना ही क्या जब कि यहां पर स्वयं जगदम्बा का पदार्पण हुआ। केवल यहां के निवासी ही नहीं यहां के कीट-पतंग, पशु-पक्षी, वृक्ष-लता एवं यहां की रज भी मातृ सान्निध्य, मातृ-संस्पर्श, एवं मातृ-सत्सङ्ग से पवित्र एवं धन्य हो गई।

"वंशीविभूषितकरान्नवनीरदाभात्,
पीताम्बरादरुणविम्बफलाधरोष्ठात्।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखादरविन्दनेत्रात्,
कृष्णात्परं किमपि तत्त्वमहं न जाने॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मातृ-लीला

(१५ जुलाई से १५ अक्टूबर १९७१)

अनुवाद—श्रीयादवकृष्ण अवधिया एम० ए०, बी० टी०

माताजी ने दि० २४ जुलाई को देहरादून से कनखल के लिए प्रस्थान किया। दि० २९ जुलाई (झूलन पंचमी) को हमारे कनखल आश्रम में दीदी माँ की महासमाधि की प्रथम वार्षिकी संपन्न हुई, जिसमें २४ घंटों का अखण्ड-कीर्त्तन, अखण्ड-जप तथा अखण्ड-मौन रखा गया। इन कार्यक्रमों में भक्तगण क्रमानुसार एक या दो घंटों का सहयोग प्रदान करते रहे। मध्याह्न में हमारे आश्रम, निर्वाणी अखाड़ा तथा कैलास आश्रम, ऋषिकेश में सन्यासियों एवं साधुओं को भोजन कराया गया। रात्रि में दीदी माँ की समाधि पर पूजा संपन्न की गई तथा दीदी माँ के निर्वाण-काल में अर्थात् १ बज कर १५ मिनट से १ बज कर ४५ मिनट तक माताजी की उपस्थिति में मौन-ध्यान किया गया। समाधि-मंदिर के बरामदे तथा प्रांगण में सभी लोग गंभीर मौन धारण कर बैठ गये। सभी लोगों ने दीदी माँ की उपस्थिति का स्पष्ट अनुभव किया। वे, मानो, माताजी में ही लीन हो गई थीं। ध्यानोपरांत माँ उठीं एवं उन्होंने एक बड़ी माला समाधि पर रख दी। प्रतीत हुआ कि दीदी माँ स्वयं सशरीर हो उसे ग्रहण कर रही हों।

दि० ३१ जुलाई को मार्ग में निर्वाणी अखाड़ा, महेश्वरानन्द आश्रम तथा बाघाट भवन में रुकती हुई माँ किसनपुर लौटीं।

दि० २ अगस्त से ६ अगस्त तक किशनपुर आश्रम में सदा की भाँति प्रति सायंकाल को 'झूलन-उत्सव' संपन्न होता रहा। पूर्व दिशा में स्थित बरामदे के एक बड़े झूले पर राधा तथा कृष्ण की अनेकों मूर्तियाँ रखी गईं। रेशमी पर्दों, पुष्पों तथा पर्णों के प्राचुर्य से सजावट प्रतिरात्रि भव्य से भव्यतर होती जाती थी। मधुर गीतों सहित पूजा सुसंपन्न। दि० ६ अगस्त रक्षाबन्धन-त्यौहार के दिन माताजी को राखियाँ भेंट की गईं एवं बदले में माताजी ने उन सभी व्यक्तियों की कलाइयों में राखी बांधी, जो उनके समीप गये। सन् १९२२ में झूलन-पूर्णिमा की रात्रि को माताजी की आत्म-दीक्षा (स्वयं के द्वारा दीक्षा) हुई थी, जिसकी स्मृति में अर्धरात्रि का ध्यान आयोजित किया गया था। चन्द्रग्रहण पड़ने के कारण कीर्तन ३ बजे रात्रि तक चलता रहा। रात्रि सवा दो बजे माताजी ने १५ मिनटों तक स्वयं कीर्तन का

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नेतृत्व किया, जिसके पश्चात् ही भीड़ में से कुछ लोग ऊँघने लगे थे। धार्मिक-कृत्यों में कई अमेरिकन भक्तों ने बड़ी तत्परता एवं भक्ति पूर्वक भाग लिया।

दि० ७ अगस्त को माताजी मोटर से रायपुर पधारीं, जहां उन्होंने तीन दिनों तक विश्राम किया। यद्यपि भयङ्कर वर्षा के कारण मार्ग खतरनाक हो गया था एवं रायपुर पहुँचना कठिन था, तथापि अनेकों व्यक्ति वहां माताजी के दर्शनार्थ पहुँचे एवं उस एकान्त, सुन्दर स्थान में माताजी के दर्शन से लाभान्वित हुए।

दि० १३ अगस्त को विधिवत् अर्धरात्रि-पूर्वक जन्माष्टमी उत्सव संपन्न किया गया। ज्वर-पीड़ित होते हुए भी माताजी २ बजे रात्रि तक नीचे की मंजिल में ठहरीं एवं सदा की भांति वे तत्परता पूर्वक प्रत्येक वस्तु का निरीक्षण करती रहीं। मूसलधार वर्षा सहित भयंकर तूफान था; संध्याकाल में ही सभी विद्युद्दीप बुझ गये, तथा उनके स्थान पर पहले मोमबत्तियों द्वारा एवं अन्त में गैसबत्तियों द्वारा प्रकाश की व्यवस्था की गई। दूसरे दिन प्रातःकाल, आश्रम-स्थित मंदिरों के समक्ष खुले प्रांगण में नन्दोत्सव (श्रीकृष्ण-जन्म के उपलक्ष में ग्वाल-वालों का उत्सव) मनाया गया। गोपों की वेश-भूषा धारण करनेवाले कुछ भक्त दिल्ली से पधारे थे तथा वे एक वृत्ताकार वेदी के चारों ओर गाते हुए नृत्य कर रहे थे। उनमें से एक ने अपने कंधों पर काँवर में दही-भरी मिट्टी की हंडियां रख ली थीं, जिनमें से एक को नृत्य-काल में ही परंपरानुसार गिराकर फोड़ दिया गया। माताजी अत्यंत भावविभोर थीं। उन्होंने गाया "ब्रह्म गोपाल; प्राण गोपाल।" अचानक ही उन्होंने सबसे मोटी बुढ़िया को पकड़ लिया एवं उसके साथ नृत्य करने लगीं। तत्पश्चात् वे उपस्थित स्त्रियों में से क्रमशः प्रत्येक का हाथ पकड़कर उन्हें एक-एक बार घुमाती हुई सभी जगह घूमने लगीं। प्रत्येक के मुँह में दही डाल कर तथा सब पर दही की बौछार करके माताजी ने उत्सव को चरम सीमा तक पहुँचा दिया। सौभाग्य में उस समय केवल फुहार पड़ रही थी, अतः सभी कार्य निर्विघ्न संपन्न हुए एवं उपस्थित व्यक्तियों को चरम आनन्द की अनुभूति हुई।

जब तक माताजी किसनपुर में निवास करती रहीं, तब तक प्रतिदिन सायंकाल को खचाखच भरे हाल में कीर्तन पूर्वक सत्संग एवं ब्रह्मचारी निर्मलानन्दजी का ओजस्वी भाषण चलता रहा। जन्माष्टमी के ठीक पूर्व वे (ब्रह्मचारी जी) वाराणसी के लिए रवाना हुए। दि० १९ अगस्त को वे लौटे; एवं अपने साथ वे उस पवित्र अग्नि का कुछ अंश लेते आये, जो वहां सन् १९२६ से प्रज्वलित रखी गई थी। उस वर्ष ढाका में दीपमालिका-पर्व में अत्यंत असाधारण कालीपूजा के उपरान्त हवन संपन्न किया गया था। माताजी के निर्देशानुसार पूर्णाहुति के उपरान्त सदा की भांति अग्नि को बुझने नहीं दिया गया, अपितु उसे प्रज्वलित रखा गया। विभाजन के पश्चात्, वह अग्नि ढाका से विन्ध्याचल तथा वाराणसी लाई गई

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एवं बाद में कलकत्ता भी पहुँचाई गयी। अब वह देहरादून भी आ गयी है। हम इस अग्नि के विषय में कई अवसरों पर विस्तारपूर्वक लिख चुके हैं।[1] लगभग दो वर्ष पूर्व कल्यानवन में राममंदिर के समीप एक चबूतरे पर उस पवित्र अग्नि की रक्षा के लिये एक ढांचा तैयार कराया जा चुका है, जहाँ पहले श्रीहरि बाबाजी का सत्संग चलता था।

दिनांक १८ अगस्त से माताजी ने मौन धारण कर लिया। हममें से कुछ लोगों ने अनुमान लगाया था कि माताजी के मौन धारण करने का संबन्ध देहरादून में पवित्र अग्नि की स्थापना करने से होगा, क्योंकि ब्रह्मचारीजी दि० १८ को प्रातःकाल वाराणसी से अग्नि सहित रवाना हुए थे। परंतु वस्तुतः हमारा अनुमान असत्य था, क्योंकि यद्यपि माताजी ने दि० २४ अगस्त को अग्नि की स्थापना के पश्चात् निर्देश के रूप में एक वाक्य का उच्चारण किया था, तथापि उनका मौन आज तक चल रहा है। कोई नहीं जानता कि उन्होंने क्यों तथा कब तक के लिए मौन धारण किया है? फिर भी, माताजी ने किसी भी रूप से अवकाश-ग्रहण नहीं किया है, प्रत्युत वे अत्यन्त सक्रिय हैं; प्रत्येक व्यक्ति एवं कार्य में बड़ी रुचि ले रही हैं तथा इंगितों, भाव-भंगिमाओं एवं आवश्यकतानुसार अपनी उँगली से किसी के भी हाथ पर बंगाली अक्षर लिखकर अपने मनोभावों को व्यक्त करती हैं। माताजी निजी-साक्षात्कार के लिए भी अवसर प्रदान करती हैं तथा इसी प्रकार अक्षरों से अपने उत्तर प्रगट करती हैं। कभी-कभी विशेष-अवसरों पर वे कीर्तन गाती हैं। विगत दुर्गा पूजा के अवसर पर जब दूर-दूर से पधारे हुए उनके कई पुराने भक्तों ने उनसे बातचीत करने की प्रार्थना की, तब माताजी ने 'नारायण-नारायण' या 'बाबा-त्रिपुरारि' या 'मां दुर्गा' या 'श्रीकृष्ण' आदि के उच्चारण के रूप में ही उन्हें उत्तर दिया। दुर्गापूजा के अवसर पर अत्यंत आवश्यकता पड़ने पर माँ एकाध शब्द कहकर पुनः मौन धारण कर लेती थीं।

ब्रह्मचारी कमलाकान्त जी, जो पहले ढाका में माताजी के साथ कुछ दिन बिता चुके थे, अब पुनः कुछ समय से माता जी के साथ देहरादून में निवास कर रहे हैं। फलित-ज्योतिष का अध्ययन करके उन्होंने यह गणना की कि ६५ वर्ष की आयु में इसी वर्ष दि० २० अगस्त को उनका शरीरांत हो जावेगा। मौन-धारण करने के कुछ दिनों पूर्व माताजी ने इस तथ्य का निरूपण किया कि जहाँ सामान्य-जनों का जीवन प्रारब्ध से पूर्ण रूपेण नियंत्रित रहता है, वहीं साधक उससे ऊपर उठ सकता है। दि० २० अगस्त को आश्रम-हाल में अखण्ड-रामायण पाठ संपन्न किया गया एवं कमलाकान्तजी से कहा गया कि वे दिन का अधिक से अधिक भाग

---

१. देखिये आनन्दवार्ता अंक ७।३ पृष्ठ १४४ से १५०, अंक ८।१ पृष्ठ ४५ से ५१, अंक तक १२।१ पृष्ठ ४८ से ५३ तथा श्री गुरुप्रिया देवी लिखित बंगाली पुस्तक 'अखण्ड-महायज्ञ' तथा उसका हिन्दी अनुवाद।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माताजी के बिल्कुल सामने रहकर ही बितावें। उनकी मृत्यु नहीं हुई, वस्तुतः वे आज तक पूर्णतया स्वस्थ हैं। वे अनुभव करते हैं कि भगवत्कृपा से उन्हें पुराने शरीर में नया जन्म प्राप्त हुआ है। माताजी ने उन्हें पवित्र अग्नि की रक्षा करने तथा उसमें प्रतिदिन आहुतियाँ डालने का कार्य-भार सौंपा है। कई वर्ष पूर्व ढाका में उन्होंने यह कार्य कुछ दिनों तक किया था। दि० २४ अगस्त को बड़े सवेरे कल्यानवन के नए भवन के कुण्ड में इस अग्नि की विधिपूर्वक स्थापना की गयी तथा माताजी की उपस्थिति में एक महोत्सव संपन्न किया गया। दुर्भाग्यवश इस समय जोरों की वर्षा हो रही थी एवं सभी लोग पूर्णरूपेण भीग गये थे। उसी दिन एक यज्ञ का शुभारम्भ किया गया जिसमें गायत्री-मंत्रों से १००,००० आहुतियाँ दी जाती थीं। प्रतिदिन ३ पण्डितों द्वारा २ घण्टे तक यज्ञ करने का विधान रखा गया एवं इसकी समाप्ति दि० २७ सितम्बर, महाष्टमी के दिन निर्धारित की गई।

यद्यपि दि० २५ अगस्त को बड़े सवेरे माताजी मोटर से हरद्वार जाने वाली थीं, तथापि सर्व प्रथम वे कल्यानवन गईं एवं उन्होंने अग्नि के लिए तैयारी कराने में लगभग २ घण्टे बिताये, क्योंकि अनवरत वृष्टि के कारण लकड़ियाँ पूर्णरूपेण गीली हो गई थीं तथा अग्नि उतनी तेज नहीं जल रही थी, जितनी तेजी से उसे जलना था।

दिनांक २८ अगस्त से ५ सितम्बर तक हरद्वार में भागवत-सप्ताह का आयोजन किया गया, जिसका विस्तृत वर्णन एक स्वतंत्र लेख में किया गया है। दि० २८ अगस्त को जब राँची के 'योगदा सत्संग' के प्रमुख अधिकारी योगाचार्य श्रीस्वामी श्यामानंद जी के देहावसान का दुःखद समाचार प्राप्त हुआ, तब माताजी ने 'श्रेय ग्रहण' (सर्वोच्च को अङ्गीकार करो) कहकर अपना मौन भङ्ग किया। सप्ताह के प्रथम एवं अंतिम दिन में माताजी ने कुछ समय तक गाया। अपने हरद्वार-निवास के प्रारंभिक तथा अंतिम समय में वे हमारे कनखल आश्रम में पधारीं।

दि० ५ सितम्बर की संध्या को माताजी पुनः किसनपुर में उतरीं। प्रतिदिन दो बार सत्संग का आयोजन किया जाता था। एक दिन किसी ने बताया कि कुछ ही समय पूर्व पूना के कुछ भक्त कार-एक्सीडेंट के शिकार हुए। कार बुरी तरह नष्ट हो गई तथा खिड़कियों के काँच टुकड़े-टुकड़े होकर भीतर बैठे हुए यात्रियों पर आ पड़े, परंतु किसी को भी थोड़ी भी चोट नहीं आई। भक्तों ने अपने इस चमत्कारिक बचाव का श्रेय इस तथ्य को दिया कि उनके साथ माताजी की फोटो थी, जिसे फ्रेम कराने वे एक दूकान पर ले जा रहे थे।

दि० १० सितम्बर को माताजी ने रायपुर के लिए प्रस्थान किया। दूसरे दिन श्रीगुरुप्रिया देवी के पिता स्वामी अखण्डानन्द गिरिजी की महासमाधि की वार्षिकी थी। उनके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निमित्त कुछ साधुओं को तथा सभी उपस्थित लोगों को भोज दिया गया। दि० १३ सितंबर को माताजी किसनपुर लौटीं। दि० १५ तथा १६ को संपूर्ण रामायण का पुनः पारायण किया गया। अब दुर्गापूजा के लिए अतिथिगण एकत्रित होने लगे। दि० १८ को प्रोफेसर त्रिपुरारी चक्रवर्ती जी कलकत्ता से पधारे एवं उसी दिन संध्याकाल से उनका प्रवचन प्रारंभ हो गया, जो प्रायः आंग्ल-भाषा में होता था एवं जिसमें बीच-बीच में कुछ बंगाली वाक्य भी आ जाते थे। उनका प्रवचन प्रतिदिन संध्याकालीन सत्संग के अवसर पर खचाखच भरे हॉल में एक घंटे तक होता था। दि० १९ की संध्याको माताजी कल्यानवन के समीपस्थ श्री एवं श्रीमती खैतान (Khaitan) के अहाते में पंचवटी के समीप स्थित अपनी सुन्दर कुटिया में चली आईं, परंतु वे दि० २५ तक प्रतिदिन सत्संग के लिये दो बार आश्रम में आती थीं। दि० २५ को प्रातःकाल पंडाल खोला गया। दि० २४ तथा २५ को कल्यानवन के राममंदिर में संपूर्ण-रामायण-पाठ हुआ।

दि० २५ की संध्या को 'बोधन' तथा 'आमंत्रण' पूर्वक दुर्गापूजा का प्रारंभ हुआ एवं अन्त में आरती हुई। एक बंगाली मूर्तिकार द्वारा परंपरानुसार दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि की मानवाकार प्रतिमाएँ निर्मित की गईं, जो अत्यंत सुन्दर थीं एवं सजीव प्रतीत होती थीं। मंदिर की भित्तियाँ तथा छत का भीतरी भाग भव्य लाल मखमल से पूर्णरूपेण आच्छादित था, एवं आवश्यकतानुसार एक विशाल मखमली पर्दा मंदिर को पंडाल से पृथक् कर देता था। पंडाल अपने आप में उत्कृष्ट कला का आदर्श था; वस्तुतः वह चित्रित स्तंभों, दीपकों तथा हिन्दू पौराणिक कथाओंको दर्शाने वाली चित्रकारी के कारण एक सुन्दर मन्दिर की तरह जान पड़ता था। जिस पर पूजा संपन्न की गई थी, उस मंच के दाहिने छोर पर माताजी की सिंहासनवत् कुर्सी तथा बाएँ छोर पर माला से विभूषित दीदी माँ की फोटो सहित कुर्सी रखी गई। माताजी प्रतिदिन प्रातःकाल पूजा के समय तथा संध्याकाल में आरती के समय एवं आरती से एक घंटापूर्व उपस्थित रहती थीं, जबकि प्रो० त्रिपुरारि चक्रवर्ती जी प्रतिदिन रामायण पर मनोहर प्रवचन किया करते थे। आरती के पश्चात् अपनी मंडली सहित श्रीप्रह्लाद ब्रह्मचारी जी तथा लब्धप्रतिष्ठ श्रीधनञ्जय भट्टाचार्य जी रात्रि में बड़ी देर तक अपने सर्वोत्कृष्ट बंगाली गीतों से श्रोताओं को आनन्दित किया करते थे। दशमी के दिन संगीत के पश्चात् माँ तथा दीदी माँ की स्लाइडें (Slides) प्रदर्शित की गईं। षष्ठी तथा विजयादशमी के दिन महान् संत श्रीसीताराम दास ओंकारनाथ, ऋषिकेश-स्थित अपने आश्रम की मंडली सहित पधारे एवं वे पुनः लक्ष्मीपूजा के एक दिन बाद आए, जब माँ के मौन होने पर भी उन्होंने माताजी के साथ उनकी कुटिया में ३ घंटे बिताये। महाष्टमी के दिन दुर्गापूजा तथा यज्ञ की पूर्णाहुति के साथ-साथ—जिनकी पूजा त्रिवेन्द्रम् के श्रीपद्मनाभं मन्दिर में होती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है--उन्हीं भगवान् श्री पद्मनाभं (शेषशायी भगवान् विष्णु) की रजतनिर्मित मनोहर लघु प्रतिमूर्तिकी प्रतिष्ठा की गई।

जब गत जुलाई मास में, ट्रावनकोर-महाराजा के भ्राता माताजी के दर्शनार्थ पधारे थे, तब उन्हें कल्यानवन में पंचवटी के समीपस्थ कुटीर में ठहराया गया था। श्रीपद्मनाभं त्रावनकोर के अधिदेवता हैं तथा महाराजा को पृथ्वी पर उनका प्रतिनिधि माना जाता है। अतः महाराजा के भ्राता जहाँ भी जाते हैं, सदा अपने साथ देवता की मूर्ति साथ ले जाते हैं तथा प्रतिदिन उसकी पूजा करते हैं। जुलाई में माताजी से बिदा लेते समय वे अपना वह 'विग्रह' माताजी के दर्शनार्थ आश्रम ले गये। माताजी अत्यन्त प्रसन्न हुईं एवं उन्होंने कहा कि जब पद्मनाभं दक्षिण भारत से कल्यानवन तक का रास्ता तयकर आ चुके हैं, तब उन्हें कदापि वापस नहीं भेजना चाहिये। अतः बम्बई के एक भक्त ने ट्रावनकोर में श्रीपद्मनाभं की मूर्ति बनवाई तथा महाष्टमी के दिन वे उसे, महाराजा के भ्राता एवं दो दक्षिण भारतीय पुरोहितों सहित देहरादून ले आये। दोनों पुरोहितों ने यथोचित पूजा हेतु निर्देश दिये। सर्वप्रथम श्रीपद्मनाभं को प्रतिष्ठा के लिए, दुर्गापूजा हेतु रखी गई मूर्तियों के साथ रखा गया; तत्पश्चात् उन्हें महाराजा के भ्राता द्वारा शोभा-यात्रा सहित पंचवटी ले जाया गया, जहाँ माताजी की उपस्थिति में दूसरी पूजा सम्पन्न की गई। तत्पश्चात् उन्हें कल्यानवन-कुटीर में ले जाया गया। जब से विगत जुलाई मास में श्रीपद्मनाभं ने उस कुटीर को अपनी उपस्थिति से अनुगृहीत किया है, तबसे किसी भी व्यक्ति को उस कुटीर में ठहरने की अनुमति नहीं दी गई। माताजी इस नए मंदिर में बड़ी रुचि लेती हैं एवं वहाँ वेदी की व्यवस्था कराने तथा भवन में कुछ परिवर्तन कराने हेतु प्रायः प्रतिदिन दुर्गम पहाड़ी पर चढ़ती-उतरती हैं। तीन ब्रह्मचारियों तथा एक दण्डी स्वामी को श्रीपद्मनाभं की देखरेख हेतु नियुक्त किया गया है।

नवमी के दिन माताजी ने उपस्थित लोगों में से प्रत्येक के भाल पर चंदन का लेप लगाकर आशीर्वाद दिया। विजयादशमी के दिन 'दर्पण विसर्जन' के उपरान्त माताजी ने गाया, "मां दुर्गा, मां उमा।" तत्पश्चात् जो भी प्रणाम करने के लिये आए, उनमें से प्रत्येक को उन्होंने फूल, फल तथा वस्त्र दिये। संध्या समय उनके करकमल से लड्डू लेने के लिए सभी पंक्तिबद्ध हो गये। उत्सव के उन दिनों में माताजी के मौन होते हुए भी, प्रत्येक ने प्रचुर आनन्द का अनुभव किया। माताजी अपनी मुस्कानों, कृपादृष्टि तथा कभी-कभी स्पर्श से सारे आशय स्पष्ट कर देती हैं एवं कृतार्थ कर देती हैं।

दि० ३० सितम्बर को प्रातःकाल माताजी ने, श्री विष्णु आश्रम जी के अत्यावश्यक निमंत्रण पर मोटर से शुकताल के लिए प्रस्थान किया। शुकताल में स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती द्वारा आयोजित श्रीमद्भागवत-पारायण को अपनी उपस्थिति द्वारा आशीर्वाद देने हेतु माताजी को स्थिति समझाकर लिवा लाने हेतु श्री स्वामी विष्णु आश्रम जी ने एक ब्रह्मचारी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को विशेष रूप से भेजा था। माताजी के पधारने पर वहां स्थित साधुओं, महात्माओं तथा अन्य व्यक्तियों के विशाल समूह द्वारा उनका अतिभव्य स्वागत किया गया। सत्संग में भाग लेने के अतिरिक्त माताजी ने सम्पूर्ण विस्तृत आश्रम में भ्रमण किया। दि० १ अक्टूबर को ३ बजे शाम को आश्रम छोड़ने के पूर्व वे शुकदेव मंदिर को गईं, तत्पश्चात् वे मोटर से गङ्गा-तट पर गईं तथा अन्य दो स्थानों पर विश्राम करने के उपरांत वे ५,३० बजे शाम को किसन-पुर में उतरीं। सर्वप्रथम माताजी श्रीपद्मनाभं तथा राममंदिर के दर्शनार्थ कल्याणवन को गईं, तत्पश्चात् अपनी कुटिया की ओर रवाना होने के पूर्व उन्होंने आश्रम में दर्शन दिया।

दि० ३ अक्टूबर को सायंकाल पंडाल में लक्ष्मी पूजा तथा आश्रम में रात में बड़ी देर तक सत्यनारायण-पूजा संपन्न की गई। माताजी थकावट से परे हैं। उनके असंख्य कार्य-कलापों में उनकी गति से कोई उनका साथ नहीं दे सकता। सत्संग का कार्यक्रम प्रतिदिन प्रातः काल आश्रम में एवं प्रतिसन्ध्या पंडाल में संपन्न होता था, जहां प्रोफेसर त्रिपुरारी वाल्मीकि-रामायण पर आंग्ल-भाषा में अत्यंत ओजस्वी-व्याख्या-युक्त प्रवचन देते थे। दि० ८ अक्टूबर की रात्रि को माताजी ने, २० से अधिक व्यक्तियों सहित, रेल से वाराणसी के लिए प्रस्थान किया। आशा की जाता है कि वे दि० १४ को प्रातःकाल किसनपुर लौट आवेंगी। दि० १८ की रात्रि को उसी पंडाल में काली पूजा संपन्न होगी। आशा की जाती है कि दि० २१ को माता जी वृन्दावन के लिए प्रस्थान करेंगी, जहां दि० २६ अक्टूबर से १ नवम्बर तक २२ वां संयम-महाव्रत संपन्न होगा।

"आये ना निंदिया" !

एक प्रेमी सन्त रातों जगकर अपने प्यारे प्रभु का सुमिरन किया करते थे। एक बार उनसे एक और अन्य प्रभु प्रेमी ने कहा—"महात्मन् ! आप कृपया बीच-बीच में सो लिया करें। रात भर इस तरह से जगने में हानि ही सकती है।" सन्त की आँखें छलछला आयीं। उन्होंने धीरे से उत्तर दिया—"जिस मनुष्य के नीचे नर-काग्नि धधक रही हो और जिसे ऊपर का दिव्य राज्य बुला रहा हो, उसे निद्रा कैसे आवेगी ?"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कीड़े की आत्मकथा

[महाभारत से संकलित]

पितामह भीष्म जी ने कहा : युधिष्ठिर ! इस संसार के प्राणी उन्नति में हों या अवनति में, शुभ में हों अथवा अशुभ में, जिस किसी भी अवस्था में हों, उसी में सुख मानते हैं। मरना नहीं चाहते हैं—इसका कारण बतला रहा हूं सुनो—इस विषय में भगवान् व्यास और एक कोड़े के संवादरूपमें प्राचीन इतिहास प्रसिद्ध है, वही तुम्हें सुना रहा हूँ। पहले की बात है, ब्रह्मस्वरूप श्री कृष्णद्वैपायन व्यासजी कहीं जा रहे थे। उन्होंने एक कीड़े को गाड़ी चलने के रास्ते से बड़ी तेजी के साथ भागता देखा। व्यासजी सम्पूर्ण प्राणियों की गति के ज्ञाता और भाषा को समझने वाले हैं। उन्होंने कीड़े से इस प्रकार पूछा—कीट ! आज तुम बहुत डरे हुए और उतावले दिखाई देते हो, कहो, कहां दौड़े जा रहे हो ? कहां से तुम्हें भय प्राप्त हुआ है ?

कीड़े ने कहा—भगवन् ! कोई बहुत बड़ी बैलगाड़ी आ रही है। इसी की घरघराहट सुनकर मुझे भय हो गया है। इसकी आवाज बड़ी डरावनी है, यह जब कानों में पड़ती है तो ऐसा सन्देह होता है कि कहीं गाड़ी आकर मुझे कुचल न डाले, इसलिये तेजी से भाग रहा हूँ। यह देखिये, बैलों पर चाबुक की मार पड़ रही है, वे भारी बोझ लिये हांफते हुए इधर आ रहे हैं। मुझे उसकी आवाज बहुत निकट-निकट सुनायी पड़ती है। गाड़ीपर मनुष्यों के भी नाना प्रकार के शब्द कानों में पड़ रहे हैं। हमारे जैसे कीड़ों के लिए इस आवाज को धैर्यपूर्वक सुन सकना कठिन है। अतः इस दारुण भय से अपनी रक्षा करने के लिए मैं यहां से भाग रहा हूं। मौत प्रत्येक प्राणी के लिये दुःखदायिनी होती है। अपना जीवन सबको दुर्लभ जान पड़ता है। कहीं ऐसा न हो कि मैं सुख से दुःख में पड़ जाऊँ, इसी भय से पलायन कर रहा हूँ।

व्यासजी ने कहा – कीट ! तुम्हें कहां सुख है ? तुम तो तिर्यक्योनि में पड़े हुए हो। मेरी समझ में मर जाना ही तुम्हारे लिये सुख की बात है। तुम शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध तथा छोटे बड़े भोगों का अनुभव नहीं कर सकते अतः तुम्हारा मरना ही अच्छा है।

कीड़े ने कहा—भगवन् ! जीव सभी योनियों में सुख का अनुभव करते हैं। मुझे भी इस योनि में सुख मिलता है और यही सोचकर मैं जीवित रहना चाहता हूँ। यहां भी इस शरीर के अनुसार सब प्रकार के विषय उपलब्ध होते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मनुष्य और स्थावर प्राणियों के भोग अलग-अलग हैं। पहले जन्म में मैं एक शूद्र था। ब्राह्मणों के प्रति मेरे मन में तनिक भी आदर का भाव नहीं था। मैं कंजूस और ब्याजखोर था। सबसे तीखे बचन बोलना—बुद्धिमानी के साथ लोगों को ठगना और संसार भर से द्वेष रखना—यह मेरा स्वभाव हो गया था। झूठ बोलकर लोगों को धोखा देना और दूसरों का माल हड़प लेना यही मेरा काम था। मैं इतना निर्दयी था कि घर पर आये हुए अतिथियों और आश्रितों को भोजन कराये बिना ही केवल स्वाद लेने की इच्छा से अकेला ही भोजन कर लेता था। भय के समय कितने ही शरणार्थी अभय पाने की इच्छा से मेरे पास आते, किन्तु मैं उन्हें शरण लेने योग्य सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाकर भी अकस्मात् वहाँ से निकाल देता, उनकी रक्षा नहीं करता। दूसरे मनुष्यों के पास धन-धान्य, सुन्दरी स्त्री, अच्छी-अच्छी सवारियां, शोभन वस्त्र और उत्तम लक्ष्मी देखकर मैं अकारण ही उनसे जलता रहता था। दूसरों का सुख देखकर मुझे ईर्ष्या होती थी। किसी का ऐश्वर्य मुझसे देखा नहीं जाता था। मैं अपनी इच्छाओं का गुलाम था। दूसरों के धर्म, अर्थ और काम का विनाश करने को सदा ही उद्यत रहता था। पूर्वजन्म में मेरे द्वारा प्रायः क्रूरतापूर्ण कर्म हुए हैं। उनकी याद आने से पश्चात्ताप होता है। उस समय मुझे शुभ कर्म के फल का ज्ञान न था। जीवन में मैंने केवल अपनी बूढ़ी मां की सेवा की थी तथा एक दिन अपने घर पर आये हुए एक ब्राह्मण अतिथि, जो अपने जातीय गुणों से सम्पन्न थे, स्वागत सत्कार किया था। इसी पुण्य के प्रभाव से मुझे आज तक पूर्वजन्म की स्मृति बनी हुई है। अब मैं कोई शुभ कर्म करके भविष्य में सुख पाना चाहता हूँ। अतः जिससे मेरा कल्याण हो वह उपाय आप ही बतलाइये। आप ही के मुँह से मैं उसे सुनना चाहता हूं।

व्यासजी ने कहा—कीट! तुम जिस शुभ कर्म के प्रभाव से तिर्यक्-योनि में जन्म लेकर भी मोहित नहीं हुए हो वह और कुछ नहीं है—मेरा दर्शन ही है। मैं अपने तपोबल से केवल दर्शनमात्र देकर ही तुम्हारा उद्धार कर दूँगा। तपोबल से बड़ा कोई दूसरा श्रेष्ठ बल नहीं है। मैं जानता हूँ, अपने पूर्वकृत पापों के कारण तुम्हें कीड़े की योनि में आना पड़ा है।

यदि इसी समय तुम्हारी धर्म के प्रति श्रद्धा है तो तुम्हें धर्म अवश्य प्राप्त होगा। देवता और तिर्यक्-योनि में पड़े हुए प्राणी इस कर्मभूमि में किये हुए कर्मों का ही फल भोगते हैं। अज्ञानी मनुष्य का धर्म भी कामनाओं को लेकर ही होता है और वे कामना की सिद्धि के लिए ही गुणों को अपनाते हैं। अस्तु, एक जगह एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते हैं। वे जीवन में सदा सूर्य और चन्द्रमा की पूजा किया करते हैं तथा लोगों को पवित्र कथायें सुनाते हैं। उन्हीं के यहाँ तुम पुत्ररूप से जन्म लोगे और विषयों को पञ्चभूतों का विकार मानकर अनासक्त भाव से उनका उपभोग करोगे। उस समय मैं तुम्हारे पास आकर ब्रह्मविद्या का उपदेश करूँगा अथवा तुम जिस लोक में जाना चाहोगे, वहीं तुम्हें ले जाऊँगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भीष्मजी कहते हैं—युधिष्ठिर ! व्यासजी के इस प्रकार कहने पर उस कीड़े ने 'बहुत अच्छा' कहकर उनकी आज्ञा स्वीकार कर ली और बीच रास्ते में आकर वह ठहर गया। इतने में वह विशाल छकड़ा वहां आ पहुँचा और उसके पहिये से दबकर उस कीड़े ने प्राण त्याग दिया। तत्पश्चात् वह क्रमशः साही, गोधा, सूअर, मृग, पक्षी, चाण्डाल, शूद्र और वैश्ययोनियों में जन्म लेता हुआ क्षत्रिय जाति में उत्पन्न हुआ। उस समय वह महर्षि व्यासजी का दर्शन करने के लिए वन में गया और उन्हें पहचान कर चरणों में गिर पड़ा। इसके बाद हाथ जोड़कर बोला—'भगवन् ! आज मुझे वह स्थान मिला है, जिसकी कहीं तुलना नहीं है। यह आप ही की कृपा है कि मैं अपने दोष से कीड़ा होकर भी आज राजकुमार हो गया। अब सोने की मालाओं से सुशोभित अत्यन्त बलवान गजराज मेरी सवारी में रहते हैं। मैं सुन्दर महलों के भीतर सुखद शय्याओं पर बड़े सम्मान के साथ शयन करता हूँ। आप महान् तेजस्वी और सत्यप्रतिज्ञ हैं। आपके ही प्रसाद से आज मैं कीड़े से राजपुत्र बन गया हूँ। महाप्राज्ञ ! आपको नमस्कार है। धन्य है आपका तपोबल का अमित प्रभाव। आज्ञा दीजिए मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?'

व्यासजी ने कहा—राजन् ! आज तुमने अपनी वाणी से मेरा भलोभांति स्तवन किया है। अभी तक तुम्हें अपनी कीट-योनि की कलुषित स्मृति बनी हुई है। तुमने पूर्वजन्म में अर्थ परायण, नृशंस और आततायी शूद्र होकर जो पाप संचित किया था, उसका सर्वथा नाश नहीं हुआ है। कीट-योनि में जन्म लेकर भी तुमने जो मेरा दर्शन किया, उसी पुण्य का फल है कि तुम क्षत्रिय हुए और आज जो तुमने मेरी पूजा की इससे तुम्हें ब्राह्मणत्व की प्राप्ति होगी। राजकुमार ! तुम नाना प्रकार के सुख भोगकर अन्त में गौ और ब्राह्मणों की रक्षा के लिये संग्राम भूमि में अपने प्राणों की आहुति दोगे। तदनन्तर, ब्राह्मण रूप में प्रचुर दक्षिणा वाले अनेकों यज्ञों का अनुष्ठात करके अविनाशी ब्रह्मस्वरूप होकर आनन्द का अनुभव करोगे।

भीष्मजी कहते हैं—इस प्रकार अपने पूर्वजन्म का स्मरण करने वाला वह कीट अब क्षत्रिय योनि में उत्पन्न था। क्षात्रधर्म का पालन करने लगा। तत्पश्चात् उसने बड़ी भारी तपस्या आरम्भ की। धर्म और अर्थ के तत्त्व को जानने वाले उस राजकुमार की उग्र तपस्या देखकर विप्रवर श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासजी उनके पास आये और कहने लगे—'कीट ! प्राणियों की रक्षा करना ही क्षत्रियों का धर्म है। तुम शुभ और अशुभ का ज्ञान प्राप्त करो और अपने मन और इन्द्रियों को वश में करके भलीभांति प्रजा का पालन करो। उत्तम भोगों का दान करते हुए अपने अशुभ दोषों का मार्जन करो, प्रसन्न रहो और आत्मा का ज्ञान प्राप्त करो। आजीवन स्वधर्म का पालन करते रहो। तदनन्तर क्षत्रिय शरीर का त्याग करके ब्राह्मणत्व प्राप्त करोगे।'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

युधिष्ठिर! महर्षि व्यास की बात सुनकर वह राजकुमार प्रजा का धर्म पूर्वक पालन करने लगा। प्रजापालन रूप धर्म का आचरण करते हुए उसने थोड़े ही दिनों में रणभूमि में शरीर त्याग दिया और दूसरे जन्म में ब्राह्मण के घर उत्पन्न हुआ। यह जानकर महायशस्वी व्यासजी पुनः उनके पास आये और बोले—विप्रवर! अब तुम्हें किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिये। उत्तम कर्म करने वाला उत्तम जाति में और पाप कर्म करने वाला पापयोनियों में जन्म लेता है। मनुष्य जैसा पाप करता है, उसके अनुसार ही उसका फल भोगना पड़ता है। अतः अब तुम मृत्यु के भय से मत डरो। हां, तुम्हें धर्म के लोप का भय अवश्य होता चाहिये; इसलिए उत्तम धर्मका आचरण करते रहो।

कीट ने कहा—भगवन्! आपकी कृपा से मुझे अधिकाधिक सुख की अवस्था प्राप्त होती गयी है। धर्म मूल्य सम्पत्ति पाकर मेरा सारा पाप नष्ट हो गया है।

भीष्म जी ने कहा—इस प्रकार भगवान् व्यास के कथनानुसार उस कीटने दुर्लभ ब्राह्मणत्व को पाकर सैकड़ों यज्ञादि कर्म निष्कामभाव से किया। तदनन्तर, ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ होकर उसने ब्रह्माजी का सालोक्य प्राप्त किया। व्यासजी के कथनानुसार उसने धर्मका पालन किया था, उसी का फल यह हुआ कि वह ब्रह्मलोक में जाकर सनातन ब्रह्म में लीन हो गया। युधिष्ठिर! क्षत्रिययोनि में जन्म लेकर उस उत्तम गति की प्राप्ति हुई। इसी प्रकार जो वीर क्षत्रिय अपनी शक्ति का परिचय देते हुए मातृ भूमि की रक्षा के लिये रणभूमि में मारे जाते हैं वे पुण्यमयी गति को प्राप्त होते हैं अतः उसके लिये शोक नहीं करना चाहिये।

"वादशाह और फकीर"

वादशाह की सवारी नगर से बाहर निकली थी। सुनसान स्थान पर एक पेड़ की शीतल छाँव में एक अलमस्त फकीर अपनी मस्ती से लेटे थे। वादशाह की नज़र फ़कीर पर पड़ी। वे सवारी से उतर कर अकेले फ़कीर के पास जाकर प्रणाम करके कहने लगे।

मैं इस देश का बादशाह हूँ। आप को किसी भी चीज की जरुरत हो तो मांग लीजिये।

फकीर ने कहा—अहो तुम वादशाह हो! अच्छा आया। ये मक्खियां मुझे तंग कर रही हैं। इन्हें भगा दो।

वादशाह बोले—मक्खियां तो मेरे वश में नहीं हैं; यदि आप चाहें तो ऐसे स्थान पर ले चलूँ जहाँ........।

"बस, बस! तुम जाओ—अपना काम करो। तुच्छ मक्खियों पर जिसका अधिकार नहीं, वे मुझे क्या दे सकेगा।"

वादशाह का घमण्ड चूर चूर हो गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री आनन्दमयी संघ, वाराणसी की तरफ से
श्री के० वसु० द्वारा श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम के
लिए प्रकाशित और महावीर प्रेस, भेलूपुर से मुद्रित ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

SHREE SHREE ANADAMAYEE SHANGHA
LIST OF PUBLICATIONS

HINDI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3.00
Sad Vāni "	...	1.00
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi Vol. I to XVII	...	47.00
Ma Anandamayee—Dr. Pannalal	...	3.00
Akhanda Mahāyajña—Gurupriya Devi	...	2.50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6.00
Sankirtan—Stav—Arati	...	0.50
Amar Vāni	...	6.00

BENGALI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3.00
Sad Vāni—"Bhaiji"	...	1.50
Mātri Vāni	...	0.75
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi Vol. I—XV	...	41.50
Ma Anandamayee Upadeshamrita Sangraha	...	1.50
Akhanda Mahāyajna	...	2.50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6.00
Suno Bali Maer Katha—Sailesh Brahmachari	...	1.50
Anandamayee Ma—Ganga Samiran	...	2.50
Amar Vāni	...	10.00
Mātri Lila Sankirtan	...	0.30

GUJRATI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	1.50
Ma Anandamayi—Na—Sannidhyamạ—Containing) Bhaiji's "Sad Vāni" & "Sri Ma Anandamayi Lila Katha") by Swami Bhagavatananda Giri—Vol. I	...	4.00
—Vol II	...	2.00

ENGLISH

Mother As Revealed to Me—"Bhaiji"		...	6.00
Mātri Vāni (Sayings)	1.50	Special edition	2.50
Words of Sri Anandamayi Ma (New Edition)	5.50	do ...	7.50
Mother as Seen by Her Devotees	5.50	Special edition	6.50
From the Life of Sri Anandamayi Ma by Bithika Mukerji		...	10.00

PHOTOS

Photos—various sizes Ranging from 0.50 to 15.00

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री आनन्द मयी संघ
ॐ मा
मातृ शरणं

Registered with the Registrar of Newspaper for India under No. N, 472

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

जयन्ती संख्या

वर्ष १९ अप्रैल १९७२ अंक २

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(१) अगवानी ! पल्लवित पूर्ण कुम्भ से,

(२) सान्ध्य सत्संग में भजन गाती हुईं श्रीमती सु

(३) महाभावमयी माँ !

(४) "तुम्हीं तो हो" !

श्रीमती सुब्बालक्ष्मी के आवासस्थल 'कल्कि फूल बगीचा मद्रास में गृहीत विभिन्न चित्रावली, जनवरी !

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माँ आनन्दमयी जयन्ती महोत्सव

परम हर्ष की बात है कि श्री श्री मां का ७७वां शुभ आविर्भाव-महोत्सव आगामी २३ मई, से ३१ मई, १९७२ तक दिल्ली वासी भक्त-वृन्द के आग्रह से श्री श्री माता आनन्दमयी आश्रम कालकाजी-न्यूदिल्ली में मनाया जायगा। उस समय श्री श्री माँ दिल्ली मे विराजमान रहेंगी ऐसी आशा की जाती है।

भवदीय

श्री गोविन्द नारायण
सभापति
श्री श्री आनन्दमयी संघ, दिल्लीशाखा

दुर्गासिंह
सभापति
श्री श्री आनन्दमयी संघ

तिथि पूजा—३१ मई रात्रि ३ बजे (१ जून अंग्रेजी मत से)

जो सज्जन २३ मई से ३१ मई, १९७२ के बीच में बाहर से आकर उत्सव में योगदान करना चाहते हैं वे कम से कम दस दिन पूर्व ही निम्नलिखित पते पर सूचना देने की कृपा करें। तदनुसार आहार और वासस्थान सम्बन्धी प्रबन्ध के लिए प्रयत्न किया जायगा।

स्वामी स्वरूपानन्द
श्री श्री माता आनन्दमयी आश्रम
कालकाजी न्यूदिल्ली—१९

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

[श्री श्री आनन्दमयी संघ का त्रैमासिक मुख पत्र]

•

परामर्श-परिषद्

महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज, एम. ए., डी. लिट्, पद्मविभूषण
अध्यक्ष

डाक्टर श्री गौरीनाथ शास्त्री, एम. ए., पी. आर. एस, डी. लिट्

ब्रह्मचारी शैलेश

ब्रह्मचारिणी आत्मानन्द

•

सम्पादक—ब्रह्मचारी निर्मलानन्द, एम. ए., शास्त्री

•

: वार्षिक चन्दे का विवरण :

भारत में—६) रुपये (डाक व्यय सहित)

विदेश में—(सी० मेल) १०·५० अथवा २५ शीलिंग अथवा २ डालर।

(एयर मेल)—२५ रुपये अथवा १ पौण्ड १० शीलिंग (यूरोप)

,, —३५ रुपये अथवा ५½ डालर (उत्तर-दक्षिण अमेरिका)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Statement about ownership and other particulars about newspaper

ANANDA VARTA
FORM IV
(See Rule 8)

1. Place of publication	Mata Anandamayee Ashram Bhadaini, Varanasi-1
2. Periodicity of its publication	Quarterly
3. Printer's Name	Swami Chinmayananda
(whether citizen of India)	Yes
(if foreigner, state the country of origin)	X
Address	Mata Anandamayee Ashram. Bhadaini, Varanasi-1
4. Publisher's Name	Swami Chinmayananda
(whether citizen of India)	Yes
(If foreigner, state the country of origin)	X
Address	Mata Anandamayee Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
5. Editor's Name	Brahmachari Nirmalananda
(whether citizen of India)	Yes
(If foreigner, state the country of origin)	X
6. Address	Mata Anandamayee Ashram, Bhadaini, Varanasi-1
Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital.	Shree Shree Anandamayee Sangha (Regtd.) Bhadaini, Varanasi-1

I, Swami Chinmayananda hereby declare that the particulars given above are tructo the best ofy knowledge and belief.

(Sd) Swami Chinmayananda
Signature of Publisher.

Dated 1. 4. 72

श्री श्री आनन्दमयी संघ, वाराणसी की तरफ से श्री स्वामी चिन्मयानन्द द्वारा श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम के लिए प्रकाशित और महावीर प्रेस, भेलूपुर से मुद्रित ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नियमावली

- 'आनन्द वार्ता' त्रैमासिक पत्रिका। बँगला, हिन्दी और अंग्रेजी में तीन अलग-अलग संस्करण प्रकाशित होता है।
- 'आनन्द वार्ता' का वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होता है। वर्ष के किसी भी महीने में चन्दा भेजकर ग्राहक बना जा सकता है। प्रत्येक ग्राहक को जनवरी अंक से पत्रिका लेना आवश्यक है। दिसम्बर के अन्त तक चन्दा या सूचना न मिलने पर अगला अंक भी वी० पी० द्वारा भेजा जाता है।
- पत्रिका प्रकाशित होते ही प्रत्येक ग्राहक के पास डाक द्वारा भेजी जाती है। डाक की गड़बड़ी के कारण कभी-कभी पत्रिका ग्राहक को नहीं मिल पाती। जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्तूबर महीने के तीसरे सप्ताह के भीतर पत्रिका प्राप्त न होने पर स्थानीय डाकघर से पूछताछ कर फिर कार्यालय को सूचना देनी चाहिये।
- श्री श्री माँ की उपदेश वाणी तथा उनके दिव्य जीवन से सम्बन्धित रचनावली विशेष रूप से 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित की जाती है! इसके अतिरिक्त दार्शनिक मतवाद, धर्म, नीति, शिक्षा और संस्कृति मूलक तथ्यबहुल शोधपूर्ण रचनायें, सम्प्रदाय निर्विशेष साधक महापुरुषों की जीवनी, धर्म-सम्बन्धी वास्तव घटना-आख्यायिका आदि भी 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित किये जाते हैं।
- 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशनार्थ रचनाएँ फुलस्केप कागज़ के एक तरफ सुवाच्य अक्षरों में लिखकर और उसकी नकल रखकर भेजनी चाहिए। लेखों का परिवर्द्धन, परिमार्जन तथा परिवर्तन करने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- समीक्षा और समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।
- स्थायी पते में कोई परिवर्तन होने पर तुरन्त सूचना दीजिये।
- चन्दा और पत्रादि लिखते समय अपना नाम, पूरा पता और ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। जो सज्जन चेक द्वारा चन्दा देना चाहें, वे बैंक कलेक्शन चार्ज २) रुपये अधिक भेजने की कृपा करें।
- **रुपया तथा चेक इत्यादि भेजने का पता—** श्री श्री आनन्दमयी संघ
(पब्लिकेशन अकाउन्ट)
भदैनी, वाराणसी—१
- **रचना और समालोचना के लिये पुस्तक इत्यादि भेजने का पता—** सम्पादक, 'आनन्द वार्ता'
श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी—१

टेलीग्राम : माताजी • फोन : ६२७९१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय-सूची

१. मातृ-वाणी ७८
२. मातृ सत्संग—स्वामी भागवतानन्द गिरि ८०
३. नित्यसिद्ध श्री श्री माँ आनन्दमयी—डा० रामधारी सिंह 'दिनकर' ८६
४. जन्मगान—श्री चरणकमलाश्रिता ९५
५. उपनिषदं ब्रूहि (मातृदेवो भव)—तपकुमार ९८
६. शाहबाग-लीला—प्रत्यक्षदर्शी १०५
७. श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग—श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त १०९
८. अन्नपूर्णे सदापूर्णे—रमाकान्त ११४
९. समाधि (२)—डा० शान्तिप्रकाश आत्रेय १२२
१०. महात्माओं की झोली से १३०
११. भारतीय संस्कृति और सन्त जीवन—उदयचन्द्र "प्रभाकर" १३५
१२. महात्मा का प्रसाद १४२
१३. मानव जीवन का आदर्श—सांख्य वेदान्त और आगम दृष्टि ....
—म० म० श्री गोपीनाथ कविराज १४४
१४. राष्ट्र, नीतिवाद और धर्मबोध—श्री सी० राजागोपालाचारी १४६
१५. देवी का शुभागमन १४९
१६. मातृ-लीला १५१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

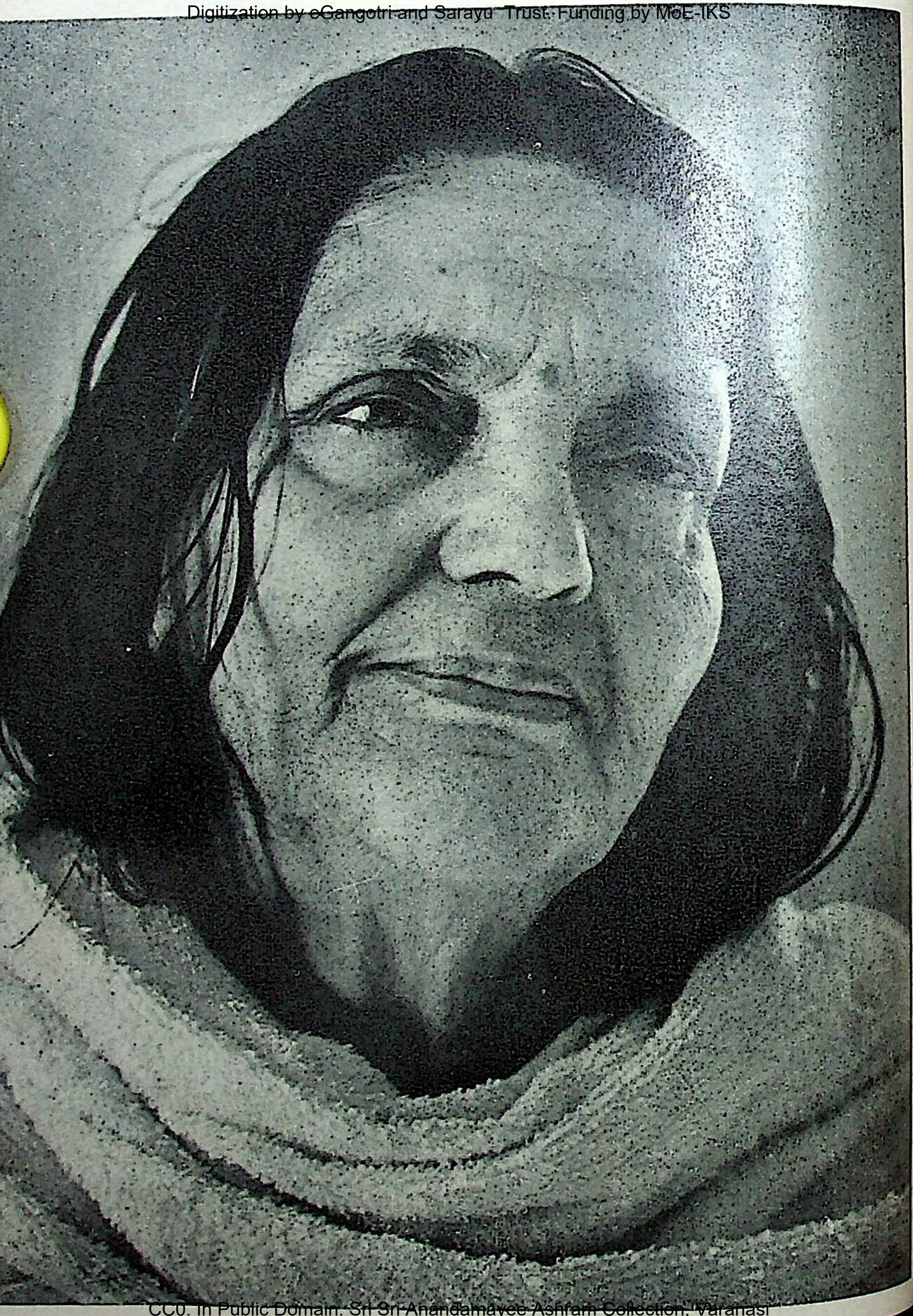

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

"अमर आत्मा—अमर पन्थी स्वयम्—अपने में आप ।"

वर्ष—१९] अप्रैल १९७२ [अंक—२

मातृवाणी

तुम्हें जितनी शक्ति हो करते चलो। कोई भी शक्ति हो, प्रयोग करने पर क्रिया का उदय होता है। जो पढ़ता लिखता है उसके बोलने की शैली ही अलग है। उसी प्रकार परमार्थ की ओर यात्रा करने पर, चलते को हुए शक्ति का विकास होता है। इस यात्रा में जो चले जाने वाला है चला जाता है, और जो नित्य, सत्य, बुद्ध और मुक्त है वह प्रकट होता है। लक्ष्य की ओर सदा दृष्टि रखना है, लक्ष्यभेद के लिए जैसे तीर लगाये रखना है। 'तुम, 'तुम' करते हुए अपने को डुबो दो और 'मैं' 'मैं' करते हुए तुमको डुबो दो।

* * *

बर्तन में जब चावल उबलने लगता है उस समय एक प्रेसर पैदा होता है, जिसके फलस्वरूप ऊपर का ढक्कन अपने आप खुल कर गिर पड़ता है। ताकत लगाकर उसे खोलना नहीं पड़ता। उसी प्रकार तुम्हारी जितनी शक्ति हो लगाने पर बाकी अंश वे स्वयं कर देते हैं। भाव-अभाव से व्याकुलता आती है, उसी से स्वरूप-प्रकाश का मार्ग खुल जाता है।

* * *

देहमन के राज्य में ही विरुद्ध शक्ति का अधिकार है। स्थिर होकर बैठना, स्थिर आसन पर चेतना की धारा प्रवाहित करते हुए दीर्घ समय तक रहने की चेष्टा। मुक्त गगन में वर्षा के समय अनावृत वृक्षसमूह जैसे पल्लवित होकर उच्चगति की स्थिति में अपने को प्रकाशित करते हैं वैसे साधनजीवन में भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इष्टलक्ष्य की ओर विगतचिन्ता होकर रहने का प्रयत्न करना है। जल्दी लक्ष्य में पहुँचने के मार्ग में पथिक जैसे लौटकर नहीं देखता है कि मार्ग को कितना पार किया गया, क्या देख आया और फल क्या पाया, ठीक उसी प्रकार साधनजीवन में भी विगतभावना त्याज्य है। लक्ष्य को पूर्ण रखने की चेष्टा चाहिए। मन के राज्य में जितना अधिक समय इष्टरस कल्पना में भी हो इष्टराज्य में विचरने की ओर रहना है।

* * *

भाग्य के भोग के लिए ही तो मनुष्य का जन्म है। जब तक नियंत्रण के उस पार नहीं जाया जा सकता है तब तक भगवान् के विधान को न मानकर तुम कैसे चल सकते हो? तुम्हारे अपने कर्म के अनुसार ही तो फल का विधान है। वे स्वयं अपने विधान को लाँघ सकते हैं, या नहीं यह विचार करने की शक्ति तुम्हें कहाँ है? उनके राज्य में सब ही सम्भव है। वे सब कर सकते हैं। किसलिए क्या करते हैं यह विचार करने का अधिकार तुमलोगों का नहीं है, तुम्हारे मन के अनुकूल कार्य वे सर्वदा क्यों करेंगे? वे प्रभु है, न। वे जो कुछ करते हैं सभी तुम्हारे मंगल के लिए हैं—ऐसा समझना चाहिए।

* * *

बाबा; इधर आनन्द स्वल्प है। उधर के आनन्द के थोड़े स्वाद मिलने पर इधर के आनन्द प्राप्त करने की इच्छा तक नहीं उठेगी। यह बिल्कुल सत्य है। साधुसंग, सत्संग, सद्ग्रन्थों का पाठ आदि से उधर की ओर रुचि होती है। कुछ भी छोड़ना नहीं पड़ेगा। केवल उन्हें प्राप्त करने की चेष्टा चाहिए। जो चले जानेवाला है, चला जायगा।

* * *

सर्व कर्म में कीर्तन में माँ तुम्हारे समीप हैं। चुपचाप शान्त होकर बैठना, भावना-शून्य आदि स्थिति में माँ मेरे समीप हैं—इससे आनन्द मिलेगा। निश्चल होकर बैठकर, सोकर ध्यान करना, चिन्तन करना, माँ मेरे समीप हैं—सदा ही हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ ॐ माँ ॥

मातृ-सत्संग (५९)

श्री स्वामी भागवतानन्द गिरि

स्थान : त्रिवेणी तट, अर्धकुम्भमेला, प्रयाग

ता० २ फरवरी १९४८—माघ कृष्ण अष्टमी, सोमवार

कथा प्रसंग में माँ ने कहा— "तन्त्र मत के अनुसार क्या विधि नियम है। १०८ की संख्या के बारे में क्या मत है? भक्तिशास्त्र की किताबों में १००८ जप क्यों कहे है इसकी क्या कोई बात शास्त्रों में नहीं मिलती है क्या?"

डा० पन्नालाल—वैष्णव लोग १००८ जप करते हैं।

प्र०—अपने जप का फल दूसरे को क्या दिया जा सकता है?

माँ—यदि उसमें जप के फल की देने को शक्ति आई हो तो दे सकता है। वह व्यक्ति—जिसको संकल्प करके दान दे—उसको मिल सकता है। मंत्र से दान हो सकता है।

प्र०—सिर्फ मन का संकल्प ही काफी नहीं है क्या?

माँ—काफी है—लेकिन सबको अपने मन में क्या है और क्या नहीं है—उसकी खबर नहीं रहती है। किसी एक व्यक्ति ने इस शरीर को बहुत सुन्दर कपड़ा दिया। इस शरीर ने फौरन वह कपड़ा दूसरे को दे दिया—इससे वह कपड़ा देने वाला को बहुत दुःख हुआ। इससे यह निश्चय हुआ कि उन्होंने कपड़े का ठीक ठीक तरह से दान नहीं किया उन्होंने इस शरीर को कहा—कि,—माँ—यह कपड़ा थोड़ा समय पहनकर दे देते तो अच्छा होता"। इस शरीर ने उनको कहा कि—"तुम ने जब कपड़े को माँ को दे दिया—फिर इस कपड़ा को माँ आग में जला दे या पहने—या किसी को दे दें—जो चाहे माँ करे"—मन से अमुक चीज दी गई है—यह जानना मुश्किल है।

प्र०—दशनामापराध क्या है?

माँ—वैष्णव मत के अनुसार दशनामापराध निम्न प्रकार से है :—

(१) विष्णु भगवान् और भगवान् शिव में भेद ज्ञान करना नामापराध है।

(२) गुरु महाराज और देवताओं में मनुष्य बुद्धि रखना दूसरा नामापराध है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(३) वेद पुराण शास्त्र और आगमों की निंदा करना ।
(४) भगवान् के नामों में अर्थवाद लगाना ।
(५) भगवान् के नामों की मूल व्याख्या करना ।
(६) भगवान् का नाम भी लेना और साथ साथ पाप कर्मों में प्रवृत्ति करना ।
(७) नाम के न्यून ज्ञाने से अशुभ कर्मों में मति जाना ।
(८) अश्रद्धालुओं को नामोपदेश ।
(९) नाममाहात्म्य सुनकर उसमें अविश्वास करना ।
(१०) वैष्णवों की निंदा यत्किंचित् भी करना ।

माँ के साथ सुन्दर वार्तालाप चल रहा था—इतने में पूज्य स्वामी श्री शरणानंदजी महाराज पधारे । माँ और मातृभक्तों ने महाराज का भव्य स्वागत किया । कथा प्रसंग माँ बोल रही थीं—किसी किसी वर्ष में ऐसा होता बहुत बढ़िया ओढ़ने का चद्दर किसी को दे दिया । नयी चादर तीन चार दिन के व्यवहार के बाद किसी न किसी को यह शरीर दे देता । यह शरीर अपनी चद्दर किसी को दे देने से फिर कोई नया चद्दर ले आता । उस वर्ष ढाका में इस शरीर ने एक एक करके करीब १९ नये चद्दर दे डाले । एक बार किसी ने बहुत पैसा खर्च करके इस शरीर के लिये बहुत बढ़िया रजाई ले आयी । इस शरीर ने फौरन वह रजाई दूसरे को दे दी । इससे किसी किसी के मुख से सुनने में आया—माँ ने मेरी रजाई को अपने शरीर पर थोड़ा सा भी नहीं रखा इससे मुझे बहुत खुशी हो रही है । क्योंकि माँ का मेरे ऊपर बहुत अधिक प्रेम है कि न पूछो बात ! मेरी चीज की व्यवहार के लिये माँ ने किसी को दे देने के लिये दे दिया इससे मुझको बहुत आनंद है । मेरे पैसा का खूब स्वार्थक उपयोग हुआ है । माँ मालिक है—वह पहने—चाहे किसी को दे दे—माँ जो खुशी से करे इसमें ही सच्चा आनंद है । (स्वामी शरणानंदजी के प्रति) पिताजी—यह भाव कैसा है ?

स्वामी शरणानंदजी—माँ, भक्त एकदेशीय होता है और भगवान् सर्वदेशीय होता है । भक्त को अपनी दृष्टि में रस आता हैं । भक्त की दृष्टि में त्याग है, हम सब लोगोंको माँ का ही हो जाना चाहिए । अरे ! मा ! जिसको जो वस्तु दे रही हैं वह भी माँ का ही है ।

माँ—प्रीति रखना ही सच्चा प्रेम है । नवद्वीप में पुजारी श्री गोविंदजी को बहुत सुन्दर रीतिसे सजाते हैं फिर पुजारी जी भगवान् के सामने बैठकर आनंद पूर्वक श्रीगोविंदजी का दर्शन करते है । कोई कहेगा—यह तो—भोग है । लेकिन यह बात ठीक नहीं है । श्री भगवान् का ऐसा दर्शन करते करते उनमें ऐसा सुन्दर भाव सुलभ होता है कि इससे अपने सब दोष कट जाते हैं । अपने बच्चों का सुंदर सुंदर वस्त्रों से सजाकर भोग दृष्टि से देखें तो उसमें दोष

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। लेकिन यदि भगवद्भाव से देखें तो उसमें कोई दोष नहीं है। भगवद्भाव आ जाय तो वहुत बढ़िया बात है। भगवान की तरफ मन का आकर्षण बढ़ जाय वैसा करना चाहिए। एक बात कह रहा हूँ—सुनो ! भगवान् की आत्मवत् सेवा करनी चाहिए।

स्वा० शरणानंदजी—प्रेम का यही लक्षण है।—यही एक साधना है।

माँ—साधन रूपसे भगवान् को पाने के लिये जो कोई व्यक्ति साधन भजन करता है—वह अच्छा है। भगवान् को पाने के लिये अनंत साधनायें हैं।

प्र०—भगवान् के चित्र की पूजा में और भगवान् के शरीर की पूजा में कोई फर्क है क्या ? कोई कहते है कि भगवान् की मूर्ति को एक जगह से हटाना नहीं चाहिए।

माँ—मूर्ति की प्रतिष्ठा दो प्रकार की होती है—एक अचलमूर्ति की प्रतिष्ठा होती है और एक सचल मूर्ति की प्रतिष्ठा होती है। सचल मूर्तिको तुम जहाँ चाहो ले जा सकते हो। अचल मूर्ति को प्राण प्रतिष्ठा होने के बाद कहीं भी नहीं ले जा सकते। गोपाल को हर एक जगह ले जा सकते हैं। ढाका में जब पाकिस्तान बना तब पंडितों ने मत दिया कि ढाका से मूर्ति को दूसरी जगह ले जाकर प्रतिष्ठित कर सकते हैं। साधारण नियम यह है कि—मंदिर में प्राण प्रतिष्ठा होने के बाद—कहीं नहीं ले जा सकते।

स्वामी शरणानंदजी—श्रीनाथजी को जगह जगह पर ले गये हैं।

माँ—जिस स्थान से भगवान् के विग्रह को स्थानान्तर किया जाता है—वहां फिर से विशेष पूजा, विशेष अभिषेक इत्यादि करना पड़ता है। यह शरीर तो एक उड़ने वाला पंछी है। संसार में जो कुछ हो रहा है—सब भगवान् ही कर रहे हैं। भगवान् के सिवाय एक पत्ता भी हिल नहीं सकता।

प्र०—महात्मा लोग तो पूर्ण होते हैं। तब भी देखने में आता है कि कोई-कोई महात्मा खराब काम क्यों करते हैं ? और ऐसे खराब काम करते हैं कि जिसको संसारी लोग भी खराब काम समझते हैं।

माँ—पिताजी (स्वा०-शरणानंद जी को) बताओ क्या बात है।

स्वामी शरणानंदजी—यह तो मनुष्य का बुद्धिजन्य दोष है। इष्ट को अपनी बुद्धि से मानते हैं। भाव जगत् में बुद्धि की आवश्यकता नहीं रहती। क्रिया जगत् में बुद्धि की आवश्यकता है। गुण के आधार पर जो प्रेम होता है वह तो प्रेम सच्चा है ही नहीं।—वह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तो व्यापार है। गुरु और शिष्य—यह एक भाव है। गुरु में शरीर बुद्धि और शरीर में गुरु बुद्धि रखना तो एक पाप है। यह बात यदि ठीक हो तो तुम गुरु के भावों का आदर कर रहे हो—या दोषों का। तुम्हारे में बहुत दोष पड़े हैं इसलिये गुरु महाराज में दोष देखते हो। गुरु महाराज में दोषों को मत देखो। तुम अपने अन्दर अपने दोषों को ठीक करने की कोशिश करो।

मां—जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि। जैसा तुम हो वैसा हो तुम्हारी दृष्टि है—वैसा ही तुमने देखा है।

प्र०—हम सब लोग सद्भावना लेकर श्री गुरु के श्री चरणों की शरण में गये थे। लेकिन गुरु महाराज ने ऐसी ऐसी बातें कहीं जिससे हमारा गुरु में विश्वास खत्म हो गया। गुरु यदि पूर्ण हैं तो फिर वे ऐसी खराब बातें क्यों करते हैं ?

मां—यदि वह सचमुच पूर्ण होता है तो फिर उसके ऊपर कोई बात चलती नहीं है।

प्र०—गुरु को असत्य बोलते, जुआ खेलते देखा है। असत्य बोलता है—जुआ खेलता है और बातें करता है पूर्णता की ?

मां—सुनो सुनो ! एक बात है ! "महाभारत में आता है कि द्रोणाचार्य को मारने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को पास बुलाया था—"अश्वत्थामा हत-ा-इति-कौन अश्वत्थामा ?—युधिष्ठिर ने आहिस्ते से कह दिया 'गज' इति। वहाँ भीमसेन ने अश्वत्थामा नाम के हाथी को मार डाला और कह दिया—"अश्वत्थामा मर गया'।" तो क्या तुम भगवान् श्रीकृष्ण को अपूर्ण कहोगे ? हाय ! हाय ! यह शरीर असत्य का पक्ष नहीं कर रहा है। यह शरीर एक बात पूछ रहा है—कि भगवान् श्री कृष्ण ने किसके साथ असत्य बातं की ? जो परिपूर्ण भगवान् हैं—वह अपने से ही एक मात्र बातें करते हैं ? सर्वत्र एकमात्र भगवान् ही है। उनके पास में दूसरा कोई है ही नहीं—भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने साथ ही बातें किया।

डॉ० पन्नालाल—मां, भगवान् श्रीकृष्ण और श्रीगुरु महाराज—यह दो एक होता है न ?

मां—भगवान् श्री कृष्ण चाहे सत्य बोले या असत्य। वह किससे बोलते हैं। खुद भगवान् अपने आपसे कैसे असत्य बोले ? वहाँ तो बोलने वाला वक्ता और श्रोता सुनने वाला दोनों एक ही है। फिर असत्यको बातें कहां रहीं ?

प्र०—मनुष्य पुनर्जन्म के सिवाय किसी के शरीर में प्रवेश कर सकता है कि नहीं ?

मां—भगवान् आदि गुरु शंकराचार्य का तो प्रमाण रहा है। सुना है कि उन्होंने पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुरुष के शरीर में प्रवेश किया था। आध्यात्मिक-अवस्था में पहुँचने पर परशरीर प्रवेश हो सकता है।

प्र०—एक योगी ने अपनी प्रज्ञादृष्टि से देखा कि उनके माता पिता दूसरे किसी के शरीर में रहे हैं।

मां—किसी किसी समय ऐसा भी होता है कि किसी की जीवित अवस्था में उनकी सत्ता दूसरे के शरीर में काम करती है। दूसरे के शरीर में रहकर अपना कर्म भोग भी पूरा कर लेते हैं।

मां—मेरी मां, पुरुष शरीर में भी रह सकता है क्या ?

मां—हाँ, रह सकती है। उनकी सत्ता आसकती है। जैसे बीमारी के बीजाणु दूसरे के शरीर में आक्रमण करते हैं वैसे ही कोई भी सत्ता या अंश आ सकता है। सब में सब रहा है। तुम्हारी माँ दूसरे के शरीर में आयी है या नहीं—यह शरीर कुछ नहीं बोल रहा है। यदि तुम्हारी ज्ञान दृष्टि खुल जाये—तुम्हारे में तुम्हारी माता पिता की सत्ता, अरे! —एक माता पिता ही क्यों सारे जगत् की सब सत्ता आ सकती है। आवागमन रूप प्रकाश के बीच में सत्ता रही है। इसलिए आ रही है।

प्र०—महात्मा लोग मृत शरीर में प्राणदान दे सकते हैं कि नहीं ?

माँ—जीवन या प्राण दे सकते हैं कि नहीं—इसके बारे में यह शरीर कुछ बोलेगा नहीं। सब चीजें उपाय से शक्य हैं।

प्र०—जगत् पर अनुकम्पा करने के लिए महात्माओं ने महात्मा गांधीजी को पुनर्जीवन क्यों नहीं दिया ?

माँ—महात्मा गांधी जी के बारे में यह शरीर अभी कुछ नहीं वोलेगा। हर समय हर बातें नहीं होती हैं।

* * *

कथा प्रसंग में माँ ने कहा,—"गुलाब के फूलों को तोड़कर भगवान् के श्री श्री चरणकमलों में अर्पण करके भगवान् की पूजा करो। कांटा की तरफ दृष्टि मत रखो।

प्र०—जीवन के अभ्युदय के लिए सबसे सरल और उत्तम रास्ता कौन सा है ? संसार में रहकर भोग और मोक्ष दोनों ही मिल सकता है कि नहीं ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ—एक दिन किसी भाई ने इस शरीर से प्रश्न किया था कि भगवान् के रास्ते में जाने से बढ़िया मोटर मिलेगी कि नहीं ? इस शरीर ने उनसे कहा था, "जितनी चाहेंगे उतनी मोटरें मिलेगी ? क्या तुमने श्री गुरु महाराज से दीक्षा ली है । यदि गुरु महाराज के श्री श्री चरणकमलों की प्राप्ति हुई हो तो एक मात्र उनके श्री चरणों की शरण में पड़े रहो । श्री गुरु महाराज के आदेशों को अविचार से पालन करो । इससे तुमको सब चीजें मिल जायेंगी किसी बात की कमी नहीं रहेगी ।

प्र०—ऐसे सद्‌गुरु मिले कैसे ?

माँ—तुम जब भोजन करते हो तब तुम्हारा पेट भर गया कि नहीं—इसका पता तुमको ही होगा । भोजन करने से अपने आप पता लग जायेगा कि तुम्हारा पेट पूर्णरूप से भर गया कि नहीं । जब तुम पूर्ण रूप से श्री गुरु महाराज में विश्वास करोगे तब वहाँ से सब उत्पन्न हो जायेगा । यदि कोई किसी एक लकड़ी में भी विश्वास करें तो वहाँ से भी उत्पन्न हो जायेगा । लोहे के बड़े खम्भे में से भगवान् श्रीनृसिंह महाराज उत्पन्न हुए थे कि नहीं ? पूर्ण विश्वास चाहिए ।

प्र०—गुरु को सोचबुझ-समझ कर करना चाहिए ?

माँ—गुरु जहाँ तक पहुँचे होंगे वहाँ तक—उस अवस्था तक शिष्य को पहुँचा सकते हैं । गुरु महाराज जब पूर्णता प्राप्त करेंगे तब शिष्य भी पूर्णता प्राप्त कर सकता है । गुरु आगे—बढ़ेंगे तो शिष्य भी आगे बढ़ेगा । पूर्णं विश्वास, पूर्ण श्रद्धा होगी तो—पूर्ण प्रकाश भी हो सकता है । (क्रमशः)

तात मिलै पुनि मात मिलै सुत भ्रात मिलै जुवती सुखदाई ।
राज मिलै गज बाजि मिलै सब सौंज मिलै मन बांछित पाई ॥
लोक मिलै परलोक मिलै विधि लोक मिलै बइकुंठहु जाई ।
'सुन्दर' और मिलै सबही सुख, संतसमागम दुर्लभ भाई ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नित्यसिद्धा श्री श्री माँ आनन्दमयी*

(जन्म दिवस के शुभ अवसर पर)

डा० रामधारी सिंह "दिनकर"

श्री मां आनन्दमयी के दर्शन मैंने केवल चार बार किये हैं। चाहता हूँ कि मेरी श्री मां के दर्शनों की संख्या असंख्य हो जाये, किन्तु यह अर्जित-पुण्य के प्रभाव से ही होगा। श्री मां आनन्दमयी ने कोई पन्थ नहीं चलाया है, न किसी विचारधारा का प्रवर्त्तन किया है। दीक्षा भी उन्होंने केवल अपने पति को दी थी और फिर एक अन्य भक्त को जिनका नाम श्री ज्योतिषचन्द राय था। जहाँ तक मुझे मालूम है, वह साधना का भी कोई विशिष्ट मार्ग किसी को नहीं बतातीं। फिर भी श्रद्धापूर्ण नारियां और नर उनके दर्शनों के लिए भीड़ लगाये रहते हैं। देश के बड़े से बड़े लोग श्री मां के सान्निध्य में क्षण भर बैठने को लालायित रहते हैं।

रामकृष्ण भक्ति की शिक्षा देते थे, महर्षि रमण ज्ञान की, श्री अरविन्द योग की और महात्मा गांधी कर्म की। भगवान् नित्यानन्द योग के एक विशिष्ट मार्ग शक्ति-पाठ के आचार्य थे, जो शक्ति उनके शिष्य स्वामी मुक्तानन्द जी परमहंस में आज भी काम कर रही है। किन्तु श्री मां आनन्दमयी किसी भी पन्थ की शिक्षा नहीं देतीं। वैसे जिस वातावरण में वह रहती हैं, वह सहज प्रसन्नता और हंसी-खुशी से सराबोर एक निर्मल भक्ति-गंगा है।

मां का घर का नाम निर्मला सुन्दरी था, किन्तु बचपन से ही उनमें जो सौन्दर्य था, जो सहज प्रसन्नता थी और चारों ओर आनन्द बिखेरने का जो स्वभाव था उसे देख कर अष्टग्राम (ढाका) के जयशंकर सेन की पत्नी ने उनका नाम 'हासी-खुशीर मां' रख दिया था। मां के एक भक्त भूदेव बाबू की पत्नी कहा करती थीं—"मां का ऐसा रूप था कि वह यदि घाट पर जातीं तो घाट को उज्ज्वल कर देतीं।" उनके सौन्दर्य और तेजस्विता का अभिनन्दन करते हुए लोग उन्हें "रांगा दीदी" भी कहते थे।

मातृ सौन्दर्य में भी यह शक्ति होती है कि वह दर्शक को स्निग्धता और शान्ति से भर दे। ज्ञान को समझने के लिये मेधा का बल चाहिये, किन्तु सौन्दर्य बिना कुछ सोचे समझे

* साभार साप्ताहिक हिन्दुस्तान से पुनर्मुद्रित

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समझ में आ जाता है। उस पर, श्री मां का सौन्दर्य तो आध्यात्मिकता से परिपूर्ण है। अभी ७५ वर्ष की उम्र में भी श्री मां जहां बैठती हैं, अमृत शिखा के समान दीपती रहती हैं। आध्यात्मिक तृषा और सौन्दर्य बोध में कहीं कोई भीतरी लगाव होगा। इसी लिये अक्सर उनमें से प्रत्येक दूसरी को जाग्रत कर देती हैं। जवाहर लाल जी का सौन्दर्य-बोध बहुत ही उच्च कोटि का था। शायद यही प्रेरणा उन्हें श्री मां आनन्दमयी के सान्निध्य में ले गई थी। और वहाँ पहुँचने पर उनके भीतर आध्यात्मिक प्यास भी जग गई और उन्होंने श्री माँ के सांनिध्य में ध्यान भी क्रिया और माला भी फेरी।

मैं जब श्री मां की सेवा में जाता हूँ, तब मेरी चेष्टा रहती है कि मैं जी भर कर श्री मां की मूर्ति को निहारूँ, उनके उज्ज्वल रूप का ध्यान करूँ और जो प्रभा वह अपने चारों ओर विकीर्ण करती रहती हैं, उसे समेट कर अपने भीतर सजो लूँ। और जब भी मैंने श्री मां के दर्शन किये हैं, मैं खाली नहीं लौटा हूँ। कुछ लेकर आया हूँ। इस प्रसंग में ३० नवम्बर, सन् १९६९ का दिन विशेष रूप में उल्लेखनीय है। उस दिन काशी के साहित्यकार प० कान्ता नाथ पाण्डेय 'राजहंस' मुझे श्री मां की सेवा में ले गये थे। मैं दर्शकों की भीड़ में बैठा मन ही मन मां का नाम-स्मरण कर रहा था। श्री मां अपने समम पर आई और सब की ओर निहार कर त्राटक उन्होंने मेरी आँखों पर लगा दिया। अमृत का जो प्रवाह उस समय आया उसे मैंने आँखें खोल कर ग्रहण करने की कोशिश की, संभालने का प्रयास किया। किन्तु, मेरा क्षुद्र पात्र बहुत अधिक पीयूष नहीं संभाल सका। श्री मां ने मेरी ओर दो मालाएँ भी फेंकीं। मैं उन्हें सिर से लगा कर उठ खड़ा हुआ और मां को प्रणाम निवेदित करके बाहर आ गया। महर्षि रमण जिस पर कृपा करते थे उसकी ओर टकटकी बांध कर देखने लगते थे। मैं जब भी रमणाश्रम जाता हूं, सन्त शिरोमणि श्री मुरुगनार के चरणों में अवश्य बैठता हूँ और वह भी दृष्टि द्वारा ही मुझे आशीर्वाद या प्रेरणा प्रदान करते हैं। मुझे यह रहस्य मालूम था, फिर भी मैं श्री मां की कृपा-वृष्टि में अधिक देर तक न भींग सका, यह सोचकर पश्चात्ताप होता है। और अब यह संयोग फिर घटेगा या नहीं, यह कौन बता सकता है?

श्री माँ आनन्दमयी का जन्म सन् १८९६ ई० ३० अप्रैल; बृहस्पतिवार को पूर्वी बंगाल के त्रिपुरा जिले के खेओड़ा ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री विपिन बिहारी भट्टाचार्य और माता का नाम श्रीमती मोक्षदा सुन्दरी था। श्री माँ का घर का नाम निर्मला सुन्दरी था, किन्तु पुकार नाम उनके कई थे। कोई उन्हें तीर्थवासिनी कहता था, कोई दाक्षातणी, कोई गजगंगा और कोई कमला, लेकिन अधिक लोग उन्हें केवल निर्मला कहकर पुका-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रते थे। ये नाम संकेत देते हैं कि माँ का बालिका-रूप भी अलौकिक और मनोज्ञ था, इसीलिये लोग उन्हें तरह के पवित्रताव्यंजक नामों से अभिहित करते थे। निर्मला का पढ़ना-लिखना बहुत कम हुआ, शायद लोअर प्राइमरी कक्षा तक। निर्मला अपनी माँ की सेवा-टहल बड़े उन्मुक्त भाव से करती थी लेकिन माँ हमेशा यही कह कर झीखती रहती कि यह लड़की तो बड़ी सीधी है, इसका क्या बनेगा। एक दिन निर्मला तालाब से पानी लेकर आई और घड़े को कमर पर रखकर माँ के सामने टेढ़ी भंगिमा में खड़ी हो गई और बोली—"माँ यह देखा, तुम मुझे सीधी कहती हो, मगर मैं तो टेढ़ी हो गई।"

निर्मला पृथ्वी पर अदृश्य के आध्यात्मिक यन्त्र के रूप में अवतरित हुई थी, अतएव बचपन से ही उसे भाव आते, समाधि सी लग जाती थी। "बहुत दूर पर कीर्तन हो रहा हो, माँ घर के भीतर सोई हों, कहती हैं, तभी शरीर में एक अस्वाभाविक अवस्था हो जाती थी। किन्तु कमरे में अन्धेरा रहता था, अतएव पिता, माता कोई देख न पाते थे। और मेरे मन में भी ऐसा एक भाव रहता कि कोई देखे नहीं।"

सन् १९०९ ई० के माघ महीने में निर्मला का विवाह श्री रमणी मोहन चक्रवर्ती के साथ सम्पन्न हुआ। उस समय निर्मला की वय बारह वर्ष दस महीने की थी। रमणी बाबू उस समय पुलिस विभाग में काम करते थे और उनके बड़े भाई रेवती मोहन चक्रवर्ती रेलवे में स्टेशन मास्टर थे। विवाह के बाद निर्मला का जब दिवस गमन हुआ, वह इन्हीं रेवती मोहन यानी अपने जेठ के घर गई और वहाँ उस घर की लाड़ली हो गई। लेकिन लाड़ली होने का अर्थ काम से रिहाई नहीं थी। निर्मला का जीवन घर-अध्यवसाय का जीवन जा। कहते हैं, कपड़े धोते-धोते और बरतन-भाड़े माँजते माँजते उसकी उँगलियाँ घिस गई थीं और चमड़ी उधड़ गई थी।

विवाह के कई महीने बाद ही रमणी मोहन की नौकरी छूट गई और वह बेकार हो गये। कुछ यह कारण भी हुआ कि निर्मला को जेठ के घर चार वर्ष रहना पड़ा। इस बीच जेठ भी चल बसे। समाधि निर्मला को इस समय भी लगती थी। रसोई करते करते ही वह बेहोश होकर गिर पड़ती और चूल्हे पर रसोई जलने लगती थी। स्वाभावाविक था कि इसके लिये जेठानी की फटकार सुननी पड़े, किन्तु निर्मला लाचार थी।

श्री रमणी मोहन को नई नौकरी ढाका के नवाब के यहाँ मिली। पहले वह वाजितपुर में रहे, पीछे उनका तबादला ढाका हो गया। ढाका में नवाब का एक बाग था, जिसे शाहबाग कहते थे। रमणी मोहन इसी बाग की देख रेख पर नियुक्त हुए। यहीं श्री ज्योतिष चन्द्र राय ने निर्मला को श्री माँ आनन्दमयी कह कर पुकारा और इसी बाग में श्री माँ ने रमणी मोहन को भोलानाथ नाम दे दिया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शाहबाग आने से पहले वाजितपुर में रहते समय ही लोग यह मान गये थे कि माँ को जो कुछ होता है, वह "प्रेत लीला" नहीं है। यहीं श्री माँ ने तीन वर्ष का मौन व्रत साधा था। वाजितपुर में ही दर्शनाथ श्री माँ के दर्शनों को आने लगे थे। किन्तु शाहबाग तो श्री माँ की आध्यात्मिक लीला भूमि बन गया। कीर्तन के समय और वैसे भी उन्हें भाव चढ़ जाता, समाधि लग जाती और वह अर्ध मूच्छित अवस्था में जमीन पर गिर जातीं। योग की क्रियायें उन्हें आप से होने लगतीं और मुख से मन्त्र और स्तोत्र निकलने लगते। अनेक आगामी घटनाओं का ज्ञान उन्हें पहले ही हो जाता और कभी-कभी उनके आशीर्वाद से रोगी का रोग भी दूर हो जाता।

जनता के बीच तो माता जी सिद्धेश्वरी, मानुषकाली, तपस्विनी, योगिनी और साधिका के नाम से विख्यात हो रही थीं, किन्तु ज्यों-ज्यों उनकी प्रसिद्धि बढ़ती थी, भोलानाथ के परिवार की चिन्ता भी बढ़ती जाती थी। एक दो बार लोगों ने ओझा-गुणी को भी बुला कर कोशिश की कि माँ का रोग छूट जाए किन्तु, जब वह किसी भी प्रकार नहीं छूटा, लोग भोलानाथ को समझाने लगे कि वह अपना दूसरा विवाह कर ले। लेकिन भोलानाथ के भीतर संकल्प विकल्प नहीं था। वह अपनी सहधर्मिणी के आध्यात्मिक स्वरूप को पहचान गये थे और यह सोचकर निश्चिन्त हो चुके थे कि साधारण गृहस्थी उनके भाग्य में नहीं है। उन्होंने दूसरा विवाह करने से साफ इन्कार कर दिया और श्री माँ के साथ रहकर स्वयं भी ध्यान-धारण और पूजा-पाठ करने लगे।

अपने वैवाहिक जीवन के बारे में श्री माँ ने कहा है—"घर पर मैंने पिताजी की आज्ञा का पालन किया था। विवाह के बाद उन्होंने कहा—आज से आज्ञा तुम अपने पति की मानोगी। सो भोलानाथ जी की आज्ञा मैं उसी प्रकार मानने लगी जैसे पहले पिता की आज्ञा मानती थी। आरम्भ से ही भोलानाथ जी मेरे लिये पिता के समान रहे। वह आँख मूँद कर मेरा विश्वास करते थे और उन्हें पूरा भरोसा था कि मैं जो कुछ करूँगी वह ठीक होगा।"

आध्य त्मिक साधना गृहस्थी के साथ भी देखी गई है किन्तु किसी-किसी साधना में काम और अध्यात्म में मेल नहीं है। भगवान् जिसे ऐसे अध्यात्म के मार्ग पर आगे ले जाना चाहते हैं, उसे 'काम' से बचा लेते हैं। परमहंस रामकृष्ण की पत्नी उन्हीं के कमरे में सोई हुई थीं। परमहंस ने अपने आप को सम्बोधित किया—"रे मन, इसी को युवती नारी कहते हैं। भीतर एक बात और बाहर दूसरी बात, ऐसा मत करना। अगर तुझे चाहिये तो नारी यहाँ मौजूद है।" यों सोचकर रामकृष्ण ने अपना हाथ आगे बढ़ाया। बस तुरन्त समाधि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लग गई और सुबह को भक्तों ने उसी अवस्था में पाया। श्री गुरुप्रिया देवी और मुखर्जी ने श्री माँ का जो चरित लिखा है, उससे प्रत्यक्ष हो जाता है कि भगवान् की प्रेरणा से ही श्री माँ और भोलानाथ जी पिता-पुत्री के समान रह सके। श्री गुरुप्रिया देवी ने लिखा है कि माँ जब किसी व्रत में लगतीं, तब उनका ऋतु धर्म बन्द हो जाता तथा २७-२८ वर्ष की उम्र में वह हमेशा को बन्द हो गया।

राम के दरबार में हनुमान का जो स्थान था, श्री मां आनन्दमयी के आश्रम में दीदी यानी गुरुप्रिया देवी का वही स्थान है। उनका गुरुप्रिया नाम श्री मां का दिया हुआ है, नहीं तो उनका घर का नाम श्रीमती आदरिणी देवी था। आदरिणी देवी के पिता डाक्टर शशांक मोहन मुखर्जी अवकाश प्राप्त सिविल सर्जन थे और ढाका में रहते थे। आदरिणी देवी का विवाह कलकत्ता के श्री उपेन्द्र नाथ बनर्जी के साथ हुआ था, किन्तु जब लोगों ने देख लिया कि आदरिणी देवी गृहिणी का जीवन बिताने को तैयार नहीं हैं, तब श्री उपेन्द्रनाथ ने अपना दूसरा विवाह कर लिया और आदरिणी देवी ब्रह्मचारिणी का जीवन बिताने लगीं।

श्री मां के दर्शन पहले शशांक मोहन ने किये थे और वह ही आदरिणी देवी को श्री मां के पास ले गए। श्री मां ने आदरिणी देवी को देखते ही कहा—"तू अब तक कहाँ थी ?" श्री मां आदरिणी देवी को खुखनी कहने लगी और खुखनी की श्री मां के प्रति इतनी श्रद्धा हो गई कि वह नित्य अधिक से अधिक समय श्री मां की सेवा में बिताने लगी। शशांक मोहन भी मन ही मन श्री मां को अपना गुरु मान कर साधना में लग गये। पिता-पुत्री की प्रगाढ़ श्रद्धा का कारण यह था कि उन्होंने परमहंस श्री रामकृष्ण लीलामृत पढ़ रखा था। श्री मां की भावावस्था को देख कर उन्हें श्री रामकृष्ण लीलामृत का स्मरण हुआ और उन्होंने समझा हो न हो श्री मां की अवस्था भी वही हो रही है जैसी रामकृष्ण परमहंस को होती थी।

श्री मां का जीवन विलक्षण था। धीरे-धीरे उनकी सिद्धि और चमत्कार की कथा लोगों में चारों ओर फैल गई और दर्शनार्थी अधिक संख्या में आने लगे। लोग चाहते थे कि वे श्री मां की पद धूलि ग्रहण करें, उनके पत्तल का प्रसाद पायें। किन्तु मां किसी को भी अपने पत्तल का प्रसाद या चरणों की धूलि नहीं लेने देतीं। श्री मां स्वयं अपने पति की पत्तल में खाती थीं। वह कई दिन तीन कौर खाकर उठ जातीं, कई दिन केवल नौ और कई दिन केवल तीन चावल खाकर रह जातीं। कभी ऐसा भी करतीं कि १ दिन कुछ खा लेतीं और दूसरे दिन उपवास कर लेतीं।

तब तक श्रीमां अपने ही हाथों से खाती थीं। एक दिन ऐसा हुआ कि वह खुखनी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को अपने हाथ से खिलाने लगीं । खुखनी ने कहा—"तुम खाओगी नहीं, केवल मुझको खिला-वोगी" श्री मां ने रहस्यभरी मुस्कान के साथ कहा—"आज तुम्हें खिला दिया है, पीछे तुम मुझे खिला दोगी ।" और हुआ भी वही । इसके बाद शीघ्र ही मां ने अपने हाथ से खाना बन्द कर दिया । तब से गुरुप्रिया देवी ने उन्हें खिलाना शुरू किया और आज तक श्री माँ प्रसाद उन्हीं के हाथों से पाती हैं ।

श्री माँ के खाने के नियम को लेकर भक्तों में असन्तोष चलता था । माँ कहतीं—"एक निश्वास के चलने तक जितना खिला सको उतना ही खिलाना ।" कभी खाती ही नहीं और कह उठतीं—"सब का शुद्ध भाव ही मेरे शरीर का पोषण करेगा ।" जब माँ ने देखा भक्त खाने को बहुत तंग करते हैं, तब उन्होंने एक दिन छोटा सा चमत्कार कर डाला । भक्तों ने उस दिन आधा मन दूध मँगवा कर खीर पकाई थी और वे चाहते थे कि आज माँ को पेट भर भोजन करवाये । गुरुप्रिया देवी खिलाने को बैठी, माँ आनन-फानन सारी खीर खा गई । खीर घटी तब नई खीर चूल्हे पर से उतार कर लाई गयी । लेकिन मां को उस दिन तपती हुई गरम खीर भी निगलने में कोई कठिनाई महसूस नहीं हुई । इसी प्रकार एक दिन वह सत्तर पूरियां खा गई थीं ।

भोलानाथ जी शाक्त थे । वह मांस-मछली बड़े शौक से खाते थे । अतएव श्री मां को भी वही प्रसाद पाना पड़ता । अब तो वह शुद्ध निरामिषभोजी है, किन्तु जब तक भोला-नाथ जीवित रहे, श्री मां अपने को सधवा मानकर पातिव्रत धर्म का निर्वाह करती रहीं । एक बात यह भी कि बंगाल की सभी स्त्रियाँ अपने सौभाग्य को अक्षय बनाने के लिए मां को मछली खिलाना चाहती थीं और श्री मां उनका मन नहीं तोड़ पाती थीं ।

ढाका पहुँच कर अथवा ढाका जाने से पहिले बाजितपुर में ही श्री मां ने एक बार जिज्ञासा की थी कि अरब देश कहाँ हैं । पीछे उन्हें पता चला कि अरब देश के दो फ़क़ीर कभी ढाका आये थे और यहीं उनका स्वर्गवास हुआ । उन दोनों की कब्र शाहबाग में ही थी । एक दिन मां कीर्तन सुनकर भाव में आ गई थीं और मण्डली की प्रदक्षिणा करके घूम रही थीं । उस दिन एक मुसलमान सज्जन भी कीर्तन का तमाशा देख रहे थे । इतने में श्री मां मण्डली को छोड़कर बाहर आ गई और दौड़कर अरबी फकीरों की कब्र पर चली गईं । कब्र के पास खड़ी होकर उन्होंने कुरान की बहुत सी आयतों का पाठ किया और फिर वह मुस्लिम विधि से कब्र पर नमाज पढ़ने लगीं । यह देखकर जो मुसलमान पास में खड़े थे, वे भी नमाज़ में शामिल हो गये । यहां फिर यह बात याद आ जाती है कि परमहंस रामकृष्ण ने भी छः महीने तक इस्लाम की विधि से साधना की थी । अभिनव हिन्दू धर्म धर्मों की बाहरी विशेष-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ताओं को न मानकर उन्हें एक ही धर्म मानता है, यह शिक्षा श्री मां आनन्दमयी की साधना से भी निकलती है।

अभी हाल में युरोप या अमेरिका से एक युवती आई और मां से उसने पूछा—"मैं किस नाम का जाप करूँ ?"

मां ने पूछा—"तू तो ईसाई है न ? ईसा में तेरा विश्वास है ?"

लड़की ने 'हाँ' कहा।

श्री मां ने कहा—"तो तेरे उचित यही है कि तू ईसा का नाम जपे और उन्हीं का ध्यान करे। समय आने पर ईसा ही तुझे मार्ग दर्शन देंगे।"

मुसलमान के बगीचे में हरिकीर्तन हुआ करे, यह अनहोनी बात थी। लेकिन शाहबाग की मालकिन नवाबजादी प्यारी बानू की श्री मां पर अतिशय भक्ति थी। वह जब ढाका जातीं हरिकीर्तन देखने शाहबाग में जरूर आती थीं। प्यारी बानू की बेटी का विवाह कलकत्ता में हुआ। नवाबजादी ने श्री मां को आग्रह पूर्वक बुलाया और कई दिन उनकी सेवा की। इसी विवाह के अवसर पर स्वर्गीय सी. आर. दास की पुत्री अपर्णा और उनकी विधवा पत्नी वासन्ती देवी ने श्री मां के दर्शन किए थे।

इस प्रसंग को लेलर एक कथा है। सी० आर० दास के स्वर्गीय होने के पूर्व श्री मां को किसी ने सी० आर० दास और वासन्ती देवी की फोटो दिखायी थी। श्री मां ने वासन्ती देवी को लक्ष्य करके कहा था—"इसपर तो भारी विपत्ति आ रही है यह विधवा हो जायेगी।"

उधर वासन्ती देवी ने स्वप्न देखा कि एक लड़की लाल किनारे की सफेद धोती पहने और ललाट पर सिन्दूर का बड़ा टीका लगाये आई है और कह रही है—"तू विधवा हो जायेगी।"

प्यारी बाबूकी बेटी के ब्याह में श्री मां की भेंट पहले अर्पणा देवी से हुई थी। उस समय श्रीमां लाल किनारे की सफेद धोती पहने हुई थीं। वासन्ती देवी ने कहा—"अब तो सब कुछ ठीक से याद नहीं है, लेकिन लगता है, यही मूर्ति मेरे सपने में आई थी।" फिर वासन्ती देवी ने श्री मां को अपनी गोद में बैठा लिया।

श्रीमां ज़ब बंगाल से बाहर निकलीं, उनकी यात्रायें लम्बी होने लगीं। देवघर (विहार) में वह सुप्रसिद्ध सन्त श्री बालानन्द ब्रह्मचारी के आश्रम में ठहरी थीं। उस समय बालानन्द जी ने शशांक मोहन से कहा था—जिनका संग पकड़ा है, छोड़ना मत। मां तो साधिका नही हैं। यह नित्यसिद्ध है। किसी कर्म के निमित्त जन्म लिया है, उस कर्म की पूर्ति होने पर चली जायेंगी। इन्हें किसी प्रकार का साधन भजन करना नहीं है।"

महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज ने मां के प्रथम दर्शन हरिद्वार में किये थे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जब श्री मां काशी गईं, महामहोपाध्याय ने दुबारा उनके दर्शन किये और उनके मुख से निकलने वाले स्तोत्रों को सुनकर कहा—"यह वास्तविक देवभाषा है, मर्त्य लोक के संस्कारों के साथ इसे समझना असम्भव है।"

तब से मां बराबर यात्रा में रहने लगीं। जब वह दुबारा काशी गईं, श्री कविराजजी ने मां को अपने गुरु विशुद्धानन्द जी से मिलाया। कविराज जी ने इन दो महासन्तों के मिलन का वर्णन लिखा है। विशुद्धानन्द जी ने कोई खाने की चीज माँ को ओर बढ़ाई। श्री मां ने कहा—"पिताजी, मैं तो स्वयं खा नहीं सकती।" इस पर विशुद्धानन्द जी ने अपने हाथ से माँ को खिलाया और श्री मां अपने हाथ से स्वामी जी को खिलाने लगीं। विशुद्धानन्द जी को कुछ लोग गन्धी बाबा भी कहते थे, क्योंकि वह चमत्कार पूर्वक गन्धों की सृष्टि कर सकते थे। श्री मां के सामने भी बाबा ने गुलाब की गन्ध की सृष्टि की और एक पुष्प को स्फटिक बनाकर दिखाया।

श्री मां के मन में यह भाव उठने लगा कि स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये। यज्ञोपवीत उन्होंने स्वयं भी धारण किया और गुरुप्रिया देवी तथा भरणी को भी पहनाया।

काशी जाने पर उन्होंने पण्डितों से इस बात की चर्चा की। श्री गोपीनाथ कविराज ने कहा—"पहले ऐसा होता था, किन्तु उसका लोई विधान अब शास्त्रों में नहीं मिलता। ऐसी अवस्था में श्री मां की इच्छा ही शास्त्र है।"

पण्डित जवाहर लाल नेहरू को श्री माँ के प्रति श्रद्धा थी। श्रीमती इन्दिरा गांधी की तो मां पर अगाध भक्ति है। किन्तु इन्दिरा जी की माता कमला नेहरू तो मां के चरणों पर न्योछावर हो गई थीं। उन्हें दूर रहने पर भी श्री मां के दर्शन हो जाते थे। एक बार श्री ज्योतिषचन्द्र राय को कमला जी ने पत्र में लिखा था—"भाई जी, आप मुझे मां की खबर सदा नहीं देते। किन्तु मेरा मन सदा ही मां के दर्शन पाने को आकुल रहता है। मैं मां को यहीं से कभी-कभी देख लेती हूँ। कुछ दिन हुए, मैंने देखा, मां एक बड़े लाल किनारे की धोती पहन कर बैठी हैं।"

मां उन दिनों नाखूनी कोर की धोती पहनती थीं। किन्तु किसी बंगालिन ने उन्हें एक दिन बड़े लाल कोर की धोती पहना दी थी—और श्री मां उसी धोती में दिन भर बैठी रही थीं।

मां कौन है, क्या है, ये प्रश्न मन में बार बार उठते हैं। गोपीनाथ कविराज ने ऐसे प्रश्नों को बिल्कुल व्यर्थ बताया है। "साधारणतः मां सन्तान को अपना परिचय नहीं देती, सन्तान के लिये वह परिचय कोई आवश्यक भी नहीं है। मां उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है, वह जो चाहता है, उसे वह देकर भुलाये रखती है।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लेकिन बुद्धि-पीड़ित मनुष्य को इस सान्त्वना से तृप्ति नहीं मिलती। जिस तरह वह चांद को छू कर वापस आ गया है, उसी तरह वह अध्यात्म को भी विज्ञान की छड़ी से थाहना चाहता है। लेकिन विज्ञान से अध्यात्मसिद्धि नहीं होगी, तर्क से आत्मज्ञान नहीं मिलेगा। तब क्या किया जाए ?

बहुत पूछा, मगर उत्तर न पाया,
अधिक अब पूछने से और डरते हैं।
असम्भव है जहाँ, कुछ सिद्ध करना,
नयन को मूँद हम विश्वास करते हैं।

प्रानी ! जप लो तू सतनाम ॥
मात पिता सुत कुटुम कबीला, यह नहिं आवै काम।
सब अपने स्वारथ के संगी, संग न चलै छदाम ॥
देना लेना जो कुछ होवै, करि लै अपना काम।
आगे हाट-बजार न आवै, कोई नहिं पावे श्राम ॥
काम क्रोध मद लोभ मोह ने, आन बिछाया दाम।
क्यों मतवारा भया बावरे, भजन करो निःकाम ॥
यह नर-देही हाय न आवै चल तू अपने धाम।
अब की चूक माफ नहीं होगी, 'दुलन' अचल मुकाम ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जन्म गान

"श्री चरणकमलाश्रिता"

धन्य धन्य वह देश ग्राम,
जहं मात लियो 'अवतार रे।
उनकी करुणा अनुकम्पा का,
नहीं कोई पारावार रे॥

भाग्य कहा कहिये खेवड़ा के,
ग्रामन को सरताज रे।
प्रकट भई जहं मात निर्मला,
करने सबहिं कृतार्थ रे॥

ब्रह्म मुहूर्त कृष्ण चतुर्थी,
पुण्य मास बैसाख रे।
प्रकटी आय मातु भवानी,
करने जग कल्याण रे॥

श्री मोक्षदा सुन्दरी गृह बिच,
शिशु त्रिलोकी नाथ रे।
लीला वपु धारण कर लीनो,
भए सकल सनाथ रे॥

सद्गुण संपन्न पुनीत ब्राह्मण कुल,
पिता विपिन भट्टाचार्य्य रे।
जैसे हिमाचल गृह में प्रकटी,
उमाँ कुँअँरि गिरिराज रे॥

पावन यश छायो दशहूँ दिश,
जब भयो नव परकाश रे।
बजी दुंदुभि चहुँदिश आनन्द,
सब की पूजी आस रे॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुर, नर, मुनि सब स्तुति करते,
ठाढ़े रहे जोड़े हाथ रे।
राज राजेश्वरी आनन्द माता,
हरतीं जग का भार रे॥

मैं हूँ शरण आयो मैय्या की,
रखियो अपने द्वार रे
भूल न जइय्यो मोको मैय्या
रखियो सदा सम्हार रे॥

सौ सौ वर्ष का होवे एक दिन,
ऐसे हों वर्ष हजार रे।
युग युग जीवें माता मेरी,
जन्मोत्सव बारम्बार रे॥

प्रेम का स्वरूप !

प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोय।
जो जन जानै प्रेम तौ; मरै जगत क्यों रोय॥
प्रेम प्रेम सब कोउ कहै, कठिन प्रेम की फांस।
प्रान तरफि निकरैं नहीं, केवल चलत उसांस॥
प्रेम फांस में फँसि मरे, सोई जिए सदाहि।
प्रेम मरम जाने बिना, मरि कोउ जीवत नाहि॥
प्रेम हरी कौ रूप है, त्यौं हरि प्रेम सरूप।
एक होई द्वै यौं लसैं ज्यौं सूरज और धूप॥
ग्यान ध्यान, बिद्या मती, मत बिस्वास बिबेक।
बिना प्रेम सब धूर है, अग जग एक अनेक॥"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उपनिषदं ब्रूहि

"मातृदेवोभव"

तपकुमार

परमपावनी अशेष कल्याणकारिणी भगवती श्रुति की डिण्डिम उद्घोषणा है—स्वर्णिम स्वच्छन्द उपदेशवाणी है—मातृदेवो भव ! हे मानव सन्तान ! तू इष्टदेव समझकर माता की सेवा उपासना कर। हमारे कोमलतम और उच्चतम विचार और प्रियतम एवं चिर-संचित मधुर स्नेहालु भावनाओं के सचल सघन मूर्तिमान् स्वरूप यदि इस असार संसार में कोई हैं तो वह 'माँ' ही हैं। नारी मातृदेवता है। भारतीय संस्कृति ने उसको माता के रूप में उपस्थितकर मानवमात्र के लिए मंगलमय परम गोपनीय इस रहस्य का उद्घाटन किया है कि वह मानव के कामोपयोग की सामग्री एक सुन्दर खिलौना न होकर उसकी वन्दनीया एवं पूजनीया है। यह अविवादित स्वानुभवगम्य सत्य है कि नारी के स्त्रीत्व की चरम एवं सहज स्वाभाविक परिणति मातृत्व में ही समाहित है। नारी को यह मातापद का गुरु गौरव पुरुष के साथ समानता के तथाकथित सिद्धान्तानुसार किये गये किसी पक्षपातहीन बँटवारे में नहीं मिला। यदि ऐसा ही होता तो वह वन्दनीया नहीं हो पाती। शास्त्रीय एवं मानवीय दृष्टि में नारी का यह मातृत्व दयामयी जगज्जननी पराम्बा भगवती की ही प्रसाद-कणिका है।"

"विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः, स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।" समस्त विद्या और सब स्त्रियाँ देवी की ही रूप हैं। "माँ" यह शब्द कितना सुमधुर है! इसकी गूँज से ही हृदय में एक अनिर्वचनीय पवित्रता और आनन्द की लहर सी उठ जाती है। 'माता' यह शब्द मधुर स्नेहरस संचारी प्रियता से परिपूर्ण एवं बहुव्यापक है। 'माँ' की महिमा के विषय में श्रुति, स्मृति, पुराण-इतिहास और नीतिशास्त्र एक सुसम्बद्ध स्वर से मुखर हो उठते हैं। माता की महिमा का गायन सब देश में सब काल में अनाहतनाद की तरह मानवमात्र ने गाया है।

"मा माने," "माङ् माने" अथवा "मान पूजायाम्" धातु से 'तृच्' प्रत्यय लगाने से मातृ शब्द निष्पन्न होता है। "माति गर्भोऽस्याम्" अथवा "मान्यते पूज्यते जनैरिति माता"। हमारी पूजनीया प्रातःस्मरणीया श्रीश्रीमाँ के श्रीमुख से हम सदा ही सुनते हैं : माँ माने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मय, माँ माने आत्मा, आत्मा शब्द को उल्टे से पढ़े तो 'माता'। जो माप कर दें वही तो माता। जो माता वही आत्मा, जो आत्मा वही माता। त्वमेव माता च पिता त्वमेव। माँ विश्वमय विश्वातीत जो कहो सो ही तो वही रूप में। सदा माँ की हो गोद में—जैसा रखे वैसा रहना जैसे खिलावे वैसा खाना—सदा यही याद रखना।"

मनुजी की मर्मवाणी अभी भी नीतिशास्त्रों में गूँज रही है। त्रिलोकी में गौरव में 'माँ' की बराबरी करने का दुःसाहस कोई नहीं कर सकता।

उपाध्यायाद्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रं तु पितृवन्माता गौरवेणातिरिच्यते॥

उपाध्याय का आदर करना चाहिए। परन्तु एक आचार्य गौरव में दश उपाध्यायों से बढ़कर है। एक पिता सहस्र आचार्यों से उत्तम है एवं एक माता एक सहस्र पिताओं से श्रेष्ठ है। अहो बलवान् मनु की लेखनी ! क्या सर्वव्यापक नीति का उच्छ्वास ! पुत्रों के लिये माता परम पूजनीया। माँ की पवित्र चरणरज पुत्र के लिए अशेष मंगलमय अमृत स्वरूप है। माँ के होते हुए और किसी देवता विशेष की आराधना की आवश्यकता नहीं रह जाती।

"मातृतोऽन्यो देवो नास्ति तस्मात् पूज्या सदा सुतैः।" देवताओं से बढ़कर माँ की महिमा यहाँ बताई गयी है। किसी देवता की निन्दा नहीं या खण्डन नहीं है। कहीं-कहीं पर तो ऐसी भी उक्तियाँ मिलती हैं कि माता की सेवा पराम्बा जगन्माता के रूप में तथा पिता की सेवा परात्पर ब्रह्म के रूप में मानकर की जावें।

"त्वमाद्ये जगतां माता पिता ब्रह्म परात्परम्।" भारतवर्ष सदा से ही मातृवर्ग का सेवक रहा है। जाति, व्यक्ति, समाज और देश का सौभाग्य सच्ची हितैषिणी माता के ऊपर ही निर्भर है। माता का पद सबसे ऊँचा है। इसलिए सभी स्त्री पुरुष का परम कर्त्तव्य है कि वे परम धर्म समझकर माता की सेवा उपासना करें। जिससे लोक में यश-और परलोक में सुख प्राप्त हो। माता का स्थान स्वर्ग से भी ऊँचा है : "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।" स्वर्ग का सुख और आनन्द माँ के स्नेह और वात्सल्य के सामने तुच्छातितुच्छ है। अंग्रेजी में एक कहावत है The hand that rocks the cradle rules the world. जो हाथ पलना झुलाता है वही संसार पर शासन करता है। इस मुहावरे में तो लेखक ने गागर में सागर भर दिया है।

किसी समय में पश्चिम और पूर्वमें भी स्त्री को मायाविनी के रूप में ही देखा गया था, मानो नारी की संरचना सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी ने केवल इसलिये की है कि वह मानव को

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धर्मपथ से विचलित करे। स्थान-स्थान पर खुले शब्दों में स्त्री को अधःपतन का फिसलता मार्ग, नरकका उन्मुक्त द्वार, काम की घनीभूत सार आदि कहकर उसकी निन्दा की गयी है। पाश्चात्य देश के एक सुप्रसिद्ध सन्त सेंट क्राइसोस्टोम तो नारी निन्दा में उछलकर कह बैठे: 'नारी एक आवश्यक दोष है, एक स्वाभाविक प्रलोभन है, एक वांच्छनीय विपत्ति है, घर में रहने वाली एक बला है, एक प्राणान्तक आकर्षण है, रोग है। सारी सृष्टि के अर्द्धांश यदि अपर अर्द्धांश को इस दृष्टि से देखना आरम्भ करे तो मनुष्य की निर्बुद्धिता और उन्मत्तता अपनी चरम सीमा पर पहुँचने में देर नहीं करेगी।

पुरुष समाज ने जो कुछ भी नारी के प्रति कहा और उसकी जो प्रतिक्रिया हुई है इस पर विवेचन न कर हम यदि अपने जीवन के नित्य नैमित्तिक पहलुओं पर निगाह डालें तो अवश्य ही देख पायेंगे कि जीवन के ताने-बाने में नारी जाति की एक अत्यन्त गम्भीर एवं परम आवश्यक अमावनीय छाप विद्यमान है। नारी चाहे जितना भी स्खलनशीला और अबला हो परन्तु माता के रूप में उसका सर्वगुणसम्पन्न सर्वोत्कृष्ट स्वरूप का परिचय हमें पग-पग में प्राप्त होता आया है। माता के रूप में उसका प्रभाव पावन तथा संस्कृत है, वह प्रेरणा की स्रोतस्विनी, पवित्रता की प्रतिमूर्त्ति, स्नेह और वात्सल्य के एक मात्र सच्चा आधार के रूप में अपना परिचय देती है। भगवदीय प्रेम और दयालुता की ऐसी अभिव्यञ्जना जो पूर्णता की सीमा को छूने का साहस कर सकती हो, केवल माता के ही प्रतीक से हो सकती है। स्त्री मात्र को माता के रूप में देखना यह एक मानवीय चेतना का अनूठा उज्ज्वल निदर्शन है। प्राच्य पाश्चात्य सब देशों और धर्मों में इस बारे में हमें भूरि-भूरि सामग्री प्रमाण के रूप में उपस्थापित करने का अवसर प्राप्त हो सकता है। ईसाईयों में भी कुमारी मरियम की पूजा आज भी साडम्बर प्रचलित है। उनके धर्म में जो Trinity त्रिमूर्ति पवित्र पुरुष, ईश्वर और तीसरी है ईसामसीह की जननी मरियम। यहूदियों ने तो और आगे बढ़कर यहाँ तक कह दिया कि वह सर्वगुण-सम्पन्न दयालु परमात्मा सर्वत्र सर्वदा प्रकट नहीं हो सकते, परन्तु उनके दूसरे स्वरूप में यदि कोई भी अपने को इस धरातल पर प्रकट करने का किंचिन्मात्र साहस कर सकता है तो वह है अपनी सगी माँ। मां में भगवान् के स्नेहालु स्वरूप की झलक सदा दीख पड़ती है। प्रत्येक देश में प्रत्येक काल में प्रत्येक धर्म में मनुष्य ने माता को सबसे ज्यादा भक्ति और श्रद्धा का पात्र माना है। मां की इस सर्वतः परिपूर्णतम और स्नेह वात्सल्य की अमिट छटा को और व्यापक रूप में अपने जीवन में अनुभव में लाने के लिए वेदादि शास्त्रों में सोलह प्रकार की माताओं का उल्लेख है:

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्तन्यदात्री गर्भदात्री भक्ष्यदात्री गुरुप्रिया ।
अभीष्टदेवपत्नी च पितुः पत्नी च कन्यका ॥
सगर्भजा च या भगिनी स्वामिपत्नी प्रियाप्रसूः ।
मातुर्माता पितुर्माता सोदरस्य प्रिया तथा ॥
मातुः पितुश्च भगिनी मातुलानी तथैव च ।
जनानां वेदविहिता मातरः षोडश स्मृताः ॥

दूध पिलानेवाली धाय, गर्भ में धारण करने वाली सगी माँ, भोजन देने वाली, गुरु पत्नी, इष्टदेवकी पत्नी, सौतेली मां, सौतेली मां की पुत्री, सगी बड़ी बहिन, स्वामी पत्नी, सास, नानी, दादी, सगे बड़े भाई की पत्नी, मौसी, बूआ और मामी-ये सब मिलाकर सोलह माताएँ हैं। सोलह संख्या स्वयं सोलह कलाओं के प्रतीक हैं और उन कलाओं की प्रतीक सी ये सोलह माता के ही स्वरूप हैं। कितना सुन्दर उदात्त भावना का संतुलित विमर्श ! निःस्वार्थ और सच्चे प्रेम का सर्वोत्कृष्ट आधार मां ही है। मां के स्नेह में निष्कपटता और सरलता जैसी निरखती हैं वैसी त्रिलोकी में देखने को नहीं मिलती। गम्भीर अथच गंगा का स्वच्छ शीतल प्रवाह की भाँति मां के स्नेह वात्सल्य रस का प्रवाह सन्तान के लिए नित्य निरन्तर बहता रहता है। मां के हृदय से उद्भुत वात्सल्य ने कभी भी सन्तान को धोखा नहीं दिया भले ही सन्तान अपनी परमस्नेहमयी जननी के प्रति कभी कभी अपने कपट पूर्ण व्यवहार से लोक में निन्दित हुआ हो। प्रेमास्पदों ने अपनी प्रेयसी को, प्रेमिकाओं ने अपने प्रेमी को धोखा दिया, छल-कपट से बर्त्ताव किया ऐसे दृष्टान्तों से इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं परन्तु मां का प्रेम सदा ही सच्चा उतरा है। मां के वात्सल्य में काम की दुर्गन्ध नहीं, (पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक फ्रायड से क्षमा चाहता हूँ जिनके विचारों से माता के प्रति बच्चे की भोली मुसकान में भी काम का ही कुत्सित रूप दिखायी देता है लोभ से उत्पन्न अस्थिरता) नहीं भाती और स्वार्थ की कालिमा से कलुषित नहीं हो पाती। सहिष्णुता, त्याग, दया, क्षमा आदि सब गुण सहज रूप से ही अपनी सन्तान को नौ महीनों तक अपने कोख में धारण करने के तपस्या काल में मां के हृदय में स्तनों में दूध की धार की तरह आविर्भूत हो जाते हैं और चिर काल तक वहीं निवास करते हैं। माँ के स्नेह समुद्र का पार लगाना या उसकी तलहटी में पहुँचकर थाह लेना बालक के लिये अभावनीय हैं।

किसी कवि ने बड़े मार्मिक ढंग से कहा है :

हे मां ! तू कामधेनु का मधुपय, शुचि सलिल जन्हुजाता का ।
या सुधा क्षीर निधि की है, देवता प्यार माता का ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तू स्नेहपूर्ण निर्झर है, जो युग से झरता आता।
युग युग झरता जायगा छल छल कल कल गाता।।

दया और सहिष्णुता की पराकाष्ठा मां ही है। आत्म त्याग की भावना से सदा ही ओत प्रोत रहती है। बड़े से बड़े बलिदान के लिए माता सदा ही तैयार रहती है। माता के ही त्याग और आत्मबलिदान के ज्वलन्त उदाहरण चन्दशेखर आजाद, भगत सिंह जैसे लाल उत्पन्न हुए जिन्होंने भारत भूमि को उजाला किया।

माँ एक सच्चा मित्र, कुशल सेविका, शिशु का प्रथम गुरु है। सनातन हिन्दू धर्म में अपनी जीवनसंगिनी को छोड़कर स्त्रीमात्र को देवी भगवती स्वरूपा माँ मानें और तदनुसार आदर करें ऐसा कहा गया है।

आदर्श माताओं के दिव्य चरित्रों के चित्रण से हमारे पुराणादि शास्त्र भरे पड़े हैं। यहाँ केवल मात्र दो चार उदाहरणों से दिग्दर्शन मात्र कराया जा रहा है।

माता सुमित्रा ने लक्ष्मण जैसे पुत्र को जन्म दिया जिन्होंने धीरता, वीरता, भ्रातृप्रेम और भगवद्-भक्ति का जीता-जागता आदर्श स्थापित कर संसार का महान् उपकार किया। माता का विशाल हृदय और आत्म त्याग का जैसा चित्र सुमित्राजी में प्राप्त होता है वैसा विश्व के इतिहास में अन्यत्र कहीं प्राप्त नहीं होगा। वन जाते हुए अपने प्राणप्रिय पुत्र लक्ष्मणजी को माता सुमित्रा कहती हैं—

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम्।
अयोध्यामटवीं विद्धि गच्छ तात यथा सुखम्।।

श्री गोस्वामिपाद तुलसीदास जी के शब्दों में—

तात तुम्हारि मातु वैदेही। पिता राम सब भाँति सनेही।
अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहँहि दिवस जहँ भानु प्रकासू।।

माता सुमित्राजी, रामजननी कौशल्याजी, कपिलदेव की जननी देवहूतिजी, देवमाता अदिति, माता मैना, माता सुनयना, पाण्डवजननी माता कुन्ती, कृष्णजननी स्नेहमयी मैया यशोदाजी इन सब माताओं के त्याग तपस्या स्नेह ममता की सच्ची कहानियाँ कौन नहीं जानता है! विस्तारभय से यहाँ इन सब प्रातःस्मरणीया माताओं के दिव्य चरितचित्रण से विरत हो रहा हूँ। केवल मात्र कुछ नामों को लेकर नमस्कार भाव किया गया हैं।

अपनी माँ सदा ही पूजनीया और प्रातःस्मरणीया होती है। माता तो परम गुरु है। शास्त्र कहता है:

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पितुरप्यधिका माता गर्भधारणपोषणात् ।
अतो हि त्रिषु लोकेषु नास्ति मातृसमो गुरुः ॥
नास्ति गंगासमं तीर्थं नास्ति विष्णुसमः प्रभुः ।
नास्ति शम्भुसमः पूज्यो नास्ति मातृसमो गुरुः ॥
माता धरित्री जननी दयार्द्रहृदया शिवा ।
देवी त्रिभुवनश्रेठा निर्दोषा सर्वदुःखहा ॥
आराधनीया परमा दया शान्तिः क्षमा धृतिः ।
स्वाहा स्वधा च गौरी च पद्मा च विजया जया ॥
दुःखहन्त्रीति नामानि मातुरेकविंशतिम् ।
श्रृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यः सर्वदुःखाद् विमुच्यते ॥

(बृहद्धर्मपुराण, व्यास-जाबालि संवाद से)

व्यासजी कहते हैं—पुत्र के लिये माता का स्थान पिता से भी बढ़कर है, क्योंकि वह उसे गर्भ में धारण कर चुकी है तथा माता के द्वारा ही उसका पालन पोषण हुआ है। अतः तीनों लोकों में माता के समान दूसरा कोई गुरु नहीं है। गंगा के समान तीर्थ नहीं हैं, भगवान् विष्णु के समान कोई प्रभु नहीं हैं, शिव के समान कोई पूजनीय नहीं तथा माता के समान कोई गुरु नहीं है। माता, धरित्री, जननी, दयार्द्रहृदया, शिवा, देवी, त्रिभुवनश्रेष्ठा, निर्दोषा, सर्वदुःखहा. परमआराधनीया, दया, शान्ति, क्षमा, धृति, स्वाहा, स्वधा, गौरी, पद्मा, विजया, जया तथा दुःखहन्त्री ये माता के ही इक्कीस नामों का गायन है। जो मनुष्य इन नामों को सुनता और सुनाता है वह सब दुःखों से मुक्त हो जाता है। सभी शिक्षकों में माँ का स्थान सर्वश्रेष्ठ है, बीमारी के समय उससे बढ़कर कोई कुशल सेवा करनेवाली दूसरी नहीं, नित्यप्रति के जीवन में भी माँ ही सबसे योग्य पथ प्रदर्शक हैं, तत्त्वज्ञानी और सच्चा सदा साथ देनेवाली मित्र भी है। भगवान् शंकराचार्य ने इसीलिए ठीक ही कहा है—

"कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।"

देवताओं ने भी उस पराशक्ति में माँ की झाँकी को ही श्रेष्ठ माना है—

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥

विश्व की हरेक स्त्री ही अपने को माँ के रूप में श्रेष्ठ मानती है—

"माँ" जब मुझको कहा पुरुष ने, तुच्छ हो गये देव सभी ।
इतना आदर, इतनी महिमा, इतनी श्रद्धा कहाँ कभी ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उमड़ा स्नेहसिन्धु अन्तर में, डूब गयी आसक्ति अपार ।
देह, गेह, अपमान, क्लेश, छिः ! विजयी मेरा शाश्वत प्यार ॥"

माँ सदैव गौ की तरह सीधी, हिम की भाँति निर्मल और गंगा के समान पवित्र हैं। यदि इस धरातल पर कोई ऐसी वस्तु है, जो भगवदीय प्रेम की अधिक से अधिक स्मृति दिला सकती है, तो वह माँ है। इसी से वेद में कहा गया है 'मातृदेवो भव'।

"हे मां ! तू मेरी माता हैं
हिन्दू की माता है,
भारत की माता है,
भगवान् की स्वरूपभूता है।
मानवसभ्यता के सेवकों की जननी है।
विश्वभव्यता के रक्षकों की भगिनी है ॥
सीता सावित्री है
गीता गायत्री है
तुझे बार-बार प्रणाम है ॥"

मां ! मेरा सब कुछ भुला दो; जानबूझकरजो अभिमान करता हूं, वह सब भुला दो, जिससे मैं शयन में, सपने में भी तुम्हें माँ कह सकूँ। जैसा बचपन में मुझे कर रक्खा था, वैसा ही फिर कर दो। मैं तुच्छ हूँ मैं तुच्छातितुच्छ हूँ; केवल तुम्हारी ओर ही दृष्टि रखूँगा, मुझे भय नहीं है। मेरी मां मेरी प्यारी मां ! तुम्हीं धन्य हो धन्य हो।

—श्री विजयकृष्ण गोस्वामीजी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शाहबाग लीला

[१०]

'प्रत्यक्षदर्शी'

आज माँ को इस तरह किसने सजाया है। बड़ा ही सुन्दर भाव का विकास हो रहा है। भव समुद्र के अनन्त तरंग में हिलोलें ले रहा है। एक ओर सौन्दर्य लहरी है, उसमें आनन्द से खिला उच्छ्वास, जैसे नाच रहे हैं। देखकर वाणी रुक जाती है। प्रश्न उठता है—कौन और क्यों जी भरके इतने फूलों से इनको सजाया है। ढाका के नवाब गनी मियाँ का सुन्दर बाग है यह शाहबाग। बाग के पर्यवेक्षक श्रद्धेय श्री रमणीमोहन चक्रवर्त्तीजी के घर की कुलवधू वेश में गुप्त योगपरायणा मां हैं। श्रद्धालु भक्तों के गंभीर भाव से भरपूर होकर, माँ अपने योगसिद्ध देह को, विश्वजननी रूप से प्रकाश कर रही हैं।

मास्टर बाउल एक काली साधक हैं। कभी कभी काली कीर्त्तन करते हुए भावविभोर होकर रात भर बिता देते हैं। श्री चक्रवर्त्तीजी के बालसखा ने रमणा के काली मन्दिर में मां का प्रथम दर्शन किया था। इन्होंने सिद्धेश्वरी मन्दिर में मां के शरीर पर काली आदि दसों महाविद्याओं का दर्शन प्राप्त किया था। कृतार्थ हो चुके थे। और अपने पड़ोसियों से कहते थे कि ये "मानुष काली" हैं। माली टोलेमें फूलों के हार बनते थे। वहीं इनका घर था। बहुत से सुन्दर फूलों के हार ये लाये थे। आज सन् १९२७ का मई का महीना है। वैसाख की १९वीं तारीख है। दूसरे भक्तगण ने जपा गन्धराज आदि पुष्पों की मालाओं से मां की सजावट की है। हरेक अंग में देशी मालाओं से मुकुट, कण्ठी, तीन लड़वाले हार, नूपुर, कड़े, आदि लगाकर नाना प्रकार से सजावट की है। मालूम होता था ये मां के विशेष पुजारी हैं। गाने लगे—

केरे ओ मां ए जे प्रवीना रूपसी
पदभरे कांपे मेदिनी।

इधर श्री मां अपने भाव में सराबोर हैं। योगशक्ति के स्पन्दन से तपस्या से कृश शरीर फूलने लगा साथ ही साथ एक पवित्र प्रकाश उनके चारों ओर अपना प्रभाव फैलाने लगा। धीरे-धीरे समाधि की अवस्था आने लगी। मालूम हुआ मानो एक पत्थर की मूर्त्ति वेदी पर बैठी है और दर्शकों के प्राणों पर असर डाल रही है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पड़ोस के घर में से बिस्तरे पर पड़े हुए रोगी एक भक्त मन ही मन इस विशेष पूजा की प्रेरणा दे रहे हैं जैसे मुख्य यजमान का पार्ट अदा कर रहे हैं। थोड़ी थोड़ी देर में वह पूजा की खबर ले रहे थे और निर्देश दे रहे थे। अब भक्त लोग हरि कीर्त्तन आरम्भ कर रहे हैं। मां की इस भाव की सुन्दरता को स्मरण करते हुए उस साधक ने एक गीत लिखा।

तोमारि चरन पुजिबो आशाय एनेछि भोरिया डाला ॥
राशिराशि फूल शुशमा अतुल आंखिनीरे गांथि साला ॥
कुशुम रत्तने कुशुम भूषने शाजाबो चरन रसन ॥
आकुलो होइलो पागोल होइलो परशि जुगल चरन ॥
पाति दिवो वक्ख पाति दिवो शिर शोंपि दिवो देहमन ॥
तोमारि चरने अमृत चूमिया जुड़ाइवो प्रान ज्वाला ॥

("श्रीचरणे" पुस्तक का ५ नं० गीत)

इसी साधक के आग्रह से—बाउल बाबू ने भी अपना भाव खोल दिया। वह एक बगल में बैठकर आँखें मूँदकर श्यामा संगीत गाने लगे।

"कि घूम लेगेछे आजी मानशेर शत दले"

इनके गाने का एक विशेष ढंग है। गाने के हर अक्षर पर ँ. लगाकर गाते हैं जैसे— "मा आमाके दया कोरे शिशुर मतकोरे राखो"

इसको

"माँ आँमाँ कोँ दँ याँ कोँरेँ शिँशुँरँ मँतँ कोँरेँ राँखोँ"

एस प्रकार से गाते थे—उनका कहना है कि हरेक वर्ण में ँ लगा देने से वह बीज मन्त्र हो जाता है। ऐसा उच्चारण करने से गान और बीजमन्त्र का जप दोनों काम साथ ही होता जाता है। जब वह षट्चक्र सम्बन्धी गाना गाते हैं, तब कुलकुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करने के लिये हर चक्र को जैसे भेद ही कर रहे हैं इस प्रकार गाते हुए कभी जोर लगाते हुए गाते हैं कभी मूर्च्छना कभी "आखर" से प्रक्रिया साधन करते हैं। इस तरह बाउल बाबू गाना गाते हैं।

थोड़े फासले पर एक खम्भे के कोने में बैठे हैं श्री चिन्ताहरण मजूमदारजी। वह अपनी अंगुलियों से अपने आसन के बराबर भूमि में रेखा जैसा खींचकर उसके अन्दर आसन बिछाकर आँखें बन्द करके जप कर रहे हैं। शुरू से ही मां की ओर मुख करके विधि से आसन पर बैठकर प्रवीण डाक्टर शशांक बाबू ध्यानस्थ हैं। ऐसे ध्यान का प्रयोजन यह है कि—इस महा-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पूजा के समय मां तो अन्तर्मुखी हैं, उनको सम्मुख पाने के लिये सेवक को भी अन्तर्मुखी होकर निरन्तर मातृ चिन्ता में डूबे रहना चाहिये। अन्यथा स्वभाव से ही चंचल बहिर्मुखी मन और भी चंचल बहिर्मुखी हो जायगा। जो लोग कीर्त्तन कर रहे हैं—उनका भाव यह है कि कीर्त्तन की ध्वनि से मां खुश हो जायेंगी। और सब मां की ओर देखते हुए सुन्दरता का आनन्द ले रहे हैं।

इधर पहले कहे अनुसार भावाल परगने का एक वृद्ध सहज कवि श्री गोविन्द राय मां के द्वार पर १५ दिन से बैठे हैं। उन्होंने कवितामय एक प्रशस्ति पत्र छपवाकर आज भक्तों को बाँटा। इसके सिवा भाईजी का आनन्दवर्धक-उद्बोधन गीतिपत्र भी बँट रहा है। किसी किसी ने मातृ वन्दना भी बाँटी।

बहुत देर तक कीर्त्तन चल रहा है, दिन के करीब ३ बजे माँ समाधि राज्य से बाहरी चेतनाओं में वापस आ रही हैं! देखा जा रहा है—अस्त-व्यस्त वेश और बन्द आँखों से माँ उठ बैठीं। श्री सुबोधदास गुप्त ने मां का फोटो लिया। एक खेस से शरीर को लपेट कर फूले हुए एक पत्थर की मूर्त्ति के समान। भक्त लोग मां की ओर देखते हुए व्याकुल प्रार्थना कर रहे हैं कि—मां की बाह्य चेतना वापस आवे हमारी ओर। मां की करुणा पूर्ण स्नेह दृष्टि पाकर आनन्द से हम सब उनके चरणों में श्रद्धा आदि निवेदन कर सकेंगे। थोड़ी देर बाद मां का शरीर पहले जैसा छरहरा सा हो गया। आँखें खुलीं। सोने के रंग का तेज शरीर से निकल रहा था। फोटोग्राफर श्री केशव बसाक ने इस समय का एक फोटो खींचा। भक्त मण्डली फिर एक एक करके मां को माला चढ़ाकर पूजा करने लगी। करीब आध घण्टे बाद श्री सुबोधदास गुप्त ने फिर फोटो उतारा। मालूम होने लगा श्री मां कुमारी जैसी हो गयीं। इसके बाद मां का भोग लगा। भक्तों ने प्रसाद लेना शुरू किया। कोई कोई चतुर भक्त कणिका मात्र प्रसाद लेकर मां जहाँ बैठी थीं वहाँ जाकर मां के प्रसन्न मुख कमल का दर्शन करने लगे। एक ही दिन में ३ घण्टे में मां के तीन चित्र तीन किस्म के भिन्न-भिन्न विचित्र रूप के थे। उनको भाईजी ने अपने "मातृदर्शन" नामक पुस्तक की पहली आवृत्ति में छापा था।

बख्शी बाजार के श्री सत्येन्द्रनाथ गुप्त राय (सोतु बाबू) की स्त्री सुकुमारो देवी घर वापस जाने के लिए मां के चरणों में प्रणाम करके कहने लगीं—"मां आप हमारी असली माँ हैं, आपही हमारी अपनी हैं, हम सब आपही के हैं; आपकी सेवा के लिये हम सब तैयार खड़े हैं, अब जैसी आपकी इशारा होगी तुरत हम सब उसी प्रकार करेंगी।" यही लोग कई वार अलग अलग दिनों में मां के पीछे पीछे शाहबाग से आश्रम के जंगल से भरे टूटे हुए पुराने स्थान शिव-मन्दिर के नीचे जाकर धूपबत्ती, दूध का पात्र, जल का पात्र आदि लेकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गयी थीं ! वहां उपेक्षित शिवलिंग के पास जाकर पूजा करके केला और दूध भोग लगाकर आती थीं। वहां उनको स्वच्छता और ज्ञान का अतापता मिलने का कुछ इशारा मिलता था। कोई भी नहीं जानता था, आगे भविष्य में यहाँ ही माताजी की लीला भूमि बनेगी। माता जी का मकान या आश्रम भी वे बनायेंगे। लम्बे ४-५ वर्ष के बाद उसी भूमि पर रमणा आश्रम बनाया गया। इन्होंने मां के दरवाजे पर एक लड़के को पहुँचाया था, जिसको इन्होंने कह रखा था मां के दर्शन पाने के बाद तुम वापस नहीं आ सकते। आखिर हुआ भी उसी तरह।

फिर मुख्तार पूर्णसरकार, जो अधेड़ उम्र के थे, अन्नदा दोष, राजेन्द्र कुशारी, गिरिजा प्रसन्न सरकार, माँ के पास खड़े होकर हाथ जोड़ कर कह रहे हैं—माँ हम तुम्हारे कुपुत्र हैं परन्तु तुमसे प्रेम करते हैं, क्यों ऐसा हो रहा है—तुम्हारे चरणों के पास खड़े न होने पर हमारा चित्त अशान्त रहता है, मालूम होता है कि कुछ सम्पत्ति खो दी है मन विक्षिप्त सा रहता है, तुम इस सबको बांध के रखना।

हेम नाग की स्त्री कहती हैं—माँ तुम हमारी गृह देवता हो। कभी कोई अच्छी चीज घर में आने पर तुमको भोग न लगाया तो जी घबराने लगता है। दौड़ते हुए आकर तुमको दिये बिना जी नहीं मानता। तुम हमारे प्राण की देवता हो।।

श्री रेवती घोष कह रहे है कि—माँ, विदेश में रहते हैं, जैसे ही कोई बढ़िया चीज हाथ में आती है उन सबको जमा करते जाते हैं ढाका में वापस आते ही—कब माँ के पास जाकर इन चीजों को सामने रखकर प्रणाम करेंगे इस चिन्ता से व्याकुल हो जाते हैं' माँ आप इतना हमारे अपने हैं।

गाने वाला गौरांग, चिन्ताहरण बनर्जी, विश्वम्भर गुसांईजी कह रहे हैं—माँ हम बहुत जगह गाते हैं लोग भी सुखी होते है परन्तु आपके चरणों के सामने जब गाते हैं कीर्त्तन करते हैं तब अनुभव होता है कि कीर्त्तन के देवता हमारे सामने हैं और हमें स्नेह दृष्टि से देख रहे हैं। कोर्ट पोस्टमास्टर सुरेन बनर्जी कह रहे हैं कि—यहाँ आकर खाली यह सोचते हैं कि किसी किस्म का काम हमको मिल सकता है कि नहीं। इस प्रकार यहाँ का कोई काम कर पाने से मनमें प्रसन्नता और शान्ति मिलती है। माँ मैं आपका एक अधम सेवक हूँ।

दारोगा मधुर बोस, सेवा में वह असाध्य साधन करते हैं। भक्त लोगों को कुछ असुविधा होते ही उसके समाधान के लिये वह हाजिर हो जाते हैं। उत्सव आदि कार्यों में मधुर बाबू की कार्य कुशलता प्रशंसा के योग्य है। माँ के चरणों में प्रणाम करते समय वह कहते हैं माँ, आखिरी दिन तू मन में रहना, उस दिन तुम्हें भूल न जाऊँ''

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

(पंचम खंड)

श्री अमूल्यकुमार दत्तगुप्त, एम-ए. बी. एल.

दूर श्रवण

चैत्र १० गुरुवार, (ई० २४. ३. ४९) । आज भी प्रातः ११ बजे माँ हाल में आयीं। डॉ० मैत्र अब तक आ नहीं पहुँचे । कल एक घटना का उल्लेख करना भूल गये थे । मि० पेतित जिस समय मूर्च्छित अवस्था में थे उस समय पटल दादा के आने पर माँ ने साहब की दशा दिखाई । पटलदादा ने उसे देखकर कहा—"आज और एक को गंगायात्रा कराते हुए आ रहा हूँ ।" किस की मृत्यु हुई पूछे जाने पर पटलदादा ने कहा कि मदन मोहन शास्त्री जी की मृत्यु आज सुबह हुई । यह सुनकर माँ ने कहा--"आज सुबह जब बुनी मुझे मुंह धुला रही थी, उस समय मैंने उसे कहा था कि रोने की आवाज आ रही है । शीघ्र ही समाचार आयेगा ।" मदन मोहन शास्त्री जी हम लोगों के किसी का परिचित नहीं थे । श्री माताजी के साथ भी उनका परिचय न था । काशी के कौन क्षेत्र में उनका शरीर छूट गया वह भी हम-लोग नहीं जानते हैं, फिर भी उस घर से रोने का स्वर श्री श्री माँ के कान में आ पहुँचा ।

आज माँ ने स्वयं ही प्रसंग उठाया । माँ ने कहा—"तुम लोग जानते हो कि कोई शब्द होने पर चारों ओर वह फैल जाता है । यह शब्द दूर और समीपता के कारण और ध्यान के अभाव से सब लोग सम रूप से सुन नहीं सकते । तो भी यह साधारण तौर पर कहा जा सकता है कि एक विशेष सीमा के भीतर सभी लोग एक ही प्रकार सुनते हैं । फिर ऐसा भी होता है कि कोई कोई दूर का भी शब्द सुनाई पड़ता है । सामने शब्द होने पर जैसे लोग सुनते हैं अत्यन्त दूर का शब्द भी उसी प्रकार सुनते हैं । जैसे बिलायत में कोई शब्द होने पर कोई कोई यहाँ बैठकर उसी क्षण उसे सुनता है । फिर ऐसी भी स्थिति है—जहाँ पर भी शब्द क्यों न हो वह निजी शब्द जैसे बोध होता है और उसी प्रकार सुनता है । इन दोनों प्रकार के शब्दों के सुनने में अन्तर है । पहले जो सुनने की बात कही गयी वहाँ शब्द आ जाता है, और यहाँ पहुँचने की बात ही नहीं है, यहाँ दूर नाम की कोई बात नहीं है । सब स्थान एक स्थान है ।

मैं—इनमें योग विभूति कौन सी है ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ—जब योग कह रहे हो, तब दोनों में ही योग है, हम सब एक ही हैं, इस प्रकार श्रवण से ऐसा बोध होता है।

मैं—एकात्मक बोध के बिना भी तो दूर-श्रवण हो सकता है?

माँ—हां, वैसा भी होता है। वह कभी आकस्मिक रूप से होता है। जो इस प्रकार सुनता है, सदा ही वैसा सुनेगा—ऐसा दावा नहीं किया जा सकता है। तुमने योगविभूति की जो बात उठायी उसकी बात अभी आ नहीं रही है, बातों के प्रसंगवश अगर आ जाय तो बोल दूँगी। बाबाजी (अर्थात् डॉ० मैत्र) आ गये हैं अब कविता का पाठ प्रारम्भ हो जाना चाहिए।

डॉ० मैत्र माँ के समीप आकर अपनी स्वरचित कविता की आवृत्ति करने लगे। शास्त्री जी के आने पर भागवत का पाठ प्रारम्भ हुआ।

आज भी माँ रात को घूमने गयीं। एक सज्जन मोटर लेकर आये थे, मां उन्हीं की मोटर से गयीं। मैं भी भोजन करने के लिए घर आया। भोजन के उपरान्त फिर आश्रम में गया। मां तब तक भी लौटीं नहीं। थोड़े बाद माँ आ गयीं।

अलौकिक दर्शन

मां आकर चबूतरे पर बैठीं। बातों बात मां से पूछा कि मां क्यों उस दिन रात को गोपीबाबू के घर गयी थीं। मां ने कहा—"मैंने स्वप्न में देखा था कि मैं वहां गयी, इसलिए वहां गयी थी।"

स्वामी शंकरानन्द—मुझे भी वहां सूक्ष्मदेह में देखी थीं, क्या?

मां—वैसा न हुआ तो तुम्हें साथ क्यों ले गयी थीं। अन्य किसी को भी तो ले जा सकती थी (मुझे और मेरी पत्नी को दिखलाकर) इन दोनों को भी वहां देखा था।

मैं—वहां से आने के पहले तुलसी के पौधे को बहुत प्यार करती रही।

मां—(मुस्कराकर) तुलसी को गाल में लगाकर बोल रही थीं—यह कौन सा पौधा है। यह सुनकर तुम लोग सोच सकते हो कि मां इस प्रकार झूठा व्यवहार क्यों कर रही हैं। क्योंकि वह तुलसी का पौधा है यह मैं भी जानती थी। फिर यह ज्ञात न रहने पर भी वह जब नाक के इतने निकट था कि उसके गन्ध से ही मालूम हो रहा था कि तुलसी का पौधा ही है। फिर उसमें पूछने की क्या बात रही। जब तुम किसी परिचित छोटे बच्चे को आदर करते समय कभी कभी बोलते हो—"यह कौन है रे? क्या यह अमुक है, न" तुलसी के साथ मेरा व्यवहार भी वैसा है। (दीदी मां को दिखलाकर) इस शरीर के जन्म

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के बाद इसको तुलसी के नीचे सुला दिया गया था। इसलिए यह शरीर तुलसी से इतना प्यार का व्यवहार करता है।

मैं--केवल तुलसी क्यों ? सिद्धेश्वरी में तुम बड़गद को भी प्यार करती थीं ?

स्वामी परमानन्द--केवल पेड़ क्यों। किसी विग्रह के पास जा सकने पर मां उससे प्यार करके आती हैं।

मैं—मां, तुलसी का वह पौधा क्या कोई महापुरुष है ?

मां—इस प्रकार बात तो किसी ने मुझे बतलाया नहीं। (सब का हास्य)

भूपेन—मनुष्य न होकर पेड़ पत्थर होने से अच्छा होता। (सब का हास)

मां—(मुस्कराकर) पेड़ तो कितने हैं ! बोलो, अगर गोपीबाबू के घर के तुलसी होता तो अच्छा होता। (सब का हास्य)

इस प्रकार हास्यालाप करते हुए रात ११-३० हो गयी। पटलदादा द्वारा इस प्रकार स्मरण करा देने पर मां उठीं। हम लोग भी प्रणाम कर चले आये।

आध्यात्मिक कार्य तथा सांसारिक कार्यों में सामंजस्य रहना आवश्यक है।

चैत्र ११, शुक्रवार, (ई० २५।३।४९)। अन्य दिन की तरह आज भी हम लोग प्रातः १० बजे हाल में एकत्रित हुए थे। माँ आकर हमलोगों के बीच बैठीं। मि० पेतित भी वहाँ थे। उन्हें बहुत ही शान्त मालूम हो रहा था। पूरण नाम का एक लड़का साहब की देख-भाल करता है। वह भी साहब के पास बैठा था। माँ ने उस से पूछा—साहब कैसा है। इसके उत्तर में उसने कहा कि साहब अच्छे हैं। माँ ने कहा, "इसे देखने में शान्त मालूम होने पर भी उस दिन का क्रम चल रहा है। यह स्नान भोजन आदि सभी कर रहा है। कभी गम्भीर होकर बैठा रहता है, फिर कभी खूब हँसने लगता है। दोनों ही बहुत अस्वाभाविक हैं। ३० वर्ष की साधना का परिणाम इस प्रकार स्थिति में आ पहुँचा है। इससे लोगों को यह शिक्षा लेनी चाहिए कि पुस्तक आदि पढ़कर कभी योग का अभ्यास नहीं करना चाहिए। कल रात को माँ हरलाल बाबू को देखने गयी थीं। शंकरानन्द स्वामी जी ने कहा कि उनका (अर्थात् हरलालजी का) रोग भी योगाभ्यास के फलस्वरूप है। लेकिन मां ने इसका समर्थन नहीं किया। मां ने कहा—"हरलाल बाबा के और भी गुरु भ्राता भगिनी आदि हैं। लेकिन उनकी इस प्रकार बीमारी नहीं है। फिर वे लोग जिस प्रकार क्रिया आदि करते हैं—मुझे ज्ञात है, उस क्रिया से कुछ बीमारी होने की सम्भावना नहीं है। लेकिन बात यह है कि उस प्रकार क्रिया के अनुकूल आहार तथा सांसारिक कार्य होना जरूरी है। क्रिया है ऊर्ध्वगति की प्राप्ति के लिये और सदा रहोगे निम्नभूमि के कार्य लेकर इसका फल अच्छा नहीं होता है।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ठीक उसी समय डा० मैत्र आ गये। माँ ने उनसे 'कहा—बाबाजी, कल रात को आये थे, गोपी बाबा को किसी ने एक तुम्हारी कविता पढ़कर सुनायी नहीं ?"

डॉ० मैना—कल रात को इस कविता को लिखकर उसे तुम्हें सुनाने की इच्छा हुई थी। बाद में उस इच्छा को प्रयत्न से दबाया गया। इसलिए आज सुबह इसे ले आया।

आज डा० मैत्र ने स्व रचित कई कविताएँ पढ़कर सुनायीं।

भव व्याधि और उसकी चिकित्सा

१२ बजने पर शास्त्री जी ने पाठ प्रारम्भ किया। वेद्य विषय क्या है और उसे कैसे जाना जा सकता है इस प्रसंग पर शास्त्री जी और डाक्टर साहब के बीच थोड़े समय तक आलोचना चलती रही। शास्त्री के अनुसार वेद्य क्या है इस के बारे में कुछ समय तक बतला कर शास्त्री जी ने मां से कहा—"शास्त्र में जो कुछ है तोते की तरह उसे मैं कहता गया, कुछ मुझे समझ में आया कह नहीं सकता। सोचा था कि आप इस विषय में साफ़ बतलायेंगी।" मां ने कहा—"किस विषय में तुम लोगों के मन में प्रश्न उठा ?" मां के इस प्रश्न पर हम सभी हँस उठे। शंकरानन्द स्वामी जी ने कहा—"इतने देर तक तुम कहां थीं ?" तब मां से कहा गया कि वेद्य अर्थात् ब्रह्मतत्त्व जानने का क्या उपाय है ? वहाँ कई हिन्दुस्तानी भक्त उपस्थित थे, इसलिये उस प्रश्न को हिन्दी में किया गया, और मां को हिन्दी में उत्तर देने के लिए कहा गया। मां हिन्दी में बोलने लगीं, "इस प्रश्न में ही उत्तर है। जब उन्हें जानने की तीव्र आकाङ्क्षा होगी, जब अपने अन्दर 'उपाय क्या है ?' इस प्रकार भाव तीव्र रूप से जग उठेगा तो ही उन्हें जानने का पथ मिलेगा। अर्थात् उन्हें कैसे प्राप्त करूँगा, कैसे पाऊँगा—इस प्रकार जिज्ञासा सर्वदा चित्त में जागरूक रहेगी—उनके सम्बन्ध में ध्यान होगा और उसी से उन्हें जाना जायगा या उनका प्रकाश होगा। इसलिए कहा जाता है प्रश्न में ही उत्तर है।"

माँ इन बातों को डाक्टर साहब को लक्ष्य करती हुई कह रही थीं। इसलिए फिर कहने लगीं, लोगों की बीमारी होने पर क्या किया जाता है ? या तो अच्छा डाक्टर घर बुलाता है या स्वयं अस्पताल जाकर भरती हो जाता है। जागतिक स्थिति को भवव्याधि कही जाती है, इसलिये इसका इलाज भी व्याधि की तरह किया जाता है। अच्छे डाक्टर को घर में लाकर उनकी व्यवस्था के अनुसार ठीक ठीक दवा सेवन करना पड़ता है और पथ्य आदि के में बारे भी विचार करना पड़ता है। इस प्रकार चलते हुए व्याधि से मुक्ति मिलती है और यदि डाक्टर को घर में बुलाना सम्भव नहीं होता है तो (उपस्थित संन्यासियों के वस्त्र दिखलाकर) इस प्रकार वस्त्र पहन कर बराबर के लिये अस्पताल में भरती हो जाता है और दृढ़ संकल्प लेना कि जब तक नीरोग नहीं हो जाता हूँ तब तक अस्पताल छोड़ना ही नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डा० मैत्र—लेकिन अच्छे डाक्टर मिलते कहाँ। रोग होने पर यह होता है कि लोग सुबह एक डाक्टर और शाम को अन्य डाक्टर बुलाते हैं।

माँ—डाक्टर प्राप्त करने के भी दो उपाय हैं। तनमन से डाक्टर की प्राप्ति के लिए घूमने से ही डाक्टर मिलते हैं और ऐसे डाक्टर मिलते हैं कि जिन्हें पाकर मन में सन्देह नहीं रहता है कि बीमारी छूटेगी या नहीं। एक दूसरा उपाय यह है कि डाक्टर के लिये घूम फिर न करएक जगह बैठकर उनके लिए क्रन्दन करना है। इस क्रन्दन को सुनकर ऐसे भी डाक्टर हैं जो स्वयं आकर इन्जेकसन लगा देते हैं। अतः अपने को पिघला दो, ऐसा होने पर ही डाक्टर मिलेंगे और वे आकर तुम्हें रोग से मुक्त करेंगे। उनके लिए व्याकुल होकर एक जगह पड़े रहने पर वे आकर तुम्हारी व्यवस्था करेंगे। चक्षु न रहने पर भी वे देखते हैं, पैर न होने पर भी वे चल सकते हैं। अथवा उनकी आँखें हैं, फिर नहीं भी हैं, पैर हैं—नहीं भी।

इस प्रकार माँ कुछ समय बोलती रहीं—मधुर हिन्दी में। १२ बजते देखकर आलोचना बन्द हुई। डाक्टर साहब माँ को प्रमाण कर चले गये। उनके चले जाने पर माँ उन्हीं को लक्ष्य कर कहने लगीं—"किसी को अगर कुछ अनुभव होता है तो वह उसी को सब से अधिक सत्य तथा महान् समझता है। अगर किसी पर श्रद्धा या विश्वास आ जाता है तो उसका कथन वह ग्रहण कर सकता है। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता है तब तक वह अपना भाव लेकर उसी में बद्ध रहता है। तुम लोगों से बहुत बार मैं ने कहा कि सभी द्वारा एक कृष्ण की साधना करने पर भी सब का कृष्ण एक प्रकार नहीं हैं। साधना का उद्देश्य यह है—तुम अपने कृष्ण को अपने भीतर जिस प्रकार अनुभव कर रहे हो और दूसरे जैसे अपने अपने कृष्ण के जिस तरह अपने भीतर अनुभव कर रहे हैं, तुम भी ठीक उसी प्रकार उन्हें अपने अन्दर अनुभव करो अर्थात् सब भाव ही एक ही भाव है इस प्रकार अनुभव करता है। अपने को सबके भीतर देखना और सबको अपने भीतर देखना—साधना का यही लक्ष्य है। यह कहकर माँ उठ गयीं।

(क्रमशः)

चलनी में गैया दुहै दोष दई को देँहि।
हरि गुरु कह्यौ न मानहीं कियो आपनो लेँहि॥
कियो आपनो लेँहि नहीं यह ईश्वर इच्छा।
देस, काल, प्रारब्ध देव कोउ करहिं न रच्छा॥
मूरख मरकट मूठ कीर हठि तजै न नलनी।
कह 'भगवत' कहा करै भाग भौंड़े को चलनी॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्नपूर्णे सदापूर्णे

रमाकान्त

ईसवी सन् १९३३ संवत् १९८३ के कार्त्तिकी अमावस्या (दीवाली) के रात को जो श्यामा पूजा (कालीपूजा) हुई थी उसके हवन की अग्नि को सुरक्षित रखते हुए उसमें काली मंत्र और गायत्री मन्त्र द्वारा नित्य आहुति देकर परिपोषित किया जाता था। उस यज्ञाग्नि के साथ उत्पन्न देवताओं के साथ मां की इस जीती जागती शरीर रूपी मूर्ति को एक ही मानते हुए एक साथ ही पूजन किया जाता रहा। और उस दिन की पूजा हुई काली मूर्त्ति का विसर्जन नहीं किया गया। उस मूर्त्ति में नित्य माला लगाया जाता था। जिस दिन माला नहीं चढ़ती माँ स्वयं उसको ग्रहण करके नियम पूर्ण करती थीं। स्वयं भोजन नहीं करतीं उस होम की अग्नि में उस द्रव्य की आहुति देने पर भोजन हो गया मानती थीं। कुण्ड या वेदी की अग्नि में कभी कुछ कमी हो गयी तो मां अपने शरीर के प्राणाग्नि में उस अग्नि को आकर्षण करके आश्रय देती थीं। इस प्रकार एकात्मरूप देव लीला करती थीं। उस समय अखण्ड नाम जप की भी व्यवस्था हो गयी थी। जप करनेवाले अगर ऊँघते थे या सो जाते थे तब मां निस्तेज हालत में हुंकार से उनको जगा देती थी।

सन् १९२९ के मई के महीने में ढाकेश्वरी मन्दिर के सामने 'उत्तमा कुटीर' नामका एक दुमंजिला मकान किराये का लिया गया। भक्त लोग विशेष करके ज्योतिष बाबू के विशेष प्रयास से सचल आश्रम अस्तित्व में आ गया। आश्रम आरम्भ होते ही माने आहार निंद्रा और विश्राम करीब लोप ही कर दिया। इससे पहले अपना कर्म्म क्षेत्र शाहबाग में रहते हुए भोलानाथ जी ने अपना भविष्य जीवन भजन और तपस्या में बिताने का निश्चय किया था। उनके साथ ही और दो तीन भक्तों ने भी माँ की छत्र छाया में मां की और भगवान् की सेवा में अपना जीवन बिताने का निश्चय कर लिया। उनके लिए शरणागत पालिका स्नेहमयी मां ने उनके इस व्रत पालन के सम्बन्ध में कोई कठोर आदेश व उपदेश नहीं दिया। बड़े ही स्नेह के साथ कठोर संयमरूपी तपस्या अपने शरीर पर करते हुए आदर्श सामने रख दिया। केवल शिक्षा देने के लिए। सब ही देखते थे कि मां पन्द्रह दिन ढाकेश्वरी पोखरे का गदला पानी कपड़े से छान कर पीती थीं—और पन्द्रह दिन डाब (कच्चा नारियल) का पानी पीती थीं। इसके बाद केवल शरबत ही पीकर रहती थी। आश्रम में पका अन्न या फल के टुकड़े तीन उगलियों के छोर पर जितना आवे सबके आग्रहसे ही लेती थीं। उतनी ही। दुबारा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं। किसी-किसी दिन रात को ८-९ बजे जल में एक मुट्ठी लावा डालकर चम्मच से ८-१० चम्मच ले लेती थीं।

मां की आज्ञा थी कि—काली मूर्ति की पूजा और अन्न का भोग होता रहेगा। बाहर होम कुण्ड में चरु पकाकर (बिना मीठा दिए दूध में पका चावल) उस चरुकी और बिल्वपत्र की आहुति गायत्री मन्त्र से देनी होगी और अग्नि सुरक्षित रक्खी जायगी। दोपहर को मां के भोग के कमरे में धूप दीप जलाकर मां के आगे रखकर पिता जी भोग निवेदन करते थे। सुबह शाम नियत रूप से हरिकीर्तन होता था। नीचे के कीर्तन हाल में या बरामदे में मां प्रायः भावावस्था में रहती थीं। जिस समय मां स्वाभाविक बाह्य अवस्था में होती थीं तब सब भक्त लोग मां के ऊपर वाले कमरे में मां को घेरे रहते थे और उनके श्री मुख से निकली हुई अमृत वाणी सुनते हुए उसी में डूबे रहना चाहते थे। कभी-कभी मां समाधि की हालत में लगातार २–४ दिन तक रहती थीं। उस समय श्री मां को अपने 'हृदय का धन' मानते हुए सब मुग्ध से रहते थे। पौर्णमासी और अमावस्या के दिन गहरी रात तक प्रवाह रूप से कीर्तन चलता था। इसके बाद भोग वितरण होता था। फिर शान्त चित्त से मां को घेर कर बैठ के सुबह तक मां की मधुर वाणी सुनते हुए मगन हो जाते थे। इस प्रकार सब मां के अपने हो रहे हैं। उस समय भी रात १० बजे से सुबह ४ बजे तक ऊपर के बरामदे में या ऊपर की लम्बी छत में टहलती जाती थीं। रात बीत जाती थी। इस चर्या को देखते हुए दिन रात २४ घण्टे प्रवाह रूप से जीवन को भगवत् भाव में डुबाकर कैसे आराधनामय किया जाता है सो सबकी दृष्टि आकृष्ट करती थी।

आज अमावस्या है—प्रातः १० बजने के बाद बिखरी हुई हालत में यानी शरीर वेशादि की तरफ जिनका ध्यान नहीं था ऐसी अवस्था में श्री भोलानाथ जी दीदी वेजू दीदी के विक्रमपुर पाउलदिया निवासी रायबहादुर योगेश घोष के घर के लोग धानेश्वरी और बूडी गंगा दोनों नदियों को पार करके उत्तमा कुटीर में भक्तों से घिरी मां के पास पहुँचे। साथ लाये थे—एक चांदी का घड़ा, एक चांदी का थाल, एक चांदी गिलास।

अमावस्या का उत्सव हो रहा है। काफी भीड़ है। मां को घेर कर सब धाम धूम मचा रहे थे। अचानक मां भीड़ से बचकर नीचे उतर गयीं और बालक कमलाकान्त ब्रह्मचारी को इशारे से बुलाकर कालीजी के मंदिर के एक कोने में ले गयीं। उसकी समझ में नहीं आया कि मां क्यों बुला रही हैं।

तपस्या और साधना की धारा को बिना कुछ बोले अपनी दिनचर्या के द्वारा सबकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दृष्टि के सामने धर दिया। अब साधक अपने आदर्श के अनुसार लक्ष्य तक पहुँचने के लिए साधन स्रोत को बाँधकर धीरे-धीरे साधन की नाव खेते हुए अपने लक्ष्य की ओर चलाएगा। इसी अदृश्य लक्ष्य वस्तु को श्री मां दृश्य रूप में प्रकट कर रही हैं।

मां ने कहा—इस शरीर के मुख से अभी कुछ बातें कही जायंगी। ज्योतिष को कहने के लिये वे बातें हैं। ज्योतिष इस समय यहां नहीं है इस कारण तुमसे ही कह रहो हूं।

आज से कालीजी के घट के पास ही, अलग एक थाली में श्री अन्नपूर्णाजी को अन्नभोग लगाना। अन्नपूर्णा देवी की एक मूर्त्ति बनवानी होगी। आधी हाथ ऊँचे सिंहासन पर बायें पैर के ऊपर दाहिना पैर चढ़ाकर बैठी होंगी; बांये हाथ में एक कटोरा, और दाहिने हाथ में एक कड़छी होगी; कड़छी बढ़ाकर शिवजी को अन्न दे रहो हैं ऐसा भाव रहेगा। अन्नपूर्णाजी के दाहिनी ओर शिवजी की खड़ी मूर्त्ति होगी। उनके दाहिने त्रिशूल, और बांये हाथ में एक कटोरा, और दाहिने हाथ में एक कड़छी होगी, कड़छी बढ़ाकर शिवजी को अन्न दे रही हैं ऐसा भाव रहेगा। अन्नपूर्णा जी के दाहिनी ओर शिवजी की खड़ी मूर्त्ति होगी। उनके दाहिने त्रिशूल, और बायें भिक्षा की झोली होगी, दोनों हाथ फैलाये अन्नपूर्णाजी से भिक्षा मांग रहे हैं, ऐसा भाव रहेगा। अन्नपूर्णा जी के दांयी ओर थोड़े ऊपर शून्य में एक काली जी की मूर्त्ति रहेगी। पीछे से दौड़ती हुई आकर उपस्थित हों रही हैं ऐसा भाव रहेगा। इनके नीचे शिवजी नहीं होंगे। शिवजी अन्नपूर्णाजी काली जी इन तीनों के ऊपर एक ही चंदोवा होगा। ऊपर की ओर, बैठे हुए चतुर्भुज विष्णुजी की मूर्त्ति होगी। अन्नपूर्णाजी के सिंहासन के नीचे एक छोटी सी गणेश मूर्त्ति होगी।

इन सब मूर्त्तियों को बनाने के लिये वह चांदी का कलश थाली और गिलास और इस शरीर के हाथ की सोने की चार चूड़ियां और एक हार ज्योतिष को देना। जितने दिन इन मूर्त्तियों को बनवाने में लगे उतने दिन तक काली के घट में ही अन्नपूर्णा जी की पूजा भोग आदि होता रहेगा। कालीजो का घट पीतल का ही रहेगा। उस बालक द्वारा इन बातों को दुहरा कर, ठीक ठीक समझा कि नहीं, जान कर मां ऊपर चली गयीं। उस बालक ने निर्भय हो कर गंभीर प्रीति और उत्साह के साथ क्रम से इस आदेश वाणी को लिख लिया फिर अपने काम में लग गया।

शाहबाग में रहते समय एक दिन दोपहर के समय मां भोग में बैठी थीं ऐसे समय सूक्ष्म में देखा कि जमीन से १७ हाथ ऊपर एक दिव्य कालीमूर्त्ति हंसती हुई झपट कर मां की गोद पर आ रही है यहां पर उसी मूर्त्ति का वर्णन है।

जब सब काम कर लिया तब वह बालक प्रफुल्ल मुकर्जी नामक एक युवक के द्वारा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्योतिष बाबू को बुलवाने की कोशिश किया। मां के इस अपूर्व आश्चर्य निर्देश के बारे में बालक ने काफी गंभीर चिन्ता की। उसके हृदय में इस पर एक भाव का उदय हो रहा था भाषा में वह इस प्रकार होगा—मां के श्री चरणों में जिन लोगों ने आश्रय लिया है और आगे लेंगे, उनके अपने अपने जीवन को एक लक्ष्य से जोड़कर, साधन की उन्नति के लिये, एक सुन्दर धार्मिक शासन रूप चन्दोवा सजा रही हैं, उनकी सुरक्षा के लिये। जो सब खाद्य व भोग्य वस्तु दुनिया से सबलोग संग्रह कर रहे हैं; गणनायक गणपतिजी की कृपा से ही वह सब सम्भव हो रहा है। वह सब वस्तु, गणाम्बिका देवी अन्नपूर्णा जी के हाथ पर रक्खे ब्रह्माण्ड भाण्ड में वास्तव में जमा हो रही है। देवी अन्नपूर्णा जी, उन शुद्ध दिव्य अन्नादिकों को, योगीश्वर भिक्षुक निष्काम तपस्वियों को देकर, तृप्त कर रही हैं। भगवान् ही सब प्रिय वस्तुओं के भोक्ता हैं। देवी महाशक्ति ही जगत् की गठन कर्त्री हैं'। सारी वस्तुएँ उन्हीं के हाथों में न्यस्त रहती हैं। ऐसी बुद्धि और विश्वास के साथ, देवताओं की प्रीति के लिए, नाना प्रकार की देव सेवा में, जो अपने को फँसाये रखते हैं—देवता उन पर प्रसन्न रहते हैं, और जो ऐसे साधनमय जीवन व्यतीत करते हैं, वह भगवान् की कृपा से, संस्पर्श से, खण्ड रूप, यह जागतिक जीवन सार्थक और सुख से बीतता है। इसका व्यतिक्रम होने से पीछे से सृष्टि ध्वंसकारिणी प्रलयनृत्यरता देवी काली जगत् के नाश के लिए झपट कर आती हैं। पालन कर्त्ता श्री विष्णुजी धर्म्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार प्रकार शासन में रख कर, जगत् की जब तक रक्षा करते हैं तब तक जगत् सुन्दरता से चलता रहता है। मोटी सी बात यह है कि सब जीव परम पिता श्री भगवान् के प्रति किस प्रकार प्रेम कर सकें, इस चेष्टा में अपना जीवन किस प्रकार व्यतीत करें, इसलिये मां इन मूर्त्तियों की स्थापना द्वारा, समझा रही हैं।

ठीक समय पर भाईजी यानी ज्योतिष बाबू आये, उस बालक का वर्णन सुन कर वह मां के चरणों में हाजिर हुए, और मां की इस अद्भुत वाणी को सुनकर, उनके सोचे हुए, मां के आश्रम बनाने की, एक परम सुन्दर मौलिक उपादान पाकर, आश्चर्य चकित हो गये, और प्रसन्न हो गये। शीघ्र ही आश्रम संगठन कार्य में जुट गये और बाबा भोलानाथ जी का आशीर्वाद और उत्साह वाणी प्राप्त किया। वह गुप्तकर्म्मी थे, इसलिए वह कहा करते थे "श्रेयांसि बहुविघ्नानि" यानी शुभ कार्य में बहुत विघ्न पड़ता है। बाहर किसी से कुछ भी नहीं कहा शुभ कार्यों को गुप्त रूप से करना चाहिये काम हो जाने के बाद सब जानें।

इससे पहले यानी बीमार होने से भी पहले, आश्रम के लिए खिलगांव, राजातला, मालीबाड़ा, बउडा, धानमण्डी, कूनीपाड़ा, तेजगांव आदि घूम घूम कर जगह की उन्होंने तलाश की थी। फिर मां का निर्देश समझ कर रमणा काली बाड़ी के उत्तर में घुड़दौड़

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैदान के केन्द्र में, शुभ काल में आश्रम कुटिया की नींव रक्खो गयी। १९३० ई० के शुरू-शुरू में। आश्रम कुटिया स्थापना के बाद ५ महीने तक मां नाना स्थानों में भ्रमण करती रहीं। धनाभाव के कारण अन्नपूर्णा मन्दिर बनाना कठिन है समझकर मां से प्रार्थना की गयी और साल भर बीतने पर ही मन्दिर बनाने का सिलसिला शुरू हो गया। दारोगा श्री मधुर बोस ने ५० हजार छोटी और ८ हजार बड़ी ईंटों का प्रबन्ध किया दूसरी जगह से। नगेनराय काम करवाने में जुठे, बाबा भोलानाथजी देख-रेख करते रहे।

अन्नपूर्णाजी का मन्दिर मां के निर्देश से ही तैयार होने लगा। मन्दिर का मध्य विन्दु, पुराने एक मन्दिर की ही जगह थी। थोड़ा खोद करके पहले इसके ऊपर ३'×३'×६' परिमाण से अलमारी जैसा बनाकर कालीजी के लिये जगह बनी। अन्नपूर्णा जी के नये बड़े मन्दिर के अन्दर, वह अलमारी ले ली गयी, और वह मन्दिर के फर्श से ३' नीचे रह गयी। इसके ही छत के ऊपर, अन्नपूर्णाजी की वेदी बनी। उस वेदी पर सुन्दर विचित्र सिंहासन बना। मन्दिर के नीचे, जमीन के अन्दर ४'×४'×६' की गुफा बनी। नीचे उतरने के लिये जीना बना। उसका ढक्कन दरवाजे की तरह बना। यह कमरा गुफा, अन्नपूर्णाजी का शयन घर, और एकान्त माँ का विश्राम घर के रूपसे रहा। इसके दक्षिण की दीवाल में, अखण्ड ज्योति रखने का स्थान बना। दक्षिणके बरामदे में प्रधान द्वार, और तीन ओर तीन द्वार, पूर्व और पश्चिम की दीवाल में अलमारियाँ बनीं। मन्दिर का फर्श भीतर भीतर १६'×१६'। दक्षिण का वरामदा है।

मन्दिर की नींव खोदते समय बीच में एक, चारों कोनों से चार, ठठरियाँ मिलीं। उसमें एक ठठरी से सुन्दर चन्दन का सुगन्ध मिला था। मां ने कहा तपस्या से शरीर शुद्ध हो जाने से इसके भीतर का प्रत्येक कण, परमाणु, सुगन्धमय हो जाता है। मन्दिर के फर्श के नीचे तीन कोनों में तीन और बरामदे की सीढ़ी के नीचे दो गुफा बनी थी। एकान्त में साधना के लिये। मन्दिर के फर्श तक बनने में ८ हजार बड़ा ईंटा काम में लग गया। पूरा मन्दिर इतना मजबूत बना कि किसी जगह चोट लगाने से गंभीर आवाज से गूँजता था।

इस बार जन्मोत्सव ४ दिन का। १९३१ ई० के वैशाख में मां के जन्मोत्सव के समय में नये मंदिर में चांदी से बनी सफेद अन्नपूर्णाजी की मूर्ति, बगल में खड़े शिव जी दूसरी बगल में काली जी की अधर मूर्ति, एक ही चन्दोवा के अन्दर थे। इनकी प्रतिष्ठा हुई। ब्रह्मचारी कुलदा बन्द्योपाध्याय, उस समय ढाका विश्वविद्यालय के प्रवीण पंडित, श्रीश चक्रवर्ती से अन्नपूर्णा और सब देवताओं की पूजापद्धति लिखवा लाये। महानिशा में महा स्नानादि अभिषेक की तैयारियां हुईं। मां के बताए हुए मंत्र से, और विधि से, बाबा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भोलानाथ जी कर रहे थे। कुलदा दादा, योगेश दादा, अतुल आदि सहायता कर रहे थे। आश्रम भक्तादि से खचाखच भरा हुआ था। आंगन में कीर्तन हो रहा था। एक तरफ मां नाम का कीर्तन हो रहा था। श्री माँ मंदिर की गुफा में विश्राम ले रही थीं। कब क्या निर्देशन करती हैं जानने के लिए उनके चरणों के पास भाईजी उस गुफा में रहे। इस अन्नपूर्णा जी के विषय में श्री मां ने भाईजी से क्या-क्या कहा वह प्रकाश में नहीं आया। मां का विशेष अभिप्राय जो कि जाना गया सो इतना ही है—कि जन्मोत्सव में मां के शरीर पर जो माँ की पूजा होती है वह अब से अन्नपूर्णा जी पर हो। जैसे शालिग्राम पर विष्णु पूजा नारायण पूजा होती है उसी प्रकार एकात्म भाव से श्री अन्नपूर्णा जी की मूर्ति पर हो। वह सब समझ गये। दूसरी तरफ मन्दिर के उत्तर की ओर सर्पाकार से ढका एक अलग शिवमन्दिर बना था। उसकी वेदी पर ताम्बे से बना अष्ट दल वाले शिवयन्त्र की स्थापना करके एक सफेद शिवलिंग रक्खा गया। मन्दिर के दक्षिण पश्चिम कोने में अस्थायी यज्ञशाला भी बनी।

अभिषेक के लिये बाबा भोलानाथ जी के सामने एक बड़ा 'टोकना' रखा गया। उसमें अन्नपूर्णा जी शिवजी कालीजी आदि सब देवता रक्खे गये। कुलदा दादा लिस्ट को देख कर कहते जा रहे हैं, योगेश दादा पुड़िया खोल रहे हैं, अतुलदादा श्री भोलानाथजी के हाथ में दे रहे थे। और बालक कभी पूजा की जगह कभी मां के पास गुफा में, आने जाने में लगे हुए थे। पहले से ही विष्णुजी के लिये तुलसी पत्र, शिवजी के लिये विल्व पत्र चन्दन लगा कर सुखाकर रक्खा हुआ था। १० विल्वपत्र लाल चन्दन लगाकर कालीजी के लिये, ७८ विल्वपत्र सिन्दूर लगाकर अन्नपूर्णाजी के लिये रक्खा हुआ था।

दूसरे दिन नये बने रसोई घर में नयी धोतियां पहन के हवन की अग्नि चूल्हे में सुलगा कर बहुत से लोग मां की आज्ञा से रसोई बनाने में लग गये। दूसरी ओर हवन की अग्नि में एक लाख विल्व पत्र की आहुति होना शुरू हो गया। मणिपुरी "ठो" (एक किस्म का पात्र) में १४–१५ सेर दूर का चरु पका, उस चरु से कुछ आहुति दी गयी। बाकी देवताओं को निवेदन किया गया।

अन्नपूर्णा मन्दिर के बरामदे में दक्षिण ओर "विधान भीटी" नाम का एक स्थान था। मां ने कहा था "उसमें विशेष कुछ देखने की चीज है।" भाईजी ने उस स्थान को सुरक्षित करने की इच्छा से वहां एक छोटा सा शिव मन्दिर बना दिया, उस पर मां का चरण रखवा के, अंकित की हुई संगमर्मर की एक शिला, रखवा दी जो चुनार से बन कर आयी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थी सन् १९२७ ईस्वी में। इसका नाम "पादपीठ मन्दिर" रखा गया। इसी मन्दिर के पूर्व में हवन शाला थी।

अन्नपूर्णाजी की प्रतिष्ठा-उत्सवकी शोभा बढ़ाने के लिये, एक सुन्दर "पंचवटी" की स्थापना की गयी। वेल, पीपल, बड़, आँवला, और अशोक, इन पांचों वृक्षों का पौधा मंगाकर मन्त्र से लगाया गया। और एक तमाल, एक हर्रे का पौधा लगाया गया। एक शिवप्रिय रुद्राक्ष का पौधा भी लगा दिया।

प्रचण्ड नृत्य के साथ हरि कीर्त्तन और अलग अलग लोगों की भजनावली से आश्रम गुंजायमान हो गया। सबके हृदय उल्लास से पूर्ण थे। कहना जरूरी है कि पंचवटी के दक्षिण में एक आम्रवृक्ष था उसको एक माधवीं लता ने लपेट लिया था। उसका पुष्प गुच्छ बड़ा सुहावना था मृदु मीठा सुगन्ध उसका बिखरा हुआ था भौंरे गुंजार रहे थे। भाईजी के निर्देश से कृष्णनमि रायने कृष्ण नगर फार्म से दुहरी अपराजिता का पौधा पंचवटी के बाड़ के किनारे लगा दिया था उससे सारी पंचवटी नील फूलों से सजी हुई सी मालूम होती थी।

ऊँट की पूँछ सौं ऊँट बँध्यौ इमि ऊँटन की-सी कतार चली है।
कौन चलाई कहाँ कों चली, बलि जैहै तहाँ कछु फूल फली है॥
ये सिगरे मत ताकी यही गति, गाँव को नाँव न कौन गली है।
ग्यान बिना सुधि नाहिं, 'निरंजन', जीव न जानै बुरी कि भली है॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समाधि (२)

डॉ० शान्तिप्रकाश आत्रेय, एम० ए०, पी-एच० डी०

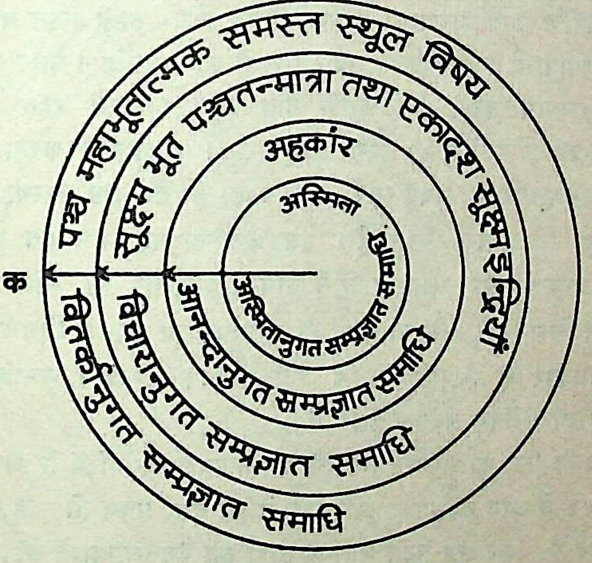

१. पुरुष प्रतिबिम्बित चित्त वा अस्मिता (अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि)

२. अहंकार (आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधि)

३. सूक्ष्मभूत, पंचतन्मात्राएं तथा एकादश सूक्ष्म इन्द्रियां (विचारानुगत सम्प्रज्ञात समाधि)

४. पंचमहाभूतात्मक समस्त स्थूल विषय (वितर्कानुगत सम्प्रज्ञात समाधि)

उपर्युक्त चित्र में बाह्य वृत्त अनन्त स्थूल विषयों को व्यक्त करता है। जिन अनन्त स्थूल विषयों में से किसी एक विषय 'क' पर संयम का अभ्यास प्राप्त साधक जब समाधि अवस्था प्राप्त करता है, तो उस साधक को उस विशिष्ट ध्येय विषय के साथ-साथ समस्त अन्य स्थूल विषयों का भी यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो जाता है। समस्त स्थूल विषय पंचमहाभूतों के मिश्रित स्थूल रूप हैं। जब समाधि के द्वारा स्थूल पंचमहाभूतों का साक्षात्कार प्राप्त हो जाता है तब इस समाधि अवस्था को ही वितर्कानुगत सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। इन स्थूल पंच

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महाभूतों की उत्पत्ति पंचतन्मात्राओं (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, तथा गन्ध) अर्थात् सूक्ष्म विषयों से होती है। एकादश इन्द्रियां भी जो कि स्थूल विषयों को ग्रहण करती हैं, सूक्ष्म हैं। समाधि का अभ्यास निरन्तर चलते रहने पर साधक का प्रवेश सूक्ष्मतर जगत् में होने लगता है। अर्थात् साधक की ऐसी अवस्था पहुँच जाती है जिसमें उसे सूक्ष्म, ग्राह्य विषयों तथा सूक्ष्म एकादश इन्द्रियों का साक्षात्कार प्राप्त हो जाता है। कार्य से कारण के ज्ञान पर पहुँचना तो हो ही जाता है क्योंकि कार्य कारण का सम्बन्ध ही इस प्रकार का है। इस समाधि की अवस्था को जिसमें पंचतन्मात्राओं तथा एकादश सूक्ष्म इन्द्रियों का यथार्थज्ञान प्राप्त होता है, विचारानुगत सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। इसके बाद अभ्यास करते रहने पर साधक सूक्ष्म विषयों तथा एकादश इन्द्रियों से भी सूक्ष्म, अहंकार का साक्षत्कार करता है। जब साधक भेदन करता हुआ अहंकार के सूक्ष्म स्तर पहुँच जाता है तो उस अवस्था को आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था कहते हैं। इस आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की प्रज्ञा के प्रकाश में अभ्यास पथ पर चलते रहने से साधक अस्मिता का साक्षात्कार करता है। पुरुष प्रतिबिम्बित चित्त जिसे अस्मिता कहते हैं, अविद्या बीज रूप से विद्यमान रहती है। यह अस्मिता के साक्षात्कार की अवस्था, जो कि अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि कही जाती है, सम्प्रज्ञात समाधि की अन्तिम अवस्था है।

स्थूल विषय 'क' का सम्बन्ध जिसको अनन्त स्थूल विषयों में से अपनी रुचि के अनुसार चुनकर साधक ने ध्येय बनाया है, अस्मिता से भी है। प्रथम तो वह सीधे रूप से सूक्ष्म भूतों से सम्बन्धित है फिर उन सूक्ष्म भूतों के द्वारा वह पंचतन्मात्राओं से, पंचतन्मात्राओं के द्वारा अहंकार से तथा अहंकार के द्वारा अस्मिता से सम्बन्धित है। इस प्रकार से 'क' स्थूल विषय पर ही समाधिस्थ होने से साधक अभ्यास वृद्धि करते-करते अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था को पारकर विवेक ज्ञान प्राप्त कर लेता है तथा उसके बाद ऋतम्भरा प्रज्ञा के उत्पन्न होने पर असम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था प्राप्त कर कैवल्य प्राप्त करता है। इसे नीचे दिये चित्र से भी समझाया जा सकता है।

इस चित्र में साधक मानों एक विशेष प्रकार के कारागार में है जो इस प्रकार से निर्मित है कि कारागार से मुक्त होने के लिये उसे आठ कारागारों से मुक्त होना पड़ता है। जब यम, नियम आदि अष्टांगों के अभ्यास से साधक प्रथम कारागार को समाप्त करने में समर्थ होता है तथा दूसरे कारागार की सीमा में पहुँचता है तो उसको प्रज्ञा का प्रकाश मिलता है जिससे वह दूसरे कारागार को समाप्त करने योग्य हो जाता है। इसी प्रकार से वह वितर्कानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था में पहुंच जाता है। इस प्रकार से दूसरे कारा-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गार के प्रकाश में तीसरे कारागार को समाप्त करने योग्य हो जाता है और चौथे अधिक प्रकाशित कारागार के बड़े दायरे में पहुँच जाता है। इस तरह से साधक एक एक कारागार

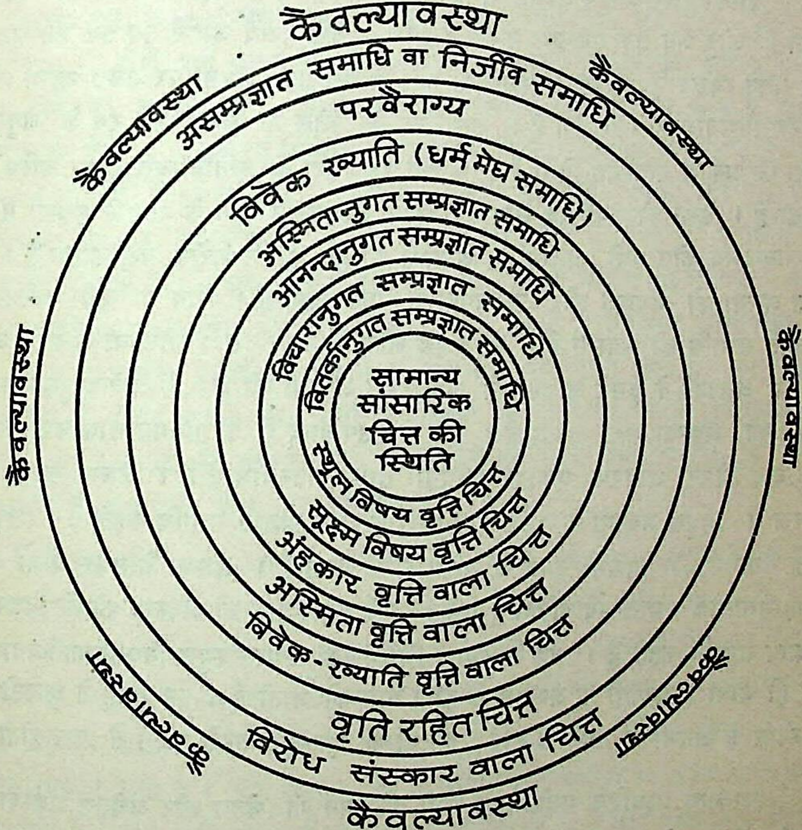

के दायरे को पार करता हुआ अन्त में पूर्णरूप से कारागार से सदैव के लिए मुक्त हो जाता है। यही कैवल्य अवस्था है जिसको चित्र नं० २ में स्पष्ट किया गया है।

उपनिषदों में इसी को पंच कोषों के द्वारा समझाया गया है। अन्नमय कोष से आत्माध्यास हटाकर प्राणमय कोष में प्रवेश करना, प्राणमय कोष से आत्माध्यास हटाकर मनोमय कोष में प्रवेश करना, मनोमय कोष से आत्माध्यास हटाकर विज्ञानमय कोष में पहुँचना, विज्ञानमय कोष से आत्माध्यास हटाकर आनन्दमय कोष में पहुँचना तथा इस आनन्दमय कोष

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से भी आत्माध्यास हटाकर साधक मुक्त हो जाता है। इनमें प्रथम चार अवस्थायें तो सम्प्रज्ञात समाधि की हैं। तथा अन्तिम अवस्था असम्प्रज्ञात समाधि की है।

इसको दूसरे प्रकार से भी समझाया जा सकता है। शुद्ध आत्मा अनेक आवरणोंसे आवृत है और जब तक एक-एक करके वे आवरण नहीं हटाये जायेंगे तब तक वह शुद्ध चेतन तत्त्व अपने स्वरूप में पूर्णरूप से प्रकाशित नहीं हो सकता। आत्मा पर सबसे पहला खोल वा आवरण त्रिगुणात्मक चित्त का है। उस चित्त के खोल वा चिमनी के रंग के अनुसार ही आत्मा का प्रकाश प्रस्फुटित होता है। आत्मा इस चित्त में प्रतिबिम्बित होकर अस्मि रूप से भासता है। इसी को उपनिषद् और वेदान्त में आनन्दमय कोष के नाम से पुकारा गया है। इस आनन्दमय कोष रूपी अज्ञान के आवरण को ही कारण शरीर कहा जाता हैं। इसके सहित आत्मा को वेदान्त और उपनिषदों में प्राज्ञ कहते हैं। योग में यही अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था है। इस पहले खोल के ऊपर दूसरा खोल वा आवरण अहंकार का है। अहंकार के दूसरे आवरण से आवृत इस अवस्था को योग में आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था कहा जाता है। इसे ही उपनिषद् में विज्ञानमय कोष कहा गया है। इसके बाद तीसरा आवरण एकादश इन्द्रियाँ तथा पंचतन्मात्राएँ हैं। आत्मा के इस तीसरे आवरण से आवृत अवस्था के ज्ञान को विचारानुगत सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। उपनिषदों में यह मनोमय और प्राणमय कोष के अन्तर्गत आ जाता है। आत्मा के ऊपर चौथा आवरण पंचमहाभूतात्मक समस्त पदार्थों का है। इनके पूर्ण यथार्थज्ञान की अवस्था को ही वितर्कानुगत सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। यह अवस्था, जिसमें कि समस्त स्थूल विषयों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो जाता है अष्टांगों के अभ्यास के द्वारा प्राप्त की जाती है। इस तरह से आत्मोपलब्धि योगाभ्यास से आत्मा के ऊपर के ज्ञान आवरणों को एक-एक करके हटाने से प्राप्त होती है।

पाश्चात्य आधुनिक मनोविज्ञान अभी तक मन की चेतन और अचेतन अवस्थाओं का भी पूर्ण तथा यथार्थ ज्ञान अपनी वैज्ञानिक पद्धति द्वारा नहीं प्राप्त कर पाया है। यह अवश्य है कि उसने इसमें बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर ली है। किन्तु संयम और समाधि के द्वारा प्राप्त मन की अतिचेतन अवस्था का ज्ञान तो उसके लिए कल्पनातीत ही है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक पद्धति से उस स्तर तक नहीं पहुँचा जा सकता है।

उपर्युक्त वर्णन की गई चित्त की सब अवस्थायें सम्प्रज्ञात समाधि के अन्तर्गत आ जाती हैं। इन सबमें ही किसी न किसी ध्येय विषय का आधार होता है, चाहे वह स्थूल हो वा सूक्ष्म। इसलिये सम्प्रज्ञात समाधि को सालम्ब समाधि कहते हैं। सम्प्रज्ञात समाधि में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भिन्न-भिन्न स्तर हैं। एक स्तर से दूसरे स्तर पर अभ्यास के द्वारा ही पहुँचा जाता है। सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्थायें ध्येय विषय के ऊपर आधारित होती हैं।

ऋतम्भरा प्रज्ञा—प्रत्येक अवस्था में उस अवस्था विशेष की प्रज्ञा उत्पन्न होती है। जिसके प्रकाश में योगी आगे बढ़ता है। अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की प्रवीणता प्राप्त होने पर योगी को अध्यात्म प्रसाद प्राप्त होता है, जिसमें योगी एक ही काल में सबका साक्षात्कार कर लेता है। अन्तिम निर्विचार समाधि के निरन्तर अभ्यास के बाद बुद्धि अत्यधिक निर्मल हो जाती है। रज-तम रूप मलावरण समाप्त होने पर विशुद्ध सत्त्व गुण, चित्त का स्वच्छ स्थिरता रूप एकाग्र प्रवाह निरन्तर प्रवाहित रहता है। चित्त की चंचलता एक दम समाप्त हो जाती है। चित्त की ऐसी स्थिति में बिना किसी क्रम के प्रकृति पर्यन्त समस्त पदार्थों का साक्षात्कार एक ही काल में हो जाता है। इसको ही अध्यात्म प्रसाद कहा गया है।[1] इस स्फुटप्रज्ञालोक अध्यात्म प्रसाद से ही ऋतम्भरा प्रज्ञा प्राप्त होती है। इस प्रज्ञा के निर्मल प्रकाश में विवेक ख्याति उदय होती है, जिससे कि चित्त का भोगाधिकार समाप्त हो जाता है। विवेक ख्याति की अवस्था प्राप्त न होने तक ही चित्त चेष्टावान् रहता है, किन्तु विवेक ख्याति के बाद चित्त चेष्टा शून्य हो जाता है।

विवेक-ख्याति—अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि का व्यवधान रहित अभ्यास करते रहने पर ऋतम्भरा प्रज्ञा का उदय होकर उसके समस्त आवरणों से रहित प्रकाश में योगी को प्रकृति और पुरुष के भेद ज्ञान का साक्षात्कार होने लगता है। पुरुष प्रतिबिम्बित चित्त के साक्षात्कार हो जाने पर जब अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि का अभ्यास निरन्तर चलता रहता है तो एक अवस्था ऐसी आती है जिसमें चित्त तथा पुरुष-प्रतिबिम्ब दोनों का अलग-अलग साक्षात्कार होता है। जैसे निर्मल दर्पण में प्रतिबिम्बित व्यक्ति का दर्पण से भिन्न रूप में ज्ञान होता है, ठीक उसी प्रकार से इस अवस्था विशेष में चित्त और पुरुष इन दोनों की भिन्नता का ज्ञान प्राप्त होता है। अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि में अत्रिगुणात्मक चैतन्य पुरुष तथा त्रिगुणात्मक जड़ चित्त की भिन्नता की प्रतीति नहीं होती। इसीलिए वह अस्मिता की प्रतीति ही अस्मिता क्लेश है। विवेक ख्याति की ही अवस्था में चित्त से भी आत्माध्यास समाप्त हो जाता है। विवेक ख्याति की ही अवस्था ऐसी अवस्था है जिससे योगी उस अवस्था विशेष पर पहुँच जाता है कि जो संसार चक्र से निकाल कर कैवल्य की तरफ ले जाती है।

१. पा० यो० १।४७।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह बड़ी महत्त्वपूर्ण अवस्था है। विवेक ख्याति के अभ्यास को व्यवधान रहित चलाते रहने पर ऐसी अवस्था उपस्थित होती है जिसमें योगी गुणों से तृष्णारहित हो जाता है। यह गुणों से तृष्णारहित होना ही पर वैराग्य कहलाता है। जब तक गुणों की परिधि से योगी बाहर नहीं हो जाता तब तक वह कैवल्य प्राप्त नहीं कर सकता।

धर्ममेघ समाधि—[1]पूर्व वर्णित ऊपर वैराग्य के द्वारा योगी अन्य समस्त विषयों से राग रहित होकर ध्येय विशेष पर चित्त को एकाग्र करता है। यह एकाग्रावस्था ही सम्प्रज्ञात समाधि कही जाती है जिसकी पराकाष्ठा विवेकख्याति है। इस विवेकख्याति रूपी सात्त्विक चित्त वृत्ति में भी राग के अभाव को पर वैराग्य कहते हैं। जब विवेकख्याति का अभ्यास दृढ़ हो जाता है। अर्थात् विवेकख्याति की अवस्था स्थायित्व को प्राप्त कर लेती है तो वह अवस्था धर्ममेघ समाधि की अवस्था कहलाती है। विवेक ज्ञान के द्वारा भी जो योगी किसी फल की प्राप्ति की इच्छा नहीं करता ऐसे वैराग्यवान् साधक की विवेकज्ञान की अवस्था निरन्तर बनी रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि विवेकज्ञान की वृत्ति ही चित्त में निरन्तर उदय होती रहती है। उसी का प्रवाह निरन्तर चलता रहता है। उसके बीच में कभी भी व्युत्थान वृत्तियों का उदय नहीं होता। इस रूप से व्युत्थान संस्कारों के बीज जल कर फिर से उदय होने में असमर्थ हो जाते हैं। यह परिपक्व विवेकज्ञानावस्था ही धर्ममेघ समाधि कही जाती है। सम्प्रज्ञात समाधि की पराकाष्ठा विवेकख्याति है और इस विवेकख्याति की परिपक्वावस्था ही धर्ममेघ समाधि है। जब धर्ममेघ समाधि के द्वारा मलावरण हट जाता है तब असीमित ज्ञान के प्रकाश में कुछ भी अज्ञात नहीं रह जाता।[2] धर्ममेघ समाधि की अवस्था में गुणों के परिणाम के क्रम की समाप्ति हो जाती है। गुण उसके लिए क्रियाशील नहीं होते। धर्ममेघ समाधि प्राप्त योगी के लिए अपना कोई कार्य नहीं रह जाता।[3]

विवेक ख्याति की यह परिपक्व अवस्था, धर्ममेघ समाधि, आत्मसाक्षात् कराने वाली चित्त की उच्चतम सात्त्विक वृत्ति है। यह शुद्ध सात्त्विक वृत्ति, अविद्या विद्यमान लेशमात्र तमस् के द्वारा स्थिर रहती है। इस सात्त्विक वृत्ति के द्वारा ही चित्त में प्रतिविम्बित पुरुष तथा चित्त दोनों का अलग-अलग साक्षात् होता है। यह साक्षात्कार चित्त के द्वारा ही होता है। अतः चित्त का क्षेत्र विवेक ख्याति तक है। धर्ममेघ समाधि के द्वारा चित्त स्वच्छतम तथा निर्मलतम

---

१. पा० यो० सू० ४।२९, ३०।

२. पा० यो० सू० ४।३१

३. पा० यो० सू० ४।३२

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हो जाता है जिससे विवेक ख्याति स्वयं भी गुणों के परिणाम रूप चित्त की सात्त्विक वृत्ति प्रतीत होने लगती है। ऐसा होने पर इससे भी वैराग्य उत्पन्न हो जाता है। इससे उत्पन्न हुए वैराग्य को ही पर वैराग्य कहते हैं। सत्त्वगुणात्मक विवेक ख्याति भी चित्त का ही कार्य है। इसीलिये उसका त्याग भी आवश्यक ही हो जाता है। इसका त्याग अर्थात् इससे राग रहित होना ही पर वैराग्य है। यह ज्ञान की पराकाष्ठा है। विवेकख्याति में वास्तविक रूप से आत्मसाक्षात्कार प्राप्त नहीं होता। उसमें तो चित्त में पड़े हुए केवल आत्मा के प्रतिबिम्ब का ही साक्षात्कार होता है। इसे आत्मसाक्षात्कार समझना या स्वरूप अवस्थिति समझना भूल है। जिस प्रकार से दर्पण में दीखने वाला स्वरूप वास्तविक स्वरूप नहीं है, केवल प्रतिबिम्ब मात्र है ठीक उसी प्रकार विवेक ख्याति में यह आत्मसाक्षात्कार भी वास्तविक आत्मसाक्षात्कार नहीं है, केवल आत्मा के प्रतिबिम्ब मात्र का साक्षात्कार है। इस प्रकार का जो ज्ञान प्राप्त होता है, और योगी को धर्ममेघ समाधि की अवस्था में जब यह ज्ञान हो जाता है कि वह आत्मा का साक्षात्कार न होकर चित्त में आत्मा के प्रतिबिम्ब का साक्षात्कार है, तो उसकी आसक्ति इस निरन्तर प्रवाहित होनेवाली विवेक-ज्ञानरूपी सात्त्विक वृत्ति से भी हट जाती है। इसे ही सर्वोच्च ज्ञान कहा जा सकता है। इसमें वास्तविक रूप से गुणों के क्षेत्र से योगी मुक्त हो जाता है। यही पर वैराग्य है।

असम्प्रज्ञात समाधि—उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सम्प्रज्ञात समाधि में समस्त वृत्तियों का निरोध नहीं हो पाता। इतना ही नहीं अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था पार कर लेने के बाद भी जो विवेक ख्याति की अवस्था योगी को प्राप्त होती है वह विवेक ख्याति स्वयं ही एक उच्चतम सात्त्विक वृत्ति है। अतः विवेक ख्याति की परिपक्वावस्था धर्ममेघ समाधि में भी भेद ज्ञान रूपी उच्चतम सात्त्विक वृत्ति विद्यमान रहती है। सम्प्रज्ञात समाधिकालिक वृत्तियों तथा विवेक ख्याति रूपी सात्त्विक वृत्ति के भी पूर्ण रूप से निरोध हो जाने पर उस निरोध के कारण पर वैराग्य का निरन्तर अनुष्ठान रूप अभ्यास करने से जो संस्कार-शेष अवस्था प्राप्त होती है, उसे असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। जिस प्रकार से भुना हुआ बीज फिर अंकुरित नहीं होता, केवल स्वरूप भाव से शेष रह जाता है वैसे ही सम्प्रज्ञात समाधि अवस्था वाला निरुद्ध चित्त, वृत्तियों को उदय करने में असमर्थ होता है तथा वह केवल स्वरूप मात्र शेष रह जाता है। जिस प्रकार से जलाशयों में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब हवा के द्वारा उत्पन्न लहरों के कारण स्थिरता को प्राप्त न होने के कारण उसके वास्तविक स्थिर स्वरूप का प्रत्यक्ष नहीं हो पाता वह लहरों के कारण स्थिर होते हुए भी चंचल प्रतीत होता है, ठीक उसी प्रकार से जब चित्त वृत्तियों के कारण निरन्तर चंचल बना

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रहता है तव इस चंचल परिणामी चित्त में प्रतिबिम्बित पुरुष अत्रिगुणात्मक तथा अपरिणामी होते हुए भी त्रिगुणात्मक और परिणामी प्रतीत होता रहता है। जैसे लहरों के शान्त होने पर चन्द्रमा अपने वास्तविक रूप में प्रतिबिम्बित होने लगता है, ठीक उसी प्रकार से चित्त वृत्तियों के निरुद्ध होने पर पुरुष भी अपने वास्तविक स्वरूप में प्रतिबिम्बित होने लगता है। इस अवस्था को भी स्वरूपावस्थिति नहीं कह सकते, क्योंकि इस अवस्था में चित्त में पुरुष के प्रतिबिम्ब को ही वास्तविक पुरुष समझा जाता है। इस वृत्ति का भी पर वैराग्य द्वारा जब निरोध हो जाता है, तब ही समस्त वृत्तियों का निरोध होता है, उससे पूर्व नहीं। इस असम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था में समस्त वृत्तियों का निरोध हो जाता है किन्तु समस्त वृत्तियों के निरुद्ध होने पर भी संस्कारों का निरोध नहीं होता। निरोध समाधि में केवल संस्कार ही शेष रह जाते हैं। इस प्रकार से इस काल में व्युत्थान और निरोध दोनों प्रकार के संस्कार विद्यमान रहते हैं।

जिस प्रकार से समाधि संस्कारों के द्वारा व्युत्थान संस्कार समाप्त हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार से निरोध संस्कारों के द्वारा सम्प्रज्ञात समाधिगत संस्कार भी समाप्त हो जाते हैं क्योंकि निरोध संस्कार सम्प्रज्ञात समाधिगत संस्कारों से बलवान् होते हैं। इस प्रकार से पूर्ण निरोधावस्था में निरोध संस्कारों के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रह जाता।

प्रारम्भ में निरोधावस्था अल्पकालिक होती है किन्तु ज्यों-ज्यों अभ्यास बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों व्युत्थान-संस्कार निरोध संस्कारों के द्वारा समाप्त होते जाते हैं और निरोधावस्था का काल बढ़ता जाता है। असम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था अधिक काल तक रहती है। इस प्रकार से अभ्यास के द्वारा यह अवस्था परिपक्व होती चली जाती है। इस अवस्था के पूर्ण रूप से परिपक्व होने पर व्युत्थान तथा सम्प्रज्ञात समाधि जन्य समस्त संस्कार सदा के लिये नष्ट हो जाते हैं। केवल निरोध संस्कारों का ही प्रवाह निरन्तर चलता रहता है। इसको ही निरोध परिणाम कहते हैं।

असम्प्रज्ञात, समाधि की परिपक्व अवस्था है जिसमें निरोध संस्कार के अतिरिक्त कुछ नहीं बचता। उसके बाद ये निरोध संस्कार स्वयं भी नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार स्वर्ण के मल को जलाने के लिए शीशे (धातु विशेष) का प्रयोग होता है ठीक उसी प्रकार से चित्त के समस्त संस्कारों को भस्म करने के लिये संस्कारों का उपयोग होता है। जिस प्रकार स्वर्ण के मल को जलाकर शीशा स्वयं भी जलकर समाप्त हो जाता है उसी प्रकार से चित्त की समस्त वृत्तियों तथा संस्कारों को नष्ट करके निरोध संस्कार स्वयं भी समाप्त हो जाते हैं। उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थिति में योगी का चित्त प्रकृति में लीन हो जाता है तथा पुरुष अपने आत्म स्वरूप में प्रतिष्ठित होकर कैवल्य प्राप्त करता है। असम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था वाले योगी, जिसके चित्त में निरोध संस्कार शेष रह जाते हैं, अर्थात् जिनका चित्त संस्कार रहित होकर निरुद्ध होता है, जन्म मरण के चक्र से मुक्त हो जाते हैं। ये योगी जीवन्मुक्त वा स्थितप्रज्ञ कहलाते हैं। इसके विपरीत विदेह तथा प्रकृतिलीन योगियों के चित्त संस्कार रहित होकर निरुद्ध नहीं होते, बल्कि उनमें आनन्दानुगत सम्प्रज्ञात समाधिप्रज्ञाजन्य संस्कार, अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात समाधिप्रज्ञाजन्य संस्कार सहित निरुद्ध होते हैं, जो कि अवधि समाप्त होने पर पुनः संसार चक्र में लाते हैं अर्थात् मुक्तावस्था को प्राप्त नहीं कराते। संस्कार रहित निरुद्ध चित्त योगी मृत्यूपरान्त पुनः जन्म नहीं लेते। उनके समस्त सांसारिक बन्धन समाप्त हो जाते हैं।

संचित, प्रारब्ध तथा क्रियमाण रूप से कर्म तीन प्रकार के हैं। संचित कर्म केवल संस्कार रूप से विद्यमान रहते हैं जो कि अनन्त जन्म-जन्मान्तरों से चले आ रहे हैं। किन्तु उनके फल भोगने की अवधि नहीं आयी। प्रारब्ध कर्म वे हैं जिनको भोगने के लिये हमें वर्तमान जाति और आयु प्राप्त हुई है। क्रियमाण कर्म वे हैं जिन्हें वर्तमान जीवन में हम स्वेच्छा से संग्रह करते हैं। इन नवीन कर्मों के द्वारा नवीन संस्कार उत्पन्न होते हैं। क्रियमाण कर्मों में से कुछ कर्म तो संचित कर्मों के साथ मिलकर सुप्त अवस्था को प्राप्त होते हैं जिनका फल कभी अगले जन्मों में उनके उदय होने पर मिलता है। कुछ प्रारब्ध कर्मों से भी मिलकर तुरन्त फल प्रदान करते हैं। जिन योगियों को धर्ममेघ समाधि के पश्चात् पर वैराग्य के द्वारा समस्त वृत्तियों और संस्कारों का निरोध होकर असम्प्रज्ञात समाधि प्राप्त होती है उनके संचित कर्मों के संस्कार तो विवेकख्याति के द्वारा दग्धबीज हो जाते हैं तथा क्रियमाण कर्म संस्कार तो उत्पन्न ही नहीं होते। अतः पुनः जन्म की सम्भावना उनको नहीं रह जाती। यही जीवन मुक्तावस्था है।

माया की गति छाया जैसी धरै चलै तौ धावै।
पीठ फेर जो त्याग चलै तो पीछे पीछे आवै॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महात्माओं की झोली से

[संयम सप्ताह के अवसर पर देहरादून श्री रामतीर्थ मिशन के अध्यक्ष श्री श्री १०८ स्वामी गोविन्द प्रकाश जी महाराज के दिये हुए प्रवचनों का सारांश]

सच्चा अनन्त निरपेक्ष सुख ही परमानन्द है। किसी अन्तवान् में परमानन्द प्राप्त नहीं होता। जब तक आप अन्तवान् हैं तब तक आप को परमानन्द की—परम सुख शान्ति की प्राप्ति की आशा नहीं है। आप के भीतर ही सच्चा आनन्द का भण्डार है। आप के भीतर ही स्वर्गीय स्वर्णिम अमृत का महासागर उमड़ रहा है। इसे अपने अन्तःकरण के अन्तःस्थल में ढूंढ़िये अनुभव कीजिए। आत्मा तन, मन बुद्धि से परे है। इच्छायें वहाँ पहुँच नहीं पातीं। प्रवृत्ति निवृत्ति की धूप-छाँह भी वहाँ नहीं है। वह सबके भीतर बाहर ओत-प्रोत आप ही हैं। आप की आत्मा है। आप ही आत्मा हैं। आप ही मुस्कराते हुए फूलों और चमचमाते हुए तारों के रूप प्रकट होते हैं। इस छोटे से नामरूपमय संसार में ऐसी कौन-सी अनमोल चीज है जो स्वयं प्रकाश स्वयं परिपूर्णतम आप में किसी भी तुच्छ अभिलाषा को जगा सके ! नहीं ! हरगिज नहीं !!

आनन्द भौतिक पदार्थों की भाँति किसी चीज की प्राप्ति में नहीं है। सोना चांदी तो खरीदने तक अपना मूल्य बताता है। परन्तु उसके बाद दोनों ही एक सा है—। कोई-कोई मानते हैं कि आनन्द कुछ विशेष परिस्थितियों पर निर्भर है। यह भी बेतुकी बात है। दुःख का अभाव यदि सुख है और सुख का अभाव दुःख, तब दोनों ही अभाव रूप होने से सदा ही अप्राप्त हैं और अगिया बेताल के समान कभी भी प्राप्त होने वाला नहीं है। महान् सुखी और धन्य वह है जिसका जीवन सदा ही बलिदान पर तुला हुआ है।

आनन्द की तरह सत्य भी सदा प्राप्त है। सत्य किसी व्यक्ति की निजी सम्पत्ति नहीं है। सत्य ईसा की जागीर नहीं है, हमें ईसा के नाम पर सत्य का प्रचार नहीं करना चाहिए। सत्य राम, कृष्ण अथवा किसी दूसरे व्यक्ति की सम्पत्ति नहीं है। वह तो प्रत्येक व्यक्ति की सम्पत्ति है। सत्य तो वह जो तीनों कालों में एक समान रहता है। जैसा कल था, वैसा ही आज है और वैसा ही सदा आगे रहेगा। किसी घटना विशेष, किसी परिस्थिति विशेष या किसी व्यक्ति विशेष से उसका सम्बन्ध जोड़ना मूर्खता है। आप उस परम सत्य को प्राप्त कर सकें, आप ब्राह्मी स्थिति में नित्य स्थिर रह सकें, उसका अनुभव कर सकें, इसके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिये यह जरूरी है कि आप की प्यारी से प्यारी अभिलाषायें और आवश्यकतायें पूर्णतः छिन्न-भिन्न कर दी जायँ, आप की जरूरतें, आप की प्रेमी जनों की ममतायें, आप की सशक्त आसक्तियों और चिरपरिचित अन्धविश्वासों से आप को हाथ धोना पड़ेगा। इनसे आप का कोई वास्ता—कोई सम्बन्ध न पहले था न अभी है! पूर्ण सत्य की प्राप्ति के लिए आप को सांसारिक इच्छाओं का त्याग करना होगा, राग द्वेष से ऊपर उठना होगा, आप को उन सारे सगे सम्बन्धियों को हाथ जोड़कर नमस्कार करना पड़ेगा जो आप को स्नेहपाश में बाँधकर गुलाम बनाते और सत्य के निखरे हुए स्वरूप को जानने में पर्दा डालते और निम्न जागतिक वासनाओं कामनाओं की पूर्ति के लिए सदैव प्रेरित करते रहते हैं। सत्यसाक्षात्कार का यह मूल्य चुकाना ही पड़ेगा। मूल्य की अदायगी के बिना सत्य को आप नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

सत्य प्राप्ति का मूल्य सर्वस्व त्याग! त्याग आप को सर्वश्रेष्ठ स्थिति में पहुँचने में सर्वोत्तम सहायक के रूप में प्रतीत होगा। चरम उत्कर्ष की ऊँची वेदी पर चढ़ने के लिए त्याग ही सर्वश्रेष्ठ निर्भरशील, कभी धोखा न देने वाला और सदा मजबूत सोपान की भांति शोभायमान है। त्याग निश्चय ही आप के बल को बढ़ावा देता है, आप के अन्दर सुप्त अनन्त शक्तियों को जगा देता है। आप के अद्भुत पराक्रम को दृढ़ बनाने में सहायक सिद्ध होता है। आप की अनावश्यक विनाशकारी चिन्तायें और अनागत भय को हरने में सिद्धहस्त है। क्या कहें—आप को स्वयं ईश्वर को भूमिका तक पहुँचा देने में समर्थ है। त्याग के द्वारा आप सदा निर्भय और सदानन्दमय हो जाते हैं।

त्याग का स्वरूप क्या है? अहंकार युक्त जीवन को त्याग देना। स्वार्थपूर्ण और व्यक्तिगत सम्बन्धों को त्याग देना। निःसंशय और निःसन्देह अमर जीवन व्यक्तिगत और परिच्छिन्न जीवन को खो डालने से मिलता है। त्याग के बारे में स्वामी रामतीर्थ जो कहते हैं—आप को सदा त्याग की चट्टान पर ही खड़ा होना पड़ेगा। अपने आप को इस उत्कर्ष दशा में दृढ़तापूर्वक पैर जमाकर आगे बढ़ना होगा। जो काम जो कर्तव्य सामने आये प्रभु का भेजा हुआ मानकर उसे स्वीकार करना होगा। अपने आप को पूर्णतः अर्पण करना होगा तब आप स्वयं अनुभव कर सकेंगे कि किसी भी काम किसी भी परिस्थिति में आप ऊब नहीं जायेंगे, आप थकेंगे नहीं। सर्वत्र ईश्वरत्व का दर्शन होता रहेगा। कोई कर्तव्य आप से अधूरा नहीं रह जायगा। त्याग का प्रारम्भ सबसे निकट और सबसे प्रिय वस्तुओं से करना चाहिए। आप को मालूम है आप की सबसे प्रिय वस्तु कौन है जिसे त्यागना परमावश्यक है? वह है मिथ्या अहंकार! "मैं यह कर रहा हूँ। मैं कर्त्ता हूँ, मैं भोक्ता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हूँ"—यही झूठी भावना हममें एक अजीब कल्पित व्यक्तित्व को उत्पन्न कर देती है। इस 'अहम्' को त्यागना ही त्याग है। त्याग का माने यह नहीं है कि आप घरबार सब छोड़कर हिमालय के घने जंगल में जा बसे या आप अपने कपड़े उतार कर नंगे पाँव नंगे सिर घूमने लगे। अकर्मण्यता, लाचारी, नैराश्य, निर्बलता और दम्भपूर्ण तपश्चर्या का अर्थ त्याग नहीं है इसे याद रखना चाहिए। अहंकार पूर्ण जीवन को छोड़ना ही त्याग है। वही आनन्द है। 'येन सर्वं त्यजसि तत्त्यज'—जिस अहं के बल पर सब कुछ छोड़ने की शक्ति दिखाते हो उस अहं को त्यागो! तभी तुम्हारा त्याग सफल होगा। 'मेरे तेरे' 'मेरी तेरी' भावना को त्यागना ही सच्चा त्याग है। कामना रहित कर्तव्यों का पालन त्याग की पराकाष्ठा है। अपनी इच्छाओं को अभिलाषाओं को त्याग कर उनसे ऊपर उठना है आप को। हमें सदा स्मरण रखना चाहिए कि हमारी कामनायें तभी सिद्ध होंगी जब हम उनसे ऊपर उठकर सत्य में पहुँचेंगे। बड़ी अजीब बात है कि जब हम अपनी इच्छाओं को अपने अहं को त्याग देते हैं तभी हमारी इच्छाएँ पूरी होती हैं हमारा अहं मिटकर सोहं हो जाता है।

यह जो सारे विश्व में नामरूपों में नानात्व का खेल अनादि काल से चल रहा है इसमें हमें फँसना नहीं है। सोने को क्या परवाह है आभूषण रहे चाहे न रहे। सोने की नजर में जेवर कभी हुआ ही नहीं है। सोने के आभूषणों के ऊपर नीचे अन्दर बाहर चारों ओर सोना ही सोना तो है। आभूषण तो आकृति मात्र नाममात्र हैं। सब दशाओं में सब दिशाओं में सब परिस्थितियों में सोना एकरस है। इसी तरह आपमें नामरूप कभी हुए ही नहीं अतः नाम और रूप के परिवर्तन—रूपान्तर से संघटन-विघटन से आपका क्या वास्ता? आपमें हममें सबसे बड़ी विचित्रता और चमत्कारी बात यह है कि यह जो "मैं मैं" "मेरा मेरा" नित्य भासमान हो रहा है व्यक्ति व्यक्ति में परिस्थिति परिस्थिति में विभिन्नता का आमन्त्रण देकर मातापिता के रूप में, पतिपत्नी के रूप में, गुरु शिष्य के रूप में, सुखी दुखी के रूप में अपने को मनवाकर मदारी की पुतलियों की तरह नित्य नवीन खेल दिखाने में मस्त है। इस काल्पनिक बनावट में, प्रतिबिम्ब के आभास के कारण अपना आपा अपना स्वरूप खो बैठा है। इस अपने आनन्द स्वरूप को अनुभव करने के लिए इस नानात्व के खेल में मैं ही हूँ, इस रूप में ऐसी भावना करने पर उसकी छाप अपने पर नहीं पड़ पाती। स्वामी रामतीर्थ जी ने क्या सुन्दर कहा:

अन्दर बाहर, ऊपर नीचे, आगे पीछे हम ही हम।
उर में, सिर में, नर में, सुर में, पुर में, गिर में, हम ही हम॥

× × × × × ×

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

न है कुछ तमन्ना न कुछ जुस्तजू है।
कि वहदत में साकी न सागर न बू है।।
मिलीं दिल को आँखें जभी मारफत की।
जिधर देखता हूँ, सनम रू बरू है।।
गुलिस्तों में जाकर हर इक गुल को देखा।
तो मेरी ही रंगत व मेरी ही बू है।।
मिरा तिरा उट्ठा हये एक ही हम।
रही कुछ न हसरत न कुछ आरजू है।।

एक हाथ में स्वादभरी मिठाई और दूसरे हाथ में चमकती-चाँदी के रुपये लेकर भोले-भाले अज्ञानी बच्चे को दिखाकर कहा जाय कि इन दोनों में से कौन सी एक वस्तु को तुम स्वीकार करोगे, तो नासमझ बच्चे को मिठाई पसन्द आयेगी क्योंकि उसी क्षण उसे मिठाई की सुगन्धि और स्वाद मिल जाता है। परन्तु उसको मालूम नहीं कि चाँदी के रुपयों से वह रोज रोज मिठाई खरीद कर नित्य वह आस्वाद अपनी इच्छानुसार ग्रहण करने में समर्थ हो सकता है।

सच्चा चमकने वाले नित्यानन्द को छोड़कर जुगनू की तरह चमकवाली क्षण भंगुर स्वाद देने वाली मिठाई ही बालक को आकर्षित करती है। अपने जन्मजात अधिकार मथुरा की राजगद्दी की प्राप्ति के लिये भगवान् कृष्ण द्वारा कंस को मारना था। परन्तु आप जानते हैं कंस को मारने से पहले भगवान् ने कुब्जा की कमर सीधी कर दी थी। गुलाब के फूलों से बनी माला, नाना प्रकार के सुगन्धि अतर, पान सुपारी, चन्दन, अबीर और गुलाल लेकर कंस की सेवा में कुब्जा झुमक झुमक कर मथुरा के राजपथ पर चल रही थी। इतने में सुकुमार नन्दकुमार से भेंट हो गई।

निखिल रससिन्धु के स्वामी रसराज माधव ने पूछा—हे सैरन्ध्री ! हे वरानने ! आप ये अंगलेपादि लेकर कहाँ जा रही हैं ? ये सामग्री हमें अर्पण कीजिए इसी से ही आपको कल्याण होगा।

कुब्जा ने हँसकर जवाब दिया।

दास्यस्म्यहं सुन्दर कंससम्मता त्रिवक्रनामा ह्यनुलेपकर्मणि।
मद्भावितं भोजपतेरतिप्रियं विना युवां कोऽन्यतमस्तदर्हति।।
(भागवत १०।४२।३)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तीन स्थानों से टेढ़ी-मेढ़ी कुब्जा की बोलचाल भी अत्यन्त टेढ़ी थी। परन्तु भगवान् त्रिभंगमुरारि ने उसके ऊपर प्रसन्न हो कर हाथ पैर खींचकर और मुक्के मारकर उसे सीधी बना दी।

"प्रसन्नो भगवान् कुब्जां त्रिवक्रां रुचिराननाम्।
ऋज्वीं कर्तुं मनश्चक्रे दर्शयन् दर्शने फलम्॥
पद्भ्यामाक्रम्य प्रपदे द्व्यंगुल्युत्तानपाणिना।
प्रगृह्य चुबुकेऽध्यात्ममुदनीनमदच्युतः॥
सा तदर्जुसमानांगी बृहच्छ्रोणीपयोधरा।
मुकुन्दस्पर्शनात् सद्यो बभूव प्रमदोत्तमा॥

(भागवत १०।४२।६-८)

अपने अमोघ दिव्य दर्शन के फल दिखाने के लिए भगवान् मुकुन्द के स्पर्श मात्र से वह तीन अंगों से टेढ़ी कुब्जा सुन्दरी सुरूपा होकर भगवान् की दासी बन गई। नाम तो कुब्जा ही रहा परन्तु सीधी होकर भगवान् के चरणों पर गिरी। कंस से अब कोई संबन्ध नहीं रहा। अबीर गुलाल, अतर चन्दन सब सामग्री से भगवान् का पूजन किया और उन्हीं की हो रही। सीधी कुब्जा को सखी बनाकर ही भगवान् श्री कृष्ण कंस पर विजय प्राप्त करने के लिए चलते हैं और फिर कंस को मारकर स्वराज्य के पैतृक अधिकार को प्राप्त करते हैं। विषयों के वन को त्यागकर सच्चे साम्राज्य को संभालने के लिए अहंकाररूपी कंस को मारना जरूरी है, नहीं तो अहंकाररूपी कंस की ओर से नाना प्रकार की आशंकायें, भाँति-भाँति को पीड़ाएँ और चित्रविचित्र अत्याचारों की संभावना बनी रहती। अहंकार (कंस) तब मरेगा जब कुब्जा सीधे होकर कृष्ण (आत्मा) की भेदी—परमात्मा के रहस्य को जाननेवाली हो जायगी। स्वामी राम कहते हैं—कुब्जा का स्वरूप क्या है—श्रद्धा और विश्वास। सर्व-साधारण के यहाँ उल्टी श्रद्धा अहंकार की सेवा में दिन रात लगी रहती है। "यह घर मेरा है," 'ये स्त्री पुत्र मेरे हैं' 'धन दौलत मेरी है,' 'सुन्दर शरीर मेरा है' इस तरह के अनन्त रंगों में और राग में रंगी हमारी श्रद्धारूपी कुब्जा उलटी होकर अनर्थ करने वाले कंस में विश्वास करती है। इससे हमारे देह ध्यास को पुष्टि और बल मिलता ही रहता है। जब तक संसारासक्त दृष्टिवाली श्रद्धा सीधे होकर आत्मा श्री कृष्ण की सहगामिनी और तद्रूपा नहीं होगी तब तक अहंकाररूपी कंस नहीं मरेगा और पैतृक स्वराज्य की प्राप्ति भी नहीं होगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारतीय संस्कृति और सन्त जीवन

उदयचन्द्र 'प्रभाकर'

संस्कृति उस सरिता के समान है, जो अपने स्वच्छन्द भाव से निरन्तर प्रवाहित होती रहती है। संस्कृति का अर्थ है—संस्कार और संस्कार का अर्थ है—संस्कृति। संस्कृति और संस्कार एक ही धातु से निष्पन्न शब्द हैं। संस्कृति विचार, आदर्श और भावना तथा संस्कार-प्रवाह का वह संगठित एवं सुस्थिर संस्थान है, जो मानव को अपने पूर्वजों से सहज ही अधिगत हो जाता है। संस्कृति के सम्बन्ध में पाश्चात्य विचारक मैथ्यू आर्नल्ड ने कहा है—"Culture is to know the best that has been said and thought in the world." विश्व के सर्वोच्च कथनों और विचारों का ज्ञान ही सच्ची संस्कृति है। महान् विचारक वोबी के कथनानुसार संस्कृति दो प्रकार की होती है—परिमित संस्कृति और अपरिमित संस्कृति। "Partial Culture runs to the aristocracy extreme culture to simplicity."—परिमित संस्कृति शृंगार एवं विलासिता की ओर प्रवाहित होती है, जबकि अपरिमित संस्कृति सरलता एवं संयम की ओर प्रवाहित होती है। संस्कृति के सम्बन्ध में श्रीप्रकाश जी ने बहुत सुन्दर कहा है—While civilization is the body, culture is soul, while civilization is the rasult of the knowledge and great painful researches in divesrse field, culture is result of wisdom."—"सभ्यता शरीर है और संस्कृति आत्मा, सभ्यता जानकारी और विभिन्न क्षेत्रों की महान् एवं विराट् खोज का परिणाम है, जबकि संस्कृति विशुद्ध ज्ञान का परिणाम है।" इसके अतिरिक्त जिसे हम सच्ची संस्कृति कहते हैं, उसका एक आध्यात्मिक पहलू भी है। इसके सम्बन्ध में महान् विचारक मार्डन ने कहा है—Serenity of spirit—poise of mind, is one of the last lesson of culture and comes from a perfect trust in the all controlling force of universe." "स्वभाव की गम्भीरता, मन की समता, संस्कृति के अन्तिम पृष्ठों में से एक है और यह समस्त विश्व को वश में करने वाली शक्ति में पूर्ण विश्वास से उत्पन्न होती है।" इसका अभिप्राय यह है कि अपने आप पर पूर्ण विश्वास होना है। जो महानता एवं आदर्शता की ओर ले जाती है। यही गंगा के प्रवाह की तरह पवित्र स्वच्छ एवं आदरणीय कही जा सकती है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संस्कृति मानव के भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान जीवन का चित्रण है। जीवन का ठोस सत्य है एवं जीवन का प्राणभूत तत्त्व है। मानवीय जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय संस्कृति है। तथा "सत्यं शिवं सुन्दरम्" मानव के आधार हैं जिससे मन की परिधि विस्तृत हो जाती है, उदारता का भण्डार भर जाता है। यह व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र को संवर्द्धन करने के लिए साध्य रूप नया पथ प्रदान करती है। नाना प्रकार की धर्म-साधना, कलात्मक प्रयत्न, योगमूलक अनुभूति और सत्य की व्यापकता तथा परिपूर्ण स्वभाव को जागृत बनाने का एक साधन है। मनुष्य अपनी साधना के बल पर विकृति से संस्कृति और संस्कृति से विकास की ओर निरन्तर गतिशील रहता है।

भारतीय संस्कृति की विशेषता आचार-पूत स्वतन्त्र चिन्तन-मनन में, सत्य की शोध में और उदार व्यवहार में रही है। युद्ध के अवसर पर भी यहाँ चिन्तकों, विचारकों ने शान्ति की सीख दी है और कहा है—"वैर के बदले प्रेम, क्रूरता के बदले मृदुता और हिंसा के बदले अहिंसा तथा विरोध में भी विनोद, विविधता में भी समन्वय (एकता) का दृष्टिकोण हो। क्योंकि इससे बुद्धि में सरसता, उदारता आदि का प्रादुर्भाव होगा। विश्वास, विचार एवं आचार की पवित्रता से—स्नेह, सहानुभूति, सहयोग और सह-अस्तित्व की भावना जागृत होगी। भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक कर्णधार राम, कृष्ण, महावीर और बुद्ध ने कहा "दयतां, दीयतां, दम्यताम्" जहाँ दया, दान और दमन हैं वहीं पर हमारी मूल संस्कृति है। यह संस्कृति भारत के जन-जन की और भारत के मन-मन की संस्कृति है। इसी का एक आधार श्री माँ माँ आनन्दमयी के जीवन के कण-कण में रमाया।

संस्कृति क्या है—संस्कृति मानव-जीवन का एक ऐसा अनिवार्य तत्त्व है, जिसके अभाव में मानव-जीवन में किसी प्रकार की प्रगति नहीं हो सकती, क्योंकि "संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी गई हैं अथवा कही गई हैं उनसे अपने आपको परिचित करना ही संस्कृति है।" तथा "संस्कृति शारीरिक अथवा मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, दृढ़ीकरण, प्रकटीकरण अथवा विकास करना है। यह मन, वचन, काय एवं आचार-विचार की परिष्कृति एवं विशुद्धि है।"

संस्कृति मनुष्य की विविध साधनाओं की सर्वश्रेष्ठ परिणति कही जा सकती है। संस्कृति मानव-जीवन का एक अविरोधी तत्त्व है। इसी को आधार बनाकर कोई श्रद्धा, विश्वास एवं आस्था के रूप को प्राप्त कर विकास की ओर अग्रसर होता है तथा जो भौतिक वस्तुओं को ही संस्कृति का आधार बनाकर चलता है वह सत्य की व्यापकता, आदर्शता एवं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उदारता को प्राप्त करने में समर्थ नहीं हो सकता है। यद्यपि संस्कृति में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों रूप हैं। पर आध्यात्मिक संस्कृति, राज, भवन, वाहन भौतिक ऐश्वर्य से भिन्न आचार, विचार, आस्था, श्रद्धा विश्वास आदि हैं। जिसमें ये गुण दिखलाई पड़ने लगते हैं वह निरन्तर संस्कृति की एकता की ओर जायेगा। "श्री माँ आनन्दमयो माँ" की कहानी आध्यात्मिक की ओर प्रेरित करती है। जब माता जी छोटी थीं तब इनके माता-पिता बड़े लाड़-प्यार से रखते थे। इनकी शादी छोटे में ही हो गई थी। तभी इनके पति ने माँ के रूप में मान लिया था तथा आदर का रूप माँ की तरह ही प्रकट करते थे। कुछ दिनों बाद इनके पति की मृत्यु हो जाती है। तब माँ जी दुःखित नहीं होतीं, ज्ञान की पिपासा शुरू से ही थी अतः इन्होंने योग साधना आरम्भ कर दी और इसमें सफल देखकर ही माँ जी ने एक आधार आध्यात्मिकता के विकास का बनाया और जगह-जगह आश्रमों की स्थापना की। जिस तरह प्राचीन काल में जंगलों में आश्रमों की योगी पुरुष स्थापना करते थे तथा वहाँ पर ही अध्ययन एवं अध्यापन के साथ ही साथ आत्म-साधना का उत्कृष्ट साधन बनाया और जीवन को उन्नति के पथ पर अग्रसर किया। क्योंकि संस्कृति का आधार श्रमण, शम, श्रम और सम हैं। जब तक साधक, साधक अवस्था में है, तब तक उसे शुभ प्रवृत्ति की आवश्यकता रहती है और जब योग साधना के द्वारा साध्यता की चरम कोटि को छूकर ईश्वरीय रूप को प्राप्त कर लेता है। जब मनुष्य को इस संसार मोह-माया से सुख नहीं मिलता है तब वह जीवन को उस ओर मोड़ देता जहाँ उसे शान्ति की किरण प्राप्त होती है। वह शांति प्राप्ति के लिए जगह-जगह मन्दिर-मस्जिद का निर्माण करता तो कभी आश्रमादि को खोलता और सोचता कि इससे कुछ शान्ति प्राप्त होगी, पर वास्तविक शान्ति नहीं; वास्तविक शान्ति आत्मचिन्तन, आत्मसाधन, आत्मअभिव्यक्ति एवं आत्मसंरक्षण में ही है। पर परोपकार करना भी एक शान्ति का प्रतीक है। यह अपने-आपको तो परिपक्व करता ही है, पर दूसरों को विशेष रूप से। यही नहीं होता तो व्यक्ति ऐसा क्यों करता।

भारतीय संस्कृति विश्वसंस्कृति से भिन्न नहीं है। संस्कृति मनुष्य के जीवन-विकास की एक क्रिया है, वह अविरोधी सत्य है और उसे प्राप्त करने के लिए ही विश्व के सभी राष्ट्र प्रयत्नशील हैं। उन सबके प्रयत्न अपनी-अपनी दृष्टि से महान् हैं। उस महानता में विश्वबन्धुत्व, मानवता, आध्यात्मिकता आदि कुछ अंश तो क्या अत्यधिक अंशकी उपलब्धि देखने को मिलती है। भारतीय सन्तों ने आध्यात्मिकताको समझा और अपनी वाणी को पवित्र करने के उपरान्त दूसरों को सत्पथ की प्रेरणा दी। जिन्हें वास्तविक सत्य की खोज रहती है वह जीवन में उतारने के कठोर साधना करता है; तब उसे जीवन में कुछ शान्ति का अनुभव होता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सन्त और साधु के सम्बन्ध में कबीर ने स्पष्ट कहा है :—

"साधु बड़े परमारथी, घन ज्यों बरसे आय ।
तपन बुझावैं और की, अपनो .पारस लाय ॥"

इस पंक्ति में स्पष्ट किया गया है कि साधु दूसरों का तपन मिटाने वाले होते हैं। तथा दूसरी उक्ति देखिये :—

"निरबैरी नित कामना, साँई सेती नेह ।
विषियाँ सूँ न्यारा रहे, संतनि को अङ्ग एह ॥"

अर्थात् सन्त निर्वैर होता है, निष्काम होता है । वह स्वामी (ईश्वर) से स्नेह रखता है और विषय (राग-द्वेष-मोह) से अनासक्ति रखना ही एक मात्र इनके जीवन का ध्येय होता है । ये अपने प्रभाव से जन-मन को नैतिक आदर्शों की ओर बढ़ने की प्रेरणा देते हैं । इनके प्रयत्नों से समाज आदर्श की ओर बढ़ता है और विकास के पथ का नवीन रूप प्राप्त होता जाता है । तब समाज उस ओर अत्यधिक बढ़ने लगता है, जिसे हम संस्कृति कहते हैं । सन्तों के सभी प्रयत्न चाहे आध्यात्मिक हों, साहित्यिक हों या धार्मिक, समाज पर उनका प्रभाव पूर्ण रूप से पड़ता है । यह केवल जनसमुदाय के लिए ही लाभदायक नहीं, अपितु सभी प्राणियों के लिये कल्याणकारी सिद्ध होते हैं । "आनंदमयी" के जीवन का एक आदर्श ऐसा है जिसके कारण आज का अधिकांश वर्ग इनकी प्रशंसा नहीं, बल्कि श्रद्धा से इनके आदर्शों की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अभिमुख हो जाते हैं ।" यत्र विद्यते नीरः तत्राभिमुखो जनः ।" यह बात ठीक ही है कि जहाँ जिसके पानी मिलता है वहाँ ही वह मनुष्य झुक जाता है । क्योंकि व्यक्ति हमेशा से "सत्यं शिवम् सुन्दरम्" की खोज में रहा आया है । जब वह अपने जीवन से निराश हो जाता है तब वह सन्त-साधुओं का आश्रय लेता है । क्यों ? उत्तर में यही आता है कि उसने अभी तक अपने आपको (आत्मा के स्वरूप को) नहीं पहचाना था। क्योंकि आत्मा का स्वभाव हमेशा आनन्द ही रहा है, अतः कुछ न करके वह उन सांसारिक बन्धनों से मुक्ति प्राप्त करने के सतत प्रयत्न करने लगता है । यही भारतीय संस्कृति का आदर्श रूप है ।

संस्कृति का उपासक, सम्पूर्ण मानव में एक आत्मा का ही दर्शन करता है । "अप्पा सो परमप्पा" यह आदर्श उसकी आँखों के सामने आ जाता है और वह सोचता है कि "ईश्वर एक है आत्मा एक हैं तब छुआछूत कहाँ । या "कहुँ धौं छूत कहाँ ते उपजी ।" एक दूसरा उदाहरण "बाबा रतन हाजी" का देखिये :—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"जिस पाणि ते कुल आलम उतपाना।
ते हिन्दू बोलिए कि मुसलमाना॥
हिन्दू मुसलमान खुदाई के बन्दे।
हम जोगी ना राखें किस ही के छन्दे॥"

श्री मां आनन्दमयी जी का आदर्श चारित्रिक, नैतिक और आध्यात्मिक है। उनमें कोई भेदभाव नहीं है। जो आध्यात्मिक सन्त होता है वह मानव-मानव एक मानता है। हम और अल्पबुद्धि प्राणी भले ही कुछ सोचें, पर इन सबके जीवन में ऐसा किंचित् मात्र भी भाव नहीं रहता है। उनके विरोध करने, नाश करने के लिए उनके पास का क्रोध, मान, माया और लोभ तथा राग-द्वेष ही ऐसे दुर्गुण हैं जिन्हें वह निकाल कर फेंकने की कोशिश करता है और इनका ही निरन्तर विरोध करता आया है। वे यही सोचते हैं कि "जब तक एक भी शत्रु (क्रोधादि) संसार में विद्यमान हैं तब तक सुख की कल्पना ही कहां है ? जैसा माघने कहा—"यावद् ध्रियते एकोऽपि रिपुः तावत् कुतः सुखम्।" आत्म मंदिर में जहां क्रोधादि दस्यु घुसे हुए हैं उन्हें बिना निकाले सुख कहां ?

व्यक्ति के विकास के लिए मनकी पवित्रता की आवश्यकता है। मन की अपवित्रता मनुष्य को एक ओर स्थिर नहीं रख पाती है उसे वासना रूपी बन्धन पकड़ लेता है जिससे समाज में स्थिरता राग-द्वेष जैसी भावनाएं उत्पन्न हो जाती हैं और समाज संस्कृति से भिन्न हो जाता है। समाज में इसी से अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं, पर सामाजिकता ज्यों की त्यों बनी रहती है, क्योंकि इसका आधार संस्कृति है। संस्कृति का विच्छिन्न रूप अल्प दुर्गुणों से समाप्त नहीं हो जाता है।

मानव स्नेह का प्रतीक होता है, स्नेह उसका स्वभाव होता है पर धीरे-धीरे स्नेह पर रज के कण बैठते जाते हैं, मानव को आभास नहीं होता, वह उन कणों को निकालने की कोशिश भी नहीं करता, अन्ततोगत्वा उसका परिणाम यह होता है कि वह स्नेह पूर्ण रूप से ढक जाता तब स्नेह की धारा समाप्त हो जाती है, परन्तु इससे भिन्न जो सदा से जो जैसा है वैसा हो रहता है वह जीवन में स्नेह से प्रकाश को फैलाता है, उसे सद्भाव और सहानुभूति का स्नेह मिलता है। व्यक्ति, समाज और देश का कल्याण इसके बिना सम्भव नहीं। वह विकासशील व्यक्ति सर्वप्रथम जीवन में उन गुणों को उतारता है, फिर दूसरों को चलने के लिए प्रेरित करता है। क्योंकि भारतीय संस्कृति का यही आदर्श रहा है। श्रद्धा, विश्वास एवं आस्था मूल आधार हैं तथा स्नेह, सहानुभूति, सहयोग और सह-अस्तित्व इनके प्रतीक हैं।

संस्कृति जीवन की ज्योति है, प्रकाश है। इसे हम "Divinc light" आत्म-ज्योति

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहते हैं। सभ्यता जीवन की गति है। सभ्यता जीवन व्यवहार को चलाने की एक कला है। संस्कृति का तात्पर्य मोह-राग-द्वेष को हटाना है और सभ्यता—सुसंस्कृत विचारों का आचार रूप देना, उन्हें जीवन-व्यवहार में लाना एवं कला आदि के द्वारा अभिव्यक्त करना। जीवन में जितनी आवश्यकता संस्कृति की हो सकती है, उससे कहीं अधिक सभ्यता की भी है। परन्तु केवल सभ्य कहा जाने वाला संस्कृतज्ञ होगा यह नियामक नहीं है, असंस्कृतज्ञ व्यक्ति भी सभ्य हो सकता है और संस्कृतज्ञ व्यक्ति सभ्य होगा यह भी नहीं कहा जा सकता है। अतः संस्कृति और सभ्यता का होना अनिवार्य है।

सन्त-जीवन संस्कृति और सभ्यता से युक्त होता है। उनका व्यक्तित्व स्पष्ट झलकने लगता है। उन्हें न तो व्यक्ति विशेष से स्नेह होता है, और न ही कुटुम्ब आदि के व्यक्तियों से ही। उनके सामने आत्म-ज्योति ही दिखलाई पड़ती है जिसे देख कर क्या, अपितु मनन-चिन्तन साधना के बल से प्रज्वलित करते रहना तथा उस प्रज्वलित प्रकाश को समाज के लिए दिखलाना ताकि वे भी इस ओर झुक सकें, अपने-आपको आध्यात्मिक मार्ग की ओर ला सकें। आज हम देखते हैं कि आध्यात्मिकता को लोग तिलाञ्जलि देते जा रहे हैं, पर यह सोच-कर हम भी तिलाञ्जलि दे दें ऐसा नहीं है, जो शान्ति की इच्छा रखते हैं वे कभी भी ऐसा नहीं कर सकते हैं। चाहे उनके सामने कितनी ही कठिनाइयाँ क्यों न रहें? माँ आनन्दमयी ने आत्म व्यक्तित्व की ज्योति फैलाकर इस युग में एक नया प्रवाह बहाया। जो एक बार इनके व्यक्तित्व पर विचार कर देखता है तो उसे इस ओर झुकने की अभिलाषा हो जाती है तथा एक बार दर्शन मात्र से ही अपने-आपको, इस ओर मोड़ लेता है। आज इनके (माँ जी के, आदर्शों पर चलने वालों की संख्या अत्यधिक बढ़ती जा रही है, क्यों? तब उत्तर यही निकलता है कि सही आदर्श व्यक्तित्व सभी को भी प्रिय है जो युग-युगान्तर से अब भी चला आ रहा है। संस्कृति (सुसंस्कृत) विचारों की धारा कभी खत्म नहीं होती है। समय-समय पर उसके प्रवाहित करने वाले अवश्य जन्म लेते रहे हैं।

संस्कृति से सुसंस्कृत सन्त ही जीवन को आदर्श बना पाते हैं। उनका एकमात्र उद्देश्य आचार-विचार के अलावा श्रद्धा, आस्था एवं विश्वास तथा सहानुभूति, सरलता, सह-अस्तित्व और समन्वय जो कि हमारी संस्कृति के मूल आधार हैं। सन्त-जीवन के आधार पर ही हमारी संस्कृति के ये उत्कृष्ट रूप मौजूद हैं। जगह-जगह इनके चिन्ह संस्कृति की महानता को दर्शाते हैं यह ही नहीं, अपितु एक नई प्रेरणा युगके लिए प्रदान करते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महात्मा का प्रसाद

[श्री श्री स्वामी शरणानन्द जी के उद्गार]

जीवन के सत्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता। परमात्मा कैसा है—कहाँ है—यह मानने की आवश्यकता नहीं। अगर आप उसको अपना मान लें तो काम बन जाय। जिसको आप बुद्धि से पकड़ नहीं पाते, और आवश्यकता अनुभव करते हैं, तो उसको मान लो। जानने में जो आया उसको कोई पकड़ नहीं पाया—जो मानने में आता है उसको कहते हैं परमात्मा। माँ मान लेना बच्चे का काम व माँ का काम बच्चे का पालना, उसका सब करना—प्यार करना—बिना करे रह नहीं सकती। ऐसा कोई नाता नहीं जो भगवान् के साथ नहीं हो सकता। इनसे नाता जोड़ लीजिये।

जब मैं छोटा था तो जब मैं अंधा हो गया तो मुझे बड़ी लाज लगती थी—मुँह ढाँक कर लेटा रहता या रोता रहता। पिता जी ने कहा सबसे बड़ा आनन्द साधुओं को मिलता है। एक बाबा जी के संयोगवश मैंने सुना था कि राम दशरथ जी के बेटे हैं, (राम नाम में तब तक उतनी श्रद्धा नहीं थी।) उन्होंने मुझसे कहा, 'राम राम कहा करो।' उन्होंने मुझसे पूछा, "क्या तुम भगवान् को मानते हो ?" मैंने कहा, 'जी हाँ !' उन्होंने कहा, "तो उनके हो जाओ।" जो अपना हो—अपने में हों—अभी है—उसको छोड़ा नहीं जा सकता। अगर यह बात आप को पसन्द आ जाती है तो मन उसमें इतनी गहराई से लगेगा कि लौट कर आएगा नहीं—यदि आपने भगवान् को मान ही लिया तो मन लौट कर कैसे आया ? न चिन्तन टूटता है न विस्मृति आती है।

विश्व के इतिहास में आपको कोई ऐसा नहीं मिलेगा जो कहे मेरी सभी कामनाएँ पूरी हो गईं और न कोई ऐसा मिलेगा जो कहे मेरी एक भी कामना पूरी नहीं हुई। माँ, तुम हमको बहुत प्यारी लगो—तुम्हारे सिवा हमारा कोई न रहे—अगर आप इतनी सच्चाई के साथ भगवान् को मान सकते हैं तो मान लें—आपकी माँग पूरी करना भगवान् का काम और मांग अनुभव करना आपका काम। मांग इतनी सबल होनी चाहिए कि अभी पूरी हो जाय। क्या परमात्मा सदैव, सर्वत्र, व सभी का नहीं है ? परमात्मा है—अभी है—अपना है—अपने में है। अपने में होने से सब ओर से चित्त रुक जायगा—संयम हो जाएगा—करना नहीं पड़ेगा। जब चित्त सब ओर से रुक कर उसमें चला जायेगा—नमक की पुतली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सागर की थाह लेने चलती हैं तो उसी में विलीन हो जाती है। जैसे शान्ति कहां है। जहां कोई ग़ैर नहीं है। कोई और नहीं रहा—कोई ग़ैर नहीं रहा—तो अशान्ति दूर हो जाती है। शान्ति आप प्राप्त कर सकते हैं। शान्ति प्राप्त होती है सुख का प्रलोभन छोड़ देने से।

जिसमें हमारी आस्था, श्रद्धा, विश्वास होता है उसकी स्मृति-प्रियता हममें उदय हो जाती है। मन, बुद्धि, इन्द्रियां भी उसीमें विलीन हो जाती हैं। प्रीति का सम्बन्ध प्रीतम से रहता है वही प्रीति राधा रानी, सीता जी, तथा गौरी हैं। कठिन इस लिये लगता है कि अपने द्वारा होता है—शरीर के द्वारा नहीं होता। जब एक ही स्वीकृति रह जाती है वहाँ परमात्मा प्रकट हो जाता है। जब स्वीकृति से भिन्न स्वीकार करने वाला नहीं रहता। जो चीजें थोड़ी देर को मिलती हैं वह चीजें हैं ही नहीं—मिलो ही नहीं। भगवान् का मिलना असम्भव नहीं—कठिन भी नहीं। ऐसे महापुरुष से भेंट हो जाय जिसकी वाणी में पूर्ण विश्वास हो तो काम बन जाय। एक संत की घटना—संत लोग बड़े उदार होते हैं एक बड़े अफसर एक महात्मा से सरजू तट पर बात कर रहे थे। एक बार उनको उन्हीं के पास ठहरने का मौक़ा मिल गया। बाजार गए, जी में आया—पूजा का सब सामान ले लिया। उन्होंने रात में देखा साधु रूप में एक बड़ा सुन्दर बालक है—उसकी उसी सामग्री से पूजा कर दी व जब प्रणाम करने लगे तो उनके मन में प्रश्न उठा कि साधु वेश में क्यों आये। समाधान हुआ—इसलिए कि साधुओं में श्रद्धा थी।

मां की आज्ञा का पालन करें। उन पर अपने को न्योछावर कर द तो भगवान् आपको जरूर मिलेंगे। केवल पसन्द करने की बात है। जो भगवान् को पसन्द कर लेता है उसको अवश्य मिल जाते हैं। भक्त या संतवाणी पर अपने को न्योछावर कर दो यह जीवन का विज्ञान है।

(२)

मिले हुए शरीर से हमारा नित्य सम्बंध नहीं है। जब तक हमको शरीर चाहिये तभी तक संसार चाहिये। यदि शरीर व संसार नहीं चाहिये तो भगवान् चाहिये। भगवान् से हमारा जाति सम्बंध है—भगवान् के प्यार में अपना खाना सोना आदि भूल जाता है। जब हमें किसी से प्यार होता है तो अपने प्रिय में इतना अनुराग हो जाता है कि अपना खाना सोना भूल जाते हैं। प्रिय के खिलाने में जब प्रेमी जन अपना खाना भूल जाते हैं—उनको पहनाने के लिये अपना पहनना भूल जाते हैं। प्रेमियों के जीवन में अपने खाने आदि का राग मिट जाता है, उनके हाथ से भगवान् भोग ग्रहण करते हैं। यदि हम भगवान् को देखना

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चाहते हैं व अपने को भूल जाते हैं—तो दिखाई भी देते हैं। अतः राग रहित होना अनिवार्य है। मन संयमी— अभिमान शून्य—बुद्धि विवेक-व्रती-ज्ञान के अनुरूप जो कार्य है वह करना चाहिये। कोई फल या कामना नहीं रहती। अपने सारे सुख भगवान् में अर्पण हो जाते हैं। यदि आपको बन्धन, अशान्ति पसन्द है तो मुक्ति व शान्ति कैसे मिले? आप यदि भगवान् को पसन्द करें तो भगवान् कैसे नहीं मिलेंगे-जिसको भगवान् पसन्द हों—और कोई नापसन्द हो तो वह बिना मिले रह नहीं सकते। क्या आप भगवान् को पसन्द करने को राजी हैं? भगवान् तभी पसन्द आ सकते हैं जब भीतर और पसन्दें न रहें। भगवान्, माँ, तो सबको पसन्द करते, (करती) ही हैं।

पहले गुरु की वाणी में विश्वास करो। यदि आपने गुरु की वाणी से भगवान् को अपना मान लिया तो भगवान् तो अपने हैं ही। वेद वाणी, मां की वाणी, गुरु की वाणी के आधार पर आपको विश्वास हो, व भगवान् से आत्मीय सम्बंध स्वीकार कर लें तो उनकी स्मृति-प्रियता बराबर रहेगी। भगवान् हैं इतना मानने से ही मनुष्य निर्भय हो जाता है। आपकी बैंक के रुपयों से चिन्ता दूर हो जाती है और जो भगवान् हर समय हैं—तो उसकी गोद में चिन्ता क्या? आस्था के बिना कोई भगवान् की प्राप्ति नहीं कर सकता—और यदि भगवान् के अस्तित्व को स्वीकार कर लेंगे तो फिर और किसी के अस्तित्व की आवश्यकता ही क्या? गुरु की वाणी में कभी सन्देह न करे। भगवान् गुरु के वाक्य को पूरा करने के लिए लालायित रहते हैं। आप जरूरत महसूस करें तो माँ अपने आप कृपा करेंगी व तुम्हारी व्याकुलता दूर करेंगी।

जिससे जो उत्पन्न होता है उसका तत्त्व उसमें रहता है। हमको भगवान् का प्रेम सम्बन्ध चाहिये। काम का नाश होने से शान्ति आती व रहती है। खाने, बोलने, सुनने आदि से भी ऊँचा सुख है। भक्ति का रस ऐसा अनुपम रस है कि शुद्ध-बुद्ध परमात्मा भी भक्तों के वश होकर भक्तों की इच्छा पूरी करते हैं। भगवान् है—तुम्हीं में है—तुम्हारा है। यदि आप यह बात मान लेते हैं तो संसार का अस्तित्व नहीं रहता। संसार निकल जायगा। भगवान् आ जावेंगे।

जो बलपूर्वक भगवान् को पकड़ना चाहते हैं या संसार को हटाना चाहते हैं—तो पकड़ या हटा नहीं सकते। आस्थावाले साधकों के प्रत्येक काम भगवान् की पूजा हो जाते हैं व भगवत्-प्राप्ति का हेतु हो जाते हैं। भगवान् का काम पूजा भगवत्-स्मृति भजन। भगवान् के महत्त्व को स्वीकार करने से संसार का महत्त्व नष्ट हो जाता है—सत्य स्वयं सिद्ध है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानव जीवन का आदर्श सांख्य वेदान्त और आगम दृष्टि

महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज

यह शुद्धविद्या का संचार परमेश्वर से संघटित होता है। यह सृष्टिकाल में या सृष्टि के अवसान में प्रलय काल में भी हो सकता है। लेकिन जब भी यह हो जीवात्मा जब इसके ग्रहण के योग्य विवेचित होता है परमेश्वर उसी समय उसे यह महाज्ञान प्रदान करते हैं। उनकी दृष्टि से काल का कोई नियम नहीं है। यद्यपि इस महाज्ञान के धारण की योग्यता किन बातों पर आधारित है—इस विषय में मतभेद हैं और यद्यपि दृष्टिभेद के अनुसार सभी मत सत्य हैं, तो भी समझने की सुविधा के लिए सभी मतों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है। इन मतों में एक है मलपाक, दूसरा है कर्मसाम्य और तीसरा भगवदनुग्रह है। द्वैतदृष्टि से मलपाक और कर्मसाम्य का विचार किया जाता है, लेकिन अद्वैत दृष्टि से भगवत् स्वातंत्र्य ही इसका मूल है। समझने की आसानी के लिये हम मलपाक की ओर से इसकी आलोचना करेंगे। मल शब्द से यहाँ आणव मल समझना चाहिए। इस मलरूपी आवरण से अनादि काल से जीवों का ज्ञान चक्षु आवृत है, और इसीलिए उन्हें शिवभाव का साक्षात्कार नहीं हो रहा है। काल के अधीन रहकर सभी कार्य हो रहे हैं इसलिए और मलद्रव्यात्मक होने के कारण उसका परिपाक क्रमशः हो रहा है। कालकृत तथा अन्य नाना कारणों से जो परिणाम होता है उसीका नाम मलपाक है। निरन्तर मल का परिपाक चल रहा है। जब तक मल सुपक्व नहीं होता है तब तक भगवान् इसे दूर नहीं करते हैं, क्योंकि वैसे करने पर जीव की हानि होती है। मनुष्य की आँखों में मोतियाबिन्द होने पर जैसे उसे कुछ नहीं दिखाई पड़ता है, सुचिकित्सक जब मोतियाबिन्द के पकने की अवस्था में पाते हैं, उस समय अस्त्र प्रयोग से उसे हटा देते हैं, अपरिणत हालत में उस पर अस्त्र प्रयोग होने पर आँख नष्ट हो जाती है। मल परिपक्व होने पर जीवको उसे दूर करने के लिये चिन्तन नहीं करना पड़ता है। भगवान् स्वयं ही समय होने पर क्रियाशील होकर मलको उन्मूलित कर देते हैं, इसका नामान्तर है ज्ञानचक्षु का उन्मूलन।

यह मलपाक सृष्टिकाल में या प्रलय काल में हो सकता है। सृष्टिकाल में जीव मायिक देह से सम्बन्ध रखता है किन्तु प्रलयकाल में जीव सर्वथा देहहीन है, क्यों कि मायिक देह काल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के प्रभाव से उस समय विलीन हो जाता है अथच—जीव सत्ता उस समय भी विदेह अवस्था में विद्यमान रहती है।

प्रसंगवश यहाँ विदेही जीवों के बारे में कुछ कह लेते हैं। जीव संसार अवस्था में भोग के लिए प्रारब्ध कर्म का अवसान न होने तक देहविशिष्ट रहता है। प्रारब्ध के नाश होने पर मृत्यु होती है। यह एक प्रकार विदेह अवस्था है। यह व्यक्तिगत विदेह स्थिति है। लेकिन जब काल के प्रभाव से सब स्थूल जगत् का नाश हो जाता है तो उस समय को प्रलय कहते हैं। इस स्थिति में सभी जीवों की विदेह अवस्था की प्राप्ति होती है। इसे प्रलयाकल अणु की स्थिति कहते हैं। इस स्थिति में जीव देह से मुक्त होने पर भी कर्म संस्कार तथा माया से मुक्त नहीं होता। लेकिन जब विवेकज्ञान के प्रभाव से जीव को कैवल्य प्राप्त होता है उस समय भी जीव की विदेह स्थिति है—ऐसा समझना आवश्यक है। इस अवस्था के जीव को विज्ञानाकल जीव कहा जाता है। संस्कार से मुक्त होने के कारण विज्ञानाकल जीव पुनः संसार में जन्म नहीं लेता। इनकी अधोगति यद्यपि रुद्ध है लेकिन ऊर्ध्वगति भी अब तक नहीं हुई है, क्यों कि ये दिव्य ज्ञान से रहित हैं।

अब हमें दो प्रकार के विदेह आत्मा मिली हैं (१) विज्ञानाकल (२) प्रलयाकल। प्रलयाकल आत्माओं का कर्म बीज वर्तमान है। नवीन सृष्टि के समय वह कर्मबीज अंकुरित होगा और उन्हें नवीन शरीर भी प्राप्त होगा। इसके विपरीत विज्ञानाकल जीव कर्मबीज रहित हैं। उन्हें कभी भी संसार में अर्थात् भोगजगत् में आना नहीं पड़ेगा। इन विज्ञानाकल जीवों का मलपाक यदि पर्याप्त मात्रा में सम्पन्न हुआ तो उनपर श्री भगवान् की कृपादृष्टि पड़ती है। इस मलपाक में भी तर-तम भाव हैं। समझने की सुविधा के अनुसार इस पाक को हम दो श्रेणियों में रख सकते हैं। जिस मात्रा के पाक होने पर भगवत्-कृपा अवश्यम्भावी है वह आठ आने से सोलह आने तक हो सकता है। उससे कम होने पर यह समझना चाहिए कि अब तक उनपर भगवत्-कृपा का समय नहीं आया है। जिसका मलपाक सोलह आने हो गया है वह अविलम्ब ही शिवत्व प्राप्त कर लेता है यह देह रहते हुए ही हो या प्रलय दशा में ही हो। आठ आने से ऊपर तथा सोलह आने से कम के पाक के मात्रा को दो भाग में विभाजित किया जा सकता है। एक है ऊर्ध्व और दूसरा है अधः।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राष्ट्र, नीतिवाद और धर्मबोध

श्री सी० राजागोपालाचारी

[तामिल साप्ताहिक 'कल्कि' में प्रकाशित लेख का साभार हिन्दी रूपान्तर—स०]

हमारे देश के गाँवों में, कस्बों-शहरों में सर्वत्र चरित्र और चारित्र्य में विभिन्नता, विषमता और हीनता की खाई इतनी तेजी से बढ़ती जा रही है जिसे देखकर देश के और धर्म के सच्चे प्रेमिक सत्पथचारिगण अपने को बड़े ही अस्वस्थ असहाय पीड़ित दशा में पाते हैं। राष्ट्रीय जीवन में व्यक्तिगत स्वार्थान्धता और स्वाधिकारमन्तता अपने अनैतिक बलवीर्य से पुष्ट होकर सर्वत्र समाज में भूतों की परछाईं की तरह ही छा रही है। लोग पाप कृत्यों से भयभीत नहीं होते हैं और उनके आचरण से हिचकते नहीं हैं। सद्‌गुणों का समादर नहीं होता। भविष्यत् की स्वर्णिम आशा धूमिल होने लगी देखकर मानस में संताप और खेद प्रकट हो आते हैं। 'भगवान् ही एकमात्र सत्ता—सबके प्रभु हैं—ये बातें केवल लोगों की जबान पर ही समय समय पर नाचने लगती हैं—सच्चा धर्म का बोध हमारे राष्ट्रीय जीवन से निर्वासित जैसी अवस्था में सीता जी की तरह रावण की अशोक वाटिका में अपने उद्धार के लिये श्रीराम की बाट निहार रही हैं।

ऐसी विषम परिस्थिति के लिए कौन उत्तरदायी है तथा किन लोगों के माथे दोषों का मुकुट पहनाया जाय इन विचारों में उलझ जाना ठीक नहीं लगता। वर्तमान समस्या का हल क्या है? हमारे कर्तव्य क्या हैं? हम क्या अपनी आशा आकांक्षा, समाज-सभ्यता, शील-शिष्टाचारादि को तिलांजलि देकर प्रति क्षण ध्वंस की अतल गहराई की ओर कदम बढ़ाते बढ़ाते उस अन्तिम घड़ी की प्रतीक्षा करें, जब तक काल के कराल गर्भ में चिरकाल के लिये अपने खो न जायँ! नहीं हरगिज नहीं—ऐसा नहीं हो सकता। जीवनभर ऐसे हाथ पर हाथ थामे बैठने का सन्देश हमें अपने पूर्वजों ने कभी नहीं दिया। वे कहते हैं—"जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत' उठो। जगो। अपने वरणीय वस्तु को प्राप्त होकर आत्मज्ञ बनो, ब्रह्मज्ञ बनो। राष्ट्रीय जीवन में सुस्थ, सतोगुणमय, शान्ति प्रेम और परस्पर सद्भावनामय वातावरण बनाने के लिए, अपने शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक प्रचेष्टाओं को एक सुनियन्त्रित मार्ग पर विकसित करने के लिए सर्वत्र धर्मबोध को नवीस प्राणों से संजीवित कर संचार करना चाहिये।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुसम्बद्ध सन्तुलित जीवन यात्रा के लिये धर्मबोध का मूल्यांकन करना पड़ेगा। जीवन की जय यात्रा में धर्म और सत्य दोनों ही नित्य साथी हैं। "यतो धर्मस्ततो जयः", "सत्यमेव जयते"—ये दोनों बातें हमें हर समय याद रखनी हैं। केवल मात्र वैयक्तिक जीवन के लिए नहीं बल्कि राष्ट्रीय जीवन में, सामाजिक जीवन में भी सर्वत्र अग्रगति की समृद्ध धारा को अक्षुण्ण रूप से प्रवाहित एवं संजीवित रखने के लिए धर्मबोध को जगाना ज़रूरी है। योजनायें बनाना—तथाकथित सफलता वृक्ष के मीठे मीठे फलों को आस्वादन करने के लिए ऊँची-ऊँची आशाओं को हृदय में धारण करके फिर कृतकार्य न होना, सर्वत्र सुनहरे स्वप्नों के जाल बुनकर फिर विफलताओं की जंजीर में अपने को पाना—ये सब उस विषमता से भरे चरित्र-हीनता से पले विषवृक्ष के ही फल हैं, जो हमारे जन जीवन के सारे प्रयत्नों पर पानी फेर देते हैं। सारे देश की सफलता की कुंजी तो धर्म के सच्चे बोध और आचरण से ही प्राप्त होती है।

धर्मबोध और सत्य क्या है इस पर पोथी के ऊपर पोथी लिखी जा सकती हैं परन्तु मेरे मन में ये विचार आते हैं कि परम प्रेमास्पद विश्वनियन्ता प्रभु से प्रेम और भक्ति हो एवं पाप कृत्य से घृणा एवं भय हो, ये ही दोनों बातें हमें धर्म से सीखना एवं सिखाना है। सब काल में सब देश में यही दोनों चीजों का उपदेश है। यहाँ धर्म शब्द से मैं कोई मतमतान्तर-वादियों के रूढ़िगत अर्थों के साथ अपने को सम्बद्ध नहीं करता हूँ। इसी के कारण धर्मबोध-हीन राजनीति मेरुदण्डविहीन मानव शरीर की तरह है।

स्वातन्त्र्य बोध एवं गणतन्त्र का विस्तार सब ही चाहते हैं परन्तु धर्म बोध के बिना गणतन्त्र स्वेच्छाचारिता में पर्यवसित हो जाने की शत प्रति शत सम्भावनावों का आमन्त्रण है। इसी बात को मैं बार बार दुहराना चाहता हूँ।

५० साल तक हम लोगों ने स्वराज्य की प्रतिष्ठा के लिए मर्यादा की लड़ाई लड़ी—और उसमें सफल हुए, अब धर्मबोध को जगाने के लिए, प्रभु में आस्था और विश्वास स्थापन के लिए एवं राष्ट्रीय जीवन से पाप को निर्मूल बनाने के लिए हमें अपने को एक सुचिन्तित सुस्पष्ट धर्मबोध के मार्ग पर चलना पड़ेगा।

भारतवर्ष में प्रचलित सब धर्मों में सब सम्प्रदायों में यह बात सर्व सम्मति से स्वीकृत है—कि उस अन्तर्यामी घटघटवासी परमेश्वर परमात्मा से भक्ति करनी चाहिए और पाप से घृणा होनी चाहिए। मानव जीवन में आध्यात्मिकता की भित्ति भूमि को सुदृढ़ बनाने के लिये ये बातें चिरन्तन सत्य के रूप में काम में आती हैं। मार्ग में चलते समय भाव में और प्रयोग में भिन्नता दीखेगी परन्तु लक्ष्य हम सब का एक ही है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सभ्यता और संस्कृति के इस संकटकालीन मुहूर्त में श्रेष्ठ धर्मविद् और अनुभवी महात्माओं के सहारे समाज में राष्ट्रीय जीवन में नये सिरे से धर्म बोध का पुनः संस्थान करना जरूरी हो गया।

भारतवर्ष के प्रसिद्ध सन्त दिव्यविभावमयी श्री माँ आनन्दमयी जी अपने भक्तों के साथ गत सप्ताह मद्रास शहर में पधारीं। तीन दिन तक सत्संग की पुनीत धारा 'कल्कि बगीचे' में बहती रही। असंख्य नर नारियों ने श्री माँ का दर्शन किया और अपने जीवन में धर्मबोध को जगाने में उनसे प्रेरणा और आश्वासन मिला। श्री माँ के सान्निध्य में बैठ कर भगवदीय प्रेम भक्ति आस्था आदि सद्गुणावली स्वयं स्फुरित होने लगती है। चित्त में एक अपूर्व प्रशांतिमय माधुर्य का बोध होता है। मेरा शरीर उतना स्वस्थ न रहने से मैं उनके दर्शनों के लिये स्वयं को उपस्थित नहीं कर पाया। परन्तु मेरी सुपुत्री ने उनका दर्शन किया और आशीर्वाद प्राप्त किया। श्री माँ आनन्दमयी जैसे पवित्रात्मा महात्माओं के आविर्भाव से ही धर्मबोध की जागृति होने लगती है। महीयसी श्री माँ जहाँ जाती हैं इसी सत्य को जतलाती हैं—भगवान् आत्मा है, पाप से घृणा—"हरि कथा ही कथा और सब वृथा व्यथा—जहाँ राम वहाँ आराम—जहां राम नहीं वहां बे-आराम।"

थोड़े से शब्दों में मैंने आपके सामने यह निवेदन करने की कोशिश की कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में भगवद्भक्ति, प्रभु में विश्वास और आस्था-पाप से घृणा बोध, ये सब बातें, जब अपना महत्त्व रखने लगेंगी तभी हमारी उन्नति का मार्ग प्रशस्त होगा। कुछ लोग हमारी इस कथनी को कल्पना और असम्भव अवास्तव कह करके हँसी कर सकते हैं। उनके लिए दया और भगवान् के पास प्रार्थना के सिवाय मैं और कुछ आगे कह नहीं सकता। पचास साल पहले राष्ट्रीय स्वतन्त्रता बोध से परिपूरित राष्ट्र नेताओं ने जब असहयोग आन्दोलन का श्री गणेश किया तो सब लोग हँसने लगे, विदूषक से लगे। परन्तु आगे की घटना बताती है कि वह आन्दोलन हमारे स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये कितना अमोघ अस्त्र है यह प्रमाणित कर दिया सिद्ध कर दिया। हम लोग स्वतन्त्र हुए—गणराज हुआ परन्तु धर्म बोध न जागने से गणतन्त्र पनप नहीं पा रहा है। राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन के सब स्तरों में अनाचार और व्यक्तिगत स्वाधीनता को दूर करके एक सुस्थ सबल भारत बनाने के लिये धर्म बोध का जयघोष आवश्यक है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देवी का शुभागमन

[दिल्ली नगरी से सुदूर दक्षिण में त्रिवेन्द्रम की ओर जाते समय श्री टी० सदाशिवम् तथा उनकी भक्तिमती धर्मपत्नी सुप्रसिद्ध गायिका श्री मती सुब्बालक्ष्मी के सादर आग्रह पर मद्रास शहर में उनके सुरम्य आवास स्थल 'कल्कि फूल बगीचे' में श्री माँ तीन दिन ठहरीं। उसी समय वहाँ से प्रकाशित बहुल-प्रचारित तामिळ साप्ताहिक 'कल्कि' में मुद्रित 'मातृ प्रशस्ति' का हिन्दी रूपान्तर—स०]

आनन्द, प्रेम, शान्ति एवं ईश्वर के प्रति भावभीनी भक्ति नम्रता को छोड़ कर और किसी भी इतर भावना या बोध की प्रतीति श्री माँ के पवित्र सान्निध्य में नहीं हुई। इस महामहिमा का वर्णन कैसे किया जाय ? कल्कि फूल बगीचे में साक्षात् जगन्माता जगद्धात्री स्वरूपा श्री आनन्दमयी के पुनीत श्री चरण कमलों की शान्तिमय सुशीतल छांव में बैठकर हजारों धर्म पिपासु भक्तिमन्त नर नारियों ने उनके मन्द मुस्कान भरे मुखारविन्द से मधुर रस निष्यन्दि श्री भगवन्नाम संकीर्तन सुनने का सौभाग्य प्राप्त किया। जनवरी की ७ तारीख प्रातः काल दिल्ली से श्री माँ यहाँ पधारीं। वेद मन्त्रों के समुद्घोष के साथ-साथ जलपूर्ण पल्लवित मंगल कलश के समर्पण द्वारा श्री माँ का भव्य स्वागत किया गया। तीन दिन समागत भक्तों के जीवनेतिहास में एक अविस्मणीय सुखद घटना के रूप में स्वर्णाक्षरों में लिखा रहेगा। हज़ारों नर नारियों के चिन्ताकुलित, व्यथा पीड़ित एवं संतप्त हृदय में श्री माँ ने अविराम अनुग्रह धारा का वर्षण किया और स्नेह, प्रीति एवं प्रेम का स्निग्ध संचार किया।

शुक्रवार रात्रि दस बजे के बाद किसी के भी अनुरोध की अपेक्षा न रखकर अपनी अहैतुकी कृपा और करुणा के कारण श्री माँ स्वयं घूमते-घूमते हमारे छापाखाने में पधारीं और सहज भाव से ही नये 'रोटरी' यन्त्र का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हो गया। श्री माँ का यह अनाविल, अयाचित आशीष हमारे लिये अनन्त वरदान है। दूसरे दिन प्रातः काल सारे कर्मचारियों ने श्री माँ के पास में जाकर नमन किया, उनके हाथों से प्रसाद प्राप्त किया और 'प्राण गोपाल ब्रह्मगोपाल' कीर्तन श्री माँ के साथ स्वर मिलाकर किया, जिसके फलस्वरूप उस समय सारा वातावरण स्वर्गीय दीपिमन्त भावना से ओत-प्रोत हो गया। यह घटना हम सबके सौभाग्य का सूचक है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री माँ की आनन्ददायिनी आगमन वार्ता जितना भी लिखूँ फिर भी शेष नहीं हो सकती। यह तो प्रत्येक व्यक्ति की निजी उपलब्धि का विषय है। भला, लेखनी की दाल कैसे गलेगी ? श्री माँ मौन रहीं। उनके श्री मुख की अमृतवाणी सुनने को नहीं मिली। परन्तु उनके दिव्य रूप और मन्द मुस्कान से छलकती आँखें प्रीति की हिलोरें विस्तार कर सबमें एक अनिर्वचनीय निर्भयता और सान्त्वना का संचार किया।

अन्तर के अन्तरतम स्थल में स्वयं प्रकाश नित्य वस्तुएँ विलीन–सीमा रहित शान्ति की पूर्णता में सदा विराजती हुई श्री माँ बहिर्दृश्यमान प्रत्येक व्यक्ति और वस्तु के ऊपर भी अपनी दयालुता और परम क़रुणा की अमिट छाप रखती हैं। इस अद्भुत घटना को हम सब नित्य उपयोग करते रहें। केवल साठ घंटे की बात नहीं है, पिछले पचहत्तर वर्षों से दिव्य मूर्तिमयी श्री माँ इस आभ्यन्तरीय प्रगाढ़ निश्चलता में और बाह्य स्नेहालुता में सराबोर होकर अन्तःर्बाहिशून्या अद्वैतस्वरूपिणी होकर विराज रही हैं। इस बात को ठीक-ठीक अनुभव में लाना कठिन मालूम होता है। हम तो अवाक् होकर देखते ही रह गये। मातृ महिमा का पार नहीं पाया। सन्तान अपनी मां को कृतज्ञता से भर दे यह प्रथा प्रचलित नहीं है। वे हमारी मां है, हम उनके बच्चे हैं—बस ! इतनी ही हमारी मनोकामना। इसलिये विगलित हृदय से उनके चरण तल में सिर झुकाने के सिवाय बच्चा और क्या कर सकता है ? श्री मां की उपयुक्त सेवा में निरत उनके आश्रमवासी गण सब ही आदर श्रद्धा और नमस्कार के योग्य हैं। उनकी शालीनता, प्रीति और सद्भाव से हम सब बहुत प्रभावित हैं।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मातृ-लीला

(१५ अक्टूबर १९७१ से १५ जनवरी १९७२ तक)

अनुवादक—श्री यादवकृष्ण अवधिया, एम० ए०, बी० टी०

दीपावली, दिनांक १८ अक्टूबर को बहुत रात बीतने पर राजपुर, देहरादून के कल्याणवन के समीपस्थ, श्री एवं श्रीमती खैतान के अहाते में निर्मित, उसी मनोहर पंडाल[१] में कालीपूजा सुसंपन्न हुई, जिसमें दुर्गा पूजा तथा लक्ष्मी पूजा संपन्न हुई थी। पूजोपरांत लगभग ३ बजे रात्रि को हवन हुआ। माताजी संपूर्ण पूजा में उपस्थित रहीं; तत्पश्चात् वे मंच से उतर कर अग्नि के समीप भक्तों की लघु-मंडली के साथ बैठ गईं, क्योंकि पूजा समाप्त होते ही अधिकांश लोग चले गये थे। उत्सव का यह अंतरंगतम भाग था; जो शेष बचे थे, उन्होंने इसमें अपूर्व आनंद का आस्वादन किया। बड़े तड़के प्रसाद वितरण किया गया।

दि० २० को अन्नकूट मनाया गया। यह मां अन्नपूर्णा का उत्सव है, जो भौतिक एवं आध्यात्मिक समृद्धि की अधिष्ठात्री देवी हैं। इस अवसर पर १०८ प्रकार के व्यंजनों का भोग लगाना पड़ता है, अतः यद्यपि भोजन पकाने का कार्य पौ फटने के पूर्व ही प्रारंभ हो चुका था, तथापि भोग[२] तैयार करने में काफी विलंब हुआ। संध्या ४ बजे के उपरांत भी कीर्तन एवं भजन चलते रहे। तत्पश्चात् कार्यक्रम की समाप्ति हुई। कुछ ही मिनटों में पंडाल एक विशाल भोजन-गृह के रूप में परिवर्तित हो गया तथा लंबी कतारों में बैठे हुए लोगों को पत्तलों एवं कुल्हड़ों में शानदार भोजन परोसा गया। पहले तो माताजी मंच से निरीक्षण करती रहीं; तत्पश्चात् वे नीचे उतरीं और उन्होंने भोजन करते हुए भक्तों की पंक्तियों के बीच-बीच में घूमकर स्वयं अपने करकमलों से प्रत्येक व्यक्ति को बड़े चमचे से भोजन परोसा।

दूसरे दिन संध्याकाल में माताजी, एक बड़ी मंडली सहित, वृन्दावन जाने के मार्ग में स्थित दिल्ली जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं। वे २२ अक्टूबर को बड़े सवेरे दिल्ली पहुँचीं। माताजी ने वहाँ केवल कुछ ही घंटे बिताये—किन्तु व्यस्त रहकर ही। वे एक निजी-चिकित्सा-

---

१. देखिये 'मातृलीला' आनंदवार्ता, अक्टूबर, १९७१।

२. देवता को अर्पित किया जानेवाला भोजन।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लय में एक रोगी के पास गईं; तत्पश्चात् वे राजमाता सुखेत की कन्या के भवन में पधारीं, जहाँ एक शाला-भवन में माताजी की उपस्थिति में भागवत-सप्ताह का शुभारंभ किया गया। वहाँ भी माताजी के दर्शनार्थ कई अमेरिकन आए। चन्द्रालोक-स्थित हमारे आश्रम में एक घण्टे से भी कम समय तक ठहरने के पश्चात् माताजी एवं एक लघु मंडली कार तथा जीप से वृन्दावन के लिए रवाना हुई। कई मीलों के अनन्तर जीप में कुछ गड़बड़ी आ गई। कार भी रुक गई, क्योंकि माताजी दोनों वाहनों को साथ-साथ रखना चाहती थीं। पास में कहीं भी कारखाना (workshop) नहीं था। टेलीफोन की खोज में घूमते-घूमते कोई व्यक्ति किसी नवनिर्मित कारखाने में प्रविष्ट हुआ। वहाँ उसे फोन नहीं मिला किन्तु उस कारखाने के मालिक, सिक्ख सज्जन ने जब यह सुना कि श्री आनंदमयी माँ समीपस्थ सड़क पर ही रुकी हुई हैं, तब वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने एक वर्ष पूर्व माँ के विषय में पढ़ा था और तभी से वे माँ के दर्शन के लिए अत्यन्त उत्सुक थे। वे तत्काल ही बाहर आये एवं अपनी चिर-अभिलषित मनोकामना की इस अप्रत्याशित पूर्ति के अनन्तर, उन्होंने जीप को सुधारा। तत्पश्चात् उन्होंने माताजी से निवेदन किया कि वे अहाते में अपना चरणकमल रखकर उसके कारखाने को आशीर्वाद दें। माताजी ने प्रार्थना स्वीकार की, एवं सभी स्थलों का निरीक्षण किया। फिर भी कई मील पार करने के पश्चात् होडाल ग्राम के समीप जीप पुनः बिगड़ गई। वृन्दावन सन्देश भेजा गया कि वहाँ से कार लाया जावे तथा असहाय मंडली को छुड़ाया जावे। माताजी मार्ग पर इधर से उधर टहलने लगीं। पास में केवल कुछ ही छोटे-छोटे मकान थे। गाँव की कुछ स्त्रियों ने माताजी को बुलाया तथा उन्हें खाट पर बिठाया। माताजी गाने लगीं "श्रीराम, जय राम" तथा "नारायण" आदि एवं सभी लोग उसमें सम्मिलित हुए। कुछ कालोपरांत माताजी ने इंगितों से यह प्रकट किया कि बड़ी देर हो गई है तथा सभी लोगों को भूख लग रही है। उन्होंने ग्रामवासियों से उनकी खाद्य-सामग्री, चूल्हा, कोयला, तथा बर्तन लाने के लिए कहा। कुछ अत्यंत दरिद्र प्रतीत होते थे। एक मकान में केवल आटा था; दूसरों ने आलू, घी तथा मसाले प्रदान किये। माताजी के सहयोगियों ने खुली हवा में भोजन बनाना प्रारंभ कर दिया तथा माताजी ने भी उसमें हाथ बँटाया। बिना किसी पूर्व योजना के ही वनभोज का आनन्द आ गया। जीप में जो भी फल आदि रखे हुए थे; उन सबको माताजी ने मँगवा लिया, एवं उन्होंने अपनी मंडली के प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अपने करकमलों से पत्तों पर भोजन परोसा तथा वहाँ जो भी पुरुष, स्त्रियाँ तथा बच्चे उस स्थल पर धीरे-धीरे एकत्रित हो रहे थे; उनमें से प्रत्येक ग्रामीण को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में भोजन दिया। इस बीच में वृन्दावन से कार आ गई एवं उनमें बैठे हुए लोगों को भी प्रसाद दिया गया। माताजी ने पुनः गाया तथा संपूर्ण गाँव ने उसे सामूहिक-गान के रूप में दुहराया। यह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहने की आवश्यकता नहीं है कि अपनी अत्यल्प खाद्य-सामग्री प्रसन्नता पूर्वक प्रदान करनेवाले इन दरिद्रों की उदारता का प्रचुर पुरस्कार उन्हें न केवल माताजी के प्रिय दर्शन के रूप में मिला, अपितु नगद रुपयों के रूप में भी मिला, जिन्हें लेने में उन्होंने आनाकानी की। इस प्रकार सामान्यतया जो दुर्भाग्यपूर्ण विषम परिस्थिति उत्पन्न हुई होती, वह माताजी के द्वारा अत्यन्त मनोरम विष्कंभक के रूप में परिवर्तित कर दी गई, जो वहाँ उपस्थित रहनेवाले सभी भाग्यशाली जनों के लिए अविस्मरणीय रहेगा। सभी ग्रामवासी भाग्यशाली थे, जिन्हें माताजी ने 'रामनाम' दिया। माताजी की निश्चित योजनाएँ नहीं होतीं। जो कुछ होता है, उसका वे समभाव से स्वागत करती हैं तथा वे उसे अपनी पहुँच के भीतर आनेवाले सभी लोगों पर अपनी कृपा की वर्षा करने तथा उन्हें आनन्दित करने का अवसर मानती हैं, क्योंकि मनुष्य, पशु, पौधे, पत्थर तथा अदृश्य जीवधारी सभी उनके अपने हैं।

दि० २६ अक्टूबर से २ नवम्बर तक वृन्दावन में हमारा २२वाँ 'संयम महाव्रत' सम्पन्न हुआ। जैसा कि ऐसे अवसरों पर सदा होता आया है, माताजी कई घंटों तक चलनेवाले सत्संगों में प्रायः आद्योपान्त उपस्थित रहती थीं, तथा बीच-बीच में वे आगंतुकों की ओर ध्यान देने तथा सभी व्यवस्थाओं का निरीक्षण करने के लिए समय निकाल लेती थीं। वे प्रतिदिन कम से कम एक बार तथा कभी-कभी दो बार गाती थीं। कार्यक्रम की एक विशिष्टता यह थी कि कई विदेशियों ने व्रती न होते हुए भी नियमित रूप से सामूहिक ध्यान में बड़ी संख्या में भाग लिया, यद्यपि उन्हें बँधी रस्सी के द्वारा निर्धारित स्थान के बाहर बैठना पड़ता था। उनमें श्री नीमकरौली बाबा के शिष्य, आत्म साक्षात्कार मंडली (The Self realization Society) के सदस्य, श्री गोयनका तथा अन्य गुरुओं के शिष्य सम्मिलित थे। संयमव्रत के पश्चात् कुछ दिनों तक माताजी वृन्दावन में ठहरीं। उन दिनों माताजी के दर्शनार्थ प्रतिदिन ३०-४० विदेशी आते थे, तथा ठीक-ठीक समय निर्धारण न हो सकने के कारण घण्टों शांतिपूर्वक प्रतीक्षा करते थे। यद्यपि माताजी कभी भी भारत के बाहर नहीं गई हैं तथा वे कोई भी योरोपीय भाषा नहीं बोलती हैं, तथापि अबतक उन्होंने पाश्चात्य-जगत् के सत्यान्वेषियों पर गहरी छाप डाली है। उदाहरणार्थ, जब नवम्बर में माताजी देहरादून में तीन दिनों तक ठहरी थीं, तब ७८ वर्षीया एक वृद्ध महिला, जो परमहंस योगानन्दजी की शिष्या हैं; केवल माताजी के दर्शनार्थ पेरिस से पधारीं। माताजी से साक्षात्कार होने पर उन्होंने कहा, "मैं अपने जीवन-भर इसी आनन्दपूर्ण क्षण का स्वप्न देखती रही। अब मेरा स्वप्न साकार हुआ।"

दि० ६ नवम्बर की संध्या को माताजी ने मोटर से वृंदावन से आगरा के लिए प्रस्थान किया, जहाँ वे कुछ भक्तों के निवास स्थान पर कुछ घण्टे ठहरीं। माताजी की उप-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थिति में एक शिशु का अन्न-प्राशन संस्कार संपन्न हुआ। बहुत रात बीतने पर वे जयपुर जाने वाली ट्रेन पर सवार हुईं तथा दि० ७ नवम्बर को बड़े सबेरे वहाँ पहुँच गयीं। डॉ० जीवनलाल पुरोहित एवं उनके परिवार के सदस्यों ने एक भक्त के नवनिर्मित भवन में माता जी के ठहरने की व्यवस्था की थी। माताजी मुख्यतया उन मूर्तिकारों को निर्देश देने के लिए जयपुर पधारी थीं, जो कनखल स्थित समाधि-मंदिर के लिए दीदी माँ की मूर्ति तराश रहे थे। छः मूर्तिकारों में से प्रत्येक को अलग-अलग मूर्ति का निर्माण करने के लिए नियुक्त किया गया था। इन छहों में से माताजी ने दो को चुना, तथा इन दोनों में से जो मूर्ति श्रेष्ठ होगी, उसी की प्रतिष्ठा मंदिर में की जावेगी। मूर्ति सजीववत् हो—इस ओर माताजी का बड़ा ध्यान है। माताजी से मिलने हेतु राजस्थान के कई राजे तथा रानियाँ जयपुर आई थीं। कुछ भक्त गण, जो आसानी से जयपुर के बाहर नहीं जा सकते थे बड़ी उत्सुकता से माताजी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। एक दिन माताजी, गोविन्दजी के प्रसिद्ध मन्दिर में पधारीं।

माता जी दिनांक ८ की रात्रि को रवाना हुईं एवं वे दि० ९ की सन्ध्या को किसनपुर पधारीं। वे सीधे आश्रम के हाल में पधारीं तथा उन्होंने इंगितों से दर्शाया कि वे अत्यन्त थकी हुई हैं, उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं है एवं वे विश्राम करना चाहती हैं। कुछ समय पश्चात् माता जी पंचवटी के समीप स्थित अपनी कुटिया की ओर रवाना हुईं, जहाँ दिनांक १७ नवम्बर तक निवास करने की आशा की जाती थी। उनके दर्शनार्थ समय निर्धारित नहीं किये गये थे तथा एक दिन वे अकेले ही सम्पूर्ण दिवस विश्राम करती रहीं। दूसरी संध्या को वे आश्रम पधारीं। दि० १२ को प्रातःकाल उन्होंने अचानक ही घोषित किया कि वे उसी रात्रि को वाराणसी के लिए प्रस्थान करेंगी।

माता जी दिनांक १३ की सन्ध्या को वाराणसी पधारीं। वहाँ भी उन्होंने अधिक समय तक विश्राम नहीं किया, क्योंकि उन्हें कई आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर ध्यान देना था। माता जी को रह-रहकर कुछ समय के लिये ज्वर हो आता था और वे थोड़ा भी हृष्ट-पुष्ट नहीं जान पड़ती थीं; तथापि माता जी एक उत्तम-स्वास्थ्य-संपन्न, युवा व्यक्ति की तरह विभिन्न स्थानों की यात्रायें करती हैं तथा सहस्रों कार्यों का निरीक्षण करती हैं।

दि० १७ नवम्बर को प्रातःकाल माता जी इटारसी जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं। वहाँ से स्वयं सर दातारसिंह जी, माता जी तथा सम्पूर्ण मंडली को भोपाल के समीप रोड पर स्थित बैरागढ़ को ले गये।

सर तथा श्रीमती दातारसिंह ने कई वर्ष पूर्व, अपनी अधिकृत भूमि पर, पार्श्व में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थित शामला-पहाड़ियों सहित, भोपाल के विशाल ताल के समीप, मनोरम दृश्यावलियों से सुसज्जित स्थान में माता जी के लिये एक छोटा सा आश्रम निर्मित किया था।* इस बार वहाँ दिनांक २३ से ३० नवम्बर तक एक पंडाल में 'भागवत-सप्ताह' का आयोजन किया गया था। शुकताल के श्री विष्णु आश्रम जी ने बड़ी कृपा करके भागवत को हिन्दी में समझाने का भार ग्रहण किया था, यद्यपि वे अत्यन्त दृढ़व्रती दंडी स्वामी हैं तथा वे न तो ट्रेन से यात्रा करते हैं और न बस से। ब्रह्मचारी भास्करानन्द जी उन्हें तथा उनकी लघु मंडली को दो कारों में चार दिनों की यात्रा के पश्चात् ले आये। नारंगी तथा रजत झंडियों से अत्यन्त सुसज्जित एक कुटीर उनके उपयोग के लिए सुरक्षित रखा गया था। जब उन्होंने अपनी सुकोमल, मधुर वाणी से भागवत के गूढ़ तत्त्वों का निरूपण किया, तब सब कुछ हस्तामलकवत् सुस्पष्ट सरल एवं सुग्राह्य हो गया। माता जी प्रतिदिन दो बार सम्पूर्ण प्रवचनकाल में उपस्थित रहती थीं। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि श्रोतागण प्रायः पूर्णतया अन्य दिव्यलोक में पहुँचने का आनन्द प्राप्त करते थे। विशेष रूप से निर्मित, एक मनोहर, लघु कुटीर में एक पंडित द्वारा संस्कृत पाठ सम्पन्न किया जाता था। 'संकल्प' तथा प्रारम्भिक पूजा का शुभारंभ ब्रह्मचारी निर्वाणानंद जी द्वारा किया गया, किन्तु सम्पूर्ण पूजा बड़े ही भव्य एवं मनोरम ढंग से हमारे आतिथेय (सर दातारसिंहजी) की ज्येष्ठ पौत्री के द्वारा सुसम्पन्न की गयी, जो 'माँ आनन्दमयी कन्यापीठ' की एक वरिष्ठ छात्रा हैं, तथा जिनका पालन-पोषण बाल्यकाल से ही माता जी के स्नेहपूर्ण संरक्षण में हुआ है।

यद्यपि माता जी अधिकतर ज्वराक्रांत रहती थीं, तथापि वे प्रायः प्रतिदिन प्रातःकाल भ्रमणार्थ खुले, विस्तृत ग्रामीण क्षेत्र में जाया करती थीं, जो हरे-भरे उन खेतों से परिपूर्ण था, जिनमें यत्र-तत्र चमकीले, पीले तथा नारंगी गेंदे के पुष्पों की प्रचुरता परिलक्षित होती थी, जिनको सप्ताह के अन्तर्गत दैनिक सजावट के लिये उगाया गया था। सर तथा श्रीमती दातारसिंह जी एवं उनके परिवार के सदस्यों ने माता जी तथा सभी अतिथियों की सुख-सुविधाओं के लिये बड़ा कष्ट उठाया। समीपस्थ रियासतों के कई राजे तथा रानियाँ कार्यक्रम में सपरिवार उपस्थित हुई तथा भोपाल के कई गणमान्य महानुभाव नियमित रूप से आते रहे। एक बार मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री तथा उनकी पत्नी भी पधारीं। भोपाल के आरक्षी अध्यक्ष (S. P.) की पत्नी श्रीमती आगा ने अहाते में निर्मित एक कुटीर में सप्ताह भर

---

* देखिये आनन्दवार्ता, अक्टूबर १९६९, पृ० १९४ तथा आनन्दवार्ता, जुलाई १९७० पृ० १४३।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निवास किया तथा उन्होंने बड़ी सहायता की। सेना के कुछ उच्च पदाधिकारी भी कई अवसरों पर उपस्थित थे।

दि० २ दिसम्बर को मध्याह्नोपरान्त श्री तथा श्रीमती एन. एन. शाह जी के निवास स्थान पर कुछ समय तक रुककर माता जी ने कार द्वारा इटारसी के लिये प्रस्थान किया, तथा वे वाराणसी जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं। दि० ३ को भक्तगण माता जी के स्वागतार्थ स्टेशन पर प्रतीक्षा करते रहे, किन्तु माता जी अचानक ही इलाहाबाद में उतर पड़ीं, जहाँ से वे कुछ दिनों तक विश्राम के लिये मोटर द्वारा सीधे विन्ध्याचल की ओर रवाना हुईं। वे दिनांक ६ को वाराणसी पधारीं।

दि. १० दिसंबर को माता जी ने ट्रेन द्वारा कानपुर के लिए यात्रा की, और वे वहाँ उसी रात्रि को पहुँच गईं। इस पत्रिका के पृष्ठों* में हमने 'भागवत पारायण' (संपूर्ण श्रीमद्भागवत का १५ दिनों तक संस्कृत पाठ तथा हिन्दी में उसकी व्याख्या) का विस्तृत विवरण दिया था, जिसका संचालन नवम्बर, १९७० में सर तथा श्रीमती सिंघानिया के आमंत्रण पर कानपुर के सीमावर्ती, राधाकृष्ण के सुंदर मंदिर के समीप, माता जी की उपस्थिति में, श्रीस्वामी अखण्डानंद सरस्वती जी द्वारा किया गया था। उसी स्थान पर दिनांक १३ दिसंबर से २८ दिसंबर १९६१ तक वैसा ही धार्मिक उत्सव सम्पन्न हुआ, जिसकी वैसी ही भव्य एवं श्रमसाध्य सुव्यवस्था सिंघानिया परिवार तथा उनके कर्मचारियों द्वारा की गई थी। इस अवसर पर भी माता जी पंडाल में प्रतिदिन ५ घंटे उपस्थित रहती थीं। श्रीविष्णु आश्रमजी को भी आने के लिए राजी कर लिया गया था तथा वे प्रतिदिन मंच पर स्वामी अखण्डानंद जी के निकट बैठते थे। युद्ध की विषादपूर्ण गहन छाया में तथा ब्लैक-आउट में उत्सव का प्रारंभ हुआ तथा प्रारंभ के कुछ दिनों तक विशाल पंडाल में उपस्थिति अपेक्षाकृत कम रही। सौभाग्य से युद्ध तथा तज्जनित सामान्य चिंता और उत्तेजना का अनुकूल अंत चार-पाँच दिनों में ही हो गया एवं अविलम्ब ही कानपुर की जनता बड़ी संख्या में उपस्थित होने लगी। संपूर्ण कार्यक्रम में असाधारण सफलता प्राप्त हुई तथा दि. २१ दिसंबर को जब श्रीकृष्णजी के जन्म का वर्णन किया गया एवं उनका जन्मोत्सव विशेष रूप से मनाया गया, तब यह अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। श्रीकृष्णजी का एक सु-अलंकृत विग्रह मंच पर रखा गया। माताजी एक असाधारण भाव में थीं (इस उत्सव काल में यह अवस्था दूसरी बार आई थी) एवं विशाल जनसमूह की परवाह न करती हुई वे श्रीकृष्णजी के सम्मुख दंडवत् (साष्टांग) प्रणाम करके

---

* देखिये आनंद वार्ता जनवरी, १९७१, पृ० ४६-४७।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लोट-पोट करने लगीं। कई वर्षों तक ऐसा नहीं हुआ था, तथा हजारों मनुष्यों के सामने तो ऐसा कदापि हुआ ही नहीं था। माता जी ने स्वामी अखण्डानंद जी एवं स्वामी विष्णु आश्रम जी के मस्तक पर पुष्पहार तथा तुलसी पत्र रखे। माताजी ने अत्यंत भावानुप्राणित होकर गीत भी गाये। दिनांक १८ को माता जी प्रारंभ से ही पंडाल में एक विशिष्ट भाव में थीं। वे निमीलित नेत्रों से डेढ़ घंटे तक लेटी रहीं; उनके श्वास की गति अत्यन्त मंद पड़ गई थी तथा संपूर्ण शरीर ठंडा हो गया था। इतना होने पर भी माताजी भागवत की व्याख्या सुन रही थीं तथा वक्ता की ओर देख भी रही थीं। तत्पश्चात् माताजी ने पास आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को "गोपाल, गोपाल" कहकर प्रसाद वितरित किया। माता जी अभी भी मौन हैं।

कानपुर में माताजी के दर्शनार्थ कई गणमान्य अतिथि, शासकीय उच्चपदाधिकारी तथा नगर के कई उद्योगपति आये। भारतवर्ष के उपराष्ट्रपति श्री जी. यस. पाठक एवं उनका परिवार, डॉ० गोपाल रेड्डी, युक्त प्रांत के राज्यपाल, भूतपूर्व मंत्रीगण—श्री जी. एल. नन्दा, डा. त्रिगुणसेन तथा अन्य कई लब्धप्रतिष्ठ महानुभाव पधारे। श्री जमनालाल बजाज की सुपुत्री तथा गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायणजी की पत्नी श्रीमती मदालबेन शा ने पूरे एक पखवाड़े भर मंच के कार्यक्रमों का संचालन किया तथा वे अत्यंत प्रभावित हुईं।

ज्योंही २८ दिसंबर को भागवत की समाप्ति हुई, त्योंही अखण्ड-नामयज्ञ (वृत्ताकार वेदी की परिक्रमा करते हुए अखण्ड-कीर्त्तन) का प्रारंभ किया गया तथा वह दिसम्बर २९ के सूर्यास्त तक चलता रहा। गतवर्ष की भांति हमारी दिल्ली की कीर्तन-मंडली इसी अवसर के लिए आई थी, परंतु इस बार कीर्तन पंडाल में संपन्न हुआ, क्योंकि पिछले अवसर पर हॉल इस कार्य के लिए अत्यंत छोटा सिद्ध हुआ था। पखवाड़े के अन्त में सर पदमपति सिंघानियाजी ने एक छोटा-सा भाषण दिया, जिसमें उन्होंने श्रीमाताजी तथा श्रीअखण्डानंदजी को धन्यवाद दिया तथा उनसे प्रार्थना की कि वे प्रतिवर्ष उन्हें इसी प्रकार से सत्संग का आयोजन करने का अवसर प्रदान करें एवं उस सत्संग को अपनी उपस्थिति से धन्य बनावें। उन्होंने कहा कि विशाल जनसमुदाय के एकत्रित होने के समय वे इतने अधिक भावविभोर हो गये थे कि उन्होंने पंडाल के नर-नारियों को वास्तव में जन-जनार्दन (मनुष्यों के रूप में भगवान्) समझ लिया।

दि० ३० दिसम्बर को माताजी ने कानपुर से वाराणसी के लिए प्रस्थान किया। दि. ४ जनवरी को वे पुनः दिल्ली जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं तथा वहाँ से उन्होंने ४६ व्यक्तियों की मंडली सहित मद्रास की यात्रा की, जहाँ वे दि. ७ को पधारीं। दि. ९ को वे अपनी संपूर्ण मंडली सहित त्रिवेंद्रम की ओर अग्रसर हुईं, जहाँ उन सबों ने दि. १५ तक निवास किया। दि. १७ को माताजी पूना पधारीं, जहाँ दि. २१ को सरस्वती पूजा संपन्न की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गई तथा श्री गोपालजी के एक नये मंदिर की प्रतिष्ठा की गई। दक्षिण-भारत में पूरे समय तक माताजी एक उत्कृष्ट भाव में रहीं तथा वे पहले कई दिनों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ रहीं। हमें आशा है कि हम आनंद-वार्ता के आगामी-अंक में उनकी दक्षिण-प्रदेश की यात्रा तथा पूना-यात्रा का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करेंगे, जहां जनवरी २२ से २९ तक भागवत-सप्ताह संपन्न हुआ। दि. ३१ को माताजी बम्बई के लिए रवाना हुईं। आशा की जाती है कि वे दि. ५ फरवरी को कुछ समय के लिए जयपुर रवाना होंगी तत्पश्चात् वे दिल्ली पधारेंगी, जहां दि. १३ को शिवरात्रि-उत्सव संपन्न होगा। इसके तुरंत बाद ही माताजी किसनपुर, देहरादून पधारेंगी, जहाँ अन्य भागवत-सप्ताह संपन्न होगा।

नववर्ष का आशीष

नव वर्ष! नये जीवन की हर घड़ी में नये उत्साह से नयी उमंग से उस परम सत्य का वरण होना मानवमात्र का ध्येय है।

श्री श्री मां

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

...ंनरता मां।
...ो रामचरित्र मानस का पाठ।

(४) सन्ध्यारती।
(५) माधुर्यमयी माँ।
(६-७) सत्संग में समवेत दर्शनार्थिगण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

LIST OF PUBLICATIONS

HINDI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3.00
Sad Vāni ,,	...	1.00
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi, Vol. I to XVII		47.00
Ma Anandamayee—Dr. Pannalal	...	3.00
Akhanda Mahāyajña—Gurupriya Devi	...	2.50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6.00
Sankirtan—Stav—Arati	...	0.50
Amar Vāni	...	6.00

BENGALI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3.00
Sad Vāni—"Bhaiji"	...	1.50
Mātri Vāni	...	0.75
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi, Vol. I—XV	...	41.50
Ma Anandamayee Upadeṣhamrita Sangraha	...	1.50
Akhanda Mahāyajna	...	2.50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6.00
Suno Bali Maer Katha—Sailesh Brahmachari	...	1.50
Anandamayee Ma—Ganga Samiran	...	2.50
Amar Vani	...	10.00
Mātri Lila Sankirtan	...	0.30
SHREE SHREE RAM GITA—Swami Narayanada Tirtha	...	2-00

GUJRATI

Mātri Darshan—"Bhaiji"		1.50
Ma Anandamayi—Na—Sannidhyama—(Containing Bhaiji's "Sad Vāni" & "Sri Ma Anandamayi Lila Katha") by Swami Bhagavatananda Giri—Vol. I	...	4.00
—Vol. II	...	2.00

ENGLISH

Mother As Revealed to Me—"Bhaiji"	...	6-00
Mātri Vāni (Sayings) 1.50	Special edition	2.50
Words of Sri Anandamayi Ma (New Edition) 5.50	do ...	7.50
Mother as Seen by Her Devotees 5.50	Special edition	6.50
From the Life of Sri Anandamayi Ma by Bithika Mukerji	...	10.00

PHOTOS

Photos—various sizes Ranging from 0.50 to 15.00

Registered with the Registrar of Newspaper for India under No. N. 4727/57

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

श्री श्री आनन्दमयी संघ

ॐ मा

मातृ शरणं

वर्ष १९ जुलाई १९७२ अंक ३

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नया प्रकाशित

श्री श्री माँ आनन्दमयी

लेखिका—गुरुप्रिया देवी

अष्टादश भाग

श्री श्री माँ के दिव्य जीवन की अनेक स्मरणीय यात्राएँ और अलौकिक घटनाओं के विवरण इस खण्ड में हैं। इसके अलावा पण्डित जवाहरलाल नेहरू का मातृ-दर्शन के लिए आना, प्रमुख उद्योगपतियों और राजनीतिकों द्वारा माँ का दर्शन करना, नैमिषारण्य में ऐतिहासिक संयम-सप्ताह एवं १०८ भागवतों के पाठों का विवरण, हनुमान-टीला पर पुराणों की रक्षा की व्यवस्था, आगड़पाड़ा आश्रम की स्थापना, लखनऊ में श्यामा-पूजा, श्री श्री माँ के जन्मोत्सवों का विशद विवरण, सूक्ष्म दर्शन आदि इस खण्ड की प्रमुख घटनाएँ हैं।

- सुन्दर गेट अप
- नयनाभिराम चित्र
- पृष्ठ संख्या—३५५
- मूल्य—पाँच रुपया

प्राप्तिस्थान :

श्री श्री आनन्दमयी संघ

भदैनी, वाराणसी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

[श्री श्री आनन्दमयी संघ का त्रैमासिक मुखपत्र]

•

परामर्श-परिषद्

महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज, एम. ए., डी. लिट्, पद्मविभूषण
अध्यक्ष

डाक्टर श्री गौरीनाथ शास्त्री, एम. ए., पी. आर. एस, डी. लिट्

ब्रह्मचारी शिवानन्द

ब्रह्मचारिणी आत्मानन्द

•

सम्पादक—**ब्रह्मचारी निर्मलानन्द**, एम. ए., शास्त्री

•

: वार्षिक चन्दे का विवरण :

भारत में—६) रुपये (डाक व्यय सहित)
विदेश में—(सी० मेल) १०.५० अथवा २५ शीलिंग अथवा २ डालर।
(एयर मेल)—२५ रुपये अथवा १ पौण्ड १० शीलिंग (यूरोप)
,, —३५ रुपये अथवा ५½ डालर (उत्तर-दक्षिण अमेरिका)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नियमावली

- 'आनन्द वार्ता' त्रैमासिक पत्रिका। बँगला, हिन्दी और अंग्रेजी में तीन अलग-अलग संस्करण प्रकाशित होता है।
- 'आनन्द वार्ता' का वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होता है। वर्ष के किसी भी महीने में चन्दा भेजकर ग्राहक बना जा सकता है। प्रत्येक ग्राहक को जनवरी अंक से पत्रिका लेना आवश्यक है। दिसम्बर के अन्त तक चन्दा या सूचना न मिलने पर अगला अंक भी० वी० पी० द्वारा भेजा जाता है।
- पत्रिका प्रकाशित होते ही प्रत्येक ग्राहक के पास डाक द्वारा भेजो जाती है। डाक की गड़बड़ी के कारण कभी-कभी पत्रिका ग्राहक को नहीं मिल पाती। जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्तूबर महीने के तीसरे सप्ताह के भीतर पत्रिका प्राप्त न होने पर स्थानीय डाकघर से पूछताछ कर फिर कार्यालय को सूचना देनी चाहिये।
- श्री श्री माँ की उपदेश वाणी तथा उनके दिव्य जीवन से सम्बन्धित रचनावली विशेष रूप से 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित की जाती है! इसके अतिरिक्त दार्शनिक मतवाद, धर्म, नीति, शिक्षा और संस्कृत मूलक तथ्यबहुल शोधपूर्ण रचनायें, सम्प्रदाय निर्विशेष साधक महापुरुषों की जीवनी, धर्म-सम्बन्धी वास्तव घटना-आख्यायिका आदि भी 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित किये जाते हैं।
- 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशनार्थ रचनाएँ फुलस्केप कागज़ के एक तरफ सुवाच्य अक्षरों में लिखकर और उसकी नकल रखकर भेजनी चाहिए। लेखों का परिवर्द्धन, परिमार्जन तथा परिवर्तन करने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- समीक्षा और समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।
- स्थायी पते में कोई परिवर्तन होने वर तुरन्त सूचना दीजिये।
- चन्दा और पत्रादि लिखते समय अपना नाम, पूरा पता और ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। जो सज्जन चेक द्वारा चन्दा देना चाहें, वे बैंक क्लेक्शन चार्ज २) रुपये अधिक भेजने की कृपा करें।
- **रुपया तथा चेक इत्यादि भेजने— का पता** — **श्री श्री आनन्दमयी संघ (पब्लिकेशन अकाउन्ट) भदैनी, वाराणसी—१**
- **रचना और समालोचना के लिये— पुस्तक इत्यादि भेजने का पता—** सम्पादक, 'आनन्द वार्ता' श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम भदैनी, वाराणसी—१

टेलीग्राम : माताजी ● फोन : ६२७९१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय-सूची

१. मातृ-वाणी	....	....	१५९
२. मातृ सत्संग—स्वामी भागवतानन्द गिरि	....	....	१६१
३. शाहबाग़-लीला—प्रत्यक्षदर्शी	....	....	१६६
४. अन्नपूर्ण सदापूर्ण—रमाकान्त	....	....	१७१
५. श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग—श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त	....	....	१७५
६. आध्यात्मिक काशी—महामहोपाध्याय डाक्टर गोपीनाथ कविराज		....	१८०
७. मानव धर्म—डॉ० शान्तिप्रकाश आत्रेय—	....	....	१८३
८. हमें क्या चाहिये—डॉ० श्रीमती सरोज पालिवाल	....	....	१९१
९. महात्माओं की झोली से	....	....	१९५
१०. ॥एकबार॥ (अनुकम्पा धारा)	....	....	१९८
११. मानव जीवन का आदर्श—महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज		....	२००
१२. श्री श्री माँ आनन्दमयी—डॉ० महादेव प्रसाद	....	....	२०३
१३. श्री श्री माँ का ७७ वाँ जन्मोत्सव—कुमारी गुणिता	....	....	२०८
१४. स्वागत गान	....	....	२१७
१५. वैराग्य	....	....	२१९
१६. मातृ-लीला	....	....	२२१

श्री श्री आनन्दमयी संघ, वाराणसी की तरफ से श्री स्वामी चिन्मयानन्द द्वारा श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम के लिए प्रकाशित और महावीर प्रेस, भेलूपुर से मुद्रित ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

"अमर आत्मा—अमर पन्थी स्वयम्—अपने में आप।"

वर्ष—१९ जुलाई १९७२ [अंक—३

मातृवाणी

आनन्द की इच्छा जीव का स्वाभाविक धर्म है। उसके भीतर है इसीलिये तो उसकी इच्छा होती है अगर उसके भीतर आनन्द नहीं होता तो वह चाहता नहीं। आनन्द चाहे विना वह रह नहीं सकता। ध्यान से देखने पर आनन्द और शान्ति की इच्छा सब जीवों में देख सकोगे। कीड़ा-मकोड़ा जैसे छोटे प्राणी भी ताप की तरफ जाना नहीं चाहता। वे लोग चाहते हैं शान्ति सुरक्षा और आराम। धूप से तपे हुए जीव चाहते क्या हैं ? छाया और ठण्ढा पानी।

मनुष्य भी इसी प्रकार त्रिताप से तप्त होकर, शान्तिका स्थान आनन्द की खान श्री भगवान् को खोजता है। त्रिताप से सुरक्षा पाने के लिये दूसरे तापकी जरूरत होती है। ताप से ही ताप को जीता जाता है। इसीका नाम छूटे तपस्या कहती है।

संसार में ताप भोग करने में जैसा कष्ट होता है शुरूशुरू में भगवान् के नाम लेने में उसी तरह कष्ट मालूम पड़ता है। परन्तु कष्ट मालूम होने पर भी इसी कष्ट से त्रिताप का कष्ट नष्ट होता है अतः चाहिये कोशिश, चाहिये अभ्यास, चाहिये कर्म्म।

पशु पक्षियों में इस प्रकार से कष्ट मुक्त होकर परम आनन्दरूप भगवान् को पाने के लिये कोई गरज नहीं है। यह सिर्फ मनुष्यों में ही है।

जीवको अज्ञान रूपी परदे से यद्यपि ढक रक्खा है फिर भी उसमें ज्ञान का दरवाजा भी बना रक्खा है। उस दरवाजे से ही वह मुक्त हो सकता है। यह भी स्मरणीय है कि परमवस्तु को पाने के लिये, भगवान् को पाने के लिये, ज्ञान

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और अज्ञान के ऊपर जाना होगा। जबतक ज्ञान-अज्ञान है यानी भेद बुद्धि है तबतक ब्रह्म मिल नहीं सकता। अपने स्व-भाव में स्थित हो जाता है।

* * *

भगवान् का नाम सदा करते रहना। नाम से ही भुक्ति मुक्ति शान्ति का उदय होगा। दृढ़ विश्वास के साथ श्रद्धा पूर्वक भक्ति से मान-अभिमान छोड़कर नाम लेते रहना। देखोगे तुम्हारा सब काम स्वयं ही होता जा रहा है। इस शरीर को साधना के खोज में ऐसा हुवा था इसी लिये मजबूरी के साथ यह कहना है। भगवान् की परीक्षा के लिये कोई उपाय बाकी नहीं रखना। इसमें देने लेने का सवाल नहीं, उनमें सर्वस्व समर्पण। तुम्हारा भार, विश्वका भार वह विश्वम्भर वहन कर रहे हैं यह याद करते हुए।

* * *

नाम करने में मन नहीं लगता है। इधर उधर दौड़ता है इसलिये दुःख करने से कोई लाभ नहीं। इससे अच्छा तो यह है "मन मेरे वश में नहीं है तो मैं भी मन के वश में नहीं हूँ। भगवान् का नाम लेता ही रहूँगा।" ऐसा विचार करते रहना। तुम देखते हो लड़के पतंग उड़ाते हैं। पतंग कितनी ऊँचाई पर चंचलता के साथ उड़ता रहता है परन्तु उसका धागा परैता में बंधा रहता है। पतंग है 'मन' और 'विषय' हुआ हवा। उसको भगवत् नाम रूपी धागा से बाँध कर रखना किसी एक दिन तो वह वश में आवेगा ही।

* * *

ऐसी भयंकर विपत्ति, चारों ओर निराशा छायी हुई है मनकी गति अनेक चिन्ता आतंक से भरा रहना स्वाभाविक है। क्या उपाय किया जाय?

निरुपाय का आश्रय तो भगवान् ही हैं। हताश नहीं होना चाहिये। जिस मिट्टी में गिर कर चोट लगती है, उसी मिट्टी को पकड़ कर उठने की कोशिश की जाती है। ऐसा ही भगवान् का विधान हैं। जिनका यन्त्र है उन्हीं के हाथ में सब है। वही ही हैं। माँकी गोदी में जिस तरह रखती है उसी तरह रहना। शरीर और मन को ठीक रखना। चिन्तारूपी चिता की आगमें विश्व जैसे अपने को समर्पण न करके "सब उन्हीं की इच्छा से हो रहा है" इस भाव को जमाये रखना। उनकी चिन्ता ही मार्ग है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ ॐ माँ ॥

मातृ-सत्संग (६०)

श्री स्वामी भागवतानन्द गिरि

स्थान :—त्रिवेणी तट, अर्धकुम्भ मेला, प्रयाग

ता० २ फरवरी १९४८—माघकृष्णा अष्टमी-सोमवार

प्र०—६ क्लास तक पढ़े हुए गुरु करने के बाद यदि ग्रेज्युएट गुरु की प्राप्ति हो जाये तो—क्या उसको गुरु कर लेना चाहिए ?

माँ—"दूसरा अच्छा गुरु मिले तो कर लेना चाहिये—जब यह बात आ गयी तो समझना चाहिये कि तुम्हारा सच्चा गुरुकरण हुआ ही नहीं । एक बार कुमारी कन्या की शादी होने के बाद—फिर दूसरे पति की खोज करने की बात आती ही नहीं है ।

प्र०—गुरु को बदल सकते हैं कि नहीं ?

माँ—कन्या के पति को क्या बदली हो सकती है ? यह शरीर तो अवश्य कहेगा—कि यह शादी ठीक हुई ही नहीं था । यदि पति-पत्नी का योग्य मिलन हुआ होता तो दूसरी शादी की बात ही नहीं उठती । जो होनेवाला होगा वो अपने आप होगा । जैसा बीज का वपन करोगे वैसा ही फल मिलेगा । गुरु भी बहुत किसम के होते हैं । जैसे कि दीक्षा गुरु, शिक्षा गुरु ?

प्र०—सुना है कि भगवान् रामचन्द्र तीन गुरु किया था ।

माँ—श्री दत्तात्रेय महाराज को कितने गुरु थे—तुमको क्या पता है ?

प्र०—हाँ—२४ गुरु श्री भगवान् दत्तात्रय ने किये थे ।

माँ—यह शरीर एक बात करने जा रही थी लेकिन दो बात उठ गई । एक बात के बीच में अनन्त बातें रहती है । तुम्हारे जो गुरु हैं वे सारे जगत के गुरु हैं । गुरु को कैसे बदला जा सकता है ? जगत् गुरु तो एक ही होता है । फिर भी यह बात भी पक्की सच्ची है कि गुरु अनंत भी होते हैं । एक गुरु भी होता है । जग का जो गुरु है वह मेरा भी गुरु है—और जो मेरा गुरु है वह जगत् का भी गुरु है ।

प्र०—आजकल जो 'कुलगुरु' की प्रथा है वह क्या ठीक है ? यह गुरु लोग तो वंश परंपरागत गुरु लोग हैं ? उन लोगों में कुछ ज्ञान भी नहीं होता है ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ— जैसे प्रत्येक कुल का कुलदेवता होता है वैसे ही प्रत्येक कुल के कुल गुरु भी होते हैं। कुल गुरु लोग अब तक कुल के कल्याण की ही एक मात्र कामना करते थे। इसलिये ज्यादातर लोग अपने अपने कुलगुरु से ही एक मात्र दीक्षा लेते थे। कोई एक व्यक्ति इस शरीर के पास गुरु के जप के बारे में पूछने आया था। यह शरीर ने कहा कि—"तुम अपने कुल गुरु के पास जाओ। गुरु महाराज जैसा आदेश करें वैसा ही करने की कोशिश करो। यदि कुलगुरु महराज कह दें कि मैं कुछ नहिं जानता हूँ तब तुम दूसरे गुरु कर सकते हो। कुलगुरु का आदेश पालन करके दूसरे गुरु से दीक्षा ले सकते हैं।

प्र०—दीक्षा गुरु के शरीरका अन्त हो जाये तब क्या करना चाहिये ?

माँ—एक कथा—सुनाउँ—सुनोगे ? एक व्यक्ति एक गुरु जी को पास गया और कहा "गुरु महाराज मुझको कृपा करके आपके श्री चरणकमल के आश्रय में लो और मंत्र दीक्षा दे दो।" गुरुमहाराज ने कहा,—"समय पर देखा जायेगा।" वह व्यक्ति प्रायः रोज गुरु महाराज के पास जाकर मंत्र दीक्षा देने के लिये तंग करता था इस लिए गुरुमहाराज ने क्रोध में कह दिया—जा, 'गोपी आनंदन का जप कर।' उस व्यक्ति को गुरुमहाराज में पूर्ण श्रद्धा थी। घर में आकर फोरन उन्होंने अखण्ड जप शुरू कर दिया। बस दिन रात—'गोपी आनंदन' नाम का अखण्ड जप शुरू कर दिया। न खाना, न पीना। जप करते करते उन्हों ने खाना ही छोड़ दिया और अखण्ड जप करने पूरा मन से लग गया। घर को लोगों को चिंता हुई—कि इसका क्या किया जायें ? कैसे खाना पीना दिया जाये ? घर के एक व्यक्ति ने उनके पास जाकर कहा,—"तुम भोजन कर लो। तुम्हारा मंत्र हमको दे दो—मैं मंत्र जप करूंगा। तुम जब तक भोजन कर के नहीं आवोगे तब तक मैं मंत्र जप करूँगा"—उस व्यक्ति ने अपना जप उनको सौंप कर भोजन कर लिया। उनके भाई को जप में विश्वास तो था ही नहीं—इस लिये जप करने के बदले सो गया। भक्त महाराज ने अपने भाई से कहा—"तुम मेरा जप वापिस दो" उनके भाई ने क्रोध में कह दिया—कि ले तेरा जप तो "घंटानन्दन" है। वह भक्त देहाती व्यक्ति था—जो जप दिया—गोपीआनन्दन के बदले—"घंटानन्दन—बस तन मन से खूब एकाग्रता से—"घंटानन्दन" का ही अखण्ड जप शुरू हो गया। यह भाई खूब—पूर्ण श्रद्धा पूर्वक घंटानन्दन का जप करने लग गया। परिणाम यह हुआ कि भगवान् श्री राधा-कृष्ण का सिंहासन विचलित होने लगा। उनको यह एक अजीब भक्त को दर्शन देना पड़ा। जहाँ पूर्ण विश्वास—पूर्ण श्रद्धा है—वहाँ ही एक मात्र पूर्ण प्रकाश होता है। एक लक्ष्य होना चाहिये।

एक लक्ष्य हुए बिना लक्ष्यपति भगवान् के दर्शन नहीं होता है। किसी में भी दोषदृष्टि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मत करो। तुमको जो अनुकूल पड़े उस को ही लेना चाहिये। गुरु महाराज के संग में रहने की कोशिश करनी चाहिये। प्रथम १२ वर्ष गुरुजी महाराज के संग रहना चाहिये जब दीक्षा लेने का हठ निश्चय हो तब ही गुरु के पास दीक्षा के लिये प्रार्थना करनी चाहिये। एक दफे गुरु हो जाने के बाद गुरु जी को बार-बार बदलना नहीं चाहिये। कोई डॉक्टर दवा पिला के आराम कराता है। और कोई डॉक्टर जबरदस्ती इन्जेक्शन भी लगाता है। इस सम्बन्ध में एक सुन्दर कथा सुनो—एक बहुत बड़े योगिराज महाराज थे। उन्होंने एक दिन एक शहर के बड़े सेठ के यहाँ जाकर भिक्षा माँगी। सेठ अपने नौकर से कहा —"इस भिक्षुक को एक पैसा देकर भगा दो।" योगिराज कहा,—"मैं पैसा की अर्थात् धन की भिक्षा नहीं कर रहा हूँ। मैं तो एक मात्र भिक्षा से तुम्हारा पास मांगने आया हूँ कि—तुम एक बार प्रेम से भगवान् का परम पवित्र नाम लो।" सेठ जी ने भगवान् के नाम लेने की साफ ना कर दी। योगीराज बार-बार सेठ से प्रार्थना की कि सिर्फ एक बार भगवान् का नाम ले लो। लेकिन सेठ जी भी बड़े पक्के निकले। किसी उपाय से सेठ जी ने भगवान् के नाम लेने की .मना कर दी। सेठजी को आध्यात्मिक शिक्षा देने के लिये योगिराज ने ठीक सेठजी के जैसा रूप बना लिया। सेठजी रोज सुबह प्रातः भ्रमण के लिये बाहर चले गये। इसके बाद योगिराज सेठजी का जैसा रूप धारण कर सेठजी के घर में चले गये। यह नकली सेठजी जब घर में गये तो सेठजी ने पूछा,—"अभी तो तुम घूमने गये थे—इतनी जल्दी कैसे वापिस आ गये? क्या हुआ? ब्रह्मरूपी सेठ (योगीराज) ने कहा कि,, "आज शहर में एक बहुरूपिया आया है वह चाहे किसीका रूप लेकर जो किसी के घर में घुस जाना है। इसलिये मैं वापिस आ गया हूँ। इसलिए घर में सबको खबर दे दो कि मेरा जैसा रूप लेकर घरमें घुसने आवे तो मार कर भगा देना"। प्रायः एक घण्टे के बाद असली सेठजी प्रातः भ्रमण करके घर में वापिस आये और घर में घुसने लगे तो घर के सब नौकरों ने सेठजी को रोक लिया—और कहा—"कि तुम तो बहुरूपिया है भाग यहाँ से। हमारा सेठजी तो अपने घर में ही है—तुम कहाँ से आये हो? जब नौकर लोगों के कहने से घर में नहीं घुस सके तो अपनी सेठानीजी को बुलाने लगे। सेठानीजी भी हाथ में बड़ा डंडा लेकर सेठको मारने दौड़ी। सेठानी; लड़के लोग और नौकरों ने मिलकर खूब मारापीटा। सारे शरीर से खून निकलने लग गया। अन्त में यह केस कोर्ट में चला गया। कोर्ट में भी आजतक ऐसा कोई केस आया नहीं था। दोनों सेठों के रूप, कपड़े, रहन सहन, बोलचाल सब एक किसमका। कौन असली सेठ है और कौन बहुरूपिया सेठ है—यह पहचानना बड़ा मुश्किल था। बहुरूपिया सेठजी तो बड़े योगिराज थे और संपूर्ण ज्ञानी थे। इसलिये न्यायाधीश के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सब प्रश्नों का उत्तर बिलकुल ठीक दे देते थे। बहुरूपी सेठजी ने न्यायाधीश से पूछा,—"यदि वो शेठ असली और सच्चा हो तो मेरे प्रश्नों का उत्तर दे दें। मेरे लड़के की शादी में कितना रुपया खर्च हुआ बतादें ? असली शेठजी को तो इस शादी में कितना खर्च हुआ कैसे बतादें ? योगी सेठ ने बता दिया—कितना रुपया-पैसा खर्च हुआँ था।" कोर्ट में भी बहुरुपिया सेठ की जीत हुई। असली सेठ एकदम निराश होकर रोता रोता नदी के किनारे गया जब जीवन में खूब निराशा आ गई—तब भगवान् की याद आगई। इतने में सेठजी क्या देख रहे हैं कि उस योगिराज ने पूछा, कि अब भी तुम भगवान का नाम लेने को तैयार है कि नहीं ?—यह प्रश्न सुनते ही सेठजी की दृष्टि खुल गई और सेठजी समझ गये कि यह सारी लीला योगिराज की महती अहैतुकी कृपा का ही फल है। फौरन सेठजी ने योगिराज के श्री चरणकमलों में साष्टांग दण्डवत् प्रणाम किया और प्रार्थना की,—"भगवन्—मुझ अभागी को क्षमा करो। अब मुझे कुछ नहीं चाहिये। अब तो बाकी जीवन भगवान् का साधन भजन ही करूँगा। श्री योगिराज महाराज ने कहा—"अब तुम अपने घर चले जा। मैं प्रातः भ्रमण के बहाने घर से बाहर आगया हूँ। तुम अपने घर में जाकर बहुत धन खर्च करके बहुत सुन्दर बड़ा श्री भगवान् का मन्दिर बनाओ और उस मन्दिर में रहकर अनासक्त भाव से रहकर भगवान् का खूब खूब भजन करो। देखो—इसका नाम है—भगवान् की निग्रह कृपा माने कड़ुआ औषध और अनुग्रह कृपा माने सीरा—मीठी दवा" जब छोटा बच्चा घर में जाना नहीं चाहता है तब उनको माँ—आवश्यकता पड़ने पर थप्पड़ मार के भी घर में ले जाती है। बच्चा का दुःख माँ ही जानती है।

माँ:—यदि कोई मनुष्य किसी को नमस्कार या प्रणाम करता है तब उनके गुण उनमें आ जाते हैं तद्बुद्धि:से अर्थात् भगवद् बुद्धि से उनको प्रणाम करो। कुत्ता या बिल्ली को भी कोई तद्बुद्धि से प्रणाम करें तो उसमें कोई दोष नहीं है। सुना है कि श्री भगवान् वासुदेव सर्वत्र और सब में परिपूर्ण रीति से विराजमान हैं।

माँ का सत्संग दरबार खत्म हुआ। इसके बाद माँ—डॉ० पन्नालाल के तम्बू में गयीं। वहाँ से चुपचाप प्रायः रात के १० बजे माँ जहाँ अखण्ड भगवन्नाम संकीर्तन हो रहा था वहाँ पधारीं। माँ का निरीक्षण शुरू हो गया है। यहाँ पर गत तीन दिन से अखण्ड भगवन्नाम का संकीर्तन चल रहा है—लेकिन किसी ने भी यहाँ पर सफाई नहीं की है। इतने बहुत से लोग कीर्तन में आते हैं लेकिन किसी का भी ध्यान इस तरफ नहीं गया है। माँ का प्रत्येक कार्य जगत् की शिक्षा के लिये होता है। माँ ने अपने हाथों से भगवान् के सब चित्रों की सफाई की और अपनी चादर से ही सारे कीर्तन—नाम ब्रह्म घर की सफाई की। माँ के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुख पर खूब गांभीर्यता का भाव है। अहा ! माँ की लोगों को शिक्षा देने की कैसी सुन्दर अद्भुत रीति है। खूब अपने आप कार्य करके सबको दिखा रही हैं। सब मातृ भक्त लोग चुपचाप भय से शांत होकर खड़े खड़े माँ का दर्शन कर रहे हैं। श्री गुरुप्रिया दिदीजी भी वार बार माँ से प्रार्थना कर रही हैं कि,—"माँ—कृपा करके आप अब रहने दो। हम लोगों का बड़ा अपराध हो गया है—क्षमा करो। अब से वैसी भूल नहीं होगी। माँ किसी के भी तरफ दृष्टि न डालकर अपनी सफाई का काम कर रही हैं। माँ अपने हाथ से कीर्तन घर की सफाई करके सब सुन्दर रीति से सजाकर माँ अपने घरमें गयीं। माँ सब तरह से परिपूर्ण हैं। माँ का ऐसा उपदेश है कि जो काम करो—उसको परिपूर्ण रीति से अच्छा। करने की कोशिश करनी चाहिये। उस काम को जितना सुन्दर रीति से कर सको—उतनी सुन्दर रीति से अपने काम को करने चाहियें।

(क्रमशः)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शाहबाग़ लीला

प्रत्यक्षदर्शी (पूर्वानुवृत्ति)

ईस्वी सन् १९८६ जनवरी प्रातः ८ बजे करीब माँ नाम घर में टहल रही हैं। माथुर वावु रोगशय्या में पड़े हुए भाईजी को देख आये थे। घबराहट से भरे माँ को कुछ कहने वाले थे, खड़े हो गये। अकस्मात् भावावेश में आकर माँ के सामने साष्टांग होकर गिरपड़े। माँ एकदम चौकती हुई जैसे खड़ी हो गयीं। माथुरबाबू बड़ी दीनता के साथ कहने लगे—"माँ इस बावू को ज्योतिषचन्द्र राय को तू बचा दे। उससे यहाँ यह बहुत काम बनेगा। उसके बदले में मुझे लेले"। माँ ने जैसे उनको प्रार्थना को मान कर पूर्ण किया। परन्तु माथुर बाबू का कुछ बिगड़ा नहीं। श्री योगेशचन्द्र राय को उस समय माँ ने बुला लिया जो कि एक साल घूमते रहे। योगेश दादा उसी समय से माँ की सेवा में लग गये।

तीसरे पहर कुलहा बाबू और विनय बाबू आकरके नामघर के पूर्वोत्तर कोने में आम के पेड़ के पास बैठकर नाम गान करके (अपने अपने भाव से) घर चले जाते हैं। और मन में सोचते जाते हैं कि हम दोनों किसी सेवा के लायक नहीं हैं। यही हमारी सेवा है। यहीं दा वन्द्योपाध्याय कुछ दिन बाद यज्ञशाला में हवन करने के अपने लगा दिया।

वनभ्रामक निशिकान्त मित्र माँ को शहर में अपने घर में और गाँवोंमें अपने घरमें लेगये और सम्पूर्ण परिवार को ही माँ की सेवक सेविका बना दिया। टीकानली के धनीमानी श्री शशांकबाबू और उनकी कन्या (स्वामी अखण्डानन्द गिरिजा और गुरुप्रिया दीदी) भी उस समय प्रायः मां को अपने घरमें लेजाती थीं। फिर संन्यास लेकर शशांक बाबू ने अपने को माँ के चरणों में अर्पण कर दिये और उनकी कन्या ने माँ की मुख्य सेविका रूप से अपने को अर्पण कर दिया। माँ के लिये सुन्दर आश्रम का संगठन और उसकी परिचालना में अपने को लगा दिया।

दीवान बाजार के ठेकेदार नगेनराय, शाहबाग के कुण्ड में अग्निरक्षा की व्यवस्था आरम्भ होने पर माँ के चरणों के पास जाकर कहने लगे कि यज्ञ की अग्नि की रक्षा के लिये जितनी लकड़ियों की आवश्यकता होगी मैं लेकर पहुँचा दूँगा। ढाका विश्वविद्यालय के इलाके के अन्दर बहुत से बड़ पीपल और आम के वृक्ष थे। उससमय मनमोहन घोष जी वहाँ स्टूअर्ड रहे। उनसे भिक्षा मांगकर पेड़ काटने की आज्ञा लेते थे और बैलगाड़ियों से उनको कटवाकर आश्रम में पहुँचाते थे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शनिवार का कीर्त्तन जब शुरू हुआ बीरेन चौधरी योगेश, भजन, बीरेन बनर्जी, माखन बन्द्योपाध्याय, और अधीर सेन, उसमें विशेषरूप से आते थे। बीरेन बाबू कहते थे, "दिन रात भगवान् का स्मरण होना चाहिये। हाय ! एक रात का जागरण मुझे थका देता है। जीवित भगवान् माँ के पास हम किस लायक होंगे।

भाईजी के मित्र और रिश्तेदार निरंजन बाबू की इच्छा हुई कि अगर माँ उनकी मोटर में बैठ कर थोड़ा भ्रमण कर लेतीं तो बड़ा ही अच्छा होता। माँ के सामने इस प्रस्ताव को रखने की भाईजी को हिम्मत नहीं हुई क्योंकि इससे माँ की सेवा जैसा चाहिये नहीं हो सकती। अपनी मानवृद्धि, और जो धनी नहीं हैं ऐसे भक्तों के मनमें दुःख वृद्धि की सम्भावना ही होगी। जो भी हो आखिर माँ को और भोलानाथ को प्रार्थना करने पर निश्चय हुआ कि, २-३ दिन से ज्यादा नहीं और निर्जन रात्रि के समय ऐसा होगा।

एक दिन बाबा भोलानाथ के साथ माँ को मोटर में बैठाया गया। नवापुर और रायसाहब के बाजार के बीच एक ईंटेकी बनी पुलिया थी, उसके पास कुछ फलों की दुकानें थीं। माँने वहाँ मोटर रोकी और उतर गयीं। एक दुकानदार के पास हाथ फैलाकर कुछ फल भिक्षा माँगीं। उसने ना कर दी। माँ गाड़ी पर सवार होकर चल दीं। २-३ दिन बाद समाचार मिला उस दुकान में आग लग गयी और जल गयी। सब कहने लगे। माँ ने उसके नुकसान को भाँप लिया था। और उसको बचाने के लिये उतर कर भिक्षा माँगी थीं।

भाईजी के अधीन मणिपुर फार्मों में दुर्गापूजा का आयोजन हुआ। माँ को उस स्थान पर ले जाने की बात भाईजी ने कही। परन्तु पूजा के व्यवस्थापक ने जाने क्या सोचकर भाईजी से कहा "माँ को लाने लायक हमारी तैयारी नहीं है।" माँ का वहाँ जाना नहीं हुआ। पूजा के बाद देखा गया कि व्यवस्थापक जी के कर्मक्षेत्र में विशेष नुकसान हो गया। फार्म के लोग कहने लगे, माँ को यहाँ लाते तो मंगल ही होता। रात ८ बजे फिर मोटर से माँ को घुमाने के लिये प्रार्थना की गयी। माँ और भोलानाथ मोटर में बैठे। भाईजी और निरंजन बाबू आगे बैठकर चलाने लगे। बहुत रास्ताओं में घूमते हुए बूढ़ी गंगा के पास बहुत धनी लोगों के निवास वाले बाजार में होते हुए लक्ष्मीनारायण के मन्दिर के फाटक पर पहुँचे। इसी मन्दिर के कारण इसका नाम लक्ष्मी बाजार है। मन्दिर का दरवाजा बन्द। दरवान बाहरी फाटक बन्द करने जा रहा था कहा मन्दिर बन्द हो गया। माँ ने कहा "मन्दिर के बरामदे में हम सब खड़े हो जाँय और मन्दिर के पुजारी महन्त को बुलाया जाय।" माँ जल्दी से मन्दिर के द्वार पर पहुँच गयीं। दरवान को ड्राइवर से मालूम हुआ शाहबाग वाली माँ आयी हैं और इनकम टैक्स विभाग के बड़े अफसर और कृषि विभाग के बड़े अफसर आये हैं। तुरत मन्दिर खुल गया,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने मित्रों के साथ पुजारी महन्त हाथ जोड़कर माँ के इशारे से काम करने लगे। बैठने के लिये कालीन बिछायी गयी, परन्तु माँ बैठीं नहीं। लक्ष्मीनारायण मूर्तिको स्पर्श करके माँ उनको प्यार करने लगीं। अपनी उंगली से सोने की एक अंगूठी निकालकर मूर्ति की उंगली में पहिनायीं। सुना जाता है पहले इस मूर्ति से नित्यप्रति एक टुकड़ा सोना निकलता था। सेवकों की असावधानता से बन्द हो गया। दूसरे दिन की भोग की व्यवस्था भाईजी ने कर दी। माँ दरवाजे पर खड़ी होकर कहने लगीं, "रात १० बजे से पहले मन्दिर का द्वार कभी बन्द नहीं करना। शहर के लोग क्या १० बजे से पहले ही सो जाते हैं। ठाकुर कब किसको बुला लाते हैं, जैसा आज।" माँ की आज्ञा सबने मान ली।

प्रभुपाद विजयकृष्ण गोस्वामीजी की कन्या शान्ति देवी जी पीछे आर्यजन्मोत्सव में आयी थीं। उनके गेण्डरिया आश्रम में उनके प्रसिद्ध भक्त लोग आये थे। उनके कीर्तनोत्सव में माँ की उपस्थिति के लिये प्रार्थना किये थे। माँ के प्रभाव से कीर्तन खूब जम गया था। उन्मादना की सृष्टिकी कीर्तन वालों के मन जग रही थी कि उसका प्रभाव रात में शाहबाग में छा गया। डाक्टर शशांक बाबू के फिटन गाड़ी में माँ वापस आ रही हैं। उस समय रात के ८ बजे थे। गाड़ीवान मुसलमान जवान था। नाम उसका था सुभान। शाहबाग के सदर फाटक से हरिनाम की ऊँची ध्वनि आ रही थी। फाटक से नामघर तक वह ध्वनि धीरे-धीरे आगयी। वह आवेग से पूर्ण हरिनाम नामघर को अत्यन्त मीठा और आकर्षक बना दिया।

फरीदपुर के प्रभु जगद्बन्धु सुन्दर ने कहा था कि, ढाका हरिनाम करैत सीय जैसा। हरि प्रेम का विरह रूपी विषधर नाग आज एक गाड़ीवान मुसलमान जवान को काट लिया। इससे पहले एक विशिष्ट नौकरी पेशावाले कैनुद्दीन साहब माँ के दर्शन के लिये आकर भावविभोर उन्मत्त जैसा नामघर में सबके साथ हाथ ऊँचा करके हरिनाम करने लगे थे। भाईजी के "मातृ दर्शन में" उसका विवरण लिखा है। हरिनाम में प्रेम एक साथ बहुतों के अन्दर कैसा फैलता है इसका वर्णन दीदीकी लिखी पुस्तक में वर्णित है। (प्रथम भाग में)

बंगला सन् १३३२ के सूर्य ग्रहण के दिन पौषी संक्रान्ति में शाहबाग के निकटवर्ती बूढ़ा शिवमन्दिर से सीतानाथ चिन्ताहरण बाबू गौरांग आदि कीर्तन वाले आकर प्रतिदिन कैसे माँ के द्वार पर कीर्तन करते हुए कीर्तन वाले बन गये। ईस्वी १९२७ के अक्टूबर में भाईजी का एक पत्र आया-दुर्गापुजा के दिन करीब ही हैं, चालान भेज रहा हूँ रेलवे स्टेशन पर जाकर पवित्र भावसे एक पार्सल का बक्स ले आना। खोलकर जो मिलेगा, ढाका में माँ की अनुपस्थिति में वही होगा भक्तों की परम आदरणीयवस्तु और पूजा की मूर्ति। समय पर वह लाया गया नाम-घर के पश्चिम में गोलघर में उसको खोलकर सबको दिखाया गया। संगमर्मर के पत्थरपर माँ का खुदा हुआ चरण चिह्न। आगे ढाका रमणा आश्रम में एक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन्दिर बनाकर 'पादपीठ मन्दिर' नाम से स्थापित हुआ है। इस समय काशी आश्रम में अन्नपूर्णा मन्दिर में इसकी पूजा हो रही है। माँ के चुनार में रहते समय (जिला मिर्जापुर) भाईजीने इसका संग्रह किया था।

इसके कुछ दिन बाद भाईजी ने एक पत्र में लिखा—अब से प्रतिदिन कीर्तन आरम्भ करते समय मंगलाचरण के रूप में 'माँ' शब्द से भरा कुछ पद गाना होगा। इसका नियम बना लो। वह इस प्रकार होगा—

डाक मा मा मा मा मा मा मा
बल मा मा मा मा मा मा मा
गाओ मा मा मा मा मा मा मा
भजो मा मा मा मा मा मा मा
जय मा मा मा मा मा मा मा
अब बोलो गाओ भजो जपो मा मा मा

भक्तों के लिए तो यह सुन्दर और ग्रहण योग्य है परन्तु आये हुए नाना प्रकार के लोगो में इसको नियम से चलाना कठिन प्रतीत होने लगा।

कुछ दिन पहले २६ नवम्बर, शनिवार रात को जब भाईजी ने मा मा कीर्तन नियम से चलाया उससमय तक आरम्भ का नाम का पद था हरि हरि हरि बोलो मा मा मा मा मा मा बोलो।

श्रीश्री माँ को अपनी इष्ट देवता मानने से पहले पहल भाईजी का यही कदम था। आश्रम बनने से पहले ही शाहबाग में ही इसकी शुरुआत थी। शाहबाग की मालकिन पढ़ी लिखी नवाब की बेटी प्यारीबानु साहिबा की माँ का इस प्रकार के उद्‌बोधन में पूरा विश्वास था।

माँ को सामने रखकर उनकी चारों ओर परिक्रमा के साथ मतवाला होकर गाते और नाचते रहना भक्तों के लिये एक रुचिकर वस्तु थी। यही उस समय का नित्य उत्सव था। जब यह उत्सव खूब जम जाता था तब माँ भावावेश में ऊपर को देखते हुए जैसे आसमान में किसी को देखकर अपना हाथ घुमाते हुए शरीर को ऊपर ऊपर उठाकर आनन्द वितरण करती थीं। इस दृश्य को देखकर उपस्थित भक्तलोग अनुभव करते थे कि आज हमने अदृश्य अस्पृश्य भगवान् को देखा स्पर्श किया। जगत् में इससे आनन्द की वस्तु और कुछ भी नहीं है। इसी कारण नित्यप्रति हजार अड़चन होते हुए भी वे आते थे। विना शाहबाग आये चैन नहीं मिलता था।

बूढ़े नाना जी का हृदय भी आनन्द की हरिनाम की खान है। माँ के सामने आकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाचते हुए हरिनाम करते हुए दुतारा यन्त्र बजाते हुए मधुर गाना गाने में कुछ संकोच करते हुए भी जब हरिनाम का धुन लगता था तब उनसे रहा नहीं जाता, और सोच संकोच छोड़कर उनमें सम्मिलित हो जाते थे। नये-नये मोहन स्वरों के साथ नये-नये भावों का प्रदर्शन नवीन कीर्तन चलाकर कीर्तन शिरोमणि हो उठते थे। नाना जी के थकजाने पर मृदंग मजीरा बन्द होने जा रहा है देखकर पिता जी यानी बाबा भोलानाथ जी स्वयं सम्मिलित होकर उसको बन्द होने नहीं देते थे। मृदंग मजीरा जिस किसी के हाथों में दे देते थे। परन्तु किसी हालत में भी कीर्तन बन्द होना वे पसन्द नहीं करते थे। लम्बे समय तक ऊँची आवाज से कीर्तन चलाना उनका प्रिय था। जो लोग कीर्तन कर नहीं सकते थे वे ही उस समय उनका साथ देते थे। उनकी हिम्मत हो जाती थी।

ऐसे कीर्तन मंगल उत्सव में कभी-कभी भावाकुल होकर नाच उठते थे एक भक्त—उनका नाम था नगेन दत्त। ईस्ट बैंगाल टाइम्स् पत्रिका का सम्पादक पहले वह ठाकुर दयानन्द के साथ कीर्तन किया करते। वह कीर्तन क्या था जैसे लड़ाई हो रहा हो। फिर भी कीर्तन में वह भावुक थे।

शाहबाग कीर्त्तन स्थलमें कीर्त्तन की कलाएँ बहुतोंने प्रदर्शित कीं। बरीसाल सुहाग दल के बीरेन साधु बड़ी ऊँची आवाज से काफी देर तक कीर्त्तन करते थे। उनके वैराग्य प्रभाव से प्रभावित हो गये आशु—बाबा भोलानाथ का भतीजा, सदा माँ के साथ ही रहता था। उन्होंने आशु को कहा था, एक बार मां का दर्शन पाकर हम सब कितने दूर से चले आ रहे हैं और तुम माँ की सन्निधि में रहकर भी बहिर्दृष्टि रखकर अपने को बचाये जा रहे हो आओ वैराग्यमार्ग को पकड़ो।

योगी साधु हेम बाबू के आने पर धीर स्थिर भाव से मृदंग बजाते हुए मृदु मधुर कीर्त्तन करते थे। कीर्त्तन में और बजाने में वह कभी थकते नहीं थे।

जिन भक्तों का विवरण लिखा गया। वे सभी कीर्त्तन में सम्मिलित होते थे—साधारणरूप से सीतानाथ मृदंगधारी होकर कीर्त्तन चलाते थे—इसके सिवा डाक्टर योगेश भजन और केदार मास्टर कीर्त्तन चलाते थे। एक गुसांई एक एक दिन आकर बैठते थे गौरांग चिन्ताहरण बाबू विश्वंभर कीर्त्तनीया अगर उपस्थित रहते तो वे ही कीर्त्तन चलाते थे। माँ के अनन्य सेवक श्री योगेश दादा का कण्ठ और भाव अद्वितीय था। परन्तु शाहबाग में उस समय माँ ने उनको नहीं रखा था। ज्यादा दिन उनका कण्ठ सुना नहीं गया। इस प्रकार कीर्त्तन रूपी सरोवर के केन्द्र कमल के ऊपर हृदय कमल वासिनी माँ शाहबाग में दर्शन देती थीं। वह दृश्य अमर है। इस जगत् के अमर पृष्ठ पर सदा अंकित रहेगा यही आशा करता हूँ।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्नपूर्णे सदा पूर्णे

(पूर्वानुवृत्ति)

रमाकांत

माता अन्नपूर्णाजी का दर्शन बरामदे में खड़े होकर किया जाता था। अब माँ ने नियम कर दिया कि, "पुजारी और देवता के सेवक के सिवा दूसरा कोई भी मन्दिर के अन्दर नहीं जावे।" सफेद रंग के देवताओं का दर्शन पाना अब असंभव-सा हो गया। इधर अष्टधातुकी मूर्त्तियाँ बनाने में पैसे की कमी दिखाई देने लगी। भाईजी उसकी व्यवस्था करने को जुट गये। जल्दी ही उनका लगवा कुछ धन मिल गया और उसीसे अपनी इच्छा के अनुसार सुन्दर रूप से माँ के बताये अनुसार अन्नपूर्णा जी तथा और मूर्त्तियाँ जल्दी ही तैयार कर लीं।

अष्टधातु की सारी मूर्त्तियाँ नई जैसी हो गयीं विशेष करके जिस मूर्त्ति में जो धातु ज्यादा देने से सुन्दर होगा उस मूर्त्ति में उसी प्रकार धातु ज्यादा लगाया गया। बनाते समय माँ भोलानाथजी भाईजी कारीगर के कारखानों में जाकर निर्देश दिया करते थे। यह कारखाना ठठेरी बाजार में जय काली बाड़ी के पास ही था। कारीगर का नाम जानकी था।

इधर अन्नपूर्णाजी के सिंहासन के ऊपर दरवाजा वाला एक शीशे का कमरा जैसा बनाया गया। यज्ञशाला भी सुन्दर बनायी गयी। जज साहब विनयभूषण सेन जी ने कीर्त्तन मण्डप बना दिया। अन्नपूर्णा जी के भोग बनाने के लिये अलग एक कुआँ बनाया गया। इसका जल भुवनेश्वर के जल जैसा निर्म्मल और स्वादिष्ट हुआ। पानी की टोंटी भी लग गयी। रमणा मैदान के बीच में एक पुलिया बनाकर सदर रास्ते से जोड़कर एक रास्ता भी बनाया गया। पुष्पवाटिका को बढ़ाया और सुन्दर बनाया गया। दो गाय भी रक्खी गयीं। और उनके लिये गौशाला भी बनायी गयी। बड़े उत्सवों में सुविधा के लिये एक बड़ा रसोई घर-दाल सब्जी खटाई आदि रखने के लिये सीमेण्ट की टंकियाँ बना दी गयीं। इस प्रकार अन्नपूर्णा जी की प्रतिष्ठा के साथ साथ आश्रम को भी सुन्दर काम लायक सजा लिया गया।

भाईजी के ऊपर आश्रम आदि प्रतिष्ठा कार्यों का भार था और उन्होंने बड़ी होशियारी और बुद्धिमानीके साथ इस कार्य को सम्पन्न किया। वह मां को हृदय में बैठाकर उन्हीं की शक्ति के सहयोग से सरलता के साथ अनायास ही पूरे आश्रम को श्रीसम्पन्न और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कार्योपयोगी प्रसारण आदि किया। इस सेवापूर्ण कर्म शक्ति के लिये चाहिये विशुद्ध निष्काम मनोबल। अतीन्द्रिय आनन्द रस ही इसके लिये शक्तिदाता रसायन है। भाईजी माँ के भक्तों को अपना ही स्वरूप समझकर अपना लेते थे।

सपरिवार श्री अन्नपूर्णाजी के भोग, आरती, पूजा, कीर्त्तन आदिके नियम बाँधने का एक प्रस्ताव विचारार्थ रक्खा गया और नियम बाँध दिया गया। प्रातः पूजा करने के बाद यज्ञशाला में अग्नि प्रज्वलित करके उसपर चरु पकाने के लिये चढ़ा दिया जाय इसी बीच मन्दिर में स्तुतिपाठ शुरू हो जाता था। क्रम ऐसा था एक आवृत्ति चण्डीपाठ फिर नित्यानन्दकरी—आदि श्री शंकराचार्य कृत अन्नपूर्णा स्तोत्र महाकाल विरचित कालीस्तव शिवमहिम्न स्तोत्र गीता पाठ सब देवों का नमस्कारमन्त्रपाठ। रात ४ बजे से कर्पूरादि स्तुति फिर अन्नपूर्णाजी की उषा आरती करके प्रभाती कीर्त्तन। भैरव राग से जयशिव शंकर बम् बम् हरहर हरहरहरहरहे "हरेमुरारे राम राम हरे हरे" "राम राम राम हरे" "जय राम राम हरे" इसके बाद भैरवी रागिणी से "मा मा" कीर्त्तन। आखिरी रात में सोया हुआ बच्चा जैसा जागकर मां को अंधेरे में ढूंढ रहा हो, "मा मा मा मा" फिर माँ मिल गयी "मा मा मा मा" फिर माँ का दूध पीकर सूखे गले को गीला कर रहा है, "मा मा मा मा" फिर तृप्ति का भाव प्रकट कर रहा है "मा मा मा मा" ऐसे देवता को सम्मुख पाकर श्रद्धा से अभिवादन और वन्दन कर रहा है। फिर "हरिबोल हरिबोल" "हरिबोल हरिबोल" "बोल हरि हरि हरि बोल" कह कर आत्मनिवेदन कर रहा है। इस भाव से कीर्त्तन होता है।

अपराह्न में नये आश्रम के नये मन्दिर में दर्शनार्थी भक्त लोग आकर मिलते हैं और देखते हैं—माँ समाधि के अन्त में उठकर अन्नपूर्णा मन्दिर से उतर रही हैं—सबको दर्शन दे रही हैं। माँ की ज्योति प्रकट हो रही है। माँ के निर्देश से पेन्शनर डिप्टी मजिस्ट्रेट राजा मोहन गांगुली जी गीता पाठ और व्याख्या करके सुना रहे हैं। जैसे आध्यात्मिक हवा बह रही है। किसी दिन भवानी नियोगी जी माँ के चरणों के पास बैठकर गीता व्याख्या करते थे। माँ के व्यवहारों से गीता की बातों को मिलमिलाकर प्रत्यक्ष कर रहे हैं। और मौन होकर माँ को प्रत्यक्ष कर रहे हैं। जबसे अन्नपूर्णाजी प्रतीष्ठित हुईं तब से लोगों में भगवत् विश्वास आश्चर्य रूप से जड़ पकड़ता जा रहा है। भगवान् यहाँ उपस्थित हैं लोग ऐसा समझते थे।

बंगला सन् १३३९ ईस्वी सन् १९३२ वैशाख का महीना। माँ के लम्बे जन्मोत्सव के बीच में माँ अन्नपूर्णा नये रूप रंग से आश्रम के मन्दिर को सफल करेंगी। माँ समय समय पर पूजा हवन आदि अति आश्चर्य रूप से ठीक ठीक समय पर भक्तों के सामने प्रकट करती रहती थीं। अन्नपूर्णा जी के मिस से, उन्हीं को केन्द्र करके यही पहला माँ का जन्मोत्सव था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ढाका का नभोमण्डल देदीप्यमान होने लगा। रमणा के मैदान में ऋषिमण्डली प्राचीन काली धर्मोत्सव हो रहा था।

जन्मोत्सव के आखिरी दिन गंभीर रात्रि में अनुष्ठान का प्रारंभ हुआ। सालभर का पुरानी चाँदी की मूर्त्ति का माँ के निर्देश से एक जलपात्र में विसर्जन किया गया। बाबा भोलानाथ को माँ ने पहले ही सब कुछ बता दिया। देवमूर्त्तिमें देवशक्ति, कर्म्मकाण्ड में क्रियाशक्ति, मन्त्रों में चैतन्य शक्ति, गुहा के अन्दर रहकर अन्तर्दृष्टि द्वारा संचारित कर रही थीं। जहाँ जब जैसी आवश्यकता के अनुसार हो रहा था। मन्दिर के बाहर भक्तमण्डली अलग-अलग समूहबद्ध होकर कोई दल नाम ध्वनि, कोई दल प्रचण्ड नृत्य के साथ हरि कीर्त्तन कर रहे थे। कहीं पर-कीर्त्तन कहीं ध्यान, कहीं जय का प्रवाह चल रहा था। जो भक्त समूह रसोई में लगे हुए थे वे भी "मानुष कालीर दुआरे बसिया" जीवित देवता का भोग बना रहे हैं इस आनन्द में मगन होकर अपना अपना कार्य कर रहे थे।

सम्पूर्ण आश्रम आनन्द की हिलोरें ले रहा था, और माँ आनन्द बिखेर रही थीं। दूसरे दिन १०८ प्रकार वस्तुओं से माँ का भोग लगाया गया। पन्द्रह मन अन्न आदि का भोग देने की व्यवस्था हुई। सारी रात परिश्रम करके २०० मिट्टी के प्याले में शाक सब्जी आदि रखे गये। भात रखने के लिये एरेकी चटाइयाँ बिछायी गयीं २५ टीन के टब में दाल आदि रखे गये। टोकानी पाल और मदनपाल के ठाकुर बाड़ी, नवाबपुर लक्ष्मीनारायण जी के ठाकुर बाड़ी से एक मनी दोमनी रसोई के बर्त्तन टोकना परात गमला आदि मंगाये गये थे। भक्त महिला मण्डली शाक सब्जी को पकाने योग्य बनाकर ढेर लगा रही थीं।

१९ ता० वैशाख सोमवार कृष्णात्रयोदशी से माँ का जन्मोत्सव प्रारम्भ हुआ था २ मई १९३२ में पूरा एक महीना उत्सव चलता रहा। पूरा १ महीना आश्रम के ब्रह्मचारी सेवक विशेष आग्रही गृहस्थ तपस्या में अनुरक्त भक्तगण होमाग्निमें पका हुआ आहुतिशेष चरुका थोड़ा प्रसाद लेकर ही बिता दिया।

व्रतीलोग सबमिलकर नित्य की पूजा और हवन का सामान तैयार करते थे। बाबा-भोलानाथ, ४ आश्रम सेवक, ५ ब्रह्मचारी, और विशिष्टब्राह्मण गृहस्थ मातृसेवाओं में सर्वश्री विनय वन्द्योपाध्याय, योगेश वन्द्योपाध्याय, अमूल्य रतन चौधुरी, फणिभूषण चक्रवर्त्ती आदि १० जने मिलकर हवन करते थे। नित्य १० हजार विल्वपत्र की घी के साथ आहुति दी जाती थी। १०० आम १०० लीची १०० अमरूद १०० शरीफा १०० छोटा खीरा या १०० केला की आहुति। और इसीप्रकार हरा, आंवला, अंगूर, बादाम, छुँहारा, नाशपाती, सेव, अनार आदि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फलों की आहुति। अढ़हुल नीलोकेर कनेर कमल चम्पा आदि फूलों की आहुति। गूलर, आम, बड़, पीपल-मौलसिरी ढाँक आदि समिधाओं की आहुति बड़े आनन्द के साथ बहुत देरतक बैठकर जलती हुई अग्नि में आहुतियाँ दी जाती थीं। यह सब शुद्धकर्म्म माँ के निर्देशानुसार माँ के सान्निध्य में आनन्द व निष्काम भाव से बाबाभोलानाथ और परिकरों के साथ सुन्दर रूपसे सरलता के साथ हुआ करता था। हवन के बाद आरती पुष्पांजलि और प्रदक्षिणा होती थी। दूसरी ओर मन्दिर में माध्याह्निक भोग आरती और कीर्त्तन होता था।

(क्रमशः)

"करो और पाओ"

"भगवान् की कृपा भी स्वयं प्रकाश हो। यह जो तुम बोल रहे हो वह भगवान् की कृपा से ही बोल रहे हो। कृपा माने क्या ? 'कृ' माने करो और 'पा' माने पाओ— करो और पाओ। यदि तुम करोगे लो अवश्य पाओगे। जितना प्रमाण में कार्य करोगे उतने प्रमाण में प्राप्ति होगी। भगवान् की तरफ जाने के लिये तुम जो कुछ कर रहे हो वह सब भगवान् की कृपा से होता है।"

—श्री श्री माँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीश्री मां आनन्दमयी प्रसंग

पंचम खण्ड

श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त, एम. ए, बी. एल.

स्वप्नमें दीक्षा ठीक है या नहीं ?

ईस्वी तारीख २७-३-४९ सुबह करीब १० बजे माँ हाल में आकर बैठीं। डा० मैत्र आज नहीं आये। खबर भेजी है आज सुबह वह नहीं आयेंगे। माँ ने स्वयं ही बात छेड़ी और शंकरानन्द स्वामी से पूछा—"अगर कोई व्यक्ति स्वयं ही संन्यास ले ले यानी किसी से भी प्रैष मन्त्र न लेकर स्वयं ही जनेऊ उतार कर फेंक दे और संन्यास मन्त्र का भाव उसको मिल जाय तब उसको क्या करना चाहिए ?"

स्वामी शंकरानन्द—विरजा होम करके संन्यास लेना यह तो शास्त्र की विधि है। फिर अधिकारी भेद से दूसरी व्यवस्था भी हो सकती है। इस विषय में मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ क्या मैं कहूँ। ढाका आश्रम में काली मूर्त्ति के हाथ टूट जाने पर—उस मूर्त्तिमें पूजा हो सकती है या नहीं इसका विधान क्या है जानने के लिये काशी में जब लिखा गया था तब काशी के पण्डितों ने जो विधान दिया था वही यहाँ पर भी लगाना चाहिये। उन्होंने विधान दिया था अंग हीन मूर्त्ति की पूजा शास्त्र में निषिद्ध है परन्तु अगर कोई महात्मा इस सम्बन्ध में कोई निर्देश देते हैं तो वही मान्य होगा।

माँ—ऐसा भी होता है किसी को स्वप्न में मन्त्र मिला। और उसको सन्तोष हो गया। दीक्षा में जो कुछ होता है वह सब हो गया। हर सूरत से दीक्षा की बाबत उसको किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहा। इस हालत में कहना पड़ेगा उसकी दीक्षा ठीक ठीक हो गयी है। ऐसी हालत में फिर गुरु से दीक्षा लेने की आवश्यकता नहीं है। और किसी किसी को स्वप्न में मन्त्र मिलने पर इस शरीर के पास आकर कहता है माँ अगर तुम कहो तो मैं दूसरे गुरु से दीक्षा लूँ नहीं तो जो मुझे मिला है वही जपता रहूँगा। जैसा भी तुम कहोगी वैसा ही करूँगा। इन हालतों में कभी तो दूसरे गुरु से दीक्षा लेने को और कभी जो मिला है उसी को जपते रहने के के लिये कहा गया है।

मैं—माँ, दीक्षा एक सूक्ष्म क्रिया है—क्योंकि गुरु जो मन्त्र कान में देते हैं वह कभी-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कभी स्पष्ट सुनायी नहीं पड़ता है—समझ में भी नहीं आता है। पीछे उस मन्त्र को स्पष्ट रूप से लिखकर दिया जाता है। या फिर से कहा जाता है। इस कारण यही समझ में आता है कि—'दीक्षा' संस्कार इन्द्रियों से ग्रहण योग्य कोई स्थूल वस्तु नहीं है। अगर यह बात ठीक है तो स्वप्न में दीक्षा की सूक्ष्म क्रिया तो हो ही गयी। फिर शास्त्र में ऐसा विधान क्यों है कि जाग्रत अवस्था में फिर उसे ग्रहण करना पड़ेगा।

माँ—हाँ, यह ठीक है कि दीक्षा के द्वारा गुरु जो शक्ति संचार करते हैं वह सूक्ष्म ही है। इस दीक्षा का प्रकाश भीतरी बाहरी दोनों प्रकार से होता है। स्वप्न में भी ऐसी दीक्षा हो सकती है जिससे बाहरी प्रकाश भी मिल जाता है यानी स्थूल रूप से गुरु दीक्षा लेने पर गुरु-शक्ति का भीतरी बाहरी दोनों प्रकाश हो जाता है। स्वप्न की दीक्षा में भी उसी प्रकार हो सकता है। और भी कोई-कोई स्वप्न में दीक्षा पाकर सन्तुष्ट नहीं होता है कुछ खामी सी रह जाती है, तब वह किसी महापुरुष के निर्देश से फिर दीक्षा लेकर या न लेकर भी निश्चित हो जाता है। अगर किसी को ऐसा महापुरुष न मिले तो उनके लिये शास्त्र है। अगर स्वप्न में दीक्षा पाकर वह तृप्त हो जाता है तब दूसरी व्यवस्था उसके लिये नहीं है। दीक्षा भी कई प्रकार की होती है। ठीक-ठीक दीक्षा होने पर सारी खामी दूर हो जाती है। परन्तु प्रायः ऐसी दीक्षा होती नहीं है। इसी कारण देखा जाता है दीक्षा लेने पर भी खामी रह ही जाती है। पीछे गुरु के बताये रास्ते से चलते-चलते खामी मिटती जाती है। स्वप्न दीक्षा में भी ऐसा होता है। कभी-कभी स्वप्न में दीक्षा मिलते ही वह व्यक्ति महसूस करता है जो वस्तु मिलनी चाहिये सो मिल गयी और वह विचारे बिना ही पाया हुआ मन्त्र जप करता जाता है। और कभी देखा जाता है स्वप्न में दीक्षा पाने के बाद धीरे-धीरे दीक्षा के फल का अनुभव होता है।

मैं—तुम्हारी बातों से क्या मैं यही समझूँ कि—किसीको अगर स्वप्न में मन्त्र मिलता है, उससे उसकी तुष्टि और तृप्ति ही उसकी पूर्णता की कसौटी है।

माँ—नहीं, सिर्फ तृप्ति और तुष्टि ही नहीं, तृप्ति और तुष्टि के सिवा और भी कुछ अनुभव करता है जिससे वह दीक्षा की तरफ से निश्चित हो जाता है।

साधन में अनुभूति और उसकी पूर्णता

मैं—माँ देखा जाता है अनुभूति ही सारी यन्त्रणाओं की सृष्टि करती है।

माँ—(हँसकर) यन्त्रणा क्या है? या 'यन्त्रणा' यानी जबतक अपने को उनके हाथ का यन्त्र हूँ ऐसा अनुभव नहीं होता है तभी तक यन्त्रणा (वेदना दर्द) है। गुरु दीक्षा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देकर शिष्य को जपने कहते हैं और जप का फल गुरु को अर्पण करने को कह देते हैं। जप के फल अर्पण करने के लिये अगर निर्देश नहीं रहता है तो समझ लेना चाहिये कि वह किस तरह जमा होगा उसकी व्यवस्था गुरु ने स्वयं कर रक्खी है। जो भी हो—गुरु के इशारे से फलाफल के ऊपर ध्यान न देकर अगर जपते रहे तब वह सम्पूर्ण जप गुरु के पास जमा होता जाता है। छोटे बच्चे जैसे कोई कीमती वस्तु पाकर मां के पास लाकर देते हैं। बच्चे उसका दाम नहीं जानते हैं। मां तो जानती है वह उसको सावधानी से जैसे रख देती है और बच्चे जब बड़े हो जाते हैं और दाम समझ लेते हैं तभी मां उनको देती है। उसी प्रकार गुरु के पास कर्मफल यानी जप का फल देने से शिष्य के कर्म्म समाप्ति होने पर उसे दे देते हैं। ये सब फल अनुभूति रूप ही होते हैं। शिष्य अगर जप का फल गुरु को समर्पण न करके अपने पास रखते हैं तब उसके खो जाने की संभावना रहती है। यद्यपि कर्म का फल कभी भी नष्ट नहीं होता तथापि घिसपिट तो जाता ही है। क्योंकि शरीर के नाना प्रकार भाव और नाना प्रकार कर्म्म हैं। उससे शुभ कर्म्म का फल कुछ कट जाता है इसमें कौन-सा आश्चर्य है। गुरु के पास कर्म्मफल रख देने से वह खराब होने से बच जाता है। समय पूर्ण होने पर गुरु शिष्यको सबही वापस दे देते हैं। सार यह है कि शिष्य का कर्त्तव्य जप करते जाना, फल की तरफ ध्यान न देना। योगीजन कह सकते हैं कि इतने जप का इतना फल होगा। आम जनता का जब जानने का कोई उपाय नहीं है कि कब जप पूर्ण होगा, तब गुरु की आज्ञा के अनुसार काम करते जाना ही ठीक है क्योंकि जिस किसी क्षण में जप पूर्ण होकर प्रकाश मिल सकता है। और भी कई वार देखा गया है जप खराव हो गया, ऐसी हालत में कह सकते हैं इस प्रकार खराब हो होकर ज्ञान का प्रकाश होना ही गुरु की इच्छा है।

और एक बात है, कोई-कोई कुछ समय तक साधन भजन करके कुछ अनुभूति न पाकर साधन भजन एकदम छोड़ देते हैं। इस तरह छोड़ते हैं कि उस त्याग के सिवा और कोई वात उनके मनमें आना ही नहीं चाहती है। इस हालत में ऐसा भी देखा जाता है कि जैसे ही साधन भजन त्याग किया उसी क्षण से अनुभूति का प्रकाश होना शुरू हो गया। ये जो साधन त्याग की बात कही गयी—यह भी साधन की ही एक अवस्था है। अगर परीक्षण के लिये साधन का त्याग करते हैं, या तमोगुण की अधिकता से साधन त्याग करते हैं, तो अनुभूति का प्रकाश नहीं होगा। जिस प्रकार की त्याग की बात कही जा रही है उस हालत में त्याग से ही साधन की तीव्रता बढ़ती है। "उनका स्मरण नहीं करेंगे" इसी भावसे स्मरण होता जाता है—लक्ष्य की तरफ जानेमें तीव्रता आ जाती है। अतः इस त्याग से—अनुभूति उसको मिलती है इसमें कौनसी आश्चर्य की बात है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बहुत बार कहा जाता है कि साधना का प्रकार अनन्त है। वास्तव में अनन्त ही है। साधारण रूप से देखो न, एक पेड़के पत्ते पर सोचो विचार करो देखोगे पेड़ का हरेक पत्ता अलग-अलग किस्म का है और अनन्त पत्ते हैं इस प्रकार फूल बीज भी। वृक्ष एक होने पर भी उसकी डाली, पत्ते, बीज सभी अलग-अलग प्रकार के हैं; इसी प्रकार अनुभूति भी अनन्त प्रकार की है। और देखो एक बीज के ही अन्दर अनन्त वृक्ष हैं, अनन्त पत्ते, अनन्त पुष्प हैं। इसी प्रकार एक ही अनुभूति में अनन्त प्रकार की अनुभूतियाँ हैं। साधन का लक्ष्य ही यह है कि—"बहु में एक का अनुभव करना" और "एक में बहु का अनुभव करना" इसका हो जाना ही पूर्ण अनुभूति है।

कर्म्म करते हुए कुछ-कुछ अनुभूति जो आने लगती है, उसको पकड़ने की कोशिश करनी चाहिये। जैसे अच्छे पकवान को हम पेट में भर लेते हैं वह पकवान अदृश्य हो जाता है परन्तु अदृश्य रहते हुए वह शरीर की पुष्टि का साधन करता है। इसी प्रकार अनुभूति होने पर उसको संजो कर रखना चाहिये। उसका प्रकाश न हो ऐसा उपाय करना चाहिये। ऐसा करने पर आधार की शक्ति बढ़ जाती है और पूर्ण ऐश्वर्य का प्रकाश होता है। पात्र पूर्ण होने पर जब उससे उफन कर गिर जाता है तो उससे नुकसान नहीं होता है क्यों कि यही जगद्गुरु का भाव है।

विभूति प्राप्त होने पर उसको प्रकट कर देते हैं यह तो स्वाभाविक ही है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि विषयों में जबतक इन्द्रियाँ सब वहिर्मुख रहती हैं तबतक अनुभूतियों के इन्द्रियों के रास्ते से निकल जाने की आशंका रहती है। केवल इतना ही नहीं—भीतर की अनुभूति के साथ अनजाने बाहरी वस्तु मिल जाती है। इससे होता क्या है? जो अनुभूतियाँ होती भी हैं वह सच्ची नहीं होती हैं। जैसे—तुम्हारे किसी शत्रु के विषय में तुम्हारी अनुभूति हुई कि वह बीमार है परन्तु देखते हो वह स्वस्थ ही है। यहाँ 'स्वस्थ' के साथ 'अ' जुड़ गया तुमने ख्याल ही नहीं किया। इसलिये इन्द्रियाँ बहिर्मुखी होनेसे उसी रास्ते से तुम्हारे संस्कार के अनुसार बाहर की नाना प्रकार की वस्तुएँ आकर तुम्हारी अनुभूति को बिगाड़ देती हैं। इन्द्रियों का वहिर्मुखी भाव जब बन्द होगा तब देखोगे कि तुम्हारी अनुभूतियाँ ठीक-ठीक हो रही हैं। ऐसी अवस्था आनेपर देखोगे तुम्हारा अहंभाव हल्का पड़ रहा है और तुम निर्भय होते जा रहे हो। स्वभावतः लोग अपने और अपने स्वजनों का अमंगल देखने से डर जाते हैं परन्तु जब अपनापन कुछ नहीं रहता—जब 'अहं' ज्ञान न रहने से अपना पराया सब एक हो जाता है तब डरने का कुछ नहीं रह जाता है अतः निर्भय हो जाता है। इस हालत के आने पर धीरे-धीरे उसकी पूर्ण विभूति प्रकट होने लगती है। एक बार पात्र भर कर उफन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाने पर चारों ओर फैल जाता है, उससे जगत् का कल्याण ही होता है। जगद् गुरु इसी प्रकार सबके प्रति कृपा करते रहते हैं। और पात्र पूर्ण होने के पहले ही अगर खर्च होना शुरू होजाय तो पात्र कैसे पूर्ण होगा। धन का रोंजगार करके संचय करने का नाम है 'साधना'। उसी-धन के रोजगार करते समय ही यदि रुपये में १० आना निकल जाता है तो संचय कैसे होगा?

दिन के १२ बज गये थे माँ को भोजन के लिये बुलाने को आ गये। हमलोग भी चले आये।

(क्रमशः)

"राम को नाम कभू न तजौ"

राम सुनाम बिना, रसरंगमणि मुख जानी लजौं मैं लजौं रे।
चातक ज्यौं घन रंक भजै धन, त्यौं प्रभु राम भजौं मैं भजौं रे॥
काक कुसंगति छोड़ि सुसंगति हंस सुवेष सजौं मैं सजौं रे।
जानकी जीवन राम को नाम कभू न तजौं न तजौं न तजौं रे॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आध्यात्मिक काशी

महामहोपाध्याय डाक्टर गोपीनाथ कविराज

भगवान् शंकराचार्य ने एक स्तोत्र में आध्यात्मिक काशी का उल्लेख किया है—'सा काशिकाऽहं निजबोधरूपा।'

हमलोग वर्तमान समय में जिस काशी के साथ परिचित हैं, वह तो एक क्षेत्र है अर्थात् पृथ्वी का एक स्थलविशेष है। रचना के वैशिष्टय से यह भूमि काशी मुक्तिक्षेत्र में परिणत हो गयी है, क्योंकि यह बात प्रसिद्ध है कि काशी में मृत्यु होने पर जीव को मुक्तिलाभ हो जाता है। यह काशी भारतवर्ष की उत्तरवाहिनी गंगा तट पर अवस्थित है—यह सर्वजन प्रसिद्ध है। यह पार्थिव काशी क्षेत्र की दृष्टि से अन्य तीर्थस्थानों से अधिक महिमाशाली है। काशी जो कि उत्तरवाहिनी गंगा तट पर है, इसे छोड़कर उत्तर काशी और दक्षिण काशी नामक दो अन्य स्थान प्रसिद्ध हैं, परन्तु इन दोनों की महिमा इतनी अधिक नहीं है। जिस काशी के उत्तर में वरुणा, और दक्षिण में असी और मध्य में गंगा के तट पर क्षेत्र का प्रकाश है, उसकी महिमा ही सबसे अधिक है। इस काशी की महिमा यह है कि यहाँ मरण मात्र से स्वयं विश्वनाथ जीव को मुक्ति प्रदान करते हैं और उसकी ऊर्ध्वगति सिद्ध हो जाती है। इस विषय पर यहाँ विशेष चर्चा करना निरर्थक है।

भगवान् शंकराचार्य ने जिस निजबोधरूपा काशी का उल्लेख किया है, वह इससे भिन्न है। निजबोध अथवा आत्मबोध इसी काशी का स्वरूप है। वह काशी धाम ज्ञानी के लिए प्राप्य है, अज्ञानी उस ज्ञानपीठ को प्राप्त नहीं कर सकता। यह प्रसिद्ध है कि साधारण जीव जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं से सम्बन्ध रखता है। आवर्त्तक्रम से इन्हीं का पुनः-पुनः उदय होता है। जबतक अज्ञान का नाश न हो तबतक यही स्थिति रहती है। यही तीनों अवस्था संसार अवस्था है, ज्ञानी की अवस्था जीवन्मुक्त की अवस्था है। वह संसार से ऊर्ध्व में है। सद्गुरु की कृपा से जब जीव को सद्ज्ञान मिल जाता है तब एक पारमार्थिक सत्ता का आभास आ जाता है। सत्य ज्ञान की प्रभा से ऊर्ध्वगति का विकास होता है। देहात्मबोध धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है और मध्याकर्षण शक्ति छूट जाती है। उस समय एक सरल गति काम करती है जो मूलाधार से उठकर आज्ञाचक्र का भेदन करते हुए सहस्रार तथा ब्रह्मरन्ध्र की ओर गयी है। अज्ञान अवस्था में वक्र नाड़ियों का प्रभाव रहता है। असंख्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाड़ियों में इड़ा तथा पिंगला सुषुम्ना के दोनों तरफ इनकी गति चलती है। जाग्रत स्वप्न तथा सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं में इड़ा-पिंगला की क्रिया होती है, देहात्मबोध होता है।

सुषुम्ना आभासरूप में प्रकाशमान है। जाग्रत अवस्था में इन्द्रिय द्वार से क्रियाएँ होती हैं, रूप-रस-गन्ध इत्यादि का साक्षात्कार होता है। बाहरी जगत् देखने में आता है। यह अज्ञान जगत् भी अनन्त है। जीव के ऊपर भौतिक आकाश विराजमान है। स्वप्नावस्था में इन्द्रियों का कार्य नहीं होता। यह वाहर का आकाश उस समय चिद् आकाश के रूप में परिणत हो जाता है। यहाँ जाग्रत का संस्कार लेकर कार्य होता है, यह भी अज्ञान का जगत् है। जाग्रत और स्वप्न के बाद सुषुप्ति की अवस्था है। यहाँ अज्ञान का आवरण रहता है। परन्तु सद्गुरु की कृपा हो जाने पर इस स्थिति में परिवर्त्तन आ जाता है, उस समय ऊर्ध्वगति का प्राधान्य रहता है, देहात्मबोध शिथिल हो जाता है। मध्याकर्षण की क्रिया नहीं रहती। यहाँ वहिर्जगत् या स्वप्नमय जगत् का भान नहीं रहता। सर्वत्र एक चिदाकाश का ही प्रसंग रहता है। इस चिदाकाश में गुरु कृपा से ऊर्ध्वगति पाकर साधक को चलना पड़ता है। इस गति में देश तथा काल का सम्बन्ध भी बदल जाता है। श्वास-प्रश्वास की क्रिया भी शान्त हो जाती है। स्थूल देह का अभिमान बिलकुल नहीं रहता। जीव सतत माया राज्य में रहता है। परन्तु यह है—योगमाया का राज्य। माया के राज्य में देश का बोध, काल का बोध रहता है और मध्याकर्षण की क्रिया रहती है। देहात्मबोध रहता है, मन की क्रिया भी रहती है। परन्तु योगमाया के राज्य में यह सब नहीं रहता, क्योंकि उस राज्य में जो जागृति है, वही यथार्थ जागरण है। उसमें क्रमशः ऊर्ध्वगति चलती रहती है। सर्वप्रथम अर्द्धमात्रा का आविर्भाव होता है। उसके बाद क्रमशः देश, काल तथा मन के सूक्ष्मतर संपादन होते रहते हैं। इस योगमाया के राज्य में अर्द्धमात्रा क्रम से विभाग होते रहते हैं। सबसे पहले ईश्वर की भूमि है, इसे बिन्दु कहते हैं। इस अवस्था में जीव सिद्धि-लाभ करता है, सर्वज्ञ हो जाता है, संपूर्ण विश्व देखने में आता है।

इसके वाद नाद की भूमि है। यह है सदा शिव की भूमि। इस समय निरोधिका नामक स्तर भेद करके जाना पड़ता है। निरोधिका में समग्र विश्व का पिण्ड या ब्रह्माण्ड में ज्ञान आता है। यह ज्ञान आत्मभाव के रूप में अर्थात् नाद के समय समग्र विश्व का अपने स्वजन के रूप में अनुभव होता है। उस समय कोई शत्रु ज्ञात नहीं होता। सभी अपने लगते हैं। नाद और नादान्त शरीर के भीतर क्रिया करती हैं। नादान्त के बाद ऊर्ध्वगति लाभ करके ब्रह्मद्वार से देह का भेद हो जाता है। इस समय साधक रहता है—पिण्ड तथा ब्रह्माण्ड के बाहर। इसका नाम है—शून्य या वायड [Void]।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तांत्रिक लोग इस स्थान पर व्यापिनी कला का अनुभव करते हैं। इसके बाद है—महाशून्य। महाशून्य के बाद समना भूमि है। यह विश्व के चालक ईश्वर का अर्थात् शिव का स्थान है। यहाँ मन, तंत्र अत्यन्त सूक्ष्म हो जाता है, परन्तु रहता है। देश और काल भी सूक्ष्म हो जाता है, परन्तु रहता है। यह है विश्व में रहकर सबसे उच्चतम स्थिति। यह है—शिव-शक्ति का स्थान। जीव त्रिगुणात्मिका प्रकृति भेद करके कैवल्य पार होता है। माया को भेद करता है। वह मायिक जगत् के अधिष्ठाता ब्रह्म को भेद करता है। उसके बाद महामाया को भेद करता है। यह सर्वापेक्षया उच्चतम स्थिति है जिसे सर्व धर्म में ट्रिनिटी [Trinity] कहते हैं। वह स्थल यह है—शिव, शक्ति, शुद्ध जीव। तंत्र में है, ईसाई धर्म में है, बौद्ध धर्म में है, शैवागम में है, सर्वत्र है, परन्तु यह पूर्णत्व नहीं है। इसके बाद शिव-शक्ति का जो किंचित् भेद है, जीव और शक्ति का जो भेद है, सब दूर हो जाता है। वह है—निष्कल अवस्था। जिसे वर्तमान दार्शनिक इण्टिग्रेशन [Integration] कहते हैं। वहाँ एक अखण्ड सत्ता है, वहाँ शिव है, वही शक्ति है। यह अवस्था प्राप्त करने के लिए साधन-बल काम नहीं आता। इस अवस्था में इस पूर्ण पद से महाकृपा अथवा अनुग्रह शक्ति का संचार होता है। इसे उन्मनी शक्ति कहते हैं। इस शक्ति से आत्मा को परम स्थान प्राप्त होता है। वहाँ मन नहीं है, देश नहीं है, संस्कार आदि कुछ नहीं है, वह साकार नहीं है, निराकार भी नहीं है, अखण्ड अद्वैत सत्ता है। शुद्ध प्रकाश की विमर्श शक्ति एकाकार होकर प्रकाशित होती है। इसका नाम पूर्ण तत्त्व है जो तत्त्वातीत होते हुए भी परम तत्त्व है। शैव लोग इसे परम शिव कहते हैं। शाक्त लोग इसे पराशक्ति कहते हैं। भिन्न-भिन्न संप्रदाय में इसके भिन्न-भिन्न नाम हैं। यही पूर्ण वस्तु है जिसे ऐबसोल्यूट [Absolute] कहते हैं। यह जीव, ईश्वर, प्रभृति तत्त्वों से ऊपर है। साकार भी यही है, निराकार भी यही है, दूर भी यही है, निकट में भी है, यही परम स्थान है, यही निज बोधरूपा है, यही काशी है। शंकर की 'निजबोध रूपा काशी' इसी का बोध कराती है। वहाँ निर्दिष्ट देश, काल बोध नहीं है। यह कैवल्य से विलक्षण है। जगत् के अधिष्ठाता परमेश्वर से भी विलक्षण है। यह है अद्वैत भूमि। इसी का नाम है—काशी। शंकर ने इसी काशी को 'निजबोधरूपा काशी' कहा है।

पूर्वोक्त विवरण में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति रूपी आवर्त्तक जबतक रहता है तबतक वह स्थिति बद्ध जीव की है, उसके बाद अर्द्धमात्रासे लेकर अर्थात् ईश्वर भूमि से लेकर जगत् अधिष्ठाता शिव तत्त्व है, उसके बाद है जीवन्मुक्ति।

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानव-धर्म

डॉ० शान्तिप्रकाश आत्रेय

विषय परिचय

मानव धर्म को जानने व समझने के लिये हमें मानव और धर्म इन दोनों शब्दों की अलग-अलग व्याख्या करना आवश्यक हो जाता है। मानव धर्म में मानव ज्ञान निहित है। अतः मानव धर्म विवेचन से पूर्व मानव क्या है इसका विवेचन होना चाहिये। मानव की धारणा विभिन्न विचारकों ने विभिन्न प्रकार से बताई है। विचारकों में इस विषय को लेकर पारस्परिक विरोध है। यहाँ इस लेख में संक्षेप में मानव सम्बन्धी कतिपय मुख्य विचारों का विवेचन ही पर्याप्त है। उसके द्वारा ही मानव धारणा को निश्चित कर धर्म को समझा जा सकता है। हमने भारतीय एवं पाश्चात्य भौतिकवाद, जैन, बौद्ध, सांख्य-योग, न्याय-वैशेषिक, गीता, उपनिषद्, योगवासिष्ठ, तथा वेदान्त के अनुसार मानव की धारणा के विषय में आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मानव केवल स्थूल शरीर मात्र नहीं है। स्थूल शरीर के साथ-साथ वह सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर एवं आत्मा भी है। सर्वव्यापी चेतन सत्ता ईश्वर ही मानव में आत्मा रूप से विद्यमान है। वही स्थूल, सूक्ष्म, तथा कारण शरीर में अपने को अभिव्यक्त करता रहता है। मानव भी संस्कारों तथा वासनाओं के अनुसार अनेक प्रकार के होते हैं। उसे भी जानना चाहिये। मानव के स्वरूप एवं प्रकारों को निर्धारित करने के उपरान्त धर्म को समझना भी आवश्यक हो जाता है क्योंकि इसके विषय में भी विभिन्न मत व धारणायें प्रचलित हैं। अलग-अलग दोनों शब्दों की व्याख्या करने के बाद मानव धर्म का विवेचन करना चाहिए। वास्तविक धर्म अपने इस मानव स्वरूप को पूर्ण रूप से जानना ही है। अतः आत्मोपलब्धि ही सच्चा धर्म है। उसको प्राप्त करने के साधनों का भी थोड़े में विवेचन होना चाहिये।

मानव की धारणा :[1]

भौतिकवादियों के अनुसार मानव की धारणा का आलोचनात्मक विवेचन[2]

आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेषणों के द्वारा भी हम अभी तक मानव के यथार्थ एवं पूर्ण

१. योग मनोविज्ञान (Indian Psychology) डॉ० शान्तिप्रकाश आत्रेय, सिटी पैलेस, बलरामपुर, गोण्डा (उ०प्र०)।
"Yoga as a System for Physical, Mental & Spiritual Health"
(Ph.D. Thesis—Dr. S.P. Atreya)
A History of Indian Philosophy—Dasgupta.

2. Lokayata—A study in Ancient Indian Materialism—Debiprasad Chattopadhyaya.

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वरूप का ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाये हैं। मनुष्य केवल भूतों के द्वारा निर्मित स्थूल शरीर मात्र नहीं है जैसा कि भारतीय चार्वाक दर्शन तथा आधुनिक वैज्ञानिक लोग मानते हैं। उसे हम केवल अन्तःस्रावी पिण्डों के स्राव को रासायनिक क्रिया-प्रतिक्रिया मात्र के द्वारा भी समझाने में सफल नहीं हो सके। जीव विज्ञान भी मानव के पूर्णरूप को व्यक्त नहीं कर सकता है क्योंकि मनुष्य केवल जैविक प्राणी ही नहीं है उसमें मानसिक जीवन भी विद्यमान है जिसका अध्ययन मनोविज्ञान के अन्तर्गत होता है। किन्तु आधुनिक मनोविज्ञान भी तो केवल मानव के आंशिक स्वरूप का ही ज्ञान प्रदान करता है। मानव केवल चेतन तथा अचेतन ही नहीं है वह अति चेतन भी है जिसका विवेचन मनोविज्ञान नहीं करता है। परामनोविज्ञान के अन्वेषणों ने मानव के गहरे स्वरूप एवं शक्तियों का पता लगाया है। वे मनुष्य में आध्यात्मिक शक्ति को सिद्ध करते हैं जो कि शारीरिक परिवर्तन करने की सामर्थ्य रखती है। इसके नियम प्राकृतिक नियमों से भिन्न हैं। यह देशकाल से सीमित नहीं है। प्राचीन भारतीय अनुसंधानकर्त्ताओं ने इस क्षेत्र में अत्यधिक कार्य किया था जो कि आधुनिक विज्ञान अभी तक नहीं कर पाया है।

भारतीय भौतिकवाद मनुष्य को केवल पृथ्वी, जल, तेज तथा वायु के द्वारा निर्मित मानते हैं। उनके अनुसार चेतना इन तत्त्वों के मिश्रण का परिणाम मात्र है। वे इस चेतना को ही आत्मा मानते हैं जो शरीर की मृत्यु के साथ ही विनष्ट हो जाती है। मृत्यु के बाद विद्यमान रहनेवाली आत्मा को चार्वाक नहीं मानते। पाश्चात्य तथा भारतीय दोनों भौतिकवादी मन को मस्तिष्क की क्रिया मात्र मानते हैं। मनुष्य उनके अनुसार केवल चेतन तथा अचेतन अवस्थाओं वाला शरीर मात्र ही है। तथ्यों की दृष्टि से यह सिद्धान्त बिलकुल सीमित एवं असंतोषप्रद है। चेतना को शरीर का गुण मानने पर स्मृति को नहीं समझाया जा सकता है। एक व्यक्ति का अनुभव दूसरा व्यक्ति कैसे जान सकता है। जवानी का परिवर्तनशील शरीर बचपन के शारीरिक अनुभवों को कैसे जान सकता है। चेतना शरीर का स्थायी तत्त्व नहीं है क्योंकि मृत शरीर में चेतना नहीं रहती है। चेतना शरीर का गुण नहीं है क्योंकि गुण गुणी से अलग नहीं रह सकता। स्थूल शरीर को ही व्यक्तित्व मानना तथा यह कहना कि स्थूल शरीर के नष्ट होने पर व्यक्तित्व भी समाप्त हो जाता है ठीक उसी प्रकार से है जिस प्रकार से यह कथन कि बिजली के बल्व फूट जाने या फ्यूज हो जाने पर बिजली ही नहीं रह जाती तथा उस बल्व के स्थल पर कोई भी बल्व नहीं जल सकता। इस प्रकार की धारणा मूर्खतापूर्ण धारणा है। इस मूर्खतापूर्ण धारणा का आधार भौतिकवाद है।

चार्वाक को छोड़कर सब प्राचीन भारतीय अनुसंधानकर्त्ता मानव को शरीर, मन तथा आत्मा का जटिल रूप मानते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बौद्धों के अनुसार मानव की धारणा का आलोचनात्मक विवेचन

बौद्ध मानव को पंच स्कन्धों (१. रूप स्कन्ध २. विज्ञान स्कन्ध, ३. वेदना स्कन्ध ४. संज्ञा स्कन्ध तथा ५. संस्कार स्कन्ध) का संघात मात्र ही मानते हैं।

रूप स्कन्ध : पंच ज्ञानेन्द्रिय "श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, रसना तथा घ्राण", उनके पाँच ग्राह्य विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गंध) तथा अविज्ञप्ति शरीर (कर्मों द्वारा प्रदान की हुई अव्यक्त शक्ति जो उपयुक्त अवसर पर अपने परिणामों को उत्पन्न करती है) रूप स्कंध हैं।

विज्ञान स्कन्ध : आलय विज्ञान तथा प्रवृत्ति विज्ञान के भेद से यह दो प्रकार का होता है। इन दोनों प्रकारों के अन्तर्गत आठ प्रकार का ज्ञान आता है। १. चक्षुर्विज्ञान २. श्रोत्र विज्ञान, ३. घ्राण विज्ञान, ४. रासन विज्ञान, ५. काय विज्ञान, ६. मनोविज्ञान, ७. क्लिष्ट मनोविज्ञान भेद से प्रवृत्ति विज्ञान सात प्रकार का होता है। सदैव बना रहने वाला, प्रवृत्ति विज्ञान का कारण तथा अहं इस स्वरूप वाला विज्ञान आलय विज्ञान है। अतः कुल आठ प्रकार के विज्ञान हुए जो कि विज्ञान स्कन्व कहे जाते हैं।

वेदना स्कन्ध : सुख, दुःख तथा उपेक्षा इन तीनों की अवस्था विशेष को ही वेदना स्कन्ध कहते हैं। प्रिय वस्तु की प्राप्ति सुख, अप्रिय वस्तु की प्राप्ति दुःख तथा न प्रिय न अप्रिय वस्तु की प्राप्ति से उपेक्षा हो जाती है।

संज्ञा स्कन्ध : नाम रूपादि का उल्लेख करने की विज्ञान धारा को संज्ञा स्कन्ध कहते हैं। यह सविकल्पक ज्ञान रूप है। इसमें विशेषण-विशेष्य तथा इनके सम्बन्ध का ज्ञान होता है।

संस्कार स्कन्ध : मानसिक क्रियाओं की समष्टि को ही संस्कार स्कन्ध कहते हैं। सुख, दुःख तथा ज्ञान से राग, द्वेष, मद, अभिमान, धर्म, अधर्म आदि पदार्थों की उत्पत्ति होती है जो कि ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा संकल्पात्मक समस्त मानसिक अवस्थाओं तथा मानसिक क्रियाओं का समुच्चय है। ये सब मानसिक प्रवृत्तियाँ संस्कार के अन्तर्गत आती हैं। अतः सब मानसिक क्रियाओं के समुच्चय को ही संस्कार स्कन्ध कहते हैं।

मानव उपर्युक्त पंच स्कन्धों का संघात मात्र है। उसमें क्षणिक निरन्तर परिवर्तनशील मानसिक अवस्थाओं के अतिरिक्त कोई स्थायी आत्मा नहीं है। चेतना की निरन्तर प्रवाहित धारा को ही आत्मा कहते हैं। स्थायी आत्मा की धारणा केवल अज्ञान के कारण है। आत्मा तो केवल विज्ञान प्रवाह मात्र है। यह मत भी हमें समीचीन प्रतीत नहीं होता। शंकराचार्य जी के अनुसार आत्मा तो स्वतः सिद्ध है। उसके नहीं कहने में भी उसकी सिद्धि विद्यमान है। आत्मा का होना तो निर्विवाद सिद्ध है। उसके बिना हम केवल प्रत्यक्ष तथा स्मृति ज्ञान को

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ही नहीं बल्कि संघात को भी नहीं समझा सकते हैं। क्षणिक मानसिक अवस्थाओं को मानसिक अवस्थाओं के रूप में देखने वाला क्षणिक नहीं हो सकता वह तो हर अवस्था का द्रष्टा होने के नाते निश्चित रूप से स्थायी द्रव्य है। समझ में नहीं आता कि क्षणिकवादी सिद्धान्त के द्वारा पुराने संस्कारों की वर्तमान सत्ता कैसे बताई जा सकती है जिसके आधार पर वे स्मृति ज्ञान का होना बताते हैं। स्मरण तथा पहचान उसी के द्वारा हो सकती है जिसने पूर्व में अनुभव किया हो क्योंकि अनुभवकर्त्ता तथा स्मरणकर्त्ता कभी भी दो भिन्न-भिन्न व्यक्ति नहीं हो सकते हैं। पूर्व ज्ञान के द्वारा उत्तर ज्ञान में शक्ति की उत्पत्ति इस सिद्धान्त के अनुसार असम्भव है। इस वासना का आधार ही असिद्ध है। इस सिद्धान्त में "कृत प्रनाश" दोष है। क्षणिकवाद के सिद्धान्त से कर्म का कर्त्ता तथा कर्म फल भोक्ता दो भिन्न-भिन्न व्यक्ति हैं। अकृत कर्मों का फल प्राणी को भोगना पड़ता है। श्रृंखला के अलग-अलग व्यक्तियों में कोई कार्य कारण सम्बन्ध नहीं हो सकता। विनष्ट व्यक्ति अपनी कारण शक्ति को दूसरे को प्रदान नहीं कर सकता। क्षणिकवाद तो ज्ञान हो को असम्भव बना देता है। ज्ञान तो बिना ज्ञाता के हो ही नहीं सकता। ज्ञान आवश्यक है जो सिद्धान्त इसे नहीं समझा सकता वह तो निश्चित रूप से अमान्य है। एक स्थायी आत्मा के माने बिना तो पंच स्कन्धों का संघात भी असम्भव है। इस सिद्धान्त के आधार पर तो पुनर्जन्म तथा मोक्ष की धारणा ही असम्भव है किन्तु इन्होंने पुनर्जन्म और मोक्ष दोनों को माना है। दुःख से पूर्ण निवृत्ति को इन्होंने निर्वाण कहा है। दुःख से निवृत्ति प्राप्त करने के इनके द्वारा बताये मार्ग पर चलना ही धर्म है। निर्वाण प्राप्त करना ही इनका परम लक्ष्य है। यही इनके अनुसार परम धर्म है किन्तु क्या यह बिना स्थायी आत्मा के सम्भव है! प्रश्न उपस्थित होता है कि किसका निर्वाण! अतः स्थायी आत्मा को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

चार्वाक तथा बौद्धों को छोड़कर सभी भारतीय हिन्दू दर्शन किसी न किसी रूप से स्थायी आत्मा को मानते हैं। सच तो यह है कि आत्मा को मानने न मानने का प्रश्न ही नहीं उठता वह तो अनिवार्य तत्त्व है।

न्याय वैशेषिक के अनुसार मानव की धारणा का आलोचनात्मक विवेचन

न्याय वैशेषिक के अनुसार शरीर पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय, मन तथा आत्मा सब के संयोग से मानव निर्मित है। अदृष्ट (पूर्व जन्म के पुण्य पाप) के द्वारा इन सब का संयोग तथा स्वरूप निश्चित होता है। शरीर पंच भूतों से निर्मित है। शरीर में आत्मा तथा मन ही मानव का नित्य स्वरूप है। शरीत तो अदृष्टानुसार परिवर्तित होता रहता है। आत्मा तथा मन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की अपेक्षा से तो शरीर, पंच ज्ञानेन्द्रिय तथा पंच कर्मेन्द्रिय अस्थायी हैं। इनका समाप्त होना ही मृत्यु है। आत्मा मन के साथ अदृष्ट एवं संस्कार सहित मृत्यु के बाद नवीन शरीर धारण कर क्रियाशील होता है। जब तक तत्त्व ज्ञान के द्वारा मोक्ष नहीं प्राप्त होता तब तक आत्मा इसी प्रकार से एक शरीर से दूसरे शरीर में घूमती रहती है। मन अणु रूप तथा नित्य है। एक आत्मा के साथ एक ही मन रहता है। आत्मायें अनन्त हैं। प्रत्येक व्यक्ति की अलग-अलग आत्मा होती है। न्याय वैशेषिक के अनुसार आत्मा का स्वरूप अचेतन होता है किन्तु मन के सम्बन्ध से उसी चेतना का उदय होता है। इस धारणा के अनुसार तो मोक्ष अर्थहीन है। भला चेतनाहीन मोक्ष की कौन इच्छा करेगा। आत्मा का अचेतन स्वरूप मानने पर तो चेतना को समझाना ही कठिन हो जाता है। अगर चेतना केवल बाह्य जगत् के सम्पर्क से पैदा होती है तो फिर चार्वाक की आत्मा की धारणा में विशेष भेद कोई नहीं रह जाता है।—चेतना को आत्मा का आकस्मिक गुण मानना उसे जड़वादियों की आत्मा की धारणा के समान बना देता है। अतः मानव की यह धारणा भी पूर्ण रूप से ठीक नहीं है अर्थात् दोषपूर्ण है। इतना अवश्य है कि स्थूल शरीर के ही व्यक्तित्व मानने वालों के मतमें शरीर के नष्ट होजाने पर व्यक्तित्व भी समाप्त हो जाता है। ऐसा मानने वालों से न्याय वैशेषिक का सिद्धान्त बहुत ऊंचा है। इनके अनुसार मानव नष्ट नहीं होता वह अनेक जन्म प्राप्त करता है। प्रत्येक जन्म में भिन्न-भिन्न शरीर धारण करता रहता है। तत्त्वज्ञान प्राप्त होने पर ही वह संसार चक्र के दुःखों से मुक्त होता है। मोक्ष प्राप्त करना ही व्यक्ति का परम लक्ष्य है। यही उसका सच्चा धर्म है।

सांख्य-योग के अनुसार मानव की धारणा

सांख्य योग के अनुसार आत्मा समस्त वासनाओं सहित सूक्ष्म शरोर तथा स्थूल शरीर मिलकर व्यक्ति कहलाता है। अतः व्यक्ति से केवल स्थूल शरीर का ही सम्बन्ध नहीं है बल्कि सूक्ष्म शरीर तथा आत्मा का भी सम्बन्ध है। सांख्य में आत्मा मुक्त और बद्ध के भेद से दो प्रकार की होती है। मुक्त आत्मा शुद्ध चेतन स्वरूप है। जिसका अन्य किसी तत्त्व से सम्बन्ध नहीं है। बद्ध जीव शरीर से बंधा हुआ प्रतीत होता है। शरीर भी सूक्ष्म और स्थूल भेद से दो प्रकार के होते हैं। स्थूल शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश इन पांच तत्त्वों से निर्मित है। जिसमें पृथ्वी तत्त्व मुख्य है। यह स्थूल शरीर मृत्यु काल तक रहता है किन्तु सूक्ष्म शरीर जीव के साथ तब तक सम्बन्धित रहता है जब तक कि उसको मोक्ष प्राप्त नहीं हो जाता। सांख्य के अनुसार लिंग, अहंकार, मन, पंचज्ञानेन्द्रिय तथा पंचतन्मात्राओं के द्वारा निर्मित है। सांख्य अधिष्ठान शरीर को भी मानता है जो कि पंचतन्मात्राओं से उत्पन्न सूक्ष्म तत्त्वों से निर्मित है। यह अधिष्ठान लिंग शरीर का आधार है। विज्ञान भिक्षु ने इकतालीसवीं कारिका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के आधार पर इसे सिद्ध किया है। लिंग शरीर बिना आधार के जब नहीं रह सकता तो स्थूल शरीर के न रहने पर भी अधिष्ठान शरीर ही लिंग का आधार रूप होता है। कारिका के अनुसार जिस प्रकार से बिना आधार के चित्त नहीं रह सकता या बिना किसी पदार्थ के छाया नहीं रह सकती ठीक उसी प्रकार से लिंग शरीर भी बिना विशेष के नहीं रह सकता।[1] पंच भूतों को ही विशेष कहा गया है। पंच तन्मात्राएं प्रविशेष हैं। सूक्ष्म भूत भी विशेष ही हैं।

इन उपर्युक्त शरीरों में से स्थूल शरीर तो मृत्यु के समय समाप्त हो जाता है, उसके पाँचों तत्त्व विश्व के पाँचों तत्त्वों में मिल जाते हैं। किन्तु सूक्ष्म शरीर मृत्यु पर समाप्त नहीं होता। स्थूल शरीर के नष्ट हो जाने पर आत्मा लिंग तथा अधिष्ठान शरीर सहित स्थूल शरीर को छोड़ देती है। इसलिये सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर की अपेक्षा स्थायी है किन्तु नित्य नहीं है क्योंकि मोक्ष के उपरान्त नहीं रह जाता है। अगर यह नित्य हो तो आत्मा मुक्त नहीं हो सकती। लिंग शरीर तथा अधिष्ठान शरीर के साथ आत्मा स्थूल शरीर के नष्ट होने पर उसे छोड़कर दूसरी दुनिया में विचरण करती है। इसीलिये इसे आतिवाहिक शरीर कहते हैं। स्थूल शरीर का कारण सूक्ष्म शरीर है। सूक्ष्म शरीर के साथ संस्कार रूप से अनेक जन्मों के कर्माशय विद्यमान रहते हैं।[2] ये धर्म-अधर्म रूप कर्माशय, मन, बुद्धि, अहंकार (अन्तःकरण) से जिन्हें योग में चित्त कहा गया है, सम्बन्धित हैं। सूक्ष्म शरीर की गति में कोई भी रुकावट उपस्थित नहीं हो सकती। सूक्ष्म शरीर कहीं भी प्रवेश कर सकता है, तथा वह समस्त स्थूल शरीर में व्याप्त रहता है।[3] सूक्ष्म शरीर त्रिगुणात्मक प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति के प्रारम्भ में ही उत्पन्न हो जाता है तथा महाप्रलय अवस्था तक स्थायी रूप से परिवर्तनशील जगत् के साथ विद्यमान रहता है। महाप्रलय काल में भी यह बीज रूप से प्रकृति में विद्यमान रहता है तथा सृष्टि काल में पुनः आत्मा से सम्बन्धित होकर धर्म अधर्म रूपी कर्मों का भोग भोगता रहता है। भोगों को भोगने के लिये इसे स्थूल शरीर की आवश्यकता पड़ती है। इसीलिये यह कर्मों का फल भोगने के लिये एक शरीर से दूसरे शरीर को बदलता रहता है। कर्मों का फल भोगने के लिये ही आत्मा सहित सूक्ष्म शरीर उपयुक्त स्थूल शरीरों को धारण करता रहता है।

निष्क्रिय अपरिणामो पुरुष का प्रकृति के इस विकार से कोई सम्बन्ध न होते हुए भी

---

१. सां० का०—३९।
२. इसी ग्रन्थ, योग मनोविज्ञान के सोलहवें अध्याय को देखने का कष्ट करें।
३. सां० का०—४०।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वह अज्ञान के कारण इनसे सम्बन्धित रहता है। पुरुष के बद्ध होने का कारण अज्ञान ही है अत: व्यक्तित्व से अज्ञान को अलग नहीं किया जा सकता। जब तक अज्ञान समाप्त नहीं होता तब तक आत्मा सन्निकर्ष दोष के कारण अपने को त्रिगुणात्मक आदि समझता हुआ बद्ध बना रहता है। योग के अनुसार अनन्त आत्माओं के साथ वासनाओं सहित अनन्त सूक्ष्म शरीर लगे हुए हैं। इस रूप से व्यक्तित्व की समाप्ति मोक्ष से पूर्व हो ही नहीं सकती। क्योंकि प्रलय कालीन अवस्था में भी व्यक्तित्व अव्यक्त रूप से अर्थात् सुप्तावस्था को प्राप्त होकर विद्यमान रहता है जो कि सृष्टि काल में पुनः जाग्रत् अवस्था को प्राप्त होता है। जाग्रत अवस्था को प्राप्त होकर वह गत्यात्मक रूप धारण कर लेता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समस्त बद्ध जीव त्रिगुणात्मक प्रकृति से सम्बन्धित होने तथा इन तीनों गुणों के विषम अनुपात के कारण भिन्न भिन्न व्यक्तित्व वाले होते हैं। यही नहीं बल्कि कर्माशयों की भिन्नता के कारण भी व्यक्तित्व में भिन्नता हो जाती है। कोई भी दो जीव समान व्यक्तित्व वाले नहीं हैं। उनकी वासनाओं तथा अनादि काल के अनन्त जन्मों के संस्कारों में भिन्नता होने के कारण वे सब ही भिन्न व्यक्तित्व वाले होते हैं। उनका यह व्यक्तित्व निरन्तर परिवर्तनशील होने के कारण मुक्तावस्था काल तक स्थायी होते हुए भी गत्यात्मक है।

सांख्य योग के अनुसार व्यक्तित्व अनादि काल से चला आ रहा है। उसमें कर्मानुसार परिवर्तन होता चलता है। उन कर्मों के अनुसार ही चित्त पर संस्कार अंकित होते हैं जो कि कुछ तो संस्कार रूप से पड़े रहते हैं तथा कुछ कर्म मृत्यु के समय प्रधानता प्राप्त कर लेते हैं। उन प्रधानता प्राप्त प्रारब्ध कर्मों के अनुसार ही व्यक्ति नवीन शरीर धारण करता है। इस प्रकार से प्रारब्ध कर्मानुसार व्यक्ति जन्म लेता है। तथा विशिष्ट भोगों को भोगने के लिये उपयुक्त शरीर को ही वह ग्रहण करता है। इस प्रकार से उसके व्यक्तित्व में परिवर्तन पूर्व जन्मों से ही बहुत कुछ निर्धारित हो जाता है। व्यक्ति प्रारब्ध कर्मों को भोगने के लिये ही विशिष्ट माता-पिता के रजवीर्य के संयोग से एक विशिष्ट घर में जन्म लेता है। उसको कर्मों के अनुरूप ही माता-पिता, शरीर की बनावट, घर आदि प्राप्त होते हैं। इस प्रकार से धर्म अधर्म रूप कर्माशय के द्वारा जाति आयु तथा भोग प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त मनुष्य में स्वतन्त्र इच्छाशक्ति है जिसके द्वारा वह अनेक प्रकार के कर्म स्वतन्त्र रूप से भी करता है। इन क्रियमाण कर्मों में से कुछ कर्म प्रारब्ध कर्मों से मिश्रित होकर इसी जन्म में फल प्रदान करते हैं तथा कुछ क्रियमाण कर्म अनेक पूर्व जन्मों के संचित कर्मों में मिल जाते हैं। इस रूप से हम यह कह सकते हैं कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का अपनी इच्छानुसार विकास कर सकता है। वह क्रियमाण कर्मों के द्वारा अपने व्यक्तित्व में परिवर्तन लाता है। शरीर का ढांचा, रूप रंग, पारिवारिक परिस्थिति,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सामाजिक सम्बन्ध तथा आर्थिक अवस्था आदि पाश्चात्य आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा कहे गये व्यक्तित्व के समस्त निर्धारिकों को व्यक्ति अपने पुरुषार्थ से बदल सकता है। वर्तमान जीवन में ही उनमें व्यक्ति स्वयं बहुत कुछ परिवर्तन लाता है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की क्रियाशीलता तक में व्यक्ति अपनी इच्छा से परिवर्तन ला सकता है। इस तरह से उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व व्यक्ति के द्वारा ही अनन्त जन्मों के कर्मों के द्वारा परिवर्तित होता आ रहा है तथा इस परिवर्तन में इस जन्म के कर्मों का भी हाथ है।

सांख्य योग के अनुसार व्यक्तित्व को विकसित करने के लिये विशिष्ट प्रकारं के मार्ग हैं। विकास की चरम अवस्था कैवल्यावस्था है। पुरुषों की संख्या अनन्त होने के कारण अगर ठीक-ठीक विचार किया जाय तो कैवल्य प्राप्त हो जाने पर भी उनके भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व रह जाने चाहिए। एक बात अवश्य है कि कैवल्य अवस्था में प्रकृति का सम्बन्ध विच्छेद हो जाने से पुरुष अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है किन्तु पुरुष की अनेकता के कारण हर पुरुष मुक्तावस्था में भी दूसरे पुरुषों से भिन्न ही होगा। वेदान्त के अनुसार मुक्तावस्था को प्राप्त कर लेने पर जीव ब्रह्मत्व को प्राप्त कर लेता है। उस स्थिति में उसका अलग अस्तित्व समाप्त हो जाता है। जब कि सांख्य योग में उसका अलग अस्तित्व बना रहता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व निरन्तर परिवर्तित होते रहने पर भी जब तक वह मुक्तावस्था को प्राप्त नहीं हो जाता तब तक वेदान्त, सांख्य, योग सभी मतों से व्यक्ति का एक विशिष्ट स्थायी व्यक्तित्व बना रहता है। इसमें आत्मायें अलग-अलग विशिष्ट सूक्ष्म शरीरों से सम्बन्धित रहती हैं। जो सम्बन्ध मोक्ष प्राप्त होने पर ही समाप्त होता हैं। इन सूक्ष्म शरीरों के साथ धर्माधर्म रूपी कर्माशय भी रहते हैं। इस प्रकार से आत्मा, समस्त संस्कारों सहित सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीर सब एक विशिष्ट प्रकार से मिल कर व्यक्तित्व कहलाते हैं। आत्मा के साथ सूक्ष्म शरीर का यह सम्बन्ध अज्ञान के कारण है। इस अज्ञान की समाप्ति के बिना इससे छुटकारा नहीं मिलता। अज्ञान के कारण आत्मा की समस्त संस्कारों सहित सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर से सम्बन्धित रूप में रहने की अवस्था ही मानव है। सांख्य-योग के अनुसार विवेक ज्ञान के द्वारा दुखों से ऐकान्तिक तथा आत्यन्तिक निवृत्ति प्राप्त करना ही मानव का परम लक्ष्य है।

(क्रमशः)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमें क्या चाहिए ?

डॉ० श्रीमती सरोज पालिवाल
(प्रिन्सिपल, भारतीय म्युनिसिपल गर्ल्स् कॉलेज, चन्दौसी)

हम क्या हैं ? हमें क्या चाहिए ? इन दोनों प्रश्नों पर मनन करने से विदित होता है कि पहला प्रश्न यथार्थ से एवं दूसरा आदर्श से सम्बन्धित है—हम आज क्या हैं ? यह बात तो यथार्थ की है और हमें अब क्या होना चाहिए यह तथ्य हमारे आदर्श से जुड़ा है ।

साधारणतया देखने में आता है कि सभी जीवात्माएँ सभी योनियों में चाहे जरायुज हो, या अंडज, स्वेदज हो या उद्भिज्ज परम्परागत विकास की ओर उन्मुख हैं—त्रिगुणात्मयी माया के आधीन सृष्टि का कर्म सुगति से चल रहा है—गीता की वाणी है :—

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।

नियति के नियमानुसार तत् तत् योनि का विलय ऊर्ध्वगामी प्रक्रिया के अनुसार ऊपर की ओर उठता है—अर्थात् वृक्षादि उद्भिज्ज प्राणियों का उत्थापन स्वेज योनि में व स्वेदजों का उन्नयन अंडजों में व अंडज पक्षियों का जन्म जरायुज (मनुष्य) योनि में प्रभु की अहैतुकी कृपा से होता ही रहता है । अथवा यों कहिए कि मनुष्य योनि प्रभु-कृपा की ही संसिद्धि है ।

किन्तु नर तन धारण करते ही चेतना का चमत्कार आरम्भ हो जाता है । हित-अहित, स्वार्थ-सिद्धि, भोजन मैथुनादि तक की क्रियाएँ पशु-पक्षी एवं मनुष्यों में समान ही हैं—या यों कहें कि भोजन-क्रिया करते समय मनुष्य प ु क्रिया ही करता है ।

निद्रा के समय भी मानव पशु सीमा में ही केन्द्रित रहता है, पर यही भोजन यदि भगवान् का नाम लेकर उन्हें अर्पित कर प्राप्त किया जाय, तो प्रसाद बन जाता है—इसी प्रकार निद्रा के पूर्व यदि प्रभु-चिन्तन कर लिया जाय, तो प्राणी उत्तरीय चेतना को प्राप्त होता है और निद्रा कुनिद्रा न होकर सुनिद्रा एवं स्वप्न कुस्वप्न न बनकर सुस्वप्न बन जाते हैं—इसी को सत् पुरुषों ने विवेक कहा है ।

हित अनहित पसु पच्छी जाना ।
मानुस तन गुण ज्ञान निधाना ।।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुलसी की वाणी में यही सत्य उद्घाटित होता है।

जीवन को उत्तरोत्तर दिव्यता की ओर ले जाना हमारा एक आदर्श है—योगमय जीवन की आवश्यकता भी एक आदर्श है—यही जीव का मूल मंत्र होना चाहिए—अतः साधक को यही स्मरण रखना चाहिए कि मैं आज क्या हूँ ? और मुझे क्या होना चाहिए ? 'हूँ' और 'चाहिए' में जो अन्तर है, उस खाई का पाटना ही साधक का अथक प्रयास होना चाहिए।

हम साधक करुणामयी माँ के सान्निध्य में जो उनकी वाणी सुनते हैं उसमें 'माँ' सदैव कहती हैं हरि भजन की बात, प्रभु-स्मरण की बात, नर-तन की सविशेष बात, अपनी सीमाओं को पार करने की बात, मानव-चेतना को उठाने की बात, अथवा जड़ता को रूपान्तर कर मुक्तता की बात, शंकाओं को भंग कर शरणागति की बात, द्वैत को नष्ट कर अद्वैत की बात, शोक मोह क्रोध को फेंक कर आनन्द निर्मोह, एवं आह्लाद की बात—'तरति शोकमात्मवित्' यही श्रुति भगवती भी कहती है—'माँ' की पुनीत वाणी का सार भी यही है कि हम साधक आज की स्थिति में सुधार करें। हम आज जो कुछ हैं, उससे अच्छा बनना है—आज की स्थिति से ऊपर उठना है—इस ऊपर उठने को ही हम अपना विकास कहते हैं। यह तभी सम्भव है जब हम अपने नित्य के क्रिया-कलापों की आधार-भूमि 'चेतना' के स्तरों को समझ लें। योगिराज श्री अरविन्द ने चेतना के तीन स्तर बताए हैं।

पहले स्तर में चेतना साधारण कही जाती है—इसी को हम सामान्य चेतना (Ordinary Consciousness) कहते हैं। इस चेतना के अन्तर्गत हम वस्तुओं को इन्द्रिय ज्ञान तथा बहिरंग बुद्धि से ही पहिचानते हैं एवं शक्तियों को उनके बाहरी दिखावे एवं क्रिया-कलापों से ही जान पाते हैं। इस चेतना के राज्य में कभी-कभी कोई मानसिक स्फुरण (intuition) या आध्यात्मिक संदेश मिल जाता है—पर ये 'खेल' केवल क्षणिक होते हैं और इस स्तर पर चेतना मुखर नहीं हो पाती।

चेतना की द्वितीय श्रेणी वह है जिसमें अहं की सीमाएँ, व्यक्तिगत बुद्धि एवं शरीर विलय हो जाते हैं और तब व्यक्ति का परिचय होता है उस विराट् विस्तरण (Cosmic Vastness) से जहाँ पर उसे विराट् शक्ति (Cosmic forces) की लीला, समस्त विश्व शक्ति का दिग्दर्शन होता है—किन्तु सामान्य से विराट् को प्राप्ति एकदम न होकर शनैः-शनैः होती है जैसा कि कहा है :—

शनैः कन्थाः शनैः पन्थाः शनैः पर्वतमस्तके।

सच तो यह है कि इस चेतना के उतरते ही अहम्, शरीर एवं सामान्य बुद्धि अन्तर्हित नहीं हो जाते वरन् ये सब ऊपरी चेतना में ही मिल जाते हैं अर्थात् इनका रूपान्तर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हो जाता है और तब व्यक्ति को अहं बहु स्यामि, मैं अनेक हो जाता हूँ, का श्रुति-कथन चरितार्थ होते दृष्टिगोचर होता है। विश्व के समस्त जीव, समस्त पदार्थ एक ही सत्ता के अनेक दिखाई देते हैं—भक्त नारायण ने इसी भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है :—

नारायण जाके हृदय, सुन्दर स्याम समाय।
डार पात फल फूल में, वाकूँ वही दिखाय॥

वस्तुतः सच तो यह है कि 'स्व' के बदलते ही विश्व के समस्त पदार्थ रूपान्तरित प्रतीत होते हैं—दोष अपनी दृष्टि का ही है। अपनी दृष्टि बदली कि विश्व में सौन्दर्य ही सौन्दर्य प्रतिभासित होता है। अपनी चेतना बदलते ही सत् का साम्राज्य उदय हो जाता है। और तब सत् के अनुभव के ऊपर व्यक्ति अपने को आश्रित करता है—जिसको पाने की मांग थी, वह अपने में ही छिपा था, इस तथ्य का उद्‌घाटन होता है तभी तो स्वामी रामतीर्थ ने कहा है—

देखता था जिसे मैं नदीदा होकर हर सू।
मेरी आँखों में छिपा था मुझे मालूम न था॥

अब व्यक्ति पदार्थों को एक अन्य दृष्टि से देखता है—यहाँ उसे प्रभु की प्रेरणा सीधी मिलती है, अनुभव ईश्वरीय होते हैं। पर समझना यह है कि इस स्थिति में व्यक्ति का देखना-सुनना, खाना, पीना बन्द नहीं होता—उसकी क्रियाएँ तो सब सामान्य ही होती हैं, पर उनमें योग-तथ्य जुड़ जाता है और तभी गीता का यह कथन चरितार्थ हो उठता है।

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।

यहाँ एक बात और ध्यान देने की है कि इस विराट् (Cosmic) चेतना में कभी-कभी अतिरंजित अहम् (magnified ego) की स्वतन्त्रता का खतरा रहता है क्योंकि अहम् ही अविद्यारूपी महामाया का खेल है जो समय-समय पर अपना रूप दिखाती रहती है—विद्या व अविद्या के भेद के लिए व्यक्ति की बुद्धि अपर्याप्त एवं अशक्त है। यहाँ तो व्यक्ति सब कुछ आन्तरिक अनुभव से ही समझता है।

तृतीय श्रेणी में आती है आध्यात्मिक चेतना जिससे व्यक्ति को 'दिव्य ज्ञान' प्राप्त होता है तथा परात्पर सत्ता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं। यही है ब्रह्म-प्राप्ति—यही है वह स्थिति जहाँ 'एकमेवाद्वितीयम्' की श्रुति चरितार्थ होती है—इसे प्राप्त कर 'इदं सर्वं ब्रह्मरूपम्' का भाव सदैव उपस्थित रहता है। यहाँ पहुँचकर व्यक्ति के सम्मुख यह सत्य उद्‌घाटित होता है

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि समस्त सृष्टि भगवान् की है—यह सब कुछ अनिर्वचनीय चैतन्य पुरुष की ही एक अभिव्यक्ति है—वह पुरुष न नित्य है, न अनित्य, न असीम है न ससीम, न एक है न अनेक; वह ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसका वर्णन हमारी वाणी के किसी भी शब्द के द्वारा हो सके और न वह हमारी मन बुद्धि का कोई विचार, उसे धारण कर सकता है—'यतो वाणी निवर्तंते' ऐसा ही श्रुति कहती है।

निष्कर्षतः, हमें आज के भौतिक यथार्थ को फेंककर इसी तथ्य पर आना है, इसी भगवदीय सत्ता के ज्ञान-हेतु उत्तरोत्तर विकास हेतु अग्रसर होना है। इसी उपलब्धि के हेतु हमें अपने अन्तर-स्थित भगवान्, अपने चहुँ ओर व्याप्त विश्वात्मा, नारायण स्वरूप परमेश्वर एवं इसके ऊपर स्थित 'परात्पर' के साथ घनिष्ठ एकत्व एवं प्रगाढ़ सम्पर्क में स्थित होकर कर्म करना है। अहं भाव, भौतिक आवश्यकता, प्राणावेग और लोभ मोह काम वासनाओं के चाबुकों की मार से इधर-उधर न दौड़ना—यही है माँ की वाणी, यही है सच्चा कर्म-योग—जैसा कि माँ अपने श्रीमुख से कहती हैं सुख में दुख में प्रभु का ही तो रूप है—अतः यह समझना है कि यह सृष्टि एक अचिन्त्य सत्य है जिसमें समस्त सम्भाव्य विपरीत एवं अनुकूल वस्तुएँ एवं परिस्थितियाँ संयुक्त हैं—हमारे विरोधी तत्त्व भी वस्तुतः सृष्टि-कर्त्ता के ही भिन्न रूप हैं—इसी आधार पर जीना और पुराने अँधेरे में न भटक कर उत्तरोत्तर एक दिव्य चेतना की ओर उन्मुख होना—यही तो हमें चाहिए, यही है कर्मयोग और यही है 'माँ' की वाणी।

●

प्रेम से भज ले राधेश्याम !

प्रेम के आँसू यमुनाधारा, जिसमें खेले मोहन प्यारा।
मोहन रूप बने जग सारा, मन मन्दिर हो गोकुल धाम ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महात्माओं की झोली से

[संयम सप्ताह के अवसर पर ब्रह्म-महामण्डलेश्वर श्रीश्री १००८ स्वामी महेश्वरानंदजी के दिये हुए प्रवचनों का सारांश]

श्रद्धा के साथ तुम एकाग्रता से उस परमेश्वर की आराधना करो—उसको भूलो नहीं। जाना है—रहना नहीं--दो दिन की दुनिया है। १०० वर्ष के आदमी से पूछा जाय यह १०० वर्ष की ज़िन्दगी कैसे चली गई तो वह कहेगा "चुटकी बजाते चली गई। ,

भगवान्, (यद्यपि वह इस समय अव्यक्त, अगोचर, अचिन्त्य है पर वह) विश्व-द्रष्टा है—उसी की सत्ता से हम जी रहे हैं—और हमें वहीं पहुँचना है। वेदों की बड़ी प्रसिद्ध प्रार्थनाएँ हैं "असतो मा सद् गमय"·····हमारे हृदय में जो असंख्य संकल्प विचार हैं उन सब को हटा दो। हे भगवन् ! हमारे अन्दर से खराब चीज़ें निकालकर अच्छी चीज़ें भर देना। वेद मंत्रों के द्वारा जो प्रार्थना की जाती है उसकी व्याख्या कर रहा हूँ। असत् और सत् दो पदार्थ हैं। असत् क्या है और सत् क्या है—उसका क्या लक्षण है ? जो आदि में न हो, अन्त में न हो, केवल बीच में दिखाई दे वह असत्। (यह शरीर कुछ वर्षों पहले नहीं था और कुछ वर्षों बाद नहीं रहेगा।) जो आदि में रहे—मध्य में रहे—अन्त में रहे वह सत्य। भगवान् ने भी कहा है आदि, मध्य, अन्त में मैं ही हूँ। जो आदि में रहता है और अन्त में रहता है तो वह मध्य में भी ज़रूर होता है यह नियम है ? आप स्वप्न में बढ़िया स्वादिष्ट भोजन खाते हैं पर आँख खुलने पर वह नहीं रहता। राम आदि, अन्त और मध्य में भी है। वह राम सत् रूप है—उसका आप भजन करो। "तुलसी प्रीति संसार की क्यों नहिं तजत।" ९ को Multiply करते जाओ तो वह ९ ही रहेगा पर यदि ८ को Multiply करो तो वह एक-एक घटता जायगा। अन्त में जिसका घटते-घटते अभाव हो जाता है उस संसार को तू छोड़ दे। ऋग्वेद का एक बड़ा अच्छा प्रार्थना मंत्र है। हे भगवन्, आप हमारा मन पवित्र बनावें—पवित्र हो—एकाग्र हो। हम पुनः प्रार्थना करते हैं, हे भगवन् स्वस्ति का लाभ हो, (स्वस्ति माने अविनाशी इष्ट) सद् बोध का कभी विनाश न हो। वह सदा हमारे हृदय में सूर्य्य चन्द्रमा की भाँति बना रहे। विश्व में जिसकी कीर्ति सर्वत्र फैली है—हमारा सम्बन्धी वह परमात्मा है।

अरिष्टनेमि यानी जिस भगवान् की गति को कोई अवरोध नहीं कर सकता। हमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिदिन प्रार्थना करनी चाहिये। प्रथम प्रार्थना करो फिर जप करो। भगवत्-प्रार्थना के द्वारा हम प्रथम अपने मन को भर लें, फिर जप योग करें। जब जप के द्वारा मन और पवित्र हो जाता है तो ध्यान करो। ध्यान ऐसे करो जो हमारी वृत्ति उस सच्चिदानन्द में लीन हो जाय। प्राणायाम आदि के द्वारा जो समाधि होती है, वह जड़ समाधि होती है, और ज्ञान के द्वारा, भक्ति के द्वारा, प्रेम के द्वारा जो समाधि लगती है वह चैतन्य-समाधि होती है। एक सहज-समाधि होती है, उसमें आँख बंद करने की आवश्यकता नहीं रहती—आँख खोले ही सर्वत्र भगवान् को देख सकते हैं। ब्रह्म-विद्या व अनन्य भक्ति कोई दो चीज़ नहीं—ज्ञानहि भक्तिहि नहीं कछु भेदा ॥ उभय हरहिं भव सम्भव खेदा ॥'' ज्ञान और भक्ति का जब तक समन्वय नहीं होता तब तक आनंद नहीं। ज्ञान आने पर भक्ति और पुष्ट होती है—और भक्ति आने पर ज्ञान और बढ़ता है। ज्ञान के साथ भक्ति की आवश्यकता है, तभी आनन्द आता है। ज्ञान व भक्ति में किसी प्रकार का भेद नहीं माना गया है। ज्ञानवान् के हृदय में भक्ति रूपी मन्दाकिनी स्वच्छ बहती है और सच्चे भक्त के हृदय में भी ज्ञान रहता है। ज्ञान का अर्थ है—जानना। भक्ति का अर्थ है—मानना। आप जब तक जानते नहीं तब तक मानते नहीं। आपके घर में हीरा है, पर आप जानते नहीं, पत्थर समझते हैं, तो वह अनादर से पड़ा रहता है। कोई जौहरी आ कर आपको उसे पॉलिश करके दिखाता है व कहता है कि यह सच्चा हीरा सात लाख रुपये का है, तब आप उसको लोहे की अलमारी में बड़ा ही सावधानी से रखेंगे—क्योंकि ज्ञान हो गया व आप का ध्यान भी उसमें रहेगा। उसकी स्मृति बनी रहेगी। हम जो साधना करते हैं वह इस लिये कि उसकी स्मृति हृदय में सदा बनी रहे।

(२)

उठो, जागो! तत्त्व-दर्शी महा-पुरुषों के समीप जा कर समझो—मेरा जीवन कैसे व्यतीत हो रहा है। अपने जीवन का निरीक्षण करो वह देवों के समान है, या पशु के समान। भौतिक उन्नति का हमारे शास्त्र अनुमोदन करते हैं। हमारा योग क्षेम सर्व प्रकार अच्छी तरह चले पर इस आधिभौतिक उन्नति के साथ आत्मोन्नति भी करो।

दो प्रकार के सुख हैं। बाहरी सुख तो आप लोग जानते ही हैं। परन्तु इन बाह्य सुखों की अपेक्षा एक ऐसा सुख है—उसकी खोज करो। बाहर का सुख मिथ्या एवं दुःखमय है। वास्तविक सुख तुम्हारी अन्तरात्मा में है। तुम अपनी अन्तरात्मा को पहिचानो—श्रुति भगवती कहती है उस एक आत्मा को जानो। व्यर्थ के देखने बोलने से अपने को रोको। इस अन्तरात्मा के सुख का अनुभव करो। हमारा धर्म्म हमें दो बातों का उपदेश देता है—कैसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जियें ?—कैसे मरें ?' (सबको जीना भी है व मरना भी है !) इन बहिर्मुख चित्त-वृत्तियों को प्रशान्त व अन्तर्मुखी बनाओ। आपके पास कितने ही सुख के साधन हों पर शान्ति न हो तो वास्तविक सुख कहां ?

जब रणभूमि में सब ओर संग्राम, उपद्रव, हलचल, चिन्तापूर्ण वातावरण है—ऐसे समय में कैसा सुन्दर गीता उपदेश दिया ! अर्जुन से कहा, "अर्जुन योगी हो।" कर्म्म तो होना ही है—कर्म्म विना कोई रह नहीं सकता—पर कर्म्म कैसा होना चाहिये। सभी दशाओं में अपने मन को शान्त स्थिर रखने की चेष्टा करो। तुम्हारे अन्दर सच्चिदानन्द भगवान् विराजमान हैं। उनकी ज्योति-उनके सुख का अनुभव करो। महापुरुषों की संगति में जाओ।

हरि भज और न लेखो !

यह संसार हाट को लेखा, सब कोउ बनिजहिं आया।
जिन जस लादा तिन तस पाया मूरख मूल गँवाया॥
आतम राम देह धरि आयो ता में हरिको देखो।
कहत नामदेव बलि बलि जैहौं, हरि भज और न लेखो॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ एकबार ॥ (अनुकम्पाधारा)

एक बार इलाहाबाद में माँ के दर्शनों के लिये मेरी तीव्र इच्छा हुई परन्तु कोई साथ जाने के लिये नहीं मिल रहा था। उन दिनों Matches चल रहे थे। मेरे भतीजों को "मैच" देखने का अत्यधिक शौक़ है व ३-४ भतीजों में से कोई भी मैच समाप्त न होने तक मेरे साथ चलने के लिये राजी नहीं हो रहा था। माँ थोड़े दिनों को ही विन्ध्याचल आई थीं—मुझे यह चिन्ता हो रही थी कि यदि वहां से माँ कहीं दूर चली गईं तो जाना और भी कठिन हो जायगा। भतीजों से कहते कहते विन्ध्याचल से माँ के चलने का समय भी आ गया (वरन् प्रोग्राम के अनुसार उनको शायद एक दिन पूर्व ही विन्ध्याचल से चल देना था।) मेरा मन बड़ा निराश एवं दुःखी हो गया—दिन में सो गई—स्वप्न में देखा माँ विन्ध्याचल में ही हैं। मेरे मन में जो शंका हो रही थी कि माँ विन्ध्याचल से चली न गई हों वह दूर सी हो गई। मैंने फिर एक भतीजे से अनुरोध किया कि चाहे वह मुझे एक दिन के लिये ही माँ के पास ले चले पर ले चले। माँ की कृपा से वह राज़ी हो गया पर यह कहा कि वह रुकेगा नहीं, मुझे उसके साथ ही दूसरे दिन लौट आना होगा। मैं बड़ी प्रसन्न हुई तथा उसकी बात मान ली। हम लोग विन्ध्याचल के लिए ट्रेन से चल पड़े। विन्ध्याचल का स्टेशन आया तो देखती क्या हूँ कि माँ कुछ लोगों के साथ स्टेशन पर खड़ी हैं। आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। नीचे उतरी, प्रणाम किया तो माँ ने कहा, "यह शरीर परमानन्द से कह रहा था कि आज शायद वह (मैं) आए।" माँ उसी ट्रेन से बनारस जाने के लिये स्टेशन आई थीं। मैं, अपने भतीजे से २ टिकट बनारस तक के लिये extind कराने के लिये कह कर, माँ के कम्पार्टमेन्ट में चढ़ गई। स्नेहमयी दीदी ने, मुझे जिस बर्थ पर माँ का बिस्तर लगा था, उसी पर, चरणों की ओर बैठ जाने के लिये, माँ के सामने ही कहा। मैं बैठ गई। ट्रेन चल दी, माँ लेट गईं और उनके दोनों चरण कमल मेरी गोद में थे ! माँ मिलीं माँ के श्री चरण मिले—मेरे आनन्द का पार नहीं था। बनारस पहुँच कर उतर कर हम सब आश्रम गए। मेरे भतीजे को गाना आता है। वह माँ के आश्रम में पहली ही बार आया था—कुछ सकुचा लजा रहा था। माँ छत पर टहल रही थीं हम लोग एक ओर खड़े माँ के दर्शन कर रहे थे—माँ टहलते टहलते सहसा मेरे भतीजे के सामने रुकीं तथा उससे एक गाना गाने को कहा। मेरे भतीजे ने एक भजन गा दिया पर उसको यह आश्चर्य हो रहा था कि माँ को यह कैसे मालूम हुआ कि वह गा सकता है !

कहां तो उस भतीजे ने मुझसे वादा कराया कि शीघ्र ही इलाहाबाद लौट आऊँ और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहां स्वयं ही मुझसे बोला कि मैं माँ के पास और रहना चाहूँ तो एक दिन और रुक जाऊँ। मैं रुक गई। दूसरे दिन चलना था। दिन के भोग के उपरान्त माँ विश्राम के लिये जब अपने कमरे में जाने लगीं तो मेरे मन में आया कि "अपर इण्डिया" से मुझे जाना है व वह ३ बजे जाती है सो मुझे अब शायद चलते समय माँ के दर्शन न हो सकेंगे। अन्तर्यामिनी माँ तो सब जानती हैं दरवाजे में प्रवेश करते समय मुझसे कहा, "जाने के समय इस शरीर के पास हो कर जाना।" मैं यथा समय माँ के कमरे में गई। माँ लेटी हुई थीं। मैं उनके तख्त के पास बैठ गई। उसके बाद ट्रेन का समय हो गया है व मुझे स्टेशन जाना है मानो मैं भूल ही गई! समय तो किसी के लिये रुकता नहीं। इसी प्रकार शायद २ घण्टे निकल गए। मुझे प्रणाम करके जाना था जैसे इसका भाव ही नहीं आया न माँ ने ही पूछा कि मुझे तो जाना था। बेचारा भतीजा रिक्से में सामान रखवा कर मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। तथा इतनी देर होने पर उसने आशा त्याग दी थी कि वह ट्रेन पकड़ सकेगा। आखिर मुझे ख्याल आया कि जाना है तो माँ को प्रणाम कर विदा हो कर बाहर आई। भतीजे ने कहा अब स्टेशन जाना बेकार है, ट्रेन कब की चली गई होगी। मैंने कहा चलो चले चलें-वह नहीं मिलेगी तो कोई दूसरी ट्रेन मिल जायगी। खैर हम लोग चल दिये। स्टेशन पहुँचे तो पता चला कि 'अपर इण्डिया' आज ३ घण्टा Late है। माँ की कैसी अद्भुत कृपा सोचते सोचते ट्रेन पर सवार हुई तथा सकुशल इलाहाबाद पहुँच गई। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था कि दयामयी माँ की कृपा से ही ट्रेन इतनी Late हो गई व मैं इतनी देर कर के आई तो भी मिल गई।

—श्री चरणकमलाश्रिता

जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुणपय पियहिं परिहरि वारि विकार॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानव जीवन का आदर्श

सांख्य वेदान्त आगम दृष्टि

महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज

श्रीभगवान् जब चैतन्य-शक्ति का संचार करते हैं उस समय वे जीव को एक प्रकार ज्ञानमय दिव्य देह से उसे भूषित कर देते हैं। यह देह बैंदवदेह नाम से परिचित है। प्राचीन कैथोलिक गण इसे Spiritual body कहते थे। यह देह बिन्दु अर्थात् कुण्डलिनी शक्ति से उद्भूत है इसलिए इसका नाम बैन्दव देह पड़ा है। यही बिन्दु चिदाकाश का नामान्तर है। इस देह की प्राप्ति न होने पर जीव को अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है। श्रीभगवान् के विश्वकार्य में उनका आदेश पालन करना ही अधिकारी वर्गों का एकमात्र लक्ष्य है। अधिकारिगणों का मुख्य कार्य यह है कि श्री भगवान् के निर्देश के अनुसार मायिक जगत् का शासन करना। अधिकार दो प्रकार के हैं: एक कर्तारूप है, और दूसरा है करणरूप। मन्त्र तथा विद्या शुद्ध विद्या के अन्तर्गत है। मन्त्रेश्वरता ईश्वर तत्त्व के अन्तर्गत। जिनका मलपाक ऊर्ध्वकोटि के अन्तर्गत है वे कर्त्ता बनाये जाते हैं और वे जगद्गुरु के रूप में मन्त्रेश्वर के रूप में अधिष्ठित होते हैं। वे माया के अधिष्ठाता हैं। जिनका मलपाक अपेक्षाकृत कम है वे मन्त्र रूप में मन्त्रेश्वर के निर्देश से कार्य करते हैं। मन्त्रेश्वर गुरु है और मन्त्र गुरुशक्ति है।

शुद्ध विद्या से लेकर शिवशक्ति की स्थिति तक जो अध्वा या विश्वप्रपंच है उसे शुद्ध-अध्वा कहते हैं। शुद्ध अध्वा में नीचे से ऊपर तक निम्नलिखित पद है: एक है शुद्ध विद्या का पद, जहाँ मन्त्र और विद्या का स्फुरण होता है। यह सर्वनिम्न पद है। इसके ऊपर ईश्वर तत्त्व को आश्रय बनाकर मन्त्रेश्वर तथा विद्येश्वर का पद है। इसके भी ऊपर सदाशिव तत्त्व को आश्रय बनाकर मन्त्र-महेश्वर का पद है। इसके बाद शिवशक्ति का स्थान है। तत्त्वों की समाप्ति इसी जगह है। यहाँ याद रखना है कि जो भिन्न-भिन्न पदों का उल्लेख किया गया इनमें आध्यात्मिक स्थिति में अन्तर है और साथ ही साथ अनुभव का अन्तर है और साथ ही साथ ज्ञान तथा क्रिया शक्ति का भी तर-तमभाव है—यह भी कहना बाहुल्य है। अनुभूति की चरमता पूर्णता न होने तक नहीं होती। पूर्णता ३६ तत्त्वों के भेद होने पर उन्मनी शक्ति के प्रभाव से तत्त्वातीत स्थिति में होती है। सबसे पहले तत्त्वों की समाप्ति होनी चाहिए। यदि भाग्य सुप्रसन्न रहता है तो तत्त्वातीत में प्रवेश होता है। उभय ही निष्कल परमपद है—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जहाँ शिवशक्ति का भेद नहीं रहता है और जहाँ बोध के साथ स्वातन्त्र्य का सामरस्य सिद्ध हो जाता है।

शुद्ध अध्वा की प्राप्ति परमेश्वर के अनुग्रह के बिना हो नहीं सकती है। इस शुद्ध अध्वा के क्रमविकास में आत्मा के ज्ञान तथा क्रिया का विकास होता है। शुद्ध अध्वा के प्रत्येक तत्त्व में तीन विषयों का अनुधावन करना चाहिए। एक है तत्त्व, दूसरा तत्त्व के अधिष्ठाता अधिकारी पुरुष तथा तीसरे उन अधिकारी पुरुष के आश्रित साधक तथा भक्तगण। तत्त्व स्वयं पराशक्ति का ही एक विशिष्ट रूप है। आत्मा शुद्ध विद्या को प्राप्त कर तथा पशुत्व से मुक्त होकर योग्यता के अनुसार उन पदों को प्राप्त करती है। ये पद भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक स्थितियाँ हैं। यह कहना अधिक है कि यह शुद्ध अध्वा भी निर्मल पद नहीं है, क्योंकि यहाँ भी मन का अस्तित्व है। मल से यहाँ आणवादिक मल नहीं समझना चाहिए। आणव मल के सदृश अधिकार मल भी एक प्रकार मल है! अन्य-अन्य अध्यात्म शास्त्रों में शुद्ध तथा अशुद्ध वासनाओं में अन्तर दिखाया गया। अशुद्ध वासना साधारण जीवों में रहती है, वह बन्धन का कारण है। शुद्ध वासना ऐश्वरिक शक्ति सम्पन्न सिद्ध पुरुषों में रहती है। सिद्ध पुरुषों में अपने लिए कोई भी वासना नहीं रहती है, उनकी एकमात्र आकांक्षा है विश्व-जगत् की कल्याण कामना। जिस समय अशुद्ध तथा शुद्ध कोई भी वासना नहीं रहेगी उस समय समझना चाहिए शिवत्व की अभिव्यक्ति हुई है। इस दृष्टि से देखने पर अधिकार मल भी एक प्रकार मल है। आणव मल के रहने तक समझना चाहिए कि पशुत्व रह गया है। इस आणव मल को दूर करने के लिए परमशिव अधिकारी के रूप में कार्य करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और सदाशिव और सबके ऊपर तत्त्वरूपी शिव—ये सभी अधिकारी पुरुष हैं। यह कहना बाहुल्य है कि अधिकारि-वर्ग परमशिव का ही विश्व उद्धार-उन्मुख एक-एक स्थिति का नाम है।

अतः प्रत्येक तत्त्व के मूल में है तत्त्व और उसके अधिष्ठाता परमेश्वर के अधिकारी रूप हैं। इन अधिकारिगणों को भगवान् कहकर निर्देश किया जाता है। ये अनन्त-ऐश्वर्य सम्पन्न हैं। जो आत्माएँ शुद्ध विद्या की प्राप्ति के अनन्तर पशुत्व से मुक्त होकर शुद्ध अध्वा में प्रवेश करती हैं वे अपने-अपने चैतन्य के विकास के क्रमानुसार किसी न किसी तत्त्व का आश्रय कर विराजते हैं। उन्हें उसी तत्त्व को आश्रय बनाकर तत्त्वाधिष्ठाता के निर्देश के अनुसार कार्य करना पड़ता है। इसके अनुसार शुद्ध विद्या तत्त्व के अधिष्ठाता शुद्ध विद्या पराप्रज्ञा हैं और उन्हें आश्रित होकर जो लोग रहते हैं उनका नाम मन्त्र या विद्या है। उसी प्रकार ईश्वर तत्त्व के अधिष्ठाता ईश्वर भट्टारक हैं। उन्हें आश्रित जो हैं वे मन्त्रेश्वर हैं तथा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा गुरुपद वाच्य हैं। सदाशिव तत्त्व के जो अधिष्ठाता हैं उनका नाम है सदाशिव भट्टारक अर्थात् भगवान् सदाशिव। उन्हें आश्रय बनाकर जो आत्माएँ रहती हैं उनका नाम मन्त्र-महेश्वर है। शिवशक्ति का प्रश्न अब उठाया नहीं जा रहा है। इस प्रकार क्रमिक ऊर्ध्वगति से पूर्णता की ओर जाया जा सकता है लेकिन पूर्णता की प्राप्ति नहीं होती। याद रखना है कि इस शुद्ध अध्वा में अर्थात् तत्त्व वर्गों में केवल अधिकारिवर्ग या उनके आश्रित विशिष्ट आत्माएँ ही रहती हैं ऐसा नहीं, उनके अतिरिक्त बहुत-सी आत्माएँ रहती हैं। उन आत्माओं का वहाँ दीक्षा के प्रभाव से स्थान नहीं मिलता। उन राज्यों के अधिकारी गणों के प्रति श्रद्धा तथा अनुराग के फलस्वरूप उनका सन्निधान प्राप्त होने की इच्छा से वहाँ उनको स्थान मिलता है। उन आत्माओं को ऐश्वर्य नहीं मिलता लेकिन तत्त्वानुसार शुद्ध भोग मिलता है। उन तत्त्वों में स्थान मिलने पर भी उनको उन स्थानों से क्रमिक ऊर्ध्वगति से तत्त्वभेद नहीं होता है। यहाँ एक बात याद रखने योग्य है कि श्रीभगवान् के अनुग्रहात्मक शक्तिपात मूलक दीक्षा के बिना शिवत्व लाभ तो दूर रहा, अधिकार की प्राप्ति तक नहीं होती।

जो प्रलयाकल विदेह आत्माएँ मलपाक के कारण प्रलय के समय भगवदनुग्रह प्राप्त करती हैं, वे भी मलपाक के तर-तमभाव के अनुसार मन्त्रेश्वर पद को प्राप्त करती हैं। ये मन्त्रेश्वर पूर्ववर्णित मन्त्रेश्वर जैसे गुरुपदवाच्य हैं। पूर्ववर्णित मन्त्रेश्वर परमन्त्रेश्वर नाम से और ये मन्त्रेश्वर अपर मन्त्रेश्वर के नाम से वर्णित होते हैं। यहाँ एक अत्यन्त आवश्यक तथ्य यह है कि मन्त्र या विद्या पद की प्राप्ति एकमात्र विज्ञानाकल आत्मा में ही सम्भव है। प्रलयाकल आत्मा में पूर्ण मलपाक हो जाने पर भी उन्हें मन्त्रपद की प्राप्ति नहीं होती। गुरुपद में विज्ञानाकल तथा प्रलयाकल दोनों का ही प्रवेश सम्भव है। मन्त्रपद से मन्त्रेश्वर पद बड़ा है इसमें सन्देह नहीं है लेकिन मन्त्रपद में एकमात्र विज्ञानाकल आत्मा का ही प्रवेश सम्भव है, प्रलयाकल कदापि मन्त्रपद प्राप्त नहीं कर सकते हैं और इसके विपरीत विज्ञानाकल आत्माएँ अपनी योग्यता के अनुसार मन्त्रेश्वरत्व प्राप्त कर सकती हैं, लेकिन प्रलयाकल आत्माएँ मन्त्रपद प्राप्त नहीं कर सकतीं। इसका एकमात्र कारण यह है कि प्रलयाकल आत्मा में माया सम्बन्ध वर्तमान है। मायायुक्त आत्मा मन्त्रपद में प्रविष्ट नहीं हो सकती—तीव्र मलपाक होने पर भी यह सम्भव नहीं होता। इसका एकमात्र कारण यह है कि शुद्ध विद्या या मन्त्र द्वारा माया को दूर करना है। मन्त्र में माया स्पर्श रहने से उससे माया कैसे दूर की जा सकती है ?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री मां आनन्दमयी

डॉ० महादेव प्रसाद, प्रधान मंत्री, मानव धर्म मिशन, नई दिल्ली

मनुष्यों के सब कर्मों के मूलमें इष्ट साधना ज्ञान अथवा कर्त्तव्य ज्ञान रहता है। अर्थात् मनुष्य उसी कर्म को करने के लिए प्रवृत्त होता है जिससे सुख प्राप्ति अथवा दु.ख निवृत्ति होगी ऐसा उसका विश्वास हो, अथवा कहीं-कहीं पर औचित्य बोध में भी वह कर्म में प्रवृत्त होता है, दूसरा आदर्श प्रथम की अपेक्षा अवश्य श्रेष्ठ है, पर जगत् में उसके भी उदाहरण हैं। किन्तु जो आप्तकाम और आत्माराम हैं, जो कृतकृत्य हैं, जिन्हें किसी बात की कमी नहीं है वे सुख-दुःख में समदर्शी होने के कारण सुख के प्रलोभन अथवा दुःख की पीड़ा से विचलित नहीं होते, एवं उनका कोई कर्त्तव्य नहीं रहता। किन्तु फिर भी वे कार्य करते हैं। वह कर्म स्वभाव का कर्म है; इच्छा की प्रेरणा से अथवा अहंबुद्धि की प्रेरणा से वह कर्म उत्पन्न नहीं होता। जिस हृदय में कर्तृत्वाभिमान की कलुषता नहीं है वहाँ फलाकांक्षा-रूप इच्छा और कर्तव्य विचार का उदय होने की संभावना कहाँ? वही कर्म अकर्ता का कर्म है स्वाभाविक कर्म है, निर्दोष कर्म है। वह कर्म होने पर भी अकर्म है। भगवान्-शक्ति के उच्छ्वास (उफान) से सम्पूर्ण विश्व को व्याप्त कर जिस कर्म का स्वतः चालित प्रवाह बह चला है यह वही कर्म है। यह लीलारूपी है। कर्ता के व्यक्तिगत प्रयोजन से वह परिच्छिन्न नहीं होता। जगत् का कल्याण ही इसका एकमात्र फल है। अज्ञ जीव अपने सीमित ज्ञान से इस मंगलमय लक्ष्य को यद्यपि सदा देख नहीं पाता तथापि इसे स्वीकार किये बिना तो वह रह नहीं सकता।

माँ कहती हैं, "असीम को यदि पाना हो तो पहले सीमा के भीतर अपने को आबद्ध कर चलना चाहिये। पीछे अनन्त के आभास से सीमा का बन्धन खुल जाता है।" माँ के अपने जीवनाभिनय में हम उस सत्य को स्पष्ट देख सकते हैं।

सन्त और भगवान् दो नहीं, एक हैं। सन्त भगवान् के ही रूप हैं। उनकी कृपा भी एक ही है। जो भगवान् सो सन्त। भगवान् की कृपा बिना भेदभाव किये खूब-खूब बरस रही है। अहैतुक अयाचित। उसे ग्रहण करो। सन्तका संग करो, उनके सदुपदेशोंपर चलो, स्वस्थ रहो और सबको स्वस्थ रखो। नारायण ! नारायण नारायण।

माँ के बाह्य परिचय विविध प्रकार के हैं। जिनमें जैसी प्रतिभा और संस्कार हैं वे माँ को उसी भाव से देखते हैं और देखेंगे। क्योंकि वह बाह्य चरित्र है। माँ का वास्तविक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परिचय पाना अत्यन्त कठिन है। यदि सौभाग्यवश किसी को स्वयं उसका आभास मिल भी गया तो वह दूसरों के संमुख उसे प्रकट कर सकेगा यह आशा नितान्त दुराशा ही है; वास्तव में संतान होकर माँ का परिचय पानेके लिये प्रयत्न करना ही निरा पागलपन प्रतीत होता है।

जैसे उज्ज्वल ज्योतिर्मय सदा प्रकाशमय भगवान् सूर्य के प्रकाशमान रहने पर भी अन्धे के लिये उनकी सत्ता नहीं के बराबर रहती है, वैसे ही आद्याशक्ति के जगत् में प्रकाशमान रहने पर भी साधारण के निकट वह अप्रकाशमान सी रह जाती हैं। यदि वे स्वयं अपना परिचय न दें तो उन्हें कोई पहचान नहीं सकता।

साधारणतः माँ संन्तान को अपना परिचय नहीं देती, संतान के लिये वह परिचय कोई आवश्यक भी नहीं है; माँ उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। वह जो चाहता है, उसे वह देकर ही भुलाए रखती है। वे भोगार्थी को भोग देती हैं, आर्त की आर्ति दूर करती हैं, भूखे को अन्न, प्यासेको जल और जिज्ञासुको ज्ञान प्रदान करती हैं। जो उन्हें जिस भाव से भजता है वे उसके निकट उसी भाव से उपस्थित होती हैं। अपने-अपने भाव के अनुसार माँ का यह परिचय साधक मात्र को ही अधिकार के अनुरूप प्राप्त करता है। किन्तु वह माँ के स्वरूप का परिचय नहीं है। माँ का स्वरूप भावातीत है—महाभाव स्वरूपिणी माँ अनन्त प्रकारों से अनन्त भावों की संगम और उद्‌गम होकर भी वास्तव में समस्त भावों के परे हैं।

जो लोग माँ के स्थूल शरीर के इतिहास से अवगत हैं, वे जानते हैं कि भिन्न-भिन्न समयों में भिन्न-भिन्न लोगों ने उन्हें विभिन्न दृष्टियों से, देखा है। काल के परिवर्तन से अनेकों की दृष्टि में परिवर्तन नहीं हुआ, सो बात भी नहीं है। सृष्टि में सर्वत्र ही वैचित्र्य है, यहाँ भी वैचित्र्य है, उसका अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

जिस समय वाजितपुर में सर्व प्रथम माँ के जीवन की विशेषता लोगों को दृष्टिगोचर और कर्णगोचर होने लगी, उस समय विचारशून्य साधारण लोगों ने उस अवस्था को अज्ञता-वश भूत, प्रेत या क्षुद्र देवता का आवेश समझा था। भूत हटाने के लिये अनुरूप उपाय भी काम में लाये गये थे। किन्तु इस भूत का झाड़ना ओझा की शक्ति के बाहर की बात है यह भी थोड़े ही दिनों में सब की समझ में आ गया था। कुछ लोग उस समय माँ को वायुरोग, हिस्टिरिया अथवा उसके सजातीय रोग से आक्रान्त समझते थे। भाव के विकास से देह में जो सब असाधारण लक्षण प्रकाशित होते उन सबको वे रोग के चिन्ह समझते थे। किन्तु उन्हें भी शीघ्र ही अपना भ्रम प्रतीत हो गया। भाव किसे कहते हैं यह साधारण मनुष्य नहीं जानते। भाव के स्फुरण से जो सब शारीरिक परिवर्तन होते हैं उन्हें भी वे नहीं जानते। इसलिए मोटा मोटी बाहरी लक्षणों का कुछ सादृश्य देखकर उनमें जो विचारविभ्रम उपस्थित हुआ वह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निर्मूल नहीं। श्री चैतन्य महाप्रभु और अन्यान्य महापुरुषों के सम्बन्ध में भी इस प्रकार का लोकमत स्थान-स्थान पर कुछ दिनों के लिए प्रचारित हुआ था।

प्रथम मत में माँ एक श्रेष्ठ साधिका हैं। उन्हें पूर्वजन्म में उच्च साधना के फलस्वरूप ऊर्ध्वगति प्राप्त हुई थी। किन्तु पूर्ण ज्ञान के अभाव से फिर देह धारण करने को वे बाध्य हुई हैं। इनके मत से माँ इस देह में ज्ञान का पूर्ण विकास प्राप्त कर जीवन-मुक्त या स्थितप्रज्ञ दशा को प्राप्त हुई हैं। इस जन्म में उन्हें वाह्य गुरु की आवश्यकता नहीं हुई—अन्तःस्थित अन्तर्यामी गुरु ही उन्हें आवश्यकतानुसार प्रेरणा दे रहे हैं। यही उनका अन्तिम जन्म है।

किन्तु इस मत को सभी स्वीकार नहीं करते, वे सोचते हैं कि माँ के जीवन में जो सब अलौकिक विभूतियाँ और व्यापार दिखाई देते हैं उनके कुछ अंशों की सिद्धि और जीवन्‌-मुक्तिवाद द्वारा उत्पादन किया जाता है सही, किन्तु उनकी जीवन धारा में ऐसे अनेक व्यापार होते दिखाई दिये हैं जिनको समझना कठिन है। वे सब व्यापार जन्मान्तर की साधना से उत्पन्न संस्कार के विकास हो सकते हैं इस मत में माँ साधिका नहीं हैं, जीवन्मुक्त भीं नहीं हैं। यदि वे जीवन्मुक्त कही जांय तो जन्म से ही उन्हें जीवन्मुक्त कहना चाहिये। आधिकारिक पुरुष के समान अपना अधिकार समाप्त करने के लिए उन्होंने जन्म लिया है। यह अधिकार भी एक प्रकार प्रारब्ध है।

कुछ लोग आपत्ति करते हैं कि पूर्वोक्त मत भी ठीक नहीं है। क्योंकि माँ के जीवन में कोई अधिकार-संस्कार दिखाई नहीं देता। यहाँ तक कि जीव को ज्ञान और भक्ति प्रदान कर उद्धार करने का संस्कार भी उनमें नहीं है। उन्होंने आज तक अपने को गुरु रूप में ग्रहण नहीं करने दिया। उनके चरित्र और उपदेश जगत् के पारमार्थिक कल्याण के लिये होने पर भी इस प्रकार का कल्याण करने का संस्कार उनमें नहीं है। इस मत में माँ नित्य सिद्धा और भगवान् की परिकर स्वरूपा हैं। किसी विशेष प्रयोजनवश भगवदिच्छा से कुछ दिनों के लिये जगत् में आई हैं। प्रयोजन सिद्ध होने पर अपने आप ही जहाँ से आई हैं वहीं लौट जायंगी।

किन्तु यह मत भी सर्व-स्वीकार-योग्य नहीं है। उनकी धारणा है कि माँ साक्षात् महादेवी हैं। भक्तों के आह्वान से और जगत् के मंगल के लिये उन्होंने शरीर धारणा किया है। इनका कथन है कि माँ की पितामही ने कसबा काली मन्दिर में काली माता के समीप पुत्र के 'पुत्र हो' ऐसी प्रार्थना न कर 'कन्या हो, ऐसी प्रार्थना की थी। उसी के फलस्वरूप माँ का जन्म हुआ। इन्हें विश्वास है कि भगवती काली ने ही अपने अंश से माँ होकर जन्म ग्रहण किया है।

अन्य कहते हैं कि माँ को काली या दुर्गा न मानकर आद्याशक्ति महामाया ही मानना

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उचित है। किसीने (जैसे लावण्य) उन्हें दसभुजा दुर्गा के रूप में देखा है, फिर किसीने सरस्वती के रूप में (जैसे निर्मल बाबू ने) अथवा दश महाविद्या के रूप में (जैसे प्रमथ बाबू के चपरासी ने) उनके दर्शन किये हैं। इनके अतिरिक्त और भी कितने ही रूप कितने लोगों ने देखे हैं।

महाभावमयी राधारूपी भी कोई लोग उन्हें मानते हैं। अथवा कोई लोग उन्हें साक्षात् श्री कृष्ण का आवेश रूप ही मानते हैं।

इस प्रकार कितने ही लोगों ने कितने ही भावो में माँ को देखा है। इनमें कौनसा देखना सत्य है ? कौन असत्य ? यद्यपि भाव भेद से इनमें से किसी को भी सर्वथा असत्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जो जिस भाव से उन्हें देखता है या जानता है उसके निकट वे उसी भाव से प्रतीत होती हैं, फिर भी हमारी समझ में संभवतः इनमें से कोई भी उनका वास्तविक परिचय नहीं है। एक बार भारतधर्म-महा मंडल के प्रचारक श्री स्वामी दयानन्द जी ने माँ से पूछा था, "माँ तुम कौन हो ? कोई कहता है तुम अवतार हो, कोई कहता है तुम आवेश हो। कोई कहता है तुम साधक या सिद्ध जीव हो मुझे यथार्थतः जानने की इच्छा है तुम कौन हो ?" माँ ने कहा, "बाबाजी, तुम मुझे क्या समझते हो ? तुम जो समझते हो मैं वहीं हूँ।" माँ के इस उत्तर में ही माँ के वास्तविक परिचय का आभास गुप्त रूप से छिपा है, ऐसा मालूम पड़ता है। गीता में भगवान् ने कहा, "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।" माँ का पूर्वोक्त वचन भी उसी के अनुरूप है। माँ में तो व्यक्तित्व को या अभिमान को परिधि नहीं है जिससे कि वे उसके द्वारा परिच्छिन्न हों। वे स्वच्छ, शुद्ध, स्वप्रकाश और विशाल सत्ता रूप अपनी महिमा में अपने आप विराजमान हो रही हैं—किन्तु सब लोग संस्कार-वश उन्हें उस स्वरूप में नहीं पाते। क्योंकि चित्त संस्कार के जाल से छुटकारा पाये विना सत्य दर्शन नहीं कर सकता। जिसका चित्त जिस संस्कार से रंगा है वह उन्हें उसी भाव से देखेगा, एवं संस्कार से मुक्त हुए बिना वैसा देखना ही उसके लिए स्वाभाविक है।

इस कारण विशुद्ध सत्य न होने पर भी किसी भी मत की सर्वथा उपेक्षा करना उचित नहीं है। जो जिस मत का अनुयायी है उनके लिए वही मत समादरणीय है, क्योंकि उसे अपने विचार बुद्धि से उसीका महत्त्व दिखलाई देता है। किन्तु इन सब बातों को जानने से लाभ क्या ? श्रद्धावान् साधारण मनुष्य बालोचित सरल हृदय से माँ के निकट उपस्थित होते ही माँ के वात्सल्य, करुणा और स्नेह की शीतल छाया पा सकेगा। तब क्रमशः मातृ-संग के प्रभाव से माँ की अन्तःप्रकृति उसके निकट जरा-जरा प्रकट होगी। माँ वास्तव में क्या हैं ? यह प्रश्न लेकर उसे फिर मस्तिष्क को चक्कर में डालने की आवश्यकता प्रतीत न होगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ चाहे जो भी हों—उनकी मनुष्य-देह की लीलाओंकी आलोचना से हम ऐसे अनेक सत्यों का अनुभव कर सकते हैं, जो मनुष्य दृष्टि से हम लोगों के लिए अवश्य ज्ञातव्य और स्मरण रखने योग्य हैं। किस प्रकार भगवान् को प्राप्त करना चाहिए, उन्हें पाने के लिए किस प्रकार के संयम, निष्ठा, वैराग्य, अनासक्ति और त्याग आवश्यक होते हैं, कर्म, भक्ति, योग और ज्ञानरूप साधना का स्वरूप और फल क्या है, तपस्या क्या है, पूर्ण आत्म समर्पण या निर्भर भाव किसे कहते हैं, व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के ऊपर भगवत्साक्षात्कार का क्या प्रभाव है—ये सब तथा इस प्रकार के अन्यान्य बहुत से प्रश्नों की मीमांसा माँ के बाह्य चरित्र से प्राप्य हो सकती है। ये सब कोई साधारण बातें नहीं हैं। यद्यपि शास्त्रों में अनेक विषयों की आलोचना है तथापि उनका प्रत्यक्ष उदाहरण पाये बिना सब समान रूप से उनमें दृढ़ श्रद्धा नहीं रख सकते। किन्तु जब ये सब सत्य संजीवन रूप में किसी के चरित्र में प्रकट होते दिखाई देते हैं तब शास्त्र वचनों पर अटल श्रद्धा उत्पन्न होती है एवं अपने जीवन के ऊपर उनका भाव व्यापक हो उठता है। माँ का वास्तविक परिचय चाहे जो हो, उसे साधारण मनुष्य उनकी विशेष कृपा के बिना कदापि यथार्थतः लेशमात्र भी नहीं जान सकता और किसी से उसके संबंध में कोई संकेत पाने पर भी उसे हृदयंगम नहीं कर सकता। किन्तु माँ के स्थूल जीवन की धारा देखकर और उसकी आलोचना कर वह अनेक विषयों में लाभ उठा सकता है। माँ के चरित्र और उपदेशों से वह मन का तत्त्व भले ही न समझ सके पर चरित्रों से आत्मोन्नति के मार्ग का पता पा सकता है एवं उपदेशों से साधना और आचरणों के विषयों में अनेक शिक्षाएँ प्राप्त कर सकता है।

सुखी कौन ?

कोइ तन दुखी कोइ मन दुखी चिन्ता चित्त उदास।
थोड़े थोड़े सब दुखी सुखी श्याम के दास॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"श्री श्री माँ का ७७वाँ जन्मोत्सव"

सुश्री कुमारी गुणिता

भारतवासियों के लिए वैशाख मास आनन्द और उत्सव का मास है, कारण कि इस महीने की पहली तारीख से उनका नववर्ष प्रारम्भ होता है। परन्तु वैशाख का यह आनन्द केवल भारत तक ही सीमित नहीं है, अपितु विश्ववासियों के लिए यह एक महोत्सव का मास है। क्योंकि इसी महीने की १९ ता० को पूर्वबंगाल के त्रिपुरा जिले के अन्तर्गत "खेउड़ा" नामक गाँव में एक दरिद्र ब्राह्मण परिवार में आज से ७६ वर्ष पूर्व विश्वजननी श्री श्री माँ आनन्दमयी का पुण्य आविर्भाव हुआ था। उस दिन की इस शुभ घड़ी में त्रिभुवन में एक आनन्द की लहर फैली, धरित्री माता पुलकित हो उठी। ग्रीष्म का समय होने पर भी प्रकृति कमनीय हो गई। इस ब्राह्मण-दम्पति के अतुलपुण्य के प्रभाव से आज जगत् का कोना-कोना पवित्र हो गया। अतः प्रतिवर्ष १९ वैशाख की इस शुभ घड़ी की प्रतीक्षा में विश्ववासी उत्सुक रहते हैं।

माँ का जन्मोत्सव २ मई से प्रारम्भ होकर उनकी जन्मतिथि तक मनाया जाता है। प्रायः भक्तों के विशेष आग्रह से उनके द्वारा निश्चित किये गये स्थान पर इस महोत्सव का आयोजन किया जाता है। अभी तक उत्तर भारत के प्रायः सभी क्षेत्रों में माँ का पुण्य महोत्सव मनाया जा चुका है। गुजरात एवं महाराष्ट्र प्रदेश भी कई एक बार इस महोत्सव को मनाने के सौभाग्य से धन्य हो चुके हैं।

इस बार माँ का जन्मोत्सव दिल्ली में अनुष्ठित हो ऐसा भक्तों ने विचार किया। क्योंकि अनेक वर्षों से दिल्ली के भक्तों को इस महोत्सव में उपस्थित होने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ था। अतः यह कहना ही पड़ता है कि केवल दिल्ली वासियों का ही नहीं; अपितु सम्पूर्ण दिल्ली नगर का ही १९७२ सन् एक सौभाग्यपूर्ण वर्ष है, कारण कि एक तो अभी-अभी भारत-पाक युद्ध में भारत की विजय से राजधानी गौरवान्वित थी ही, तिस पर इस सौभाग्यमय अवसर ने उसके गौरव में चार चाँद लगा दिये।

अब तो दिल्ली के भक्तों का कहना ही क्या था। कालका जी में स्थित माँ के आश्रम में श्रद्धेयब्रह्मचारी श्री स्वरूपानन्दजी की अध्यक्षता में जोर-शोर से उत्सव की तैयारियाँ होने लगीं। जन्मोत्सव की तिथि इस बार २ मई से ३१ मई तक की थी, परन्तु कुछ असुविधाओं पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विचार करके अंतिम ९ दिन तक विशेष कार्यक्रम का आयोजना हुआ। २३ मई से ३१ मई तक के इस महोत्सव में सहयोग देकर दुर्लभ नर देह को सफल एवं कृतार्थ करने के महान् उद्देश्य से देश-विदेशों में परिचित-अपरिचितों को निमन्त्रण पत्र भेजे गये। विश्वजननी के उत्सव में भाग लेने का अधिकार हरेक को है अतः यह आमन्त्रण सभी के लिए होना स्वाभाविक है।

जैसे कमल दिवाकर की, कुमुदिनी कुमुदवान्धव की और चातक स्वाति के बूँदों की प्रतीक्षा में व्याकुल रहते हैं उसी प्रकार भक्तगण भी वैशाख मास की प्रतीक्षा में व्याकुल थे। देखते-देखने चैत का महीना व्यतीत हो गया। क्षितिज में, प्रकृति की वीणा में दो राग एक साथ प्रतिध्वनित हो रहे थे, वसंत की विदाई में विहाग और ग्रीष्म के आगमन में बहार, प्रकृति के इस मधुर परिवेश में वैशाख का शुभागमन हुआ, नववर्ष के आगमन के साथ-साथ सभी के मन प्राण नवीन उत्साह से उमंगित हुए, सभी में नवचैतन्य का संचार हुआ। अब केवल अठारह दिन का विलम्ब है, धीरे-धीरे यह व्यवधान भी समाप्त हो गया। १९ वैशाख की पुण्य तिथि उपस्थित हो गई। प्रातः काल से ही आश्रम में जन समागम होने लगा एवं कार्यव्यस्तता दृष्टिगोचर होने लगी, तोरण द्वार सजाये जाने लगे, कागज की झण्डियाँ एवं पत्तों के बन्दनवार लगाये गये। सर्वत्र मंगल कलशों की स्थापना हुई।

दिल्ली के भक्तगणों ने हाल में ही एक नवनिर्मित कुटिया का निर्माण किया था एवं उसे आज के दिन ही माँ के श्री चरणों में निवेदन करने का संकल्प किया। अतः गृह प्रतिष्ठा के अवसर पर वहाँ विश्वपालक सर्वगृह स्वामी श्रीमन् नारायण एवं पद्मनाभ जी की पूजा का आयोजन किया गया। पूजा के समय माँ वहाँ पर उपस्थित थीं। आज माँ के जन्मदिन की पूजा का आयोजन इस नवनिर्मित कुटीर के प्रांगण में किया गया। ब्राह्ममुहूर्त के ३ बजे पूजा प्रारम्भ हुई। माँ अपने दुग्ध धवल शय्या पर विश्राम कर रही थीं। शय्या के सम्मुख पूजन का आयोजन किया गया था, आज का आयोजन अत्यन्त साधारण या आडम्बर का इसमें अभाव था। प्रकृति के उन्मुक्त प्रांगण एवं शान्त वातावरण में पूजा हो रहीं थीं। प्रकृति ने गाढ़े नील रंग का एक मनोहर चँदवा लगा रखा था जिस पर रजत निर्मित पुष्प खचित थे; जो कि अत्यन्त चमकीले दीख रहे थे। प्रकृति के इस विशाल वितान के नीचे समग्र विश्व निस्तब्ध होकर विश्वजननी की अपूर्व मोहिनीरूप का अवलोकन कर रहा था। पूजा समाप्त हुई। सूर्योदय की लालिमा फैली। भक्तगण प्रणाम करके विदा हो गये, सभी महोत्सव के सेवाकार्य में तत्पर हो उठे। उत्सव प्रारम्भ हुआ।

माँ प्रायः जन्मोत्सव में अन्यत्र भी चली जाती हैं। परन्तु उत्सव के अन्तिम सात दिन, जहाँ उत्सव होता है वहाँ उपस्थित रहतीं हैं। इस बार भी माँ की अन्यत्र जाने की बात थी,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परन्तु दिल्लीवासियों की तीव्र अभिलाषा थी कि इस बार सम्पूर्ण उत्सव तक माँ यहीं उपस्थित रहें। अत्यधिक गर्मी के कारण माँ को रहने का अनुरोध करने का साहस किसी को नहीं हुआ। परन्तु भक्तों की इच्छा को माँ ने स्वयं जान लिया, और किसी एक कारण को निमित्त बनाकर वहीं रहीं। माँ का स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण माँ के पूर्ण विश्राम की व्यवस्था की गई। केवल नित्य प्रातः काल एवं संध्या को माँ की आरती हुआ करती थी, रात्रि को दिल्ली के प्रसिद्ध रामायणी श्री कपीन्द्र जी रामायण का पाठ एवं कीर्तन करते थे। माँ भी प्रायः अपने मधुर कंठ से कीर्तन गाकर संसार के पीड़ित प्राणियों को सुधा पान कराती थीं। इस बीच एक दिन भारतवर्ष की सुप्रसिद्ध गायिका श्रीमती सिद्धेश्वरी बाई ने आकर अपना मधुर एवं भावपूर्ण संगीत माँ के श्री चरणों में निवेदन किया। ऐसे ही रोज का सत्संग कार्य चलने लगा।

इधर विशेष उत्सव के लिए शिव मन्दिर के विशाल प्रांगण में सत्संग के लिए विराट् मण्डप का निर्माण कार्य आरम्भ हुआ। इसके लिए कलकत्ते से सुदक्ष शिल्पी बुलाए गये। आश्रम के उद्यान में एक विराट् यज्ञशाला निर्मित हुई। १७ ता० से इस यज्ञ मण्डप में महा-रुद्र यज्ञ प्रारम्भ हुआ। यज्ञ के पवित्र होम की सुगंध से एवं धुएँ को देखने से प्राचीन काल के ऋषियों के आश्रम की एक झलक आँखों के सामने प्रत्यक्ष हो जाती थी। २१ ता० को मथुरा की प्रसिद्ध रामलीला मंडली द्वारा, माँ के जन्मोत्सव के उपलक्ष में आश्रम के समीपस्थ पंत कालेज के प्रांगण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की पवित्र लीला आरम्भ हुई।

समय निकट आने के कारण भक्तों का समागम होने लगा। सत्संग मण्डप भी प्रायः सम्पूर्ण हो गया था। यह मण्डप अत्यन्त भव्य था। सफेद और नीले वर्ण का अपूर्व सम्मिश्रण था। ये दोनों वर्ण ही सात्त्विकता के द्योतक हैं। इसके अलावा मण्डप में जो वैद्युतिक प्रकाश का आयोजन किया गया था वह प्रशंसनीय एवं सराहनीय था। गर्मी से भक्तों को असुविधा न पहुँचे इसके लिए पंखे एवं कूलर की भी व्यवस्था थी। सत्संग मंडप के भव्य प्रवेश द्वार को देखते ही बंगाल के कारीगर एवं उनकी शिल्पकला की मौलिकता को प्रशंसा करनी ही पड़ती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि मानों हम किसी देवलोक की पवित्र आलोक सभा में प्रवेश कर रहे हैं, जहाँ पर वैद्युतिक आलोक ही नहीं वरन् ज्ञानालोक से अज्ञानी मानव के हृदय पटल में नित्य प्रकाश स्वरूप सच्चिदानन्दमय परब्रह्म परमात्मा के ज्योतिर्मय स्वरूप को प्रकाशित करने की चेष्टा भी थी। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि वह मंडप मोहनिद्रा में डूबे हुए मनुष्य के बाह्य एवं आन्तरिक दोनों स्वरूपों को स्पष्ट करने में समर्थ था।

२३ ता० को उत्सव का उद्घाटन होने वाला था। उद्घाटन के लिए विशेष अतिथि के रूप में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरागाँधी को आमन्त्रित किया गया था। सायंकाल उद्घाटन का

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कार्यक्रम रखा गया था। मंडप भक्तगणों से भरा हुआ था। वेदी पर बाईं तरफ माँ का आसन था एवं सामने अन्य महात्माओं के आसन थे। माँ के पीछे आश्रम की ब्रह्मचारिणी गण बैठी थीं। महात्माओं के पीछे ब्रह्मचारी एवं साधुगण उपस्थित थे। कीर्तन की मधुर ध्वनि सर्वत्र गुंजित हो रही थी। माँ अपने आसन पर विराजमान थी। एवं महामण्डलेश्वर महात्मा गण भी अपने आसनों पर आसीन थे। एक अपूर्व आनन्द की लहर सबके मन प्राण में उमंगित हो रही थी। प्रायः साढ़े सात बजे प्रधानमंत्री पधारी। मंडप के प्रवेश द्वार पर श्रद्धेय ब्रह्मचारी श्री स्वरूपानन्दजी ने उनका स्वागत किया। वेदी पर आकर उन्होंने माँ को प्रणाम किया। माँ ने भी उन्हें अपनी स्नेह सुधा से सिंचित किया एवं उनके मस्तक पर अपना वरद हस्त रखकर मानों देश सेवा के कार्य में और भी अग्रसर एवं सफल होने के लिए उनको अलौकिक शक्ति प्रदान की। इसके उपरान्त परमपूज्या गुरुप्रिया दीदीजी ने उनको फूलों की माला पहनाई, फिर विद्यापीठ के एक बालक ब्रह्मचारी ने उनको चंदन एवं फूलों की माला दी। इस प्रकार विधिवत् स्वागत कार्य समाप्त होने पर श्रद्धेय ब्रह्मचारी श्री निर्मलानन्दजी ने इंदिरा जी से कुछ कहने के लिए नम्र निवेदन किया। उस समय उन्होंने खड़े होकर जो शब्द कहे उसका सारांश यह है "यह भाषण देने का स्थान नहीं है। यहाँ पर हम श्रद्धा लेकर आये हैं। यदि हमारे में श्रद्धा नहीं होती तो हम यहाँ कभी नहीं आते। हम सबका उद्देश्य एक है। हमारे देशवासियों पर एवं हमारे देश के दीनदरिद्रों पर माँ की अशेष कृपा एवं आशीर्वाद रहे। यही माँ से हमारी प्रार्थना है।" उनकी माँ के प्रति कितनी श्रद्धा और विश्वास है, इसका परिचय हमें उनके इन शब्दों में मिलता है। इसके बाद ब्रह्मचारिणियों के द्वारा कीर्तन एवं स्तवादिक होने के उपरान्त उद्घाटन कार्य समाप्त हुआ।

दूसरे दिन प्रातः काल से महात्माओं के प्रवचन प्रारम्भ होने वाले थे। अतः माँ रात्रि को मंडप में आईं एवं प्रारम्भ होने वाले कार्यक्रम के लिए व्यवस्था करने लगीं। महात्माओं के प्रति माँ अत्यन्त सचेष्ट रहती हैं। उनकी एक एक सुविधाओं की ओर माँ की सूक्ष्म दृष्टि रहती है। २४ ता० प्रातः काल से विशेष कार्यक्रम आरम्भ हो गया। प्रातः ५ बजे माँ की आरती माँ के विश्राम कक्ष में ही हुआ करती थी। इसके बाद प्रातः कीर्तन होता था। सात बजे से प्रवचनादि होने वाले थे। अतः माँ सर्वप्रथम सत्संग मंडप में पधारीं। सात बजे शुकताल के प्रसिद्ध महात्मा विद्वद्वरेण्य श्री १०८ विष्णु आश्रमजी महाराज पधारे। सात से आठ बजे तक उन्होंने अपनी निर्मल ज्ञान की धारा से परमपद के जिज्ञासु भक्तगणों में परमानन्द का बीजारोपण किया। ८-३० से ११ बजे तक नित्य वृन्दावन की प्रसिद्ध रासलीला मण्डली द्वारा रासलीला होती थी। भगवान् श्री कृष्ण के मधुर बाल चरित्र एवं श्रीमन्महाप्रभु के पावन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरित्र का दर्शन करते करते ऐसा प्रतीत होता था कि मानो हम प्रत्यक्ष रूप में ही भगवान् की लीलाओं का रस प्राप्त कर रहे हैं। लीला के उपरान्त पुनः प्रवचन होता था। प्रवचन के अनन्तर सत्संग का कार्यक्रम सायं ५ बजे तक स्थगित रहता था। परन्तु अखंड भगवन्नाम कीर्तन चलता था। सायं काल भी माँ सर्वप्रथम मंडप में उपस्थित होती थीं। पुनः सायं ६ बजे से प्रवचन का कार्यक्रम आरम्भ होता था। प्रवचन के उपरान्त सायं कीर्तन एवं माँ की आरती का समय था। परन्तु आरती के समय पर माँ कभी-कभी ही उपस्थित रहती थीं। अतः समस्त कार्यक्रम सम्पूर्ण होने के बाद जब माँ विश्राम करने जाती थीं तब रात्रि के १२–१ बजे माँ की आरती होती थी। सायं कीर्तन के बाद पुनः प्रवचन होता था एवं ९–३० या १० बजे माँ का मधुर कीर्तन सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता था।

धीरे-धीरे भारतवर्ष के दूर-दूर के देशों से विद्वद्वरेण्य महात्मागण पधारने लगे, जिनमें मुख्य थे बम्बई के महामंडलेश्वर श्रद्धेय स्वामी श्री १०८ ब्रह्मानन्द जी महाराज, वृन्दावन के श्री कृष्णानन्द अवधूत जी महाराज, शुकताल के दण्डी स्वामी श्री १०८ विष्णु आश्रम जी महाराज, कैलास मठ के महामण्डलेश्वर स्वामी श्री १०८ विद्यानंन्द जी महाराज, ऋषीकेश शिवानन्द आश्रम के श्री १०८ चिदानन्द जी महाराज, परमार्थ निकेतन के स्वामी श्री सदानन्द जी महाराज, वृन्दावन के स्वामी श्री १०८ शरणानन्द जी महाराज आदि थे। इनके अतिरिक्त भी अन्य विद्वान् एवं महात्मागण थे। जिनमें अवध के प्रसिद्ध रामायणी श्री सीताराम शरण जी, श्री आनन्द स्वामी महाराज, ग्वालियर के महात्मा रामदास बाबा, बंगाल के श्रद्धेय महात्मा श्री १०८ योगेश ब्रह्मचारी, महात्मा कृष्णानन्द एवं कलकत्ते के प्रसिद्ध विद्वान् श्री त्रिपुरारी चक्रवर्ती आदि थे। नित्यप्रति इन महात्माओं का प्रवचन होता था। प्रायः सभी श्रेष्ठ महात्मागण उपस्थित थे। केवल भारत के प्रसिद्ध भागवत व्याख्याता विद्वद्वरेण्य श्री १०८ अखंडानन्द सरस्वती जी महाराज के मधुर प्रवचन सुनने के सौभाग्य से हमें वंचित रहना पड़ा। अपनी अस्वस्थता के कारण वे उपस्थित न हो सके।

साधु महात्माओं के अतिरिक्त बंगाल के मूर्द्धन्य संगीतकलाकार भी उपस्थित थे। जिनमें काली संगीत के प्रधान गायक श्री धनञ्जय भट्टाचार्य मुख्य थे। उनके गद्‌गद एवं भावमय संगीत की मधुर ध्वनि सुनते ही रोमांच होता था। बंगला शब्दों के न समझने पर भी उनके संगीत से सभी मन्त्रमुग्ध हो जाते थे। उनके कंठस्वर में एक अपूर्व आकर्षण था। इनके अतिरिक्त कलकत्ते की सुप्रसिद्ध कीर्तन गायिका गीत श्री कु० छवि वन्द्योपाध्याय भी उपस्थित थीं। जिनके भक्तिपूर्ण मीरा भजनों को सुनकर आँखों से आँसू स्वभावतः ही छलक पड़ते थे। एक दिन सुप्रसिद्ध वायलिन वादिका श्रीमती शिशिरकणाधर चौधरी ने वायलिन बजाया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाद्य की तंत्रियों की मधुर ध्वनि एवं झंकार के साथ मानो हमारी मन की तंत्रियाँ भी झंकृत हो उठीं। संगत के न होने पर भी एक अपूर्व आनन्द आ रहा था। संगत का अभाव भी नहीं कह सकते क्योंकि माँ स्वयं हाथ से ताली बजा कर तबले के अभाव को पूर्ण कर रही थीं। जब उन्होंने वाद्य-वादन समाप्त किया, तब मण्डप में एक अपूर्व निस्तब्धता छाई हुई थी, केवल तंत्रियों के मधुर नाद की प्रतिध्वनि गुंजित हो रही थी।

२८, २९ ता० को कलकत्ते से आई हुई प्रसिद्ध "नदेर निमाई" मंडली ने रात के ९ बजे से श्रीमन्महाप्रभु के पवित्र चरित्र के पतितोद्धार एवं संन्यासग्रहण के प्रसंग का अभिनय किया। प्रथम दिन का अभिनय रात्रि के तृतीय प्रहर तक चलता रहा। द्वितीय दिन भी अभिनय जब समाप्त हुआ तब रात्रि का तृतीय प्रहर व्यतीत हो चुका था। पात्रों ने अत्यन्त भाव पूर्ण अभिनय किया था। माँ भी उनके अभिनय से अत्यन्त प्रसन्न हुई थीं। उस समय माँ प्रायः भावावस्था तक पहुँच चुकीं थीं। माँ के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में १०८ कुमारियों का भोजन २९ ता० को सम्पन्न हुआ। माँ की उपस्थिति में देवी स्वरूप कुमारियों की पूजा एवं आरती हुई। माँ ने सभी कुमारियों के मस्तक पर फूल दिये। एवं स्वयं उनका प्रसाद लिया। प्रायः माँ इस दिन कोई न कोई लीला करती हैं। यह माँ के जन्मोत्सव का एक विशेष महत्त्व-पूर्ण दिन है।

३१ ता० की पुण्य तिथि आ गई। आज ही रात्रि के ब्राह्ममुहूर्त में माँ की तिथि पूजा होने वाली थी। इस पूजा को देखने के लिए दूर-दूर से भक्तगण उपस्थित हुए थे। इस दिन मध्याह्न को महारुद्र यज्ञ की पूर्णाहुति माँ की उपस्थिति में सम्पन्न हुई।

सायंकाल से मण्डप के मंच पर पूजन का विराट् आयोजन होने लगा। सत्संग मंडप में भक्तों के बैठने के लिए विशेष व्यवस्था की जा रही थी। चारों ओर से पूजा का आयोजन हो रहा था। सभी कार्य में व्यस्त थे। परन्तु आज के इस अनुष्ठान के लिए माँ का कोई निर्देश नहीं था। भक्त अपनी इच्छानुसार आयोजन कर रहे थे। परन्तु हाँ, एक विषय में माँ अत्यन्त तत्परता के साथ निर्देश दे रही थीं। वह यह था कि, आज पूजा समाप्त होने पर साधु महात्माओं को जो फल-फूल वस्त्रादिक भेंट किये जायेंगे, उन सामग्रियों के सजाने का काम माँ अत्यन्त तत्परता एवं निपुणता से कर रही थीं।

कार्य व्यस्तता में अर्द्धरात्रि व्यतीत हो गई किसी को पता ही नहीं लगा। वेदी के ठीक मध्यभाग में एक अत्यन्त सुसज्जित पर्यंक बिछा हुआ था। जिस पर दुग्ध धवल बिस्तर बिछा हुआ था। पर्यंक के ऊपरी भाग में मंडप की छत के ठीक बीचोंबीच बेला के सुगन्धित

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुष्पों से अत्यन्त सुरुचिपूर्ण सजावट की गई थी। सफेद गजरे के भीतर लाल रंग के पुष्पों द्वारा भी कुछ कारीगरी की गई थी जो अत्यन्त मनोरम प्रतीत हो रहा था, एवं लाल रंग के सहयोग से गजरे की सफेदी पूर्णतया खिल रही थी। शय्या की बाईं ओर एक बड़ी चौकी बिछी हुई थी। जिस पर नाना प्रकार के फलों की टोकरियाँ सजाई गई थीं, एवं वे पीले रंग के एक वस्त्र से ढँके हुए थे। शय्या को दाहिनो ओर अन्य दो चौकियों पर महात्माओं के लिए भव्य आसन बिछे हुए थे। मुख्य पर्यंक के सामने सोने का पायदान रखा हुआ था, एवं सामने स्वर्ण एवं रजत निर्मित पूजा की सामग्रियाँ सजी हुई थीं, एक ओर नाना प्रकार के पुष्पों से भरी हुई टोकरियाँ सुसज्जित थीं। नाना प्रकार की पुष्पमालाएँ भी थीं जो कि दूर-दूर से भक्तों ने भेजी थीं, दूर से देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि मानो पृथ्वी माता ने स्वयं नाना प्रकार के फूलों के ढेर उपहार के रूप दिए हों, पुष्पों की ताजगी देखकर लगता था कि माँ के श्री चरणों का सान्निध्य स्पर्श पाने के इस सौभाग्य पर गर्व कर वे फूले नहीं समा रहे थे। विद्युत् के निर्मल प्रकाश से पूजा मण्डप अतीव मनोहर लग रहा था। सत्संग मंडप भक्तों से भर गया था। तिल धरने तक का स्थान नहीं था। सहस्राधिक व्यक्तियों का समागम होने पर भी एक निस्तब्धता छाई हुई थी। सभी मानो किसी अलौकिक आनन्द उपभोग की प्रतीक्षा में थे। धीरे-धीरे घड़ी ने ढाई बजे के संकेत से सबको सचेत कर दिया। ब्राह्ममुहूर्त का समय था, चारों ओर निस्तब्धता और शान्ति थी। ब्रह्मचारिणियों ने भैरवी की मधुर तान छेड़ी। क्रमशः पूज्यमहात्माओं के द्वारा आसन अलंकृत होने लगे। अचानक एक हल्की सी चंचलता प्रकट हुई। सभी की दृष्टि एक ही ओर थी। सभी ने देखा कि परमपूज्य महात्मा कृष्णानन्द अवधूत जी और पीछे-पीछे माँ एक सरल भोली बालिका की तरह आ रही हैं। वेदी पर आकर माँ ने सभी महात्माओं को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। माँ की अद्भुत भावावस्था थी, उनके चेहरे से एक दिव्य ज्योति निःसृत हो रही थी। माँ पर्यंक पर विराजमान हुईं एवं तुरंत ही चादर ओढ़ कर लेट गईं। पौने तीन बजे पूजा प्रारम्भ हुई। ब्राह्मण गण वेदोच्चारण करने लगे। ठीक तीन बजे शंखध्वनि हुई। गगन में देवगणों ने दुन्दुभि बजाई, सबके अलक्ष्य में पुष्पवृष्टि की। शंखध्वनि के अनन्तर मंडप की बत्तियाँ बन्द कर दी गईं। थोड़ी देर के लिए सभी ध्यान मग्न होकर अपने हृदयासन में भगवत् स्वरूपिणी विश्वजननी का आवाहन कर उनकी मानस पूजा में व्यस्त हो उठे। प्रायः आधे घण्टे के बाद बत्तियाँ जल उठीं। सभी के चेहरे पर एक अपूर्व आनन्द का आभास था। मानो आधे घण्टे के इस अल्प समय में उन्होंने अमृत भंडार का पता लगा लिया है एवं अभी भी उस आनन्द सागर में डुबकियाँ लगा रहे हैं। ३-३० बज चुके थे। पूजन एवं वन्दना चल रही थी। माँ के स्वर्णिम पादपद्म पर पूजन हो रहा था। वह श्री

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चरण पुष्पमाल्यों से ढँक चुका था। फूल के अलावा नाना प्रकार के बहुमूल्य वस्त्राभरणों से भी वह अलंकृत था।

अब महात्माओं का पूजन प्रारम्भ हुआ। इधर माँ की पूजा तो स्वामी निर्वाणानन्द जी कर रहे थे। सभी महात्माओं को क्रमशः फूल एवं जड़ी की मालाएँ पहनाई गईं एवं वस्त्र-फलादिक भेंट किये गये। भेंट निवेदन करने के अनन्तर सोलह बालक ब्रह्मचारियों ने चित्र-विचित्र सुन्दर आरती के थालियों द्वारा आरती उतारी, दीपकों के प्रकाश से अपूर्व छटा फैली। महात्मागण भी मानो नेत्र बंद कर के परब्रह्म के चिंतन में लीन हो गये थे। उनके मुखमंडलों से एक दिव्य आनन्द की छटा निःसृत हो रही थी। जो कि प्रदीप के पवित्र एवं निर्मल प्रकाश में और भी उज्ज्वल प्रतीत हो रही थी। वास्तव में यह एक अवर्णनीय दृश्य है जिसका अनुभव विना देखे केवल कहने मात्र से नहीं हो सकता। आरती के बाद महात्मा गण माँ को अपनी श्रद्धांजलि भेट कर अपने अपने स्थानों के लिए विदा हो गये। माँ की पूजा भी प्रायः हो चुकी थी पर माँ उसी भावावस्था में लेटो हुईं थीं।

पूर्व दिगन्त में लालिमा छाई। ऊषारानी हाथ में स्वर्णिम आरती का थाल लेकर उपस्थित हुईं। विहंगों ने नवीन एवं मधुर स्वर से वन्दना की, दिशाएँ गूँज उठीं। त्रिभुवन वासी जयजयकार करने लगे। प्रकृति देवी जननी की आरती उतारने लगीं। मर्त्तवासी भी आरती करने लगे। आरती के मधुर वाद्यों की ध्वनि से पृथ्वी का कोना-कोना जागृत हो गया। सभी चराचर के प्राणी स्वर में स्वर मिलाकर जय घोष करने लगे। सभी में नवजीवन का संचार हुआ। अतुल वाद्य निनाद के साथ आरती सम्पूर्ण हुई। पुनः शंख ध्वनि से त्रिभुवन प्रतिध्वनित हुआ। त्रिभुवनवासियों ने भक्ति पुष्पाञ्जलि अर्पण कर प्रणाम किया। पूजन सम्पूर्ण होने के उपरान्त सभी प्रसाद लेकर विदा होने लगे। रात्रि जागरण की क्लान्त किसी में भी नहीं थी। सभी को अपूर्व आनन्द का अनुभव हुआ था। पूजा के बाद भी माँ उसी भावावस्था में निश्चल लेटी थीं। प्रायः मध्याह्न १२ बजे माँ की भाव समाधि टूटी, परन्तु तब भी माँ किसी अन्य लोक में थीं। माँ को विश्राम कक्ष में ले जाया गया। उस समय माँ के मुखमंडल से एक अपूर्व प्रभा छिटक रही थी जिसे देखकर सभी ने अपने नेत्रों को सफल किया।

इस प्रकार आनन्दसागर के उत्ताल तरंगों के साथ नृत्य करते हुए ये दिन प्रवाहित हो गये। अब विदा की घड़ी उपस्थित हो गई। माँ दिल्ली से ४ ता० को रवाना होंगी अतः कई भक्त माँ के साथ जाने का विचार कर वहीं रह गये। परन्तु अधिकतर भक्त अपने अपने स्थानों के लिए विदा हो गये। जाते समय सभी की माँ के श्री चरणों में यही प्रार्थना थी कि पुनः इस आनन्दोत्सव में उपस्थित होने का सौभाग्य प्राप्त हो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ जहाँ रहती हैं वहाँ प्रति दिन कुछ न कुछ उत्सव चलता ही रहता है। अतः यहाँ पुनः भक्तों ने २ ता० की रात्रि को नाम यज्ञ का आयोजन किया। रात के दस बजे अधिवास आरम्भ हुआ। माँ ने भी सबके साथ घूम-घूम कर कीर्तन किया। रात्रि में महिलाओं ने कीर्तन किया। ३ ता० की संध्या तक अखंड कीर्तन चलता रहा एवं प्रायः सीत बजे माँ की उपस्थिति में कीर्तन समाप्त हुआ। कीर्तन के अनन्तर सभी प्रसाद पाकर विदा हो गये। ४ ता० को प्रातः काल से जाने की तैयारियाँ होने लगीं। देखते-देखते मध्याह्न व्यतीत होकर सायं काल उपस्थित हुआ। शिवमन्दिर की सांध्य आरती दर्शन के उपरान्त, माँ दिल्ली के भक्तों को विरह के मधुर सागर में निमग्न कर हरिद्वार के लिए रवाना हो गईं।

जगद्धितामीक्षितदिव्यकीर्तिम्
भक्तिप्रदां विश्वजनैकवन्द्याम्।
ॐकारमूर्ति सुविशुद्धचित्तां,
मातृस्वरूपां शरणं प्रपद्ये ॥

क्रोध आये तो कमरा बन्द करके बैठ जाओ। थोड़ा रो लो। आँसू बहेंगे तो उनके साथ क्रोध बह जायगा।

—श्री उड़िया बाबाजी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्वागत गान

'मुक्तेश'

आज कोई शुभ कारण है,
वायु में सुगन्धी आती है।
गंगा की हर लहर आज,
इठलाकर चलती जाती है ॥१॥

साधु महात्मा ऋषि - मुनि,
सुन्दर प्रवचन सुनाते हैं।
इस तपोभूमि के भक्त आज,
मिलकर कुछ कहना चाहते हैं ॥२॥

कानों में सुनते थे महिमा,
आँखें दर्शन को अकुलाईं।
हुए आज हमारे धन्य भाग्य,
आनन्दमयी माँ यहाँ आयीं ॥३॥

ध्यानावस्थित बुद्ध के समान,
मस्तक पर तेज दिखाता है।
महिमा कवि क्या बखान करे,
कुछ वर्णन नहीं आता है ॥४॥

यहाँ राम-भरत ने तप किया,
मधुकैटभ यहाँ पर मारा है।
यह तपोभूमि ऋषियों की है,
माँ यह स्थान तुम्हारा है ॥५॥

भारत के कोने - कोने में,
तेरे नाम का आदर करते हैं।
सत्संग भवन में आज सभी,
हृदय से स्वागत करते हैं ॥६॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गंगाजी पाप को हरती हैं,
चन्द्रमा ताप को हरता है।
आनन्दमयी माँ का दर्शन,
सब पाप ताप को हरता है ॥७॥

यह सारा विश्व आपका है,
ऋषीकेश को भूल न जाना तुम।
सत्संग भवन में कृपा कर,
पग धर सुधा बरसाना तुम ॥८॥

जय काली कमली वाले की,
संग ही गंगे माता की जय।
'मुक्तेश' बोले फिर एक वार,
आनन्दमयी माता की जय ॥९॥

[श्री श्री माँ के स्वागत के अवसर पर सत्संग भवन, काली कमली धर्मशाला-ऋषिकेश]

●

श्याया श्याम हो गई।

स्याम-स्याम रटत राधे, आपु स्याम हो गई।
पूछत फिरी सखियन-सों, राधे कहाँ गई ?
देखि दशा सखियाँ सब, प्रेम विकल भई।
लिपट-लिपट रोईं सब, राधे नाम लईं ॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वैराग्य

लगभग चार सौ वर्ष पूर्व की कथा है—

महाराजा कृष्णदेवराय के काल में विजयनगर साम्राज्य वैभव के शिखर पर था। उस समय के राजगुरु योगी व्यासराय और कन्नड के 'दासश्रेष्ठ' संत पुरन्दर दास विजयनगर में ही निवास कर रहे थे। एक बार बातों-ही-बातों में राजगुरु व्यासराय ने कृष्णदेवराय से संत पुरन्दरदास की प्रशंसा करते हुए कहा कि पुरन्दरदास-सा वैरागी पुरुष शायद ही इस संसार में कोई हो। इस बात को सुनकर राजा ने मन ही मन पुरन्दरदास के वैराग्य की परीक्षा लेने की ठानी।

संत पुरन्दरदास हाथ में झोली लिये, भगवान् का कीर्तन करते हुए नगर में भिक्षाटन करते और जो कुछ मिलता उससे अपना एवं अपने परिवार का पेट पालते। एक दिन जब वे राजमहल के पास से जा रहे थे, तब राजपरिवारवालों ने उन्हें बुलाकर उनकी झोली में मुट्ठी भर हीरे डाल दिये, जिन्हें पुरन्दरदासजी ने सन्तोषपूर्वक स्वीकार किया।

दो-तीन दिन तक यही सिलसिला चलता रहा। हीरों को बिना किसी उपेक्षा से स्वीकार करते देख राजा को मन ही मन अपनी विजय पर प्रसन्नता हुई। उन्होंने व्यासराय से कहा—पुरन्दरदास के बारे में आपकी जो धारणा है वह भ्रमपूर्ण है। मैं आपको यह प्रमाणित कर दिखाऊँगा कि पुरन्दरदास का वैराग्य सच्चा वैराग्य नहीं है।

इस बात की वास्तविकता को जानने हेतु राजा और व्यासराय दोनों नगर से बाहर पुरन्दरदास की कुटिया पर गये। उनकी पत्नी—सरस्वती द्वार के पास बैठी सूप में चावल के दाने लिये उन्हें स्वच्छ कर रही थीं। व्यासराय ने सरस्वती से पूछा—

'बेटी! क्या अब तक भोजन तैयार नहीं हुआ है? दास भी कहीं दिखायी नहीं देते।''

''वे अभी बाहर गये हैं। भोजन की तैयारी में दो-तीन दिन से बिलम्ब हो रहा है। कारण कोई पुण्यात्मा उनकी झोली में कंकर-पत्थर डाल रहा है। दासजी कहते हैं कि इन कंकर-पत्थरों को वे इसलिये ले लेते हैं कि कहीं देनेवाले का दिल न दुखे। पर उन्हें चुनते-चुनते देर हो जाती है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"कंकर-पत्थर ? वे तो यहाँ दिखायी नहीं देते ?"

"उन्हें चुनकर अभी मैं उस पेड़ के नीचे कूड़े में फेंक आयी हूँ।"

सरस्वती की बात सुनकर व्यासराय एवं कृष्णदेवराय पेड़ के नीचे पड़े कूड़े की ओर गये। वहाँ पर कूड़े के साथ अनेक हीरे पड़े हुए थे। उन्हें देखकर व्यासराय के ओठों पर हलकी मुस्कान फैल गई। कृष्णदेवराय का सिर लज्जा से झुक गया और वे संत पुरन्दरदास की वैराग्य प्रवृत्ति से बड़े ही प्रभावित हुए।

[साभार 'कल्याण' से]

"ईश्वर पर विश्वास करना मन की दुर्बलता नहीं हैं। ईश्वर पर विश्वास आत्मबल है। ईश्वर पर भरोसा आप को निकम्मा बनाने के लिए नहीं है। यह पूरा संसार, सम्पूर्ण व्रह्माण्ड, ग्रह नक्षत्र और इन सब में छिपी शक्ति आपकी सहायता कर रही है। ईश्वर का अर्थ है सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्। आप उनके अनुकूल कार्य करेंगे तो वह अवश्य आप की सहायता करेगा।"

—स्वामी अखण्डानन्द

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मातृ-लीला

(१५ जनवरी से १५ अप्रैल १९७२ तक)

श्री यादव कृष्ण अवधिया एम. ए., बी. टी.

मताजी त्रिवेन्द्रम से मद्रास होती हुई दिनांक १७ जनवरी को पूना पधारीं। दक्षिण भारत की तरह पूना में भी माताजी एक उत्कृष्ट भाव में रहीं। बम्बई तथा अन्य स्थानों से कई भक्तगण पधारे तथा कुछ दक्षिण भारत से भी पधारे। त्रावनकोर के राजा इलय (Raja Elaya) तथा रानी एक-दो दिन तक उपस्थित रहे।

दिनांक १८ जनवरी को विशाल, नवनिर्मित, आयताकार आश्रम-हॉल का उद्घाटन विधिपूर्वक किया गया। दिनांक २१ को अब तक अल्पकाल के लिए किशनपुर आश्रम में रखे गये श्रीगोपाल जी के मनोहर विग्रह की स्थापना हॉल के समीपस्थ एक नये मंदिर में की गई। उस दिन वसंतपंचमी थी, अतः उसी प्रातःकाल कीर्तन, प्रवचन, प्रसाद वितरण सहित सरस्वती पूजा की गई। तत्पश्चात् यज्ञ संपन्न हुआ। श्रीगोपालजी के नये मंदिर में श्रीगणेशजी की प्रतिमा तथा श्रीराधाकृष्णजी की लघु प्रतिमा भी विद्यमान हैं। इस प्रकार लगातार तीन दिनों तक क्रमशः तीनों विग्रहों का अभिषेक संपन्न हुआ। श्रीमती अमृता वासुदेवजी की स्मृति में दिनांक २२ से २९ जनवरी तक भागवत-सप्ताह संपन्न हुआ। वे कई वर्षों से माँ की भक्त थीं तथा उन्होंने दो वर्ष पूर्व पवित्र-मंत्र का जप करते हुए अपनी इहलौकिक लीला समाप्त की थी। वृन्दावन के सुप्रसिद्ध वैष्णवाचार्य श्रीअतुलकृष्ण गोस्वामी जी ने प्रतिदिन प्रातःकाल एवं मध्याह्नोपरान्त श्रीमद्भागवत की अत्यन्त विशद व्याख्या हिन्दी में की। उन्होंने श्रीकृष्णलीला का अत्यंत प्रभावशाली वर्णन किया। प्रतिदिन प्रातःकाल अतिथि-भवन के एक कक्ष में काशी के श्रीभोला पंडितजी के द्वारा संस्कृत-पाठ संपन्न किया जाता था। माताजी का यह 'खेयाल' था कि जबतक हॉल में भागवत-पाठ चलता रहे, तबतक प्रतिदिन प्रातःकाल नए मंदिर में लक्ष्मीनारायण, सत्यनारायण, गुरु आदि विभिन्न देवताओं की पूजा संपन्न होती रहे। दिनांक २९ जनवरी को गोपालमंदिर के समीपस्थ एक लघु शिवालय तथा "आनंदेश्वर" शिवलिङ्ग की प्रतिष्ठा की गई। उसी दिन भागवत-सप्ताह के उपलक्ष में हवन तथा पूर्णाहुति संपन्न हुई।

माताजी के लिए गायन करने हेतु महाराष्ट्र तथा दक्षिण-भारत की कीर्तन-मंडलियाँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पूना आईं एवं स्वयं माताजी ने उन्हीं गायकों की शैली में कई बार अत्यन्त मनोहर ढंग से गाया। प्रायः प्रतिदिन प्रातःकाल माताजी पूना की सीमावर्ती, शान्त एवं मनोरम, पहाड़ी-सड़कों पर कार से भ्रमण करने जाया करती थीं। कभी-कभी वे बड़े तड़के पैदल ही आश्रम के चारों ओर भ्रमण किया करती थीं। एक दिन माताजी कुछ पारसी भक्तों के आमंत्रण पर उनके निवासस्थान पर पधारीं। वहाँ वे बड़ी देर तक गाती रहीं। अपने निवासकाल के अंतिम दिन वे घायल सैनिकों के एक अस्पताल में पधारीं तथा उन्होंने "नारायण" कहते हुए प्रत्येक रोगी को संतरे दिये।

दिनांक ३१ जनवरी को माताजी बम्बई के लिए रवाना हुईं, जहाँ उन्होंने विलेपार्ले में श्री बी. के. शाहजी के निवास-स्थान में अपने पैगोडानुमा भवन में तीन दिन व्यतीत किये। प्रतिदिन प्रातःकाल एवं सन्ध्याकाल में माताजी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करने के लिए सभी भागों से अनेक भक्त आया करते थे।

दिनांक ३ फरवरी की रात्रि को माताजी जयपुर जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं। उन्होंने सवाई माधोपुर, म.प्र. में कई घंटों तक विश्राम किया। कई वर्षों पूर्व वे वहाँ एक बार निवास कर चुकी थीं तथा एक भक्त ने वहाँ आने के लिए उनसे लगातार अनेकों बार प्रार्थनाएँ की थीं। इस बार माताजी वहाँ बिना कोई पूर्व सूचना दिये ही पधारीं। दिनांक ५ को बड़े तड़के माताजी जयपुर पहुँचीं। डॉ. एस. एल. पुरोहितजी ने गत नवम्बर मास में एक भक्त के नवनिर्मित भवन में माताजी के आवास की व्यवस्था की थी। इस बीच में उन्होंने अपने ही अहाते में माताजी के लिए एक मनोहर पर्णकुटीर का निर्माण कर लिया था। विगत यात्रा की भाँति माताजी इस बार भी इसी उद्देश्य से जयपुर पधारीं, कि दीदी माँ की मूर्ति-निर्माण का कार्य सर्वांग संपूर्ण हो। बर्फीली शीत-ऋतु होते हुए भी वे कलाकार के स्टुडियो में स्वयं मूर्त्ति-निर्माण करने में मिट्टी का उपयोग करती हुई प्रतिदिन दो-तीन घंटे बिताती थीं। जो थोड़े लोग वहाँ उपस्थित थे, वे माँ को मूर्तिकार की भूमिका में दीदी माँ की मूर्त्ति को सँवारकर अंतिम रूप देती हुई देखकर अत्यंत आनंदित हो रहे थे। अंत में दिनांक ८ फरवरी को वह मृणमयी मूर्त्ति पूर्णरूपेण दीदी माँ की तरह प्रतिभासित होने लगी एवं उसी रात्रि को माताजी नई दिल्ली के लिये रवाना हुईं, जहाँ वे दूसरे दिन प्रातःकाल पहुँचीं।

दिनांक ११ को आश्रम के मैदान में नव-निर्मित दो मन्दिरों की प्रतिष्ठा का शुभारम्भ हुआ; पहला पंचायतन मन्दिर, जिसके मध्य में तीन शिवलिंग तथा दो कोनों में गणेश, नारायण, सूर्य तथा पार्वती की मूर्तियाँ थीं तथा दूसरा श्री हनुमानजी का एक अत्यन्त छोटा मंदिर। दि० १३ को विस्तृत एवं विधिपूर्वक पूजन आदि के उपरान्त प्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न हुआ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस अवसर के लिए हरद्वार से पंडित पधारे थे। परम्परानुसार सम्पूर्ण रात्रि में 'शिवरात्रि' का उत्सव सम्पन्न किया गया। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि लोग बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित थे। रात-भर चलनेवाली पूजा में भाग लेनेवाले भक्तों ने विशाल हॉल, पंचवटी, नवीन मन्दिर आदि सभी प्राप्य स्थानों पर अधिकार जमा लिया; माता जी अत्र-तत्र-सर्वत्र घूमती रहीं एवं छोटी से छोटी बात पर ध्यान देती रहीं। श्रीमती एस० एम० सुभुलक्ष्मी (S. M. Subhulakshmi) ने भी उपस्थित होकर उत्सव में भाग लिया था उन्होंने पूजा के मध्यान्तरों में अपने गाने से सभी को आनन्दित किया।

दि० १४ को नाम-यज्ञ (महामन्त्र का अखण्ड-कीर्तन) प्रारम्भ किया गया जो २४ घंटे तक चलता रहा।

दि० १५ की रात्रि को माताजी देहरादून के लिए रवाना हुईं, जहाँ वे दि० १६ को प्रातःकाल उतरीं। दि० १७ को 'अमर कुटीर' कल्याणवन में माताजी की उपस्थिति में हमारे विद्यापीठ के १२ छात्रों ने तथा अन्य दो युवकों ने यज्ञोपवीत ग्रहण किया। यज्ञोपवीत संस्कार के अनन्तर नये ब्रह्मचारियों को तीन दिनों तक एकांतवास करना पड़ा तथा उन्हें संध्या करना तथा अन्य कर्त्तव्यों का पालन करना सिखाया जा रहा है। वे मध्याह्नकाल में शक्कर-रहित दूध में पकाये गये चावल लेकर तथा प्रातः एवं सन्ध्याकाल में दूध एवं केले ग्रहण करते हुए उपवास करते हैं। माताजी प्रतिदिन उन बालकों को देखने जाती थीं तथा सम्पूर्ण व्यवस्था का निरीक्षण करती थीं।

दि० १८ से २६ फरवरी तक आश्रम-हॉल में भागवत-सप्ताह मनाया गया, जिसमें वृन्दावन के श्री श्रीनाथ शास्त्री जी प्रातःकाल संस्कृत-अंशों का पाठ करते थे तथा प्रतिदिन मध्याह्नोपरांत हिन्दी में उनकी अत्यन्त विशद व्याख्या करते थे। हॉल तथा बरामदे स्त्रियों एवं पुरुषों से ठसाठस भरे थे, जो पूर्ण निस्तब्ध वातावरण में ध्यानपूर्वक कथा श्रवण करते थे। अस्वस्थ होने के कारण माताजी दो दिनों तक सीढ़ियों से नीचे नहीं उतरीं; परन्तु वे प्रथम दिन, अंतिम दिन तथा श्रीकृष्ण-जन्म-वर्णन के दिन उपस्थित रहीं। सदा की भाँति श्रीकृष्ण जन्मोत्सव विशेषरूप से मनाया गया। दिनांक २६ को हवन के पश्चात् भोजन में भाग लेने के लिए अप्रत्याशित रूप से कई व्यक्ति आये एवं अंतिम क्षणों में अधिक भोजन पकाना पड़ा। प्रांगण में प्रतीक्षा करती हुई भीड़ के साथ माताजी बैठ गईं एवं उन्होंने "श्रीराम जय राम जय जय राम" गाना प्रारंभ कर दिया। जब तक सभी लोग सामूहिक गान में भाग लेते हुए तल्लीन थे, तब तक माताजी ने आश्रम के कोने-कोने से फल एकत्रित करा लिये

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा उन्हें टुकड़ों में विभक्त कराकर प्रत्येक के खाली पत्तल पर रखवा दिया। इस प्रकार हम लगभग डेढ़ घंटे तक माताजी के अचानक तथा अप्रत्याशित रूप से प्राप्त, अत्यंत मनोहर दर्शन का आनंद उठाते रहे।

उसी दिन मध्याह्नोपरांत माताजी मोटर से रायपुर के लिए रवाना हुईं, जहाँ दूसरे दिन प्रातःकाल अखण्ड-रामायण का शुभारंभ किया गया। उसकी समाप्ति के तुरंत बाद ही दि० २८ को माताजी किशनपुर लौट आईं। दि० २९ को कल्याणवन में विशाल होलिका जलाकर तथा आश्रम में अखण्ड कीर्तन का आयोजन करके होली का त्योहार मनाया गया। उस दिन प्रातः काल माताजी चार बार कल्याणवन आईं तथा उन्होंने सबों पर गुलाल छिड़क कर प्रत्येक को आशीर्वाद दिया। उसी कीर्तन-मंडली ने कल्याणवन में आकर दो घंटे तक कीर्तन किया। देहरादून में माँ की उपस्थिति में होली का उत्सव मनाने का यह पहला ही अवसर था। होली के दिन बस-सेवा उपलब्ध न हो सकने के कारण लोग अधिक संख्या में न आ सके, जिससे उत्सव का आनंद और भी अधिक घनीभूत हो उठा। विभिन्न देशों से आए हुए कुछ विदेशियों ने भी इस उत्सव में भाग लिया एवं उत्सव के कार्यक्रमों की फिल्में तैयार कीं।

दि० २ मार्च को माताजी ट्रेन से वाराणसी के लिए रवाना हुईं। दि० ७ मार्च को तीन दिनों तक विश्राम करने के लिए उन्होंने अचानक ही दो या तीन साथियों सहित विन्ध्याचल के लिए प्रस्थान किया। दूसरे दिन जर्मनी के कुछ भक्त वाराणसी पधारे एवं उन्होंने विन्ध्याचल के आनंदपूर्ण एकांत में लगातार दो दिनों तक माताजी का दर्शन प्राप्त करने के अलभ्य अवसर का पूरा-पूरा लाभ उठाया। माताजी दि० १० को वाराणसी लौट आईं। वे थकान-रहित तथा प्रफुल्लित प्रतीत होती थीं।

इसके पश्चात् ही अत्यंत व्यस्त पखवाड़े का प्रारंभ हुआ। उत्सवों, धार्मिक कृत्यों, भोजों, गणमान्य, लब्धप्रतिष्ठ लोगों तथा बड़ी संख्या में आनेवाले विदेशियों के अनवरत प्रवाह के कारण किसी को साँस लेने की भी फुरसत नहीं थी। दिनांक २१ से २४ मार्च तक चण्डी-मंडप में वासन्ती पूजा सुसंपन्न हुई, जिसमें भाग लेने के लिए कलकत्ता, बम्बई, अहमदाबाद एवं अन्य स्थानों से लगभग १५० भक्त पधारे। दि० १२ मार्च को ५५ फ्रेंच स्त्री-पुरुषों की एक धार्मिक मंडली माताजी के दर्शनार्थ पधारी। उन्होंने माताजी के साथ १५ मिनट तक मौन-ध्यान करने की विशेष प्रार्थना की। माताजी ने गोपालमंदिर के हॉल में मौन-ध्यान करने की स्वीकृति प्रदान की। ध्यान के उपरान्त माताजी ने उन सबों को प्रसाद वितरित किया। हमारे आश्रम में स्थायी रूप से निवास करनेवाले फ्रेंच डाक्टर उस समय वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने उनलोगों को उन्हीं की भाषा में माताजी एवं उनकी शिक्षाओं के सम्बन्ध में बताया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वे लोग अपनी भेंट से अत्यन्त प्रभावित एवं सन्तुष्ट होकर गये।

दि. १५ मार्च को गोपालमन्दिर के तलघर के हॉल में ५० पंडितों द्वारा १० दिनों तक चलनेवाले सहस्रचण्डी पाठ (१००० दुर्गा-सप्तशती) का शुभारंभ किया गया एवं दिनांक २५ को २० पंडितों द्वारा किये गये विशाल-यज्ञपूर्वक उसकी समाप्ति हुई। इसके अनन्तर ही माँ की उपस्थिति में कुमारी-पूजा एवं बटुक-पूजा सम्पन्न हुई।

दि. १७ मार्च को विधिपूर्वक किये गए धार्मिक कृत्यों सहित नवनिर्मित शिवमन्दिर के ५ लिंगों की प्रतिष्ठा हुई, जिनमें ३ श्वेत तथा २ काले थे। किसी भक्त के द्वारा शिवलिङ्ग आश्रम को सौंप दिया गया था, क्योंकि उसे कलकत्ते में जाकर बसना था और उसने स्वप्न में देखा था कि वह शिवलिङ्ग वाराणसी नहीं छोड़ना चाहता।

दि. १९ को देवगढ़ के श्रीनरेन्द्र ब्रह्मचारो जी माताजी के दर्शनार्थ पधारे। माताजी ने उन्हें तथा ५० व्यक्तियों की उनकी मण्डली को दि. २१ को सप्तमी पूजा तथा प्रसाद के लिए आमन्त्रित किया। दूसरे दिन, बड़े तड़के हमारे आश्रम में अष्टमी पूजा में सम्मिलित होने के पश्चात्, माताजी, श्रीनरेंद्र-ब्रह्मचारी जी के निमन्त्रण पर मोतीझील पधारीं, जहाँ ब्रह्मचारी जी अन्नपूर्णा पूजा सम्पन्न कर रहे थे। उस दिन हमारे अन्नपूर्णा मन्दिर में भी विशेष पूजा सम्पन्न की गई एवं विशेष भोग चढ़ाया गया। लगभग मध्याह्नकाल में माताजी आश्रम लौटीं एवं सीधे अन्नपूर्णा मन्दिर पहुंचीं। दि. २३ को परंपरानुसार मनोहर ढंग से रामनवमी का उत्सव मनाया गया। श्रीरामचन्द्रजी के जन्म के प्रतीकस्वरूप मध्याह्नकाल में खोले गये एक सन्तरे में एक शालिग्राम की मूर्त्ति रखी गई। उस दिन शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश के अध्यक्ष श्रीस्वामी चिदानन्दजी, माताजी के दर्शनार्थ पधारे एवं माताजी के साथ लगभग आधा घन्टा बिताया। दूसरे दिन दशहरा मनाया गया एवं इस प्रकार दुर्गापूजा की समाप्ति हुई। गङ्गा में मूर्त्ति विसर्जित करने हेतु ले जाये जाने के पूर्व माताजी ने अत्यन्त भावानुप्राणित होकर गाया।

दि. २६ को भारत के उपराष्ट्रपति श्री जी. एस. पाठकजी, यू. पी. के गवर्नर श्री वी. गोपाल रेड्डी तथा अन्य कई उच्चपदाधिकारियों सहित, माताजी से मिलने आए एवं उन्होंने आश्रम में मध्याह्न का भोजन ग्रहण किया। बहुत रात बीतने पर माताजी अप्रत्याशितरूप से कलकत्ते के लिए रवाना हुई। उनका मुख्य उद्देश्य कन्यापीठ की एक शिक्षिका को देखना था, जो रामकृष्णमिशन के एक अस्पताल में गम्भीर रूप से अस्वस्थ होकर पड़ीथी कुछ दिनों बाद उसका आपरेशन होनेवाला था। रोगिणी को धीरज बँधाती हुई माँ अस्पताल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में एक घन्टे से भी अधिक समय तक रुकी रहीं। वे अन्य दो बीमार भक्तों के घर पर भी गईं एवं उन्होंने श्री जी. सी. दासगुप्ता जी की ९५ वर्षीया विधवा को दर्शन दिया। माताजी ने अगारपाड़ा-स्थित हमारे आश्रम में सिर्फ लगभग १५ मिनट बिताये। तत्पश्चात् वे मोटर से बर्दवान के लिए रवाना हुईं किन्तु गाड़ी चूक जाने से उन्हें बिना सुरक्षण (reservation) के ही दूसरी ट्रेन से वाराणसी लौटना पड़ा। दि. २८ को प्रातःकाल में माताजी को लिवा लाने के लिए आश्रम की जो कार वाराणसी स्टेशन को भेजी गई, उसे खाली लौटना पड़ा। कुछ समय पश्चात् माताजी टैक्सी से पधारीं। कुछ घन्टों तक चलनेवाले निजी-साक्षात्कार का कार्यक्रम सम्पन्न करके तथा कई समस्याओं का समाधान करके माताजी रेलवे स्टेशन लौटीं एवं श्रीगौरीनाथ शास्त्री जी तथा अन्य व्यक्तियों के साथ दिल्ली को रवाना हुईं। इस प्रकार माताजी ने लगातार ३ रातें ट्रेन पर ही बिताईं। दिल्ली पहुँचने पर, सर्वप्रथम माताजी नवीन शिवमन्दिर में पहुँची एवं तत्पश्चात् अपने निजी कक्ष में जाने के पूर्व उन्होंने अपने अतिथि की व्यवस्था का निरीक्षण किया। शीघ्र ही माताजी का कुरुक्षेत्र-यात्रा सम्बन्धी अन्तिम निर्णय प्राप्त करने हेतु भूतपूर्व मन्त्री श्री जी. एल. नन्दाजी आए। दिल्ली, चण्डीगढ़ तथा कुरुक्षेत्र के कई स्थानों पर माताजी के चित्रों सहित बड़े-बड़े पोस्टर्स रखे गये।

कुरुक्षेत्र महाभारत का प्राचीन युद्ध-स्थल है, जहाँ श्रीकृष्णजी ने अर्जुन को 'भगवद्गीता' का उपदेश उस समय दिया, जब कौरव तथा पांडव युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर एक-दूसरे के सम्मुख व्यूहबद्ध होकर खड़े थे। वह कुरुक्षेत्र आज भी तीर्थस्थल माना जाता है। वहाँ सूर्य-ग्रहण के अवसर पर एक प्राचीन विशाल सरोवर में स्नानार्थ लाखों लोग एकत्रित हो जाते हैं। अब इस स्थान का विकास संस्कृत-भाषा एवं हिन्दू-संस्कृति के अध्ययन-केन्द्र के रूप में किया जा रहा है। श्री जी. एल. नन्दाजी ने कुछ समय पूर्व माताजी से प्रार्थना की थी कि वे दि. ३१ मार्च को वहाँ पधारकर एवं दो दिनों तक वहाँ निवास करके अपनी उपस्थिति से उस स्थल को आशीर्वाद दें।

दि. ३० की संध्या को कई विदेशी माताजी के दर्शनार्थ आये, जिनमें अधिकांश मास्टर सुब्रमनिया (Master Subramuniya) के शिष्य थे, कुछ श्रीसत्य साईं बाबाजी तथा श्रीनीम करोली बाबाजी के भी शिष्य थे। उन्होंने शिवमन्दिर के सम्मुख निर्मित चबूतरे पर बैठकर माताजी के प्रति भजन गाये। उन्हें चन्दन का लेप, मालाएँ तथा मन्दिर से मिष्टान्न वितरित किया गया। दिनांक ३१ को प्रातःकाल लगभग ५.३० बजे माताजी एवं उनकी मंडली ने कई कारों पर बैठकर कुरुक्षेत्र के लिए प्रस्थान किया। अभी दिन पूरी तरह निकला भी नहीं था, तथापि कई पाश्चात्य विदेशी माताजी के दर्शनार्थ प्रतीक्षा कर रहे थे। कार से

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यात्रा करते समय माताजी ने बहुत देर तक "श्रीकृष्ण शरणं मम" गाया तथा सभी ने सामूहिक रूप से उसे दुहराया। कुरुक्षेत्र के प्रवेश-द्वार पर श्री जी० एल० नन्दा तथा विशाल जनसमूह ने पुष्पों की वर्षा करके माताजी का स्वागत किया। तत्पश्चात् उन्हें बिड़ला धर्मशाला ले जाया गया, जहाँ उन्हें तथा उनकी मंडली को ठहराया गया। कुछ समय पश्चात् कनखल के निर्वाणी अखाड़ा के महंत एवं नूतन-स्थापित, कुरुक्षेत्र-विश्वविद्यालय के उपकुलपति माताजी के स्वागतार्थ पधारे।

नवीन, कोमल पल्लवों एवं सुगंधित मंजरियों से युक्त, प्राचीन आम्रवृक्षों के मध्य निर्मित तथा सरोवर के समीपवर्ती पंडाल में सत्संग हुआ, जिसमें अनेकों प्रख्यात महात्माओं के प्रवचन हुए। एक नये सरोवर का निर्माण किया जा रहा है, जो प्राचीन सरोवर से बहुत बड़ा है। सत्संग के पश्चात् माताजी को स्थानेश्वर, शिवमंदिर ले जाया गया। कहा जाता है कि श्री कृष्णजी ने महाभारत का युद्ध प्रारंभ होने के पूर्व यहाँ पूजा संपन्न की थी। माताजी के लिए एक लकड़ी का पीढ़ा तथा पूजा की विविध सामग्री तैयार रखी थी। वे स्टूल पर बैठी हुई थीं। उन्होंने ब्रह्मचारी भास्करानंद जी को पूजा संपन्न करने के लिए इशारा किया परन्तु फिर उन्होंने स्वयं ही जल छिड़का, चंदन का लेप लगाया, बिल्व-पत्र चढ़ाए तथा अंत में अपना मस्तक अत्यंत धीरे से व मनोहर ढंग से उस प्राचीन शिवलिङ्ग पर रख दिया। माताजी एक अभूतपूर्व भाव में निमग्न थीं। हममें से किसी ने पहले कभी माँ को पूजा करते हुए नहीं देखा था। उपस्थित सभी लोग अत्यंत भावविभोर हो गए। दुर्गा तथा भद्रकाली मन्दिर में जाने के पश्चात् माताजी को 'ज्योतीश्वर' ले जाया गया। कहा जाता है कि यह ठीक वही स्थल है, जहाँ श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था। किंवदन्ती है कि आदि शंकराचार्य ने इस तथ्य की पुष्टि की थी। प्रतिदिन वहाँ सम्पूर्ण-गीता-पाठ होता है। दूसरे दिन माताजी को सरोवर के चारों ओर भ्रमण कराया गया। प्रवचनों के लिए एक विशाल हॉल तथा 'साधन क्षेत्र' आश्रम के निर्माण की योजना तैयार की गई है। माताजी ने पुनः गाया, "श्री कृष्ण शरणं मम।" भावविभोर होने से कई व्यक्ति गद्गद हो गये। तत्पश्चात् माताजी एवं विशाल जनसमूह की उपस्थिति में गोरक्षा-केन्द्र का शिलान्यास किया गया। माताजी को ईंटें दी गईं। वे उनका स्पर्श करती जाती थीं एवं श्री जी. एल. नन्दाजी उन्हें भूमि पर रखते जाते थे। माताजी को कार से विश्वविद्यालय के अत्यन्त विस्तृत अहाते में भी घुमाया गया। उस स्थल को छोड़ने के पूर्व माताजी मध्याह्नोपरान्त गीतामन्दिर पहुँचीं, जहाँ दीवालों पर सम्पूर्ण गीता अंकित की गई है।

जयपुरिया परिवार के अत्यन्त आग्रह पर माताजी कार द्वारा गाजियाबाद की ओर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रवाना हुईं । उन्हें एक नवनिर्मित भवन में ठहराया गया एवं संस्कृत-पाठ तथा आरतीपूर्वक उनका स्वागत किया गया ।

१० बजे रात्रि को माताजी की उपस्थिति में, कारखाने के एक विशाल, नवनिर्मित भवन में अत्यन्त मनोहर ढंग से सुसज्जित, एक वृत्ताकार वेदी के चारों ओर घूमती हुई, हमारी दिल्ली की कीर्त्तन-मंडली द्वारा नाम-यज्ञ का शुभारम्भ किया गया । लगभग अर्धरात्रि को अपने कक्ष में विश्राम करने के पूर्व माताजी कुछ समय तक कीर्त्तन-मण्डली के साथ घूमती रहीं । दूसरे दिन सन्ध्या समय उन्होंने उत्सव के अन्त में बड़े मनोहर ढंग से चित्ताकर्षक भजन "धरो लाओ....." गाया एवं तत्पश्चात् बड़े सुन्दर ढंग से एवं फुर्त्ती से सभी उपस्थित लोगों को प्रसाद बाँटा ।

माताजी वृन्दावन जानेवाली थीं परन्तु लघु सूचना मिलते ही दि. ४ अप्रैल को वे देहरादून स्थित रायपुर आश्रम की ओर रवाना हुईं । वे वहाँ मध्याह्नोपरान्त उतरीं । दूसरे दिन उन्होंने किशनपुर आश्रम तथा कल्याणवन में कई घन्टे बिताये । तत्पश्चात् वे रायपुर लौट आईं क्योंकि उन्हें कुछ दिनों तक विश्राम करने की नितांत आवश्यकता थी । इतना होने पर भी वे प्रतिदिन सन्ध्याकाल को छत पर दर्शन देती थीं, जहाँ से जलप्रवाह-युक्त घाटी तथा चारों ओर स्थित पर्यतमालाएँ दृष्टिगोचर होती थीं । दिनांक ८ को रायपुर आश्रम के हॉल में 'अखण्ड-रामायण' का शुभारंभ किया गया एवं दि. ९ को उसकी समाप्ति होने पर माताजी एक भक्त के भवन पर गईं, जो रायपुर कारखाने में निर्मित था । वे ६ बजे शाम को किशनपुर पहुँचीं । वहाँ से दि. १० को मध्याह्नोपरान्त वे कनखल के लिए रवाना हुईं । दिनांक ९ को बहुत रात बीतने पर प्रधान मन्त्रीजी एवं उनकी इटालियन पुत्रवधू ने भवन के ऊपरी खण्ड में स्थित माताजी के कक्ष में माताजी के साथ लगभग एक घन्टा व्यतीत किया ।

दि. १३ को कनखल में दीदी माँ का संयास-उत्सव-स्मृति-दिवस मनाया गया । इसके उपलक्ष में नवनिर्मित सुन्दर मन्दिर में स्थित उनके समाधि-स्थल पर विधिपूर्वक पूजा सम्पन्न की गई एवं निर्वाणी अखाड़ा में १०० साधुओं को भोज दिया गया । उसी दिन प्रातःकाल माताजी की उपस्थिति में नारायण एवं पद्मनाभं की पूजा करके तीन नवनिर्मित कमरों का उद्घाटन किया गया । इस अवसर पर विभिन्न स्थानों से कई भक्तगण एकत्रित हुए । दीदी माँ के मन्दिर के सामने सत्संग हुआ । कई विख्यात महात्माओं ने, जो श्रेष्ठ वक्ता भी हैं, दीदी माँ तथा संन्यास के महत्त्व पर प्रवचन करके इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई । उनमें रामतीर्थ आश्रम के अध्यक्ष श्रीस्वामी गोविन्दप्रकाश जी एवं श्रीमहेश्वरानन्द आश्रम के अध्यक्ष श्रीस्वामी वह्मानन्द जी प्रमुख थे ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दि. १५ की रात्रि को माताजी ट्रेन से वाराणसी रवाना हुईं। आशा की जाती है कि वे वहाँ दि. २७ अप्रैल तक निवास करेंगी।

माताजी का जयन्ती महोत्सव दि. २३ से ३१ मई तक चन्द्रालोक काल्काजी, नई दिल्ली में स्थित हमारे आश्रम में संपन्न होगा।

ओ३म्कार पानी अरु पवन। सूर्य, चन्द्र, घनि, महि, भवन॥
ओ३म्कार पूजा अरु मान। ओ३म्कार जप, संयम ध्यान॥
ओ३म्कार तप तीरथ दान। ओ३म्कार राखैं सुर ग्यान॥
ओ३म्कार गुरु अरु चेला। ओ३म्कार रह रासी मेला॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीश्री आनन्द मयी संघ

ॐ मा

मातृ शरणं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Registered with the Registrar of Newspaper for India under No. N. 4727/57

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

श्री श्री आनन्दमयी संघ

मातृ शरणं

वर्ष १९ अक्टूबर १९७२ अंक ४

CC0-In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

OUR LATEST PUBLICATION — COMING OUT SHORTLY

A MYSTIC SAGE

A brilliant book on the Spiritual significance

of SHREE SHREE MA ANANDAMAYEE

by

Sri Shyamananda Banerjee

with an illuminating Foreword by

Shri P. B. Mukherjee, Chief-Justice, Calcutta High Court, West Bengal

Who writes :

- ………"The chapters on Ma's mystic Diksha, her mystic sadhana, her mystic samadhi and her mystic Hymns during trance highlight some features of this great life."
- ………"Readers and spiritual aspirants will find this an unique book."
- ………"I respect and admire the learned author for his scholastic learning and deep understanding."……
- ………"The erudite author has brilliantly succeeded."

Publishers :

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

BHADAINI, VARANASI-1

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

२३वाँ संयम सप्ताह महाव्रत

आनन्द के साथ सूचित किया जाता है कि श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रयत्न से और श्रीराम पञ्जवानीजी के आमन्त्रण पर संयम सप्ताह महाव्रत का २३वाँ अनुष्ठान आगामी १३ नवम्बर से १९ नवम्बर तक सुरतगिरि बंगला, गिरिशानन्द आश्रम, कनखल में सम्पन्न होगा। अपने को जानना, अपने को पाना, सर्व प्रकार से सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि के पालन द्वारा अपने आध्यात्मिक जीवन में उन्नति साधन की चेष्टा करना तथा सबकी आत्मोन्नति सम्पादन में सहायता देना ही संयम सप्ताह के उद्देश्य हैं।

इस समय श्री श्री माँ कनखल में विराजमान रहेंगी, ऐसी आशा की जा रही है।

दुर्गा सिंह

सभापति

३० सितम्बर, १९७२ ई० — श्री श्री आनन्दमयी संघ

विशेष द्रष्टव्य—

जो लोग इस उत्सव में सम्मिलित होना चाहते हैं वे कम से कम १५ दिन पहले आगमन की सूचना नीचे के पते पर देने की कृपा करें—

स्वामी परमानन्द
श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
पोस्ट :—कनखल
जिला :—साहारानपुर
(उत्तर प्रदेश)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

[श्री श्री आनन्दमयी संघ का त्रैमासिक मुखपत्र]

•

परामर्श-परिषद्

महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज, एम. ए., डी. लिट्, पद्मविभूषण
अध्यक्ष

डाक्टर श्री गौरीनाथ शास्त्री, एम. ए., पी. आर. एस, डी. लिट्

ब्रह्मचारी शिवानन्द

ब्रह्मचारिणी आत्मानन्द

•

सम्पादक—**ब्रह्मचारी निर्मलानन्द**, एम. ए., शास्त्री

•

: वार्षिक चन्दे का विवरण :

भारत में—६) रुपये (डाक व्यय सहित)
विदेश में—(सी० मेल) १०·५० अथवा १५ शीलिंग अथवा २ डालर।
(एयर मेल)—२५ रुपये अथवा १ पौण्ड १० शीलिंग (यूरोप)
„ —३५ रुपये अथवा ५½ डालर (उत्तर-दक्षिण अमेरिका)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

- 'आनन्द वार्ता' त्रैमासिक पत्रिका। बँगला, हिन्दी और अंग्रेजी में तीन अलग-अलग संस्करण प्रकाशित होता है।
- 'आनन्द वार्ता' का वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होता है। वर्ष के किसी भी महीने में चन्दा भेजकर ग्राहक बना जा सकता है। प्रत्येक ग्राहक को जनवरी अंक से पत्रिका लेना आवश्यक है। दिसम्बर के अन्त तक चन्दा या सूचना न मिलने पर अगला अंक भी वी० पी० द्वारा भेजा जाता है।
- पत्रिका प्रकाशित होते ही प्रत्येक ग्राहक के पास डाक द्वारा भेजी जाती है। डाक की गड़बड़ी के कारण कभी-कभी पत्रिका ग्राहक को नहीं मिल पाती। जनवरी, अप्रैल जुलाई और अक्तूबर महीने के तीसरे सप्ताह के भीतर पत्रिका प्राप्त न होने पर स्थानीय डाकघर से पूछताछ कर फिर कार्यालय को सूचना देनी चाहिये।
- श्री श्री माँ की उपदेश वाणी तथा उनके दिव्य जीवन से सम्बन्धित रचनावली विशेष रूप से 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित की जाती है! इसके अतिरिक्त दार्शनिक मतवाद धर्म, नीति, शिक्षा और संस्कृति मूलक तथ्यबहुल शोधपूर्ण रचनायें, सम्प्रदाय निर्विशेष साधक महापुरुषों की जीवनी, धर्म-सम्बन्धी वास्तव घटना-आख्यायिका आदि भी 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशित किये जाते हैं।
- 'आनन्द वार्ता' में प्रकाशनार्थ रचनाएँ फुलस्केप कागज़ के एक तरफ सुवाच्य अक्षरों लिखकर और उसकी नकल रखकर भेजनी चाहिए। लेखों का परिवर्द्धन, परिमार्जन तथा परिवर्तन करने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- समीक्षा और समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।
- स्थायी पते में कोई परिवर्तन होने पर तुरन्त सूचना दीजिये।
- चन्दा और पत्रादि लिखते समय अपना नाम, पूरा पता और ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। जो सज्जन चेक द्वारा चन्दा देना चाहें, वे बैंक क्लेक्शन चार्ज २) रुपये अधिक भेजने की कृपा करें।
- **रुपया तथा चेक इत्यादि भेजने— का पता**
  श्री श्री आनन्दमयी संघ
  (पब्लिकेशन अकाउन्ट)
  भदैनी, वाराणसी—१
- **रचना और समालोचना के लिये— पुस्तक इत्यादि भेजने का पता—**
  सम्पादक, 'आनन्द वार्ता'
  श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
  भदैनी, वाराणसी—१

● टेलीग्राम : जी फोन : ६२७९१

● श्री श्री आनन्दमयी संघ, वाराणसी की तरफ से श्री स्वामी चिन्मयानन्द द्वारा श्री माँ आनन्दमयी आश्रम के लिए प्रकाशित और वर्द्धमान मुद्रणालय, गौरीगंज से मुद्रित।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विषय-सूची

१.	मातृ-वाणी	२३१
२.	मातृ-सत्संग—स्वामी भागवतानन्द गिरि	२३३
३.	श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग—श्री अमूल्य कुमार दत्त गुप्ता	२३७
४.	अन्नपूर्ण सदापूर्ण—रमाकान्त	२४२
५.	करुण-पुकार—डॉ० श्रीमती सरोज पालिवाल	२४७
६.	॥ एक बार ॥ अनुकम्पाधारा	२५२
७.	महात्माओं के श्री मुख से	२५४
८.	मानव धर्म—डॉ० शान्तिप्रकाश आत्रेय	२६०
९.	सौन्दर्यानुभूति	२६८
१०.	देवभूमि कुरुक्षेत्र के बहुमुखी विकास	२७२
११.	श्री अरविन्द और उनका योग—श्री दुर्गाशंकर महलानवीस	२८४
१२.	मातृ लीला	३०३

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्दवार्ता के सहृदय पाठकों तथा पाठिकाओं से नम्र निवेदन

सर्व प्रथम हमारा 'जय माँ' स्वीकार करें, । आप को अवश्य ज्ञात होगा कि, जनवरी महीने से बंगला, हिन्दी और अंग्रेजी इन तीन संस्करणों में "आनन्द वार्ता" प्रकाशित हो रही है । अंग्रेजी संस्करण में श्री श्री माँ के दिव्य जीवन एवं उपदेश के अतिरिक्त अन्यान्य धार्मिक तथा दार्शनिक विषयों पर आलोचनाएँ एवं प्रबन्ध प्रकाशित होते हैं । जो सज्जन दोनों संस्करण (बंगला अंग्रेजी अथवा हिन्दी अंग्रेजी) लेना चाहते हैं उनकी सुविधा के लिए वार्षिक चन्दा १२) रुपये के बदले १०) रुपये रखा गया है ।

दूसरी बात यह है कि पिछले दिसम्बर महीने (१९७१) से सभी श्रेणी की पत्रिकाओं पर Refugee Relief Stamp लगाना अनिवार्य होने के कारण इस वर्ष तीन भाषाओं में प्रकाशित चार संख्या में प्रायः २०००) रु. से अधिक खर्च हुआ है । व्यय के इस गुरुत्व को लाघव करने के लिए आपका सहयोग प्रार्थनीय है ।

आशा है कि सब तरफ से सोच विचार करके अगले वर्ष का चन्दा भेजने के समय ११) रु. दक्षिणा (६ + ४ + १) भेज कर कृतार्थ करेंगे । आप के नाम आनन्दवार्ता के दोनों संस्करण नियमित रूप से भेजे जायेंगे । जो सज्जन किसो विशेष कारण से दो संस्करण लेने में असमर्थ है, वे कृपाकर अगले वर्ष का चंदा भेजने के समय चंदे के साथ R. R. निमित्त १) रु. अधिक भेजकर कृतार्थ करें ।

सम्पादक

"आनन्द वार्ता"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पट्टम पैलेस
त्रिवेन्द्रम

श्री पद्मनाभमजी का प्रसाद तुलसीदल
हाथों में लिए हुए

जनवरी, १९७२

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्द वार्ता

"अमर आत्मा—अमर पन्थी स्वयम्—अपने में आप।"

वर्ष—१९ अक्टूबर १९७२ [अंक—४

मातृवाणी

जब तक गुरुशक्ति का विज्ञान प्रकट नहीं होता तब तक निज स्वरूप बोध की विशेष यात्रा का आरम्भ ही नहीं हुआ। इस कारण लगातार गति को प्राप्त नहीं होता। साधन तो प्रकृत गति के साथ-साथ चलता है न। इस कारण मनुष्य का कर्त्तव्य है कि तेजस्वी गतिवाला होने की कोशिश करे।

* * *

आनन्द रहने पर उसके साथ ही पीछे-पीछे निरानन्द रहता ही है। ब्रह्मानुभूति आनन्द निरानन्द से अलग एक हालत है। जैसे गोला घड़ा देखने से ही दूर से जल से भरा जैसा मालूम पड़ता है। क्योंकि साधारणतया जल से भरा घड़ा ही गोला दीखता है। इसी तरह ब्रह्मज्ञ लोग के हावभाव से आनन्द जैसा एक भाव प्रकाश पाता है परन्तु वास्तव में वह आनन्द नहीं है। उस भाव का प्रकाश नहीं किया जा सकता।

* * *

उसी दर्शन को दर्शन कहते हैं जिसके दर्शन के बाद और कुछ दर्शन की अभिलाषा नहीं रहती। उसी श्रवण को श्रवण कहते हैं जिसके सुनने के बाद और कुछ सुनने की इच्छा नहीं होती। असली दर्शन तो वही है जिसके बाद दर्शन अदर्शन निदर्शन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता सर्वत्र अनावरण अनाविल अविरोध दर्शन होता। जैसे तुम्हारी उँगली छूने पर भी तुम्हारा स्पर्श हो जाता है पर तुम तो उँगली नहीं हो। तुम्हारा वस्त्र छूने पर तुमको छूना हो जाता है पर तुम तो वस्त्र नहीं हो। तुम्हारा अंश जैसे तुम हो और पूरा तुम भी तुम ही हो। एक होकर बहु, बहु होकर एक। यही उनकी लीला है। एक बालू के कण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में भी वह जैसे पूर्ण है मनुष्य में भी उसी प्रकार पूर्ण है और अखंड में भी उसी प्रकार पूर्ण है, परिपूर्ण है। फिर अन्य जीवों से मनुष्य की भिन्नता इतनी ही है कि मनुष्य में एक विशेष शक्ति है जिससे वह पूर्णता का लाभ कर सकता है। मनुष्य कहने पर यह शरीर है ऐसा होश जिसको है वही मनुष्य है। जिसके मन में होश नहीं है, विषय वासना में तन्मय हो रहा है उनको क्या कह सकते हैं।

* * *

तुम इस समय अभाव में हो, यही तुम्हारा स्वभाव बन गया है। जैसे भूख लगती है, अभाव मालूम होता है, फिर खाने पर अभाव मिट जाता है। फिर तुम्हें नींद का अभाव मालूम होता है। नींद से जागने पर घूमने फिरने का, गप-शप करनेका अभाव मालूम होता है। ऐसे ही एक न एक अभाव लगा ही रहता है। उस अभाव में हीं स्थिति प्राप्त हो गयी है। इसी तरह इस शरीर के अभाव को ही स्वभाव कहते हैं। स्वभाव में स्वरूप में स्वस्थिति में रहने का सामर्थ्य एक मनुष्य में ही है। अज्ञान पर्दा भी है तो ज्ञान का दरवाजा भी है। ज्ञान के दरवाजे से ही लोग स्वभाव में वापस जाता और स्थिति लाभ करता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ ॐ माँ ॥

मातृ-सत्संग (६१)

श्री स्वामी भागवतानन्द गिरि

स्थान :—त्रिवेणी तट, अर्धकुम्भ मेला, प्रयाग

ता० ३ फरवरी १९४८—माघकृष्ण नवमी–मंगलवार

प्रातः माँ १०.४० पर पन्डाल में आकर अपने आसन पर विराजमान हैं। सुन्दर कीर्तन चल रहा है :—

"हे गोविन्द, माधव, जगन्नाथ दीनबन्धु"

यह कीर्तन हो जाने के बाद मातृ-सत्संग शुरू हुआ।

प्र०—भगवन्नाम में रुचि कैसे हो ?

माँ—भगवन्नाम को लेते-लेते ही रुचि उत्पन्न होती है।

प्र०—मोक्ष यदि स्वयं प्रकाश है तो फिर मोक्ष का ज्ञान क्यों नहीं होता ?

माँ—गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसके बारे में क्या कहा है ?

प्र०—ज्ञान बिना मुक्ति नहीं मिलती है। सुना है कि भगवन्नाम भी किसी उपाय से लेने से मुक्तिप्रद है।

माँ—सब नाम भगवान् के ही नाम हैं। सब जितने संसार में रूप हैं वह सब रूप भगवान् के ही हैं। भिन्न-भिन्न दृष्टि की बात है।

प्र०—भगवान् का नाम तारक है। और पालनकर्ता भी है।

इतने में परमपूज्य श्री गोपाल ठाकुर कुछ बोलने जा रहे हैं तब माँ ने कहा—"श्री गोपाल ठाकुर जी कह रहे हैं कि आजकल भगवन्नाम की महिमा की बातें तो खूब सुनने को मिलती हैं—लेकिन जब कहीं भगवन्नाम कीर्तन शुरू होता है तब कोई-कोई भाग जाते हैं।"

डॉ० पन्नालाल—भगवन्नाम करने से अब तक मुझको कोई लाभ हुआ नहीं है।

श्री गोपाल ठाकुर—तुमने विधिपूर्वक नाम लिया नहीं होगा ?

माँ—विधि से नाम लिया था ? भगवन्नाम लेते-लेते भगवान् का रसास्वादन मिलता है। नाम का स्वभाव है कि तुममें रसास्वादन पैदा करें। पिता जी (डॉ० पन्नालाल को)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवन्नाम लेते-लेते तुमको क्या रस नहीं मिलता है ? यदि तुमको रसास्वादन नहीं मिल रहा है तब तुम भगवन्नाम का जप, कीर्तन छोड़ क्यों नहीं देते ? लेकिन भगवन्नाम छूट सकता नहीं। तुम्हारे मन में यह विचार आया कि भगवन्नाम छूटता नहीं है—बस यही सबसे बड़ी प्राप्ति हुई है।

डॉ० पन्नालाल—जानते हुए कि भगवन्नाम से मुझको अब तक कुछ प्राप्त नहीं हुआ तब भी खराब आदत पड़ने से आदत छूटती नहीं है।

माँ—ठीक बात है। तुमसे यदि रामनाम लेना न छूटे तो समझना चाहिए कि राम ने तुमको पकड़ लिया है। बीमारी में अमुक खाने को मनाही करने से भी स्वभाव वश लेकर कुपथ्य हो जाता है। किसी ने यह शरीर को एक दफे कहा,—"इन भाई साहेब को बढ़िया बढ़िया चीजें खाने का खूब शौक है"—इस शरीर ने उनसे कहा,—"तुम जब जो कुछ खाओ—सबकुछ—पहले मन-मन में भगवान् को अर्पण करने के बाद खाना।" उनके मन में प्रश्न हुआ कि यह कैसे हो सकता है ? यों तो जो कुछ मिल जाये सबकुछ खा लेता है। मांस मच्छली सबकुछ का भगवान् को कैसे भोग लगाया जाये। एक बार कोई भाई ने उनके half boiledegg अंडा दे दिया। अब इन चीजों से भगवान् को कैसे भोग लगाया जाय ! इससे परिणाम यह हुआ कि यह सब अभक्ष्य भोजन खाना बंद हो गया।

(डॉ० पन्नालाल को) पिताजी—मूल बात सुनो। जो छूटने वाला है वह अपने आप छूट जायेगा। राम नाम जप करने की जो आदत उनकी पड़ गई है वह अब छूट नहीं सकती।

इसके बाद एक दफे किशनपुर में श्री सुधीर सरकार और चारु बाबू की सिगरेट पीने की आदत कैसे छूटी इसके बारे में बात निकली। श्री सुधीर सरकार को ३६ वर्ष से सिगरेट पीने की आदत थी। १९४७ के मई मास में वे लोग माँ के पास किशनपुर आश्रम में आये थे। माँ उस समय अपने कल्याणवन आश्रम में घूमने गई हुई थीं। मैंने सुधीरदा से कहा—"माँ कल्याणवन में घूमने गई है—आप माँ के पास चले जाइये।" उन्हों ने मुझसे कहा—"तुम्हारी माँ के परिचय से मुझको इस सिगरेट का ज्यादा परिचय है। इस सिगरेट से ३६ वर्ष का पुराना परिचय है।' ऐसे बातचीत होने के बाद उसी दिन शाम को वे और मुक्ति बाबा आश्रम के बाहर सिगरेट पीने के लिये चले। सिगरेट जलाने का प्रयत्न शुरू करने मात्र में किसीने उनसे कहा,—"सुधीर दा माँ आपको बोला रही हैं।'—उस दिन प्रायः ११ बार सिगरेट पीने के लिये जलाने का प्रयत्न किया—जब जब सिगरेट जलाने गये और किसी किसी बहाने माँ उनको बुलायीं। जब ११ बार में भी सिगरेट नहीं जला सके तब उनके मन में आया—कि अब माँ की इच्छा ही नहीं है। फौरन उन्होंने उसी समय ३६ वर्ष की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सिगरेट पीने की आदत को छोड़ दिया ।

माँने कहा--"सत्संग का फल तो होता ही है । भगवत् भावसे चलने पर फिर मनुष्य से ज्यादा पाप नहीं होता है ।

* * *

इसके बाद ब्रह्मचारी कृष्णानंद (शोभनदा) का सुन्दर कीर्तन हुआ । श्री शोभन जी अपने नियत समय से ज्यादा कीर्तन करते हैं इसलिये डॉ० पन्नालाल और शोभन दा के बीचमें थोड़ा कलह हो गया । इससे माँने कहा,--"सत्संग में से क्षोभ लेकर नहीं जाना चाहिये ।

स्वामी शरणानंद जी :—नाम कीर्तन में विरोध से यदि किसी के मन में आघात लगे तो समझना चाहिए कि यह कीर्तन प्रीतिसे नहीं हुआ है लेकिन कोई इरादा से हुआ है ।

श्री गोपाल ठाकुर :--किसी भी अनुष्ठान के अंत में कीर्तन क्यों किया जाता है ? सारे दिन में सत्संग करने के बाद यदि कीर्तन में रसास्वादन लगे तो समझना चाहिए कि दूसरे सत्संग में भी उनको प्रत्येक दिवस में सत्संग और कीर्तन अच्छा लगेगा । ऐसा यदि हो तो क्या यह बात उचित है कि नहीं ? अनुष्ठान के अंत में कीर्तन माने "मधुरेण समापयेत्"

माँ—(शोभन दा और डॉ० पन्नालाल को लक्ष्य करके) द्वंद्व उत्पन्न होने का कारण यह है कि कोई कोई भगवान् का कीर्तन करने का अमुक समय का संकल्प लेकर शुरू करते हैं । इसके बाद भगवान् के नाम में रसास्वादन लग जाये तो उसमें डूब जाते हैं और ज्यादा समय ले लेते हैं । संकल्प माने सीमा । भगवत् कार्य में सीमा रखने से द्वंद्व आता है ।

स्वामी शरणानंद जी :—क्रिया भेद होने से प्रीति भेद होता है और यदि लक्ष्य भेद हो जाये तो उसमें साधक की आसक्ति होती है ।

माँ—किसी को सिर्फ भगवान् का ध्यान अच्छा लगता है तो किसी को सिर्फ भगवान् का नाम कीर्तन अच्छा लगता है । जो व्यक्ति ध्यान में लीन हो जाता है उसको ऐसा मालूम होता है कि यह कीर्तन कब बंद हो जाये ? किसी किसी को सिर्फ कीर्तन में ही बहुत ज्यादा आनंद आता है । यह सब लोगों को अपनी अपनी रुचि या स्वभाव अनुसार होता है । इसलिये किसी को किसीके ऊपर इस सम्बंध में क्रोध नहीं करना चाहिए । यदि किसी के मन में क्रोध आ जाये तो उस को कपूर की माफक उड़ा देना चाहिए ।

प्र०—साधु संन्यासी लोग गेरुआ रंग के कपड़े क्यों पहनते हैं ?

स्वामी शरणानंद जी—रोटी जल्दी मिल जाये इसलिये ।

माँ—यह संन्यासी लोग तो स्मशान में बैठे हुए हैं (संन्यासियों की तरफ इशारा करते हुए) संन्यासी का दाढ़ी बाल सब जल जाता है । गेरुआ रंग अग्नि का प्रतिनिधि है । जब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संन्यास होता है तब संन्यासी को अपना श्राद्ध करना पड़ता है। पिता जी, यह बात क्या सत्य है ? झूठी बात होने से बता देना।

स्वामी शरणानंद जी--आपने जो कुछ कहा हैं वह यदि असत्य भी हो तो सत्य हो जायेगा। बात योग्य है क्योंकि बात करने वाला योग्य है। क्रिया से कर्ता का प्रादुर्भाव होता है।

माँ--यह तो एक छोटी बच्ची है। पिता जी, यदि ऐसी बात न कहें तो यह छोटी बच्ची रोवेगी।

स्वामी शरणानंद जी--माँ, सब लोग तुमको माँ कहके पुकारते हैं और तुम अपने को छोटी बच्ची कहती हो।

श्री गोपाल ठाकुर--कर्ता के सौंदर्य के प्रभाव का प्रकाश उनके कार्य में पड़ता है।

* * *

इतने में स्वामी शरणानंद जी महाराज और एक युवक के बीच में उपवास के संबन्ध में खूब-खूब आलोचना हुई। महाराज श्री ने उस युवक को उपवास की क्या आवश्यकता है क्या तात्पर्य है--यह सब विस्तार से समझाया। माँ यह सब चुपचाप सुन रही थीं। फिर माँ ने अपनी तरफ से कहा,--"एकादशी तीन किस्म होती हैं। (१) उत्तम एकादशी (२) मध्यम एकादशी (३) कनिष्ठ एकादशी। किसी ने किसी से पूछा--"कैसी एकादशी करोगे ? उत्तम एकादशी वाला को निराहार--कुछ खाने को नहीं मिलेगा। मध्यम एकादशी वाला को थोड़ा फलाहार और कनिष्ठ एकादशी वाला को दुबारा खाना मिलेगा।

प्र०—यह तीन किस्म की एकादशियों के फल में भी क्या कोई प्रभेद है ?

माँ—उपवास = उप = निकट और वास माने रहना। जिस एकादशी के उपवास के द्वारा भगवान् को पास रहने में सहायता करें उसका नाम है उपवास।

प्र०—कोई-कोई कहते हैं कि—जगन्नाथपुरी में भगवान् श्री जगन्नाथ जी के दर्शन करने के बाद एकादशी नहीं करनी चाहिए। सुना है कि जगन्नाथपुरी में लोग एकादशी नहीं करते हैं वहाँ तो लोग सब समय भगवान् श्री जगन्नाथ जी का प्रसाद पाते हैं।

माँ—स्थान माहात्म्य अलग-अलग है जैसे प्रयाग, काशी इत्यादि का अलग-अलग माहात्म्य है।

(क्रमशः)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

'पंचम खंड'

श्री अमूल्यकुमार दत्त गुप्त, एम., ए. बी. एल्.

२८, ३, ४९ ईस्वी—आज माँ झूँसी रवाना हो गयीं। बड़ी सबेरे उठकर आश्रम में गया। बाहर के लोग कोई भी उस समय तक आश्रम में नहीं आये थे। जो लोग झूँसी जायेंगे उनका सामान इकट्ठा हो रहा था। ऐसे समय में सुनने में आया कि—कन्यापीठ की मञ्जू नाम की एक लड़की मर गयी है अभी-अभी। मृत्यु के समय माँ उपस्थित थीं। और उनका मंगलमय हाथ उनके सिर में और शरीर में लगा दिया था। सिर्फ २ दिन पहले इस लड़की को सामान्य बुखार आया था परन्तु कल रात को बुखार एकाएक बढ़ गया और कई बार उलटी किया। सारी रात छटपटाती रही और सुबह मर गयी। और कल तीसरे पहर गाय ब्या गयी कुछ देर बाद वह बछड़ा मर गया। माँ ने कहा—"देखो कैसा आश्चर्य है कल जब बछड़ा मरा उस समय आश्रम में कीर्त्तन हो रहा था। आज भी कीर्त्तन के ही बीच में लड़की मर गयी। कल सुबह हवन करते समय नेपाल (नारायण स्वामी) ने दो विकटाकार कुत्तों को देखा था और वे कन्यापीठ की ओर जा रहे थे। सुबह यह देखा—शाम को बछड़ा मरा, और आज सुबह लड़की मरी।" लड़की के क्रिया-कर्म करने के लिये माँ ने खुकुनी दीदी से कहा। निश्चय हुआ—नाव से उसकी लाश मणिकर्णिका में ले जाकर दाह-कर्म होगा। खुकुनी दीदी और नेपाल दादा दोनों ने उस मृत शरीर को दुमंजिले से उतार कर नाव में चढ़ा दिया। दीदी हरिनाम करते हुए जब उस मृत शरीर को उतार रही थी तब देखा कि शोक से उनका गला रुँध रहा है। सन्न्यासिनी होने पर भी दीदी के हृदय से स्नेह मन्दाकिनी की कुलकुलु ध्वनि सुनायी पड़ रही थी। माँ को कभी सुख-दुःख स्पर्श करता है ऐसा मालूम नहीं पड़ता है। आज वे हँसते-हँसते उस लड़की के मरने की खबर सुना दीं। बात यह थी कि माँ उसी समय झूँसी रवाना हो रही थीं। दीदी और नेपाल दादा माँ को रोकने की कोशिश कर रहे थे, परन्तु माँ का आग्रह देखते हुए विशेष रूप से बाधा नहीं दी। माँ के रवाना हो जाने पर हम भी घर लौट आये।

३०, ३, ४९ ई० आज रात ११ बजे माँ झूँसी से दो दिन के लिये आयी हैं। पहले

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहा है कि जिस दिन मंजू मरी उसी दिन माँ झूँसी रवाना हुई थीं। इन कन्यापीठ की लड़कियाँ उनकी एक संगिनी को खोकर शोक से भयाकुल हो रही थीं। ये सब खबरें झूँसी में माँ को भेजी गयीं। इसीलिये माँ दो दिन के लिये यहाँ आयी हैं। झूँसी में ही उस लड़की के आत्मा के कल्याण के लिये नित्य कीर्त्तन और प्रार्थना की व्यवस्था कर चुकी थीं। माँ की इन व्यवस्थाओं को देखकर बहुतों के मन में प्रश्न जाग उठा—कि एक तो काशी में, दूसरी गंगा तट में, तीसरे श्रीश्री माँ के सान्निघ्य में जिसकी मृत्यु हुई है उसकी आत्मा के कल्याण का कुछ बाकी रह गया क्या? माँ के आज आकर चबूतरे पर बैठते ही नेपाल दादा ने इस प्रकार प्रश्न किया। इसके जवाब में माँ ने कहा—"देखो मेरा ख्याल हुआ था कि मृत्यु के बाद सभी आत्मा के कल्याण के लिये कुछ न कुछ करता ही है। साधु महापुरुषों का देह त्याग होने पर भण्डारा दिया जाता है। स्त्री पति के लिये, पति स्त्री के लिये, पुत्र पिता-माता के लिये, भाई भाई के लिये कुछ न कुछ करते ही हैं। यद्यपि यहाँ ऐसा कुछ संवन्ध नहीं है फिर भी धर्म-संबन्ध तो है ही और वह संबन्ध भी कुछ कम नहीं है, सांसारिक संबन्ध से धर्म संबन्ध बलवान् है, यदि कुछ भी संबन्ध नहीं रहेगा तो एक की मृत्यु से दूसरा क्यों आँसू बहावें। इसीलिये सोचा कि इस हिसाब से भी कुछ करना उचित है। अगर तुम लोग ख्याल करते हो कि लड़की की ऊर्ध्व गति हो गयी है तो इस प्रार्थना से ऊर्ध्व गति को सहायता ही मिलेगी। और लड़की कुमारी थी इसलिये कुछ कुमारी सेवा की भी व्यवस्था होगी।

उड़िया बाबा की दुखद मृत्यु

वृन्दावन में उड़िया बाबा की मृत्यु जिस प्रकार हुई माँ के तथा खुकुनी दीदी के ज़बानो सुनने में आयी। तीसरे पहर दिन में उड़िया बाबा नाम और पाठ सुन रहे थे ऐसे समय ठाकुर दास नाम का एक पगला जैसा भक्त आकर अचानक कुल्हाड़ी से बाबा के सर पर तीन चोट किया, इसी चोट से ही वृद्ध साधु का प्राणान्त हो गया। इस भयानक घटना को देख कर अन्य भक्त लोग गुस्से से पागल होकर उसी समय ठाकुर दास को खतम कर दिया। उड़िया बाबा के मृत्यु की खबर जब झूँसी में पहुँचो तब हरि बाबा इस पर विश्वास नहीं कर पाये। मित्र की ऐसी मृत्यु की खबर से बाबा अत्यन्त दुखी हुए इसमें क्या कहना। माँ ने कहा—इस बार उड़िया बाबा ने इस शरीर का बहुत ही आदर किया था। इस देह को मैया-मैया कहते थे और प्रेम से पास ही बैठाया था। उनकी इस अतिशय प्रीति को देख कर मैंने कहा था यही क्या आखिरी समय की प्रीति है क्या? महात्मा गांधी और ललिता सखी के समय भी ऐसा देखा था। मृत्यु से पूर्व जब महात्मा गांधी से दिल्ली में भेंट हुई थी उन्होंने भी इस शरीर को ऐसा ही आदर दिया था। ललिता सखी जी भी ऐसा ही नाना प्रकार से आदर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करके कहा था, माँ, तुम को गाड़ी में बैठा कर देखूँगो तुम कैसी मालूम पड़ती हो।

३३, ३, ४९ ई० आज करीब ११ बजे माँ नीचे उतरीं। आज भी उड़िया बाबा की बातें कहने लगीं। मृत लड़की के लिये आज आश्रम में कुमारी भोजन हुआ। इस कुमारी सेवा की विशेषता यह रही कि ब्राह्मण कुमारियों के साथ ही साथ वैद्य और कायस्थ कुमारियों का भी भोजन हुआ। माँ ने स्वयं आकर कुमारी भोजन देखा। भोजन के बाद सब को दो आना दक्षिणा भी दिया।

कुमारी तत्त्व और काशी मरण की विशेषता

आज रात्रि में पाठ के बाद मृता कुमारी मंजू के विषय में कुछ वार्त्तालाप हुआ। रमा नाम की एक कुमारी ने एक निबन्ध पढ़ा। निबन्ध सुन्दर था। नेपाल दादा ने भी कुमारी तत्त्व और काशी माहात्म्य के विषय में भाषण किया। इसके बाद खुकुनी दीदी कुछ कहने को मुझ से बारम्बार कहने लगीं ऐसा देख कर माँ ने भी कहा—"तुम कुछ कहो न"।

मैं—माँ, मैं क्या कहूँगा और जब तुम कुछ कहने के लिये कह रही है तब मैं तुमको ही कुछ कुमारी के विषय में कहने के लिये प्रार्थना करूँगा। तुम ही कुछ बोलो।

माँ—(खुकुनी दीदी से) क्यों सुन लिया बाबाजी ने कैसा कहा। (नेपाल दादा को दिखाकर) बाबाजी ने तो कुमारी तत्त्व के विषय में कुछ कहा है—कुमारी पवित्रता और शक्ति की पूर्ण मूर्ति है। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर को सृष्टि करने वाली ही कुमारी हैं। इस कारण इसको कोई आद्या शक्ति और महाशक्ति कहते हैं। ये पवित्र और शुद्ध हैं इसी से सृष्टि स्थिति और लय का खेल संभव होता है।

शास्त्रीजी—माँ कितनी साल उम्र होने से कुमारी होती है कोई निर्दिष्ट उम्र तो हो नहीं सकती।

माँ—बाबाजी ने कहा नहीं था (नेपाल दादा की ओर) कि एक से सोलह तक सभी कुमारी हैं और उनके अलग-अलग नाम भी हैं। एक साल होने पर एक नाम इस प्रकार से। फिर कुमारी शब्द से शक्ति का पूर्ण विकास अगर मानते हो तब यह पूर्ण विकास या प्रकाश जिस किसी उम्र में हो सकता है। इस हिसाब से कह सकते हैं कि कोई निर्दिष्ट उम्र नहीं है।

खुकुनी दीदी—(मुझे) आपने बुनी से कहा था कि जिसकी मृत्यु काशी में गंगा तट में और माँ के सामने हुई उसके उद्धार में और बाकी क्या रहा? फिर उसके आत्मा के कल्याण के लिये कीर्तन प्रार्थना की व्यवस्था कैसी? आप की इस बातसे लड़कियों की चिन्ता धारा एक और नये रूप में मुड़ गयी। वे सब अब प्रार्थना कर रही हैं कि उनकी भी मृत्यु मंजु जैसे ही माँ के सम्मुख हो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माँ--मैंने कहा था कि किसी के मरने पर उसके आत्मा के कल्याण के लिये जैसा कुछ किया जाता है अगर तुम चाहो तो इसके आत्मा के कल्याण के लिये शास्त्र में जैसा कहा है कर सकती हो।

मैं—माँ कल इस विषय पर तुमने जो कहा था उससे मैंने यही समझा था कि इस घटना में मृतात्मा के लिये कुछ किया जाय या प्रार्थना वगैरह नहीं किया जाय, हमारे कर्तव्य ज्ञान से ही ये सब किया जाना चाहिए ।

माँ--हाँ देखो न, कोई अगर मरता है तो उसके स्वजन कुटुम्ब का अशौच होता है शास्त्र के विधान से किसी का एक महीना किसी का ग्यारह दिन अशौच पालन करना पड़ता हैं। फिर वह समय उतर जाने पर शुद्ध होता है। यहाँ उस प्रकार जातीय अशौच का कोई प्रश्न नहीं है। पर एक साथी के चले जाने का शोक तो है ही। इसी कारण मैंने कहा था कि लड़कियाँ मंजु के लिए तीन दिन पाठ कीर्तन प्रार्थना आदि करें। अगर तुम समझते हो कि मंजु की मुक्ति हो गयी तव तो मुक्त है उसके विषय में चिन्ता करते हुए उसको उद्देश्य करके पाठ आदि करके तुम तुम्हारा ही मुक्ति का रास्ता बना रहे हो। कीर्तन आदि का फल तो है ही इसके सिवा मुक्त पुरुष की चिन्ता भी मुक्तिका एक उपाय है।

ऐसे समय में पटल दादा ने आश्रम की लड़कियों की तरफ़ से जानना चाहा कि मंजु के लिये जो कुछ किया गया इसको देखकर वह आनन्द पा रही हैं या नहीं ? और मंजु की आत्मा यहाँ हाजिर है या नहीं।

माँ--(हँसती हुई सबको दिखाती हुई) यही सब तो मंजु हैं इस कारण कहना ही पड़ेगा कि वह सब देख रही हैं और यहाँ उपस्थित भी हैं। अगर तुम मानती हो मंजु की मुक्ति हो गयी है तो ये सब प्रश्न नहीं कर सकोगी। कारण यह है कि जो मुक्त है उसका आनन्द निरानन्द कुछ भी नहीं है। अगर यह मानती हो कि किसी लोक की प्राप्ति हुई है तब यह कहना होगा कि वह यह सब देख रही है और आनन्द पा रही है।

इसके बाद थोड़ा कीर्त्तन हुआ फिर प्रसाद बाँटा गया। प्रसाद बँटने के बाद माँ स्वतः ही कहने लगीं देखो—कैसा मजा है--इस आश्रम में जितनी मौतें हुई हैं मृत्यु से पहले उसका दाहिना कान ऊपर की तरफ देखा गया। तुरीयानन्द--काला चाँद के माँ के समय ऐसा ही देखा, मंजू का ऐसा ही देखा, एक बछड़े का भी ऐसा ही देखा। बछड़ा जिस दिन मरा उसके पहले दिन बछड़ा देखने गयी थी देखते ही मन में आया अभी इसका समय नहीं हुआ। मेरे हाथ से उसके सिर का स्पर्श भी हो गया। बछड़ा मरे के समान लक्कड़ जैसा पड़ा था। परन्तु मृत्यु के पूर्व क्षण में अचानक उसका सिर घूम गया और दाहिना कान ऊपर हो गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह सब देखकर स्थान माहात्म्य स्वीकार करना ही पड़ता है। इसी कारण उस दिन इनको कह रही थी कि जिस-जिस स्थान में ये सब मरे हैं उस-उस स्थान को देखकर रक्खें कारण इन्हीं स्थान में मृत्यु के समय दाहिना कान ऊपर हो रहता है। यह कहकर माँ हँसने लगीं।

मैं—तुमने एक दिन कहा था कि काशी में मरने से सबका ही ऐसा होगा यह कहा नहीं जा सकता।

माँ—किसी-किसी का ऐसा नहीं हुआ यह मैंने सुना है, इस आश्रम में जितनी मौतें हुई हैं उनका देखा गया कि दाहिना कान नीचे नहीं थे। तुम लोगों से सुना है यह काशी एरण्ड के पत्ते के जैसा है बीच-बीच में खाली है। अतः काशी का सब स्थान बराबर नहीं है (हँसती हुई) इसीलिये आश्रम का यह सब स्थान देख रखने को कहा है। रात ११ बजा, माँ उठीं। हम सब प्रणाम करके चले आये।

"यद्यपि आध्यात्मिक प्रगति के कर्मक्षेत्र विश्वव्यापी होगा तथापि प्रथम उषा की किरण फुट पड़ेगी इसी भारतवर्ष में ही। इस आध्यात्मिक विकिरण का प्रथम केन्द्र भारतवर्ष ही होगा। उसको स्वयं महान होना है केवल अपने लिए ही नहीं प्रत्युत विश्व के जनसाधारण को भी महानता में दीक्षित करने के लिए।"

—श्री अरविन्द

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्नपूर्ण सदापूर्ण

(पूर्वानुवृत्ति)

रमाकान्त

एक दिन दोपहर दिन के समय भोग लगाया गया और हवन हो गया। मन्दिर के ऊँचे वरामदे में श्री श्री माँ आनन्दमयी अपना आनन्दमय रूप लेकर भक्त वर्ग पारकर वर्गों के साथ असंख्य दर्शकों को अपने भाव माधुर्य के वितरण से व्याकुल कर रही थीं। हजारों भक्तों में अनन्त प्रसाद दिया जा रहा था—आश्रम का विशाल भू भाग में आनन्द ही आनन्द दीख रहा था, ऐसे समय में माँ धीर मधुभावभरी आवाज से पूजा हवन उत्सव आदि शुभ कर्म्मों को किस रीति से करना होगा उसकी नीति नियम प्रयोग विधि सब कहती जा रही हैं और भक्त-गण तन्मय होकर सुनते जा रहे हैं। माँ श्री अन्नपूर्णा देवी की महिमा का वह एक विशेष स्मरणीय दिन था। मैं कह नहीं सकता कि उस दिव्य मधुर वाणी का कितना अंश मुझे याद है और कलमबन्द किया जा सकता है।

माँने कहा—(क) मृण्मयी काली का नीचे वाला द्वार खोलकर साधारण तरीके से तुम्हारी इतने दिनों की पुरानी देवी मूर्त्ति का पूजा कर के फिर द्वार वन्द कर देना। ये तुम्हारे आश्रम के सचले देवता हैं। मोटर में और तुम्हारे कन्धोंपर चढ़कर शाहबाग़ से टिकाटूली के चन्द्र कुटीर, ढाकेश्वरी का उत्तमा कुटीर, सिद्धेश्वरी का आसन कुटीर में लकड़ी की आलमारी में, रमणाकी छोटी कोठरी में, आखिर वड़े मन्दिर में सिंहासन शीर्ष छोटी सी गुफा का आश्रय करके तुम्हारी अन्नपूर्णा रूप से अपने को खोल दिया।

भोग की शुद्धताके लिए कच्ची हलदी, सेंधानमक, अपने घर में बनाया घी, (कोशिश करना जिससे हवन का आनन्दमयी भात केलि जिससे भोग लिये घी, जिससे साल भर चल सके) मसाला वगैरा धोकर सुखा कर चुनवीन कर काम में लगाना। सेन्धा नमक मसाला वगैरह धोना सुखाना चुनना वीनना ये सब काम तुमलोग पास ही सत्य वाबू के घर की स्त्रियों को देना। वे सब अच्छी तरीके से शुद्धता के साथ तैयार कर देंगी। जो सब तरकारी तुम कतर नहीं सकते, उनसे या और किसीसे जो सामने मिले उनसे कतरवा लेना। अन्नपूर्णाजी की सेवा में लगजावो, ये तो आनन्द की बात है •मान कर वे सब आग्रह के साथ खुशी खुशी से सब कर देंगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हवन के चरु पकाने के लिये तीन मुट्ठी या (१ पाव चावल) तीन पाव दूध छोटे चम्मच से तीन चम्मच घी नाप कर लेना। भोग के लिये अरवा चावल सवासेर नियत रहेगा। दूसरा कोई भोग लगावे तो दूसरी बात है। तुम्हारा तो सवासेर ही रहेगा। और कुछ रसोई करना हो तो तुम्हारा नियत पाक हो जाने के बाद करना। अमावस्या और पौर्णमासी की रात्रि-में निशापूजा होगी भोग लगेगा। उसमें १५ सेर खिचड़ी और ७॥ से खीर का भोग लगेगा। कुछ पूड़ियां होंगी १०८ प्रकार के विशेष भोग के समय खिचड़ी और आनन्दमयी खिचड़ी भी रहेगी। उस समय १० चूल्हे रहेंगे और लकड़ी से ही पकाई जायगी यही शुद्ध है। दस जने सोहागिन दीक्षिता ब्राह्मणी शुद्ध भाव से अलग अलग पात्र उपपात्र लेकर रसोई बनायेंगी। रसोई करते समय बोलें नहीं मौन रहकर मनमें जप भी करती रहेंगी। मनको खाली न रखें। कीर्त्तन के विषय में ब्राह्ममुहूर्त्त में पंचवटी, मधुर कीर्त्तन का स्थान है अन्नपूर्णाजी का बरामदा। आरति कीर्त्तन और साधारण कीर्त्तन का स्थान विशेष कर अधिक लोगों का कीर्त्तन कीर्त्तन हाल या नाम घर है। तुम्हारे बीच जो गृहस्थी से अपने घर से आते हैं उनमें जो पुरुष हैं, वे सारे दिन कर्म्मस्थानों में काम करके थके घर लौटते हुए आश्रम में आवेंगे। हाथ पैर धोकर देव दर्शन करके प्रसाद अगर कुछ रहे तो मांगलें—प्रसाद और चरणामृत मांगकर लेना चाहिये। जल-पान करके शान्त और निश्चित होकर जप करते हुए विश्राम लेंगे। फिर आरति कीर्त्तन में शामिल होंगे। मन्दिर में सन्ध्याकाल में अन्नपूर्णाजी के सामने लूट का बतासा निवेदन किया जायगा। उस प्रसाद को लेकर घर जायेंगे। स्त्रियां सप्ताह में दो दिन बृहस्पतिवार और रविवार तीसरे पहर २ बजे से ५ बजे तक अलग कमरे में कीर्त्तन करेंगी। उस समय अगर पुरुष लोग आगये तो आश्रम के सिंह द्वार के पास पेड़ के नीचे बैठ कर सदालाप करेंगे और पहरा देने का काम संभालेंगे जिससे दूसरा कोई भीतर जाकर कीर्त्तन में विघ्न न करे। मन्दिर के कोने की छोटी छोटी कोठरियों में ब्रह्मचारी लोग गायत्री जप गीता पाठ और ध्यान करेगें। विशेष पुस्तकें पढ़ने की आवश्यकता नहीं, शुद्ध शक्ति के लिये दुर्गा पाठ और वैराग्य के लिये गीता पाठ पर्याप्त है। भोजन के कुछ समय के बाद उस प्रकार की गुफा में एकान्त में बैठकर जप करें। गंभीर रात्रिमें उतना समय जगे रहकर जप और ध्यान करे जितने समय तक कष्ट मालूम न हो। फलाहारी मौनी रहने वाले के लिये जप ही समय बिताने के लिए साथी है। आश्रम वासी ब्रह्मचारी भाव पूर्ण होकर जो यहाँ रह रहे हैं; अन्नपूर्णा, हवन और मन्दिर ही उनका आश्रय है। इसीके कार्य को लेकर रहना होगा। तुम सब निःसंग रहोगे। निःसंग दृष्टि उसी को कहते हैं कि दृष्टि में कुछ वस्तु व कोई व्यक्ति आवे उसे चित्रवत् ही माने। दृश्य वस्तुका दोष गुण वर्ण और व्यवहार कुछ भी चिन्ता न कर के ये "अन्नपूर्णाजी के लिये है" "ये मां की सेवाके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के लिये स्वतः आये हैं" ऐसे समय में इस वस्तु से या व्यक्ति से मेरी निजी कोई आवश्यकता नहीं है ऐसा मानना ।

माँ बड़े स्नेह से कोमल वाणी से परिकरों को सुना रही हैं अन्नपूर्णा शिव काली विष्णु गणेश, सूर्य, और प्रतिमास्थ देवतागण सिंहासन में काँच के बक्स में रहेंगे । आरति के समय और विशेष पूजा के समय उसका काँच का दरवाजा खुला रख सकते हो । देवताओं की पूजा यन्त्र में होगी । तांबे की थाली के ऊपर पाँच यन्त्र पुष्प "ॐ सर्वेशि नारायणि नमः" कह कर चार कोणों में चार, बीच में एक यन्त्र-पुष्प रख कर उसके अभिषेक और स्नान होगा । फिर अन्नपूर्णा शिव काली का दशोपचार से पूजा होगी । मन्दिर के अन्दर चलते समय साव-धानी से जहाँ काला निशान है वहाँ पैर रख कर चलें । और सब स्थान पूजा सामग्री रखने का है वहाँ पैर नहीं पड़े । वस्तु निवेदन हो जाने के बाद मन्दिर के बाहर उसको निकाल कर इसको रखने के लिए नियत स्थान पर रख देना । और बर्त्तनों को माँज-धोकर सुखा कर मन्दिर के नियत स्थान पर सजा कर रखना । मुख शुद्धि के लिए देवताओं को पान देना । पान का मसाला कत्था-चूना देकर गरम करके काढ़ा बना कर बारीक चिकरीकट या जीराकट सुपारी भुनी हुई सौंफ धनिया बड़ी लाची का दाना मिलाकर सुखा लेना । यही पान का मसाल हुआ । भोग का पान बनाने में देर होने पर यह न हो सके तो हर्रे का टुकड़ा, लौंग लाची का बीज रख देना पान का अभाव मिटाने के लिये । शिवजी के घर में मझौला एक पत्थर की कुण्डी में दूध और केला देना । पञ्च देवता का नैवेद्य होगा उसमें गणेश, सूर्य, लक्ष्मीनारायण, जयदुर्गा आदि देवता को निवेदन करना । एक छोटा नैवेद्य यज्ञपति के लिये रहेगा । यज्ञ के चरु के लिये ३ पाव दूध, १ पाव दूध केले के लिये, १ पाव दूध शिवजी और अन्नपूर्णा जी के मन्दिर के यन्त्र में अभिषेक के लिये लगेगा ।

पूजा के घर में जाने के पहले पैर धो लेना, बाहर जाने पर, टट्टी पेशाब करने के बाद स्नान करके मन्दिर में प्रवेश करना । तुम अपने ही अन्दर जो पूजा जो रसोई, जो पूजा के बर्त्तन साफ करने वाला, जो पूजा का सामान तैयार करने वाला, सब ही पूजा करने के अधि-कारी माने जायेंगे । एक महीना मौनी और फलाहारी रहोगे । दिन को १ मुट्ठी मूंग का दाल जल में भिगा कर रखना उसमें एक पक्का केला और ५ बतासा रखकर निवेदन करना उसको और मनसा देवी का दूध और केला वह दिन में खाएगा । रात को बेल दूध या मट्ठा आटा के साथ मिला कर खाएगा । एक महीने बाद वह थोड़ा-सा प्रसाद लेना शुरू करेगा । इसके बाद दूसरा फलाहार शुरू करेगा । अन्न भोग देने के लिए माँ ने कहा पहला भोगदान मंगल के दिन हुआ । पिछले साल मंगल के दिन अन्नपूर्णा जी मन्दिर में बैठीं । तुम लोग मंगल के दिन पाँच

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकार तरकारी के साथ अन्न का भोग लगाना। शुक्रवार के दिन भी उसी तरह भोग लगाना। शनिवार को तुम्हारा उदया नाम कीर्त्तन का दिन है उस दिन खिचड़ी भोग लगाना। रहा चार दिन रवि सोम बुध बृहस्पति भातेभात यानी आनन्दमयी खिचड़ी पकाकर भोग लगाना। पकाने का नियम पहली खिचड़ी में डालने की तरकारी जैसे बनाते हैं बना कर नमक और जल के साथ तरकारियों को हाँड़ी रख कर चूल्हे पर चढ़ाना। जल उबलने लगे तरकारी पक गई समझने पर चावल धोकर उसमें डाल देना। चावल पकने पर अन्दाज से हरी मिर्चा काट कर या कूट कर उसमें छोड़ देना। अन्त में अपने घर का बनाया घी जितना संभव हो उसमें छोड़ कर उतार लेना। इस दिन इस समय माँ उपस्थित हैं। भविष्य के लिये भक्त सेवक हितकारिणी माँ अनेक अमृत वाणी सुनायी थीं परन्तु सब कुछ कहा नहीं जा सका। कहती-कहती माँ जैसे अपनी सत्ता का एक अंश सबके हृदय में भर दीं। सभी ने उस समय माँ को परम अपना मान लिया। सनकादि मुनिवेष्टित वैकुण्ठ धाम में बैठे हैं ऐसा मानने लगे।

ज्येष्ठ १३३९; २३, ५, १९३२ ई० सोमवार। २१ दिन पूजा, हवन, कीर्तन, बिन हिचकिचाहट के प्रसाद बाँटना अविराम कीर्तन के साथ उत्सव पूर्ण करते हुए नयी अन्नपूर्णा देवी को माँ ने मन्दिर के सिंहासन में स्थापना कराया। एक ओर स्त्रियों का हुलु ध्वनि दूसरी ओर मृदंग वगैरह, काँसी मजीरा शंख आदि की ध्वनि, एक ओर स्तोत्र मंत्रों की ध्वनि चारों ओर विजय घोष गूँजता रहा। माँ और अन्नपूर्णा जी अभिन्न हैं मानते हुए मौका पाकर सब भक्तों ने माँ को पंचवटी के गोल वेदी में बैठाया सब घेर के बैठ गये। और हरेक किस्म के उपहार देकर माँ के चरणों में श्रद्धा और अनुराग उंडेल दिया। वाउल मास्टर ने फूलों का मुकुट और अलंकार दिया। निशिबाबू ने दशमहाविद्यादर्शन से उत्पन्न श्रद्धा प्रदान किया। सत्यबाबू की स्त्री आँखों से अपना प्राण देने की कोशिश कर रही हैं। ज्योतिष बाबू अशोक और पीपल के वृक्षों की ओर खड़े होकर अनुपस्थित भक्तों की ओर से श्रद्धा और प्रेमाश्रु वर्षण करने की अभिलाषा कर रहे हैं। खुकुनी दीदी माँ के शरीर की रक्षा में लगी हुई हैं। और भक्त भी माँ के शरीर की रक्षा में लगे हुए हैं। कुछ भक्त माँ को माला और फलों के साथ अपनी सत्ता को भी माँ के चरणों में अर्पण करना चाह रहे हैं। यह एक महान् परिवेश था।

दूसरे दिन मंगलवार महोत्सव था। देश-विदेश के भक्त वृन्द माँ के दर्शन से अपने प्राणों को तृप्त कर रहे हैं। अन्नपूर्णा माँ रूप से सबके हृदय को शुद्ध भाव से पूर्ण करती जा रही हैं।

आज १९ तारीख बृहस्पतिवार है, २ जून १९३२ ई०। उत्सव के दिन निकल गये फिर भी तीव्र भाव प्रभाव को सबके दिल में माँ ने जगा रक्खा है। प्रातःकाल होते ही अचानक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक घोड़ागाड़ी में बैठकर भक्तों के घर-घर जाकर आँचल पसार कर माँ भिक्षा माँग रही हैं। बहुत सा सामान इकट्ठा हो गया। जो ब्राह्मण नहीं हैं, १०८ प्रकार के भोग के दिन वे भी अन्नपूर्णा जी और माँ को भी रसोई पका कर भोग लगा सकती हैं। माँ आज उन सब विशेष नारी भक्तों की मनोवासना पूर्ण कर रही हैं। अन्नपूर्णा जी की सेवा भी पूर्णता की ओर आगे बढ़ रही है। वे सब मातायें आज बिना नमक का पका कर मान उपचार से माँ का भोग लगाया। माँ कहती हैं भिक्षा का अन्न शुद्ध है। इधर माँ ने भिक्षा की जो वस्तुएँ संग्रह की थीं। वे सब अपार्थिव और शुद्ध थीं। माँ की इच्छा से वे मातृगतप्राणा नारियाँ भी अत्यंत शुद्ध थीं। इस भिक्षा का खेल खेल कर माँ भोलानाथ और भाईजी को लेकर अपना घर तपोभूमि हिमालय को दर्शन देने के लिए ढाका से अपरिचित जैसे देहरादून पहुँच गयीं।

माँ जल्दी ढाका वापस नहीं जायेंगी। अपने दिल के माँ रूपी रत्न को न पाकर ढाका की नारी भक्तवृन्द बहुत दुखी हो गयीं। बख्शी बाज़ार से सत्यबाबू की स्त्री वगैरह कुछ एक महिला भक्त मण्डली अतिशय दुखी होकर महायोगी वृद्ध राम ठाकुर ढाका में आये हैं सुनकर वहाँ हाजिर होकर कहीं--"महाराज माँ आनन्दमयी ढाका के शाहबाग में हमारे दिल को बावला बनाकर छीन लिया है इस उत्सव में कितना आनन्द दिया कह नहीं सकते। हमारा मन अब दुनियादारी गृहस्थी में लग नहीं रहा है। माँ भी हिमालय में भ्रमण कर रही हैं और वापस नहीं आवेंगी। माँ को खोकर दिल से दुखी होकर हम सब क्या करें कहिये ?'

श्री राम ठाकुर ने कहा—"आप सबके लिये ही माँ अन्नपूर्णाजी की स्थापना कराकर अपने को सदा के लिये यहाँ रख गयी हैं" अन्नपूर्णाजी नाम से माँ अपने आप को ही यहाँ स्वयं प्रतिष्ठा कर गयी हैं। अन्नपूर्णाजी को आनन्दमयी माँ कहकर पुकार कर देखो तो सही।"

आज ४० साल से ऊपर हो रहा है श्री माँ अन्नपूर्णा कृपा करके तुच्छ सेवा पूजा ग्रहण कर रही है। इस लम्बे अरसे में श्री श्री माँ के आशीर्वाद और प्रेरणा से भक्तों की कोशिशों से भारत के नाना स्थानों में कितने मठ मन्दिर आश्रम वगैरह स्थापित हुए हैं। कितने असंख्य नर नारियों को ज्ञान वैराग्य शिक्षा-अन्नभिक्षा-आश्रम भिक्षा-योगसाधन भिक्षा-जन जनार्दन सेवा भिक्षा वितरण करके अपना भगवत्सम्बन्धी वैभव और प्रेम विस्तार कर रही हैं। उसका वर्णन हमसे होना कठिन है। इसलिये हाथ जोड़कर माँ अन्नपूर्णाजी के चरणकमलों में श्रद्धा निवेदन कर रहा हूँ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करुण-पुकार

डा० श्रीमती सरोज पालिवाल

[प्रिन्सिपल, राधावल्लभ चुन्नीलाल अग्रवाल, बालिका महाविद्यालय, मथुरा]

जय माँ ! जय माँ ! जय माँ !

देवि ! प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद ! प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वम्, त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य ।

जब प्राण व्याकुल हों, तो 'माँ' के सिवाय किसे पुकारूँ ? जब जागतिक आधार छूट जाय, तो जगदाधार माँ के बिना कौन सुने ?

मैं निरालम्ब हूँ, पतिहीन हूँ, पुत्रविहीन हूँ, पतित हूँ, अकिञ्चन हूँ और साधनहीन हूँ—फिर कहाँ जाऊँ, कहाँ प्राण खोऊँ ? किसके सहारे बसूँ ? किसके द्वार पै भटकूँ ?

बस, इस कल्पनामात्र से अँधेरा····अँधेरा····अँधेरा—विचार से ही मन टूट उठा, मार्ग ओझल हो गया, पंच प्राण अकुला उठे, इन्द्रियाँ थक गईं, मन निरीह हो निष्क्रिय पड़ गया, बुद्धि ठगी सी रह गई ओर तभी अर्धचेतना के स्तर से एक सुस्पष्ट स्वर सुनाई पड़ा—स्वर में एक संगीत था और संगीत में भाव, भाव में आश्वासन और आश्वासन में प्राणिक उद्‌बोधन जो झंकृत हो गुनगुना उठा···· ····

···· "ऐसी घड़ियाँ—भी ···· आऽतीऽ हैं जब प्राणिक, मानसिक एवं कायिक कराह के बीच अमोघ शक्ति का स्रोत फूट पड़ता है, चिन्मयी चेतना समग्र शरीर, इन्द्रिय, प्राण एवं मन के बीच विचरण करती है और तब व्यक्ति के जीवन-सलील पर भगवान् का श्वांस फैल जाता है। अतः हे प्राण ! निराश न हो—मन से पुकारो अपने इष्ट को वे सदा सहाय्य हैं ······

ये प्रेरक वाणी सुनते ही उल्लास की लहर मुझे छू गई। मुरझाए प्राण खिल उठे—मन-वीणा के तार बज उठे और तभी मैंने समग्र शक्ति से आकंठ पुकारा

माँ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ—माँ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

माँ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

नीरव वातावरण में प्रतिध्वनि होने लगी।

माँऽ—माँऽ—माँऽ—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

···और बस चेतना का चमत्कार प्रत्यक्ष हुआ—चहुँ ओर मेरी करुण-पुकार मातृ शब्द के रूप में भर गई—कण-कण में यह अलौकिक रव व्याप्त हो गया, दिशायें पुकार उठीं करुणेश्वरी माँ को, आकाश आपूर्ण हो गया माँ के दिव्य नाम से, और पवन गा उठा ····

माँ माँ माँ माँ माँ माँ माँऽ—

पंचेन्द्रियों का अस्तित्व आज सफल हुआ—नाम का चमत्कार प्रत्यक्ष हुआ, माँ का साकार रूपेण दर्शन होने लगा—तभी नयन निहार उठे माँ को, श्रवण सुन उठे माँ का दिव्य कीर्त्तन, नासिका सूँघ उठी माँ के पुनीत सुवास को, त्वचा स्पर्श कर उठी माँ का त्रिविध तापहारी सकल शरीर और जिह्वा पान करने लगी श्री माँ के रसपूर्ण नाम को—आह, प्राण परितुष्ट हुए। इस अभूतपूर्व दृश्य से जो आनन्द हुआ, वह नितान्त **वर्णनतीत** हैं।

फिर आरम्भ हुआ मेरा संवाद श्री माँ के साथ जो मेरी इष्ट हैं, जीवन हैं, सर्वस्व हैं,-सचमुच, मेरा कैसा सौभाग्य है जो परब्रह्म की निष्कल सत्ता मुझे सकल रूपिणी माँ आनन्दमयी के स्वरूप में प्राप्त हुई—आश्रमवासिनी माँ शान्ति का आगार, वैराग्य का विलास एवं भक्ति, ज्ञान व कर्म की त्रिवेणी हैं जिनकी कृपा-प्राप्त करने के लिए 'स्व' को उन पर छोड़ना होगा।

आज अपने आन्तरिक अनुभव को शब्द-बद्ध कर भक्त-पाठकों के सम्मुख यह कहने का साहस कर रही हूँ कि मातृसामीप्य के क्षणों में 'माँ' के मात्र के ज्योतिर्मय रूप ध्यान से ही सब बन्धन कट जाते हैं—यह सामीप्य प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष, उनका साक्षात्कार अपरोक्ष हो परोक्ष, उनकी दिव्य कृपा में लेश मात्र भी अन्तर नहीं आता-कर्तव्य है हमारा कि हम उनके प्रति समर्पित होना सीखें, अपने को 'खोलना' जानें—निश्चयमेव अपने को खोलने से 'माँ' की सहज कृपामृत का अभिसिंचन होता ही है।

सच बात तो अनुभव की है क्योंकि 'देखा सो बूझा' वाली लोकोक्ति सर्वविदित है। अपने जीवन में तो मैंने यह घटते देखा है कि राम, कृष्ण, शिव, हनुमान्, शक्ति अनेक विग्रहों में केवल 'माँ' ही विराजमान हैं—'एकोऽहम् बहु स्याम्' की श्रुति इसी अनुभव को सबल करती है तभी तो तुलसी कृत शब्दों को मैं अपनी 'सुदर्शिनी माँ' में घटित कर पुकार पुकार कर गाती हूं—

"जिनके हृदय माँ आप बसें,
उन और को नाम लियो न लियो।"

···· गाते गाते 'माँ' साक्षात् भावरूप में प्रविष्ट होती हैं और कृपा-कटाक्ष प्राणों को सिञ्चित कर जाती हैं—

कटु सत्य तो यह है कि मुझे किसी की चिंता ही नहीं—सम्मान मिले न मिले—मुझे तो माँ के आश्रम की धूलि ही शिरोधार्य है—जहाँ जहाँ 'माँ' के चरण पड़ें, वह रज प्राण-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वल्लभ है, जीवन-सम्बल है——मैं धूलि ही बन जाऊँ ताकि प्रियदर्शिनी माँ मुझे अपने श्री चरणों के स्पर्श से कृतार्थ कर दें–तभी तो दिन रात भक्तों के सम्मुख बैठ गाती हूँ ···

मैया तेरे चरणों की धूलि बनूँ।

जो मेरी शक्ति है, सामर्थ्य है, पद और विद्या है, उनकी दात्री माँ है–अतः सब उन्हीं को समर्पित है—चाहे प्राचार्या का पद हो या प्रवक्ता का, चाहे कुछ और भी, मैं तो यही रट लगाती हूं—

मातृशरणम् ···· मातृशरणम् ···· मातृशरणम् ···· मातृशरणम्

कोई पूछता है "बहन जी नितान्त एकाकी होने पर भी आप प्रसन्नमना कैसे रहती हैं ? मैं उनसे अपनी माँ का नाम बताकर कहती हूँ कि जो आनन्दमयी है, जो आह्लाद-सिन्धु हैं, जो 'प्रसन्नता' को प्रसन्न करती हैं, हर्षध्वनि जिनके रोम रोम से गुंजरित होती है, उनके दर्शन से प्रत्येक प्राण निश्चय ही विगतशोक हो जाता है—फिर मेरे प्रसन्नमन से आपको शंका कैसी ?

कोई पूछता है "बहन, यह तो बताओ कि इतना मधुर एवं प्राणमय संकीर्तन तुमने किससे सीखा ?" मुझे अनायास ही उनके इस प्रश्न पर हँसी आ जाती है, और हँसकर कहती हूँ, "मेरी वाणी में रस नहीं, शक्ति नहीं, संगीत की कोई शिक्षा नहीं—केवल माँ का दिव्य प्रसाद है जिसकी कृपा से आप सब मुग्ध हो जाते हैं"

अन्य पूछता है "आप अपनी जीवन-सफलता का रहस्य बताइए— अनेक कठिनाइयों के होने पर भी आज आप इस पद पर कैसे ! "इस पर मैं विश्वासपूर्वक उत्तर देती हूँ "क्या तुमने नहीं सुना—

मूक होय बाचाल पंगु चढ़ैं गिरिवर गहन।

जब प्रभु प्रसाद से मूक सुभाषी बन जाता है और लँगड़ा पर्वत-शिखर पर चढ़ जाता है—तो यह कथन क्या कोरी कल्पना है ! कृपा का चमत्कार देखना है तो मुझे देखो और मेरी 'माँ' को समझो और विश्वास करो—

जब श्रीराम जी की अहैतुकी कृपा से तुलसी तुलसीदास बन गए, तो श्री मां के आशीष से हमारे जीवन में परिवर्तन हो जावे, तो क्या आश्चर्य ! वे तो समर्थ है, सर्वज्ञ हैं, सर्वेश्वरी हैं, हमारी माँग को भली-भाँति जानती हैं–तभी तो मैं दोनों हाँथ उठाकर पुकार पुकार कर कहती हूँ कि एक बार कोई जीव अन्तर से यह गा उठे——

सुखनिधान आनन्दमयी माँ, तुम लगि मेरी दौर।
जैसे काग जहाज को, सूझत और न ठौर॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वस्तुतः 'माँ' घनश्याम की भाँति दौड़कर भक्त की लाज रखती हैं, यह अक्षरशः सत्य है।

ऐसी कृपामयी माँ ने मुझे भावावेश के क्षणों में ऊर्ध्वचेतना के स्तर पर जो दिव्य संदेश दिया, जो, अमल वाणी उनके पुनीत कंठ से गुरु-भगवान् के स्वरूप के विषय में निःसृत हुई उन्हीं अनुभूत वचनों को सुधी पाठकों के लिए मैं यहाँ प्रस्तुत कर रही हूं—वे इस प्रकार हैं—

१. गुरु परमेश्वर का ही स्वरूप है।

२. गुरु की सच्ची भक्ति भगवान् की भक्ति है।

३. गुरु को शरीर मात्र समझने से अज्ञान बढ़ता है।

४. गुरु तो ज्ञान का तेज-पुंज है, हृदय की ज्योति है, साधक का प्राणाधार है।

५. गुरु के स्वरूप का ध्यान करते करते 'परम ज्योति' का साक्षात्कार हो जाता है।

६. गुरु के स्वरूप एवं वचनों पर अटूट श्रद्धा ही भवसागर से पार ले जाती है।

७. रोग-शोक में गुरु को पुकारने से सहज सान्त्वना मिलती है।

८. गुरु कोई सौदा नहीं जो किसी से बदला जा सके।

९. मन चलायमान होने पर गुरु को बदलने का भाव पतन की ओर ले जाता है।

तदुपरान्त मेरा प्रश्न भरा मुख देखकर 'माँ' कुछ रुकीं और फिर बोलीं—"कुछ पूछना है ? पूछो ?—"

मैंने कहा, "माँ ! कोई कष्ट हो तो उसके निवारणार्थ आप से कुछ माँगना चाहिए ? वैसे तो आप अन्तर्यामी हैं, सर्वधारक हैं, सर्वेच्छु हैं, आपकी इच्छा है आप माँग पूरी करें या न करें। मैं तो आपकी सेविका हूँ।"

इस पर माँ ने सहज सौम्य वाणी में आश्वासन देते हुए कहा, "देखो, भगवान् के साथ कभी कोई सौदा नहीं करना चाहिए। यदि उनसे कुछ माँगना ही है तो सदा यह कहो, प्रभु ! तेरी इच्छा पूर्ण हो, तू जैसे चाहे रख—मुझे निमित्त बनाकर अपनी लीला पूरी कर।"

पुनश्च एक संशय-तरंग मुझे छू गई और मैंने फिर कहा, "माँ ! आस-पास के लोग साधना में बहुत विघ्न डालते हैं। जब अपने सगे-सम्बन्धी ही उचित व्यवहार न करें, तो साधन-भजन का निर्वाह कैसे हो ? अतः मन भटक जाता है और फिर क्रन्दन फूट पड़ता है—इतना कहते-कहते मैं माँ के श्री चरणों को पकड़ रो पड़ी—आँखें बन्द हो गईं, सिसकी बँध गई—बस, फिर क्या था ? इधर मेरे आँसुओं की लड़ी, उधर माँ की अविरल कृपा की झड़ी—तत्काल ही अनुराग-धारा ने आंसुओं के वेग को समाहित किया। श्री माँ अपने पद्म-पाणि से मेरे सिर को छूकर बोलीं—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"देख, संसार से सुख की कल्पना करना व्यर्थ है क्योंकि जो वस्तु जिसके पास है ही नहीं, वह तुम्हें कैसे दे सकेगा ! जैसे बेर से आम मिलना असम्भव है, वैसे ही संसार में आनन्द खोजना भूल है। हाँ, एक बात सम्भव है—यदि तुम संसार को प्रभु का ही चोला मान लो, उनकी लीला स्थली समझ लो, उनकी विहार भूमि जानो, तब तुम्हारी चेतना बदल जावेगी—तुम्हें दुख में सुख में प्रभु के ही दर्शन होंगे—जो प्रभु हँसाते हैं, उनको रुलाने का भी अधिकार है—जो भगवान् जन्म देते हैं, वे मार भी सकते हैं—अतः सम स्थिति बनाओ—स्थित प्रज्ञ का यही स्वरूप है—यदि तुम्हारा मन चलायमान हो तो उसे भी प्रभु को अर्पण कर दो—अच्छे बुरे सभी कर्म उनको सौंप देने से भक्ति का प्रादुर्भाव शीघ्र ही होता है।

और सुनो ! रावण की मन्दोदरी जैसी भक्त पत्नी, हिरण्यकशिपु का भक्त प्रह्लाद जैसा पुत्र इस बात का साक्षी है कि भगवान् अपने भक्तों को दुष्टों का संसर्ग भी इसीलिए देती हैं कि उनका सुधार हो सके।

इतना कह माँ मुझे दृष्टिपात करने लगीं—उनकी तेजस्वी मुद्रा ने मेरे नेत्र बन्द कर दिए, शनैः शनैः ऊर्ध्व चेतना का क्रम टूटा, दिव्य प्रभा मंडल से एक, बार पुनः वायुमंडल जगमगा उठा—मैंने अपने को सम्हाला—अन्तःस्थिति बदली साधारण चेतना का क्रम स्थापित हुआ, मन का भाव राज्य से स्थूल जगत् में प्रवेश हुआ—इन्द्रियाँ सक्रिय बनीं और माँ की अमिय वाणी सदा सदा के लिए तृप्त कर गई।

●

प्रार्थना !

"श्री कृष्ण ! जैसे गंगा की अखण्ड धारा समुद्र में गिरती रहती है, वैसे ही मेरी बुद्धि किसी दूसरी ओर न जाकर आपसे ही निरंतर प्रेम करती रहे।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ एक बार ॥ (अनुकम्पाधारा)

एक बार मैं प्रयागराज में कुम्भ के शुभ-अवसर माँ के पास थी। बात अनेकों वर्ष पूर्व की है। उन दिनों स्वर्गीय श्री कातूमां माँ का भोजन बड़े प्रेम से बना कर माँ को भोग लगाया करती थीं। एक दिन जब वह कौरे बना बना कर माँ को खिला रही थीं मैं भी वहाँ खड़ी थी तथा दूर से ही यह दृश्य देख रही थी। सहसा मेरे मन में यह आया कि संसार में अधिकतर तो यह होता है कि माँ बच्चे को खिलाती है-आज माँ सन्तान के हाथ से खा रही है—कुछ इसी प्रकार का भाव आया तो मुझे ऐसा लगा कि मेरे अन्दर माँ ने कहा, "सब हाथ मेरे ही तो हैं।" इसके सुनते ही दूसरा भाव यह मन में आया कि यदि इस समय माँ मेरे लिये कुछ प्रसाद भेज दें तो मैं समझूँगी माँ ही सब हाथों से सबको खिला रही हैं। तब तक मैंने देखा भोग समाप्त हो चुका था तथा कातूमां माँ का मुख धुला रही थीं व उसके उपरान्त उन्होंने माँ को मुख-शुद्धि दी। माँ ने एक सेविका से कहा कि थोड़ी मुख शुद्धि मुझे दे आए तथा वह मुझे दे गई। मैंने माँ को मन ही मन प्रणाम किया एवं अवाक् रह गई। मैं काफ़ी दूर खड़ी थी व और भी कुछ स्त्रियाँ वहाँ थीं सो उस समय मुझे ही क्यों उस महा-प्रसाद का सौभाग्य प्राप्त हुआ—पाठक स्वयं ही समझ लेंगे !

एक बार मैं हरिद्वार में माँ के साथ थी। (यह भी कई वर्ष पूर्व की, हरिद्वार के पूर्ण-कुम्भ की, बात है। योगी भाई ने हरि की पैंडी के पास ही, एक ऊँचे मकान में, सबसे ऊपर के तल्ले पर एक कमरे एवं गुसलखाने का माँ के लिये प्रबन्ध करके रखा था। जिस दिन पर्व्व के स्नान का दिन था (उस बार एक दिन में शायद चार स्नान पड़े थे) उसके एक दिन पहले ही रात्रि के भोजन के उपरान्त हम लोग माँ के साथ उस कमरे में Shift हो गए थे क्योंकि पहला स्नान ब्रह्म-मूहूर्त में पड़ा था, (जिसके लिये स्नानार्थी श्रद्धालु लोगों का १-२ बजे रात से ही एकत्र होना आरम्भ हो गया था।) उस भीड़ में माँ के साथ हम लोगों का प्रातःकाल जाना अत्यन्त ही कठिन हो जाता। वैसे तो लगभग १०० भाई बहिन पूर्णकुम्भ पर माँ के पास आए थे। परन्तु माँ के साथ स्थानाभाव के कारण शायद १०-१२ व्यक्ति ही जा सके। माँ की कृपा से उन सौभाग्यशालियों में एक इन पंक्तियों की लेखिका भी थी। जैसा मैं लिख चुकी हूँ १-२ बजे रात से ही हरि की पैंड़ी पर, तथा आसपास, लोग एकत्र होने लगे। कुछ ने तो स्नान के समय की प्रतीक्षा न करके पहले ही, (भीड़ अधिक हो जाने के भय से) स्नान करना भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आरम्भ कर दिया। चार बजते-बजते तो वहाँ जन-समुद्र सा लहराने लगा। सिर ही सिर दिखाई देते थे पर मैं भीड़ के विषय में अधिक यहाँ नहीं लिखूँगी—वह दृश्य बिना देखे कोई अनुमान भी नहीं कर सकता—वह सब लिखने लगूं तो यह लेख बहुत ही लम्बा हो जायगा। प्रबन्ध-कर्ता तथा स्वयं-सेवकों के दल अत्यन्त तत्परता एवं दक्षता के साथ अपना अपना कार्य कर रहे थे—प्रबन्ध वास्तव में सुन्दर था—फिर भी थोड़े से स्थान में लाखों की भीड़ का सम्हालना आसान काम नहीं था। रात तक भीड़ का यही हाल था। स्नानों के समय, कुछ कुछ घण्टों के अन्तर से नियत थे। माँ की असीम कृपा से इस भीड़ के मध्य में भी हम लोग स्नान करने जाते तो हम लोगों के लौटने तक असीम दयामयी माँ ऊपर से हम लोगों को देखती रहती थीं। जिस स्नान के बारे में मैं लिखने जा रही हूँ शायद यह पर्व्व का अन्तिम स्नान था। उस समय निर्म्मली अखाड़ा स्नान करने को आनेवाला था तथा हम सबको एकत्र हो कर निकलने में कुछ देर हो गई—मैंने माँ के पास जा कर कहा कि माँ अखाड़े का स्नान का समय होने ही जा रहा है तथा हम लोग इस स्नान को छोड़ना नहीं चाहते, (उस भीड़ में से निकल कर कुण्ड तक पहुँचने में काफ़ी समय लग जाता था) माँ ने केवल इतना कहा, "जल्दी जाओ-जल्दी करो।" सो हम लोग चल दिये तथा माँ की कृपा से आनन्द से स्नान ठीक पर्व्व के समय पर ही कर सके। निर्मली अखाड़ा तब तक नहीं पहुँचा था—सुना किसी कारण वश किसी पुल के पास उन लोगों को देर हो गई—माँ की कितनी कृपा हम लोगों के कारण सहस्रों व्यक्तियों के उस अखाड़े को इतनी देर रोक के रखा! हम सबने आकर माँ को प्रणाम किया। अन्तिम स्नान का समय ८ बजे के लगभग था। उसके ३-४ घण्टे के बाद भीड़ बिल्कुल छट गई। तब हम लोग माँ के साथ उतरे। माँ ने दीदी को अपना वस्त्र उतार कर दिया व कहा कि इसको पैंडी पर भिगो कर ले आओ। मैं भी दीदी के साथ गई पर यह समझ में नहीं आया कि माँ ने वह कपड़ा क्यों भिगो कर लाने का आदेश दिया। अस्तु, हम लोग मोटर में बैठ कर बाघाट-हाउस लौटे। बाक़ी सब भक्त जो वहाँ माँ की प्रतीक्षा कर रहे थे, एवं किसी कारण-वश उनके १-२ पर्व्व स्नान छूट गए थे व जिसका उन्हें अत्यन्त दुःख था, माँ ने उनके ऊपर उस वस्त्र से जल के छींटे दिये व कुछ ऐसा कहा जिससे उनके मन प्रसन्न हो गए। इस आशय की ही कोई बात कहीं कि जो स्नान वे नहीं कर सके थे इन छींटों से उसका फल उन्हें प्राप्त हो गया। अब मैं ऐसी माँ के श्रीचरणों पर शीश रख कर इस लेख को विराम देती हूँ।

—श्री चरणकमलाश्रिता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महात्माओं के श्रीमुखसे

[श्री श्री १०८ स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती जी के संयम सप्ताह के अवसर पर दिये गये प्रवचनों के रेकार्ड से संकलित]

हमारे प्राचीन शास्त्रों एवं प्राचीन ऋषियों की पुनीत स्वच्छ दृष्टि में कर्म और परमात्मा की सत्ता में—विद्यमानता में कोई विरोध नहीं है, अपितु परमात्मा की सत्ता से ही कर्म का अस्तित्व सिद्ध होता है। वेदान्त शास्त्र का यह एक अलंघनीय नियम है कि परस्पर जिनकी समान सत्ता होती है उनमें ही विरोध होता है। सच पूछा जाय तो परमार्थतः दो तत्त्व हैं ही नहीं। हाँ, व्यवहार से व्यवहार का विरोध अवश्य ही देखने में आता है परन्तु परमार्थ से व्यवहार का विरोध नहीं हो सकता। हमारा शरीर, हमारी इन्द्रियाँ, हमारा मन कर्म की धारा में बहे और स्वरूपतः हम परमात्मा की परमार्थता अर्थात् अपने नित्य शुद्धयुक्त स्वरूप में स्थित रहें—यह कोई कोरी कल्पना नहीं। यह महापुरुषों के लीलामय जीवन में अहरह हमें देखने को मिलती हैं। हमारे से किये हुये कर्म परमात्मा की सत्ता बाधा में नहीं डाल सकते।

परन्तु वह कैसा जीवन है जिसमें कर्म की धारा बहे और स्वयं उससे अछूता रहकर अपनी नित्य आनन्दमय स्थिति एकीभाव से स्थित रहें। इस विषय में भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा :

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ।।
(श्रीमद्भगवद्गीता—तीसरा अध्याय—उन्नीसवाँ श्लोक)

यहाँ पर भगवान् श्रीकृष्ण की सूक्ति है कि 'कार्यं कर्म समाचर' कार्य और कर्म ये दो अलग अलग तत्त्व हैं। साधारणतया लोग कार्य और कर्म ये दोनों समानार्थक शब्द मानते हैं। परन्तु क्रियादृष्टि से बाहर से भेद की प्रतीति न होने पर भी—फल की दृष्टि से अत्यन्त अन्तर है जिसे आपके सामने खुलासा करने का प्रयत्न करूँगा। सच पूछा जाय तो ब्रह्मात्मैक्य-बोध जिनको हो गया उनके जीवन में 'कार्य' नहीं होता। उसको किसी की भी कभी भी और कहीं भी कर्त्तव्य का बन्धन नहीं होता। परन्तु मजे की बात यही है कि कर्म उससे सदा ही होता रहता है। वह चलता-बोलता है; खाता-पीता है; हँसता-खेलता है परन्तु सदा ही क्रिया के फल से—कर्म के फल से निर्मुक्त रहता है। जेल में बन्दी भी रहता है और जेल के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अध्यक्ष भी। संसारी लोग अपने किये हुए कर्मों के फल भोगते हैं और तत्त्वज्ञानी अध्यक्ष की तरह मुक्तभाव से कर्म करते रहते हैं। अन्तर यही है।

महात्मा का यह मुक्तभाव कैसा है ? यही भावना सदा ही किस तरह से हमारे जीवन के हरेक कर्म में बनी रहे इसे हमें देखना है, समझना है और अपने जीवन में उतारना है। मनुष्य के मन में प्रवृत्ति रहती है। बिना प्रवृत्ति के मानव नहीं रह पाता। प्रवृत्ति का सरलार्थ है—कुछ ना कुछ करना; शरीर से, मन से, वाणी से। सब शास्त्रों में यही बात बार-बार दुहराई गई है कि प्रवृत्ति जीवन का मूल है—जगत् का मूल है। और यही जीवन में होनेवाले सुख-दुःख का भी मूल है। व्यक्ति है तो कुछ उसके अनुकूल पड़ेगा तो कुछ प्रतिकूल पड़ेगा। जब तक शरीर बोध है तब तक सर्दी-गर्मी-निवास-भोजन-भजन-संग-साथ में भी यही अनुकूलता-प्रतिकूलता की श्रृंखला जकड़ती रहेगी। संसार में हमें यही आशा नहीं पोषण करनी चाहिये कि सब व्यक्ति, सब वस्तुएँ, सब परिस्थितियाँ, सब घटनाएँ हमारे मनोनुकूल ही हों। और यह सम्भव भी नहीं है-इस बात को साधारण लोग भी जानते हैं और मानते हैं। इसका कारण यह है कि सबके संस्कार—उनके अभ्यास, शरीर के उपादान, बुद्धि की परिपक्वता, मन की प्रवाहशीलता, हृदय की कोमलता आदि अलग अलग हैं। हम देखते हैं एक ही माँ-बाप के दो बच्चे हैं—एक को मीठा अच्छा लगता है तो दूसरे को खट्टा। एक पढ़ाई में चतुर, दूसरा खेल-कूद में। एक को धूप सताती तो दूसरे को सर्दी। एक को माँ प्यारी लगती है तो दूसरे को बाप प्यारा लगता है। जीवन के लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि इस अनुकूलता-प्रतिकूलता के द्वन्द्वों से—इस प्रिय-अप्रिय के स्पर्शों से सहजभाव से ऊपर उठकर असक्त होकर सहते चलें—आगे कदम बढ़ाते चलें। अतः श्रीभगवान् ने कहा—"असक्तः (सन्) कार्यं कर्म समाचर" कहीं पर भी सटना नहीं—चिपकना नहीं। किसी के शरीर से सटोगे-चिपकोगे तो उसका सारा शरीरीपन तुम्हारे ऊपर सवार हो जावेगा। तुम्हारी आसक्ति मजबूत होगी—मुक्तभाव बिगड़ जायेगा। असल में किसी भाव में, व्यक्तिविशेष में, किसी परिस्थिति में, किसी स्थानविशेष में, कहीं पर, कभी भी, किसी रूप से चिपकोगे तो एक घेरे में आ जाओगे। सारे अध्यात्मशास्त्रों का—सम्पूर्ण संत वाणी और सनातन धर्म का एकमात्र उद्देश्य है घेरे को तोड़ना। घेरे बनाना बन्धन है, घेरे को तोड़ना मुक्ति है। जहाँ आसक्ति वहाँ ही लकीरी, वहाँ ही घेरा। जहाँ निरासक्ति वहीं फकीरी—वहीं मुक्तावस्था।

हम देखते हैं प्रवृत्ति से ही आसक्ति बढ़ती है। प्रवृत्ति ही जीवन में दुःख-सुख की सृष्टि करती है। अतः विचार इस बात का है कि हमारी प्रवृत्ति कैसी होनी चाहिये। कुछ तो करें परन्तु कैसे करें। कहा गया निरासक्त होकर घेरा न डालकर—सुख-दुःख रूपी फल प्राप्ति

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की ओर से सम होकर करें। परन्तु निरासक्ति तो सहज में नहीं आती है। निरासक्त कैसे होवें ? इसके उत्तर में शास्त्रों में बहुत से उपाय बताये गये हैं। मनुजी ने कहा : "मानव को कर्म करना चाहिये; किन्तु उस कर्म में शुभ प्रवृत्ति होनी चाहिये, अशुभ प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिये।" दोषपूर्वक—अधर्मपूर्वक किसी भी प्रवृत्ति में हमें फँसना नहीं चाहिये। हमारे उन्नति का—अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त हो ऐसी प्रवृत्ति से काम लेना चाहिये। बुद्धिपूर्वक पहले निश्चय करना होता है। फिर उस निश्चय के अनुसार मन में अनुरूप संकल्प का उदय होता है। फिर इन्द्रियाँ उस संकल्प के अनुसार क्रियाशील होती हैं। बाजार में आप कहीं जा रहे हैं। आपको अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने का शौक है। दुकान पर कोई सुन्दर वस्त्र आपको दीखा तो मन में आया—'ले लो इसे।' परन्तु जब जेब में हाथ रखा तो देखा पैसा नहीं। मन ने कहा—"किसी से उधार ले लो। कोई उधार नहीं देता तो किसी को ठग लो। नहीं तो चुपचाप घर से ही या और कहीं से चोरी कर लो।" और पश्चात् बुद्धि चोरी को या अन्य उपाय को सुझाती रहेगी। शास्त्र में इसे ही अशुभ प्रवृत्ति का—पतन का मार्ग बतलाया है। शीतकाल आ गया। मन में आया—गरम कपड़े बनवा लें। घर से पैसे लेकर दुकान की ओर चले और पैसे के अनुसार जो मिला वही वस्त्र खरीद ले आये। यही बुद्धि शुभ प्रवृत्ति का प्रेरक है, जननी है। अशुद्ध मन पर—अशुभ प्रवृत्ति के ऊपर अनुग्रह करने वाली बुद्धि को श्री भगवान् ने गीता में अव्यवसायात्मिका और शुद्ध मन पर शुभ प्रवृत्तियों पर अनुग्रह करने वाली बुद्धि को व्यवसा-यात्मिका कह कर निर्णय दिये हैं। हम सबको यह देखना है कि आप जो कर्म कर रहे हैं, उसमें आपको भीतर से प्रेरणा देनेवाली कौन है—राम या काम ? अगर राम देता है तो आप असक्त हैं—शुभ प्रवृत्ति के पुजारी हैं और यदि काम देता है तो आप अभिमानी हैं—सुख-दुःख भोगनेवाले हैं—घेरे में-बन्धन में जकड़नेवाले हैं और सबके ऊपर आप श्री भगवान् की भाषा में नरक के द्वार खोलनेवाले हैं—

"त्रिविधं नरकस्येदं द्वारम्—
कामं क्रोधं तथा लोभम्"—

काम क्या है ?—भय से, द्वेष से, राग से, अहंकार और अज्ञान से प्रेरित क्रिया ही काम है। ये ही जीवन में क्लेश के बीज बो देते हैं। योग दर्शन में कहा गया है कि कर्म को क्लेशदायी बनानेवाला दोष आया है मिथ्याज्ञान से। अतएव मिथ्याज्ञान को मिटाने के लिये तत्त्वज्ञान आवश्यक है। तत्त्वज्ञान से मिथ्याज्ञान मिट जायगा। मिथ्याज्ञान नष्ट होने पर राग-द्वेष मिट जायँगे। रागद्वेष मिटने से अशुभ प्रवृत्ति नहीं होगी। जीवन में दुःख घट जाते हैं। तत्त्वज्ञान और कर्म में तब कोई विरोध नहीं रहता। बाहर असक्त होकर कर्म भी चलता और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्तर में अविमुक्त अनाविल अनापेक्षिक आनन्द का प्रवाह स्वच्छन्द चलता रहता है। इसी श्लोक में इस बात की ओर भगवान् ने संकेत किया। कर्त्ता में यह सावधानी अपेक्षित है कि अपनी ओर से कहीं सटे नहीं—कहीं हटे नहीं। सटना राग है; हटना द्वेष है। रागद्वेषमूलक काम राम का नहीं—अभिमान का काम है—जो सुख-दुःख की जननी है।

श्रुति ने भी कहा है—"चरन् वै मधु विन्दति"—चलता रहे—फँसकर रुके नहीं। कर्म के दो विभाग हैं—एक आचरण रूप और दूसरा अनासक्ति रूप। अनासक्ति में बुद्धि है और आचरण में श्रम है। जहाँ बुद्धि और आचरण में मेल है वहाँ मनुष्य सावधान है। यह कर्मयोग हो गया। जहाँ बुद्धि का आचरण से मेल नहीं, वहाँ केवल कर्म रहेगा, काम रहेगा, 'योग' नहीं। जहाँ योग नहीं वहाँ भोग है। जहाँ भोग है वहाँ रोग है, जहाँ राग हैं वहाँ रोग हैं—नरक की सीढ़ियों की परम्परा है।

हमें भलीभाँति कर्म करना चाहिये। कर्म में आसक्ति न हो परन्तु कर्म में त्रुटि आने देना नहीं चाहिये। तन्मय होकर कर्म करना चाहिये। बहुत प्रकार से कर्म हमारे सामने आते रहते हैं, उनमें से कर्त्तव्य कर्मों का सम्पादन करना चाहिये। इस विषय में एक सुन्दर उदाहरण हमें प्राप्त होता है, मैं आपके सामने वह रखता हूँ। सिक्ख गुरुओं में एक के पुत्र भी थे और शिष्य भी। गुरु ने दोनों को अलग-अलग चबूतरे बनाने कहा। दोनों ने दो पृथक्-पृथक् चबूतरे अपने गुरु के कथनानुसार बनाये। एक दिन शाम को गुरुजी चबूतरे देखने आये। देखकर उन्होंने कहा—'चबूतरा जैसा मैं चाहता था वैसा नहीं बना। यह ठीक नहीं लगता। इसे तोड़ दो और दूसरा फिर से बनाओ।'

दोनों ने फिर नये चबूतरे बनाये। गुरुजी ने 'ठीक नहीं बना' यह कहकर उसे भी तोड़ने को कहा। इसी तरह से यही क्रम कई दिन तक चला। कुछ दिन बाद उनके पुत्र आकर बोले—"आपको तो चबूतरा किसी तरह से पसन्द नहीं आ रहा है। और मेरे से भी इससे अच्छा बन नहीं सकता। आप कृपया दूसरा कोई काम बताइये।"

परन्तु दूसरा शिष्य चबूतरा तोड़ता और बनाता ही गया। एक दिन गुरु ने पूछा : क्या बात तुम तो चबूतरा बनाने में लगे हो ?

शिष्य ने कहा—"मुझे तो आपकी आज्ञा का पालन करने में ही आनन्द आता है। मैं इसी को अपना कर्त्तव्य और ध्येय समझता हूँ। आपका आदेश क्या है मैं इसको अपने विचार में नहीं लाता। इससे मुझे करना ही क्या है ? आपने आज्ञा दी चबूतरा बनाओ—मैंने बनाया। आपका आदेश हुआ तोड़ डालो—मैंने तोड़ डाला। बनाना-तोड़ना मेरा काम, आज्ञा देना आपका काम।"

गुरु जी की प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। उनके देहान्त के बाद वही शिष्य उनके स्थान पर समासीन हुआ। कर्त्तव्यों के पालन में ही आनन्द आना चाहिए। सावधान होकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रमाद रहित होकर मनुष्य को कर्म करना चाहिए। यहाँ पर बताया गया है कि 'सततं समाचर'—सदा ही कर्मों का सम्पादन करते रहना चाहिए। सारे दिन-रात्रि के अन्दर केवल घण्टे भर का कर्त्तव्य का पालन किया बाकी समय असावधान बने रहे, प्रमादी बने रहे, आलसी बने रहे तो फिर उसकी क्या कीमत। बराबर सावधानी से रहना चाहिये।

अब कहते हैं आसक्ति पूर्वक सावधानी से सतत—प्रमाद आलस्य रहित होकर कर्त्तव्य कर्म करने से क्या फल होगा? फल यह होगा कि उस पुरुष को 'परं' "आप्नोति" = वह परम सुख, चरम ज्ञान तथा पर सद् वस्तु को प्राप्त कर लेगा। यहाँ पर 'परम्' शब्द का अर्थ सुख भी है—ज्ञान भी है तो सत्ता का बोध भी हैं। यहाँ पर जो 'आप्नोति' पद है उसका भी बड़ा ही विलक्षण अर्थ है। आत्मा शब्द के साथ 'आप्नोति' शब्द का विलक्षण सम्बन्ध है। 'आप्नोति इति आत्मा' जाग्रत् और स्वप्न को छोड़ कर सुषुप्ति में जो यह अपने स्वरूप को प्राप्त करता हैं। इसीलिए इसे आत्मा कहा गया। अथवा 'अतति' इति आत्मा—स्वप्नों में जो कल्पनाओं का जाल बिछाता है और उसी में भ्रमण करता है इसीलिए आत्मा कहा गया। अथवा "अत्ति आदत्ते वा" इति आत्मा। जाग्रत् अवस्था में अनन्त संस्कारों के फलस्वरूप कामना—वासना से प्रेरित होकर जो इन्द्रियों द्वारा विषयों का भोग करता है—आदान-प्रदान में लगा हुआ—उसे ही आत्मा कहते हैं। परन्तु सबसे मजेदार और रोचक अथ च विस्मयकारी विषय यह है कि वह वह आत्मा जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं में तथा स्वर्ग-नरक, संसार एवं समाधि में भी कहीं भी आसक्त नहीं होता। मानव के जीवन में भी यही बात देखने को आती है। जब हम थक जाते हैं तब जाग्रत् को छोड़कर सब कुछ भूल कर सोना चाहते हैं। फिर जब खूब सोना हो जाता; शरीर मन को विश्राम मिल जाता तो जाग कर आनन्द लेना चाहते हैं। कभी जाग्रत् में अनासक्ति तो कभी सुषुप्ति में, कभी स्वप्न में। काम करते समय में भी ऐसी अनासक्ति की भावना मन में धारण करनी चाहिए। जो भी सामने कर्त्तव्य के रूप में आए उसे ही कर लेना चाहिए। जो परम सत् है वही परम ज्ञान है, जो परम ज्ञान है वही परम सुख है। अनासक्ति भाव से कर्म करते-करते उस परम आनन्दघन चिद्घन सद्घन वस्तु का साक्षात्कार होगा। यही गीता के इस श्लोक का तात्पर्यार्थ है।

यहाँ पर भगवान् ने 'पूरुषः' शब्द का प्रयोग किया है। यहाँ पर भी बड़ी-विलक्षण बात है। पूर्णात् पुरूषः—पुरुष को पूर्ण होने से पुरुष कहते हैं। कर्मका अधिकारी पुरुष ही है। धर्म की उत्पत्ति केवल मनुष्य में ही होती है। जैसा पाप-पुण्य करने का अधिकार भी मनुष्य को प्राप्त है वैसा पापपुण्य का बन्धन तोड़कर मुक्त होने का उस परम सुख स्वरूप आत्म-तत्त्व जानने का अधिकार भी मानव को प्राप्त हैं। पशुपक्षियों को ये अधिकार नहीं हैं। एक शेर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अगर एक मानव को मारकर खा जाय तो उसे पाप नहीं लगता परन्तु मानव अगर प्राणीहिंसा करे तो उसे उसका फल भोगना पड़ेगा। यही कर्म का चमत्कार है। और उस कर्म का अधिकारी—यह चमत्कारी—पुरुष है। मनुष्य शरीर के द्वारा आप सब कुछ पा सकते हैं। आप स्वयं ही अपने भाग्य के निर्माता हैं, प्रकृति के ऊपर आपका आधिपत्य हो सकता है उस प्रकृति के नियन्ता परमात्मा को आप प्राप्त कर सकते हैं। पुरि शयनात् पुरुषः—शरीररूपी इस पुरी में सोने के कारण पुरुष कहते हैं। जीवात्मा इस सुन्दर शरीर रूपी पुरी में शयन करता है। उपनिषदों में इसी उपमा को लेकर विलक्षण चर्चा की गई है। पुरूणि स्यति इति पूरुषः' 'स्यति' शब्द का अर्थ है–टुकड़ा कर देना। मिटा देना, नष्ट कर देना। जो इस अनन्त भेदों को द्वन्दों को मिटाकर अभेद की स्थापना कर देता है उसे भी पुरुष कहते हैं। पुरुष शब्द का थोड़ा सा विवेचन आप के लिये कर दिया गया। शास्त्रों में और भी विलक्षण बातें मिलती हैं। यहाँ पर उसका निर्वचन करना जरूरी नहीं है।

गीता के इस श्लोक में कर्म करने की ऐसी एक रीति–ऐसा एक उपाय बताया गया है जिसे अपनाने पर कर्म करते हुए भी कर्म का बन्धन नहीं होगा। वर्त्तमान विंशशती में सारे मानव समाज का इस ओर ध्यान देना बड़ा ही जरूरी है।

हरेक मनुष्य में एक योग्यता जिसे उर्दू में 'हैसियत' कहते—होती है और साथ साथ आकांक्षा भी होती है। कभी कभी ऐसा देखा जाता है कि किसी को साधन करके परमात्मा की प्राप्ति की इच्छा होती है परन्तु जब जब ध्यान में बैठता है तब तब सिर में दर्द होता है, तनाव होता है। परन्तु उसे अपने व्यापारी बाप की कपड़े की दूकान पर बैठने से सिर दर्द नहीं होता। इसका क्या अर्थ ? उसकी आकांक्षा योग्यता से बाहर है। उसे निष्काम कर्मयोग के द्वारा धीरे धीरे अग्रसर होना है ताकि सब कुछ छोड़ कर भगवद् भजन में संलग्न होना, और कभी कभी यह भी देखा गया है कि किसी को आग्रह करके कर्म में लगाने पर भी लगा नहीं पाते। वेदान्त चिन्तन भजन में उसकी स्वाभाविक रुचि होती है—उसे उसी से शान्ति मिलती है। जिस कर्म योगी के जीवन में योग्यता और आकांक्षा का मेल है—वहाँ तनाव उत्पन्न नहीं होता। जीवन का प्रवाह स्वभाव से ही सहज रहता। कर्म के जंजाल से छूटने के लिए यहँ भी एक अचूक उपाय है। आजकल हरेक स्थान पर जो तनाव देखा जाता इसके मूल में यह भी एक कारण है।

ज्ञानी, साधक, जिज्ञासु और संसारी सबको कर्म करना है। कर्म करने की कुंजी इस श्लोक में भगवान् श्री कृष्ण जी ने हमें बताया है। इस ओर मैं आप सबका ध्यान आकृष्ट करता हूँ।

ॐ शान्ति : शान्ति : शान्ति :

●

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानव-धर्म

[गतांक से आगे]

डा० शान्तिप्रकाश आत्रेय

जैन मत के अनुसार मानव की धारणा

जैन मत के अनुसार आत्मा और शरीर का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। १. औदारिक २. वैक्रियक ३. आहारक, ४. तैजस, ५. कार्मण नामक पाँच शरीरों को इन्होंने माना है।[1] माता पिता से प्राप्त स्थूल शरीर को औदारिक कहते हैं। साधारण शक्ति के कारण वैक्रियक शरीर है। यह दृष्टिगोचर नहीं होता तथा अनेक रूप व आकार धारण कर सकता है। योगियों के द्वारा विकसित किये गये शरीर को जो आवश्यकतानुसार बहुत दूर भी भेजा जा सकता है, 'आहारक कहते हैं। कार्मण शरीर तथा औदारिक शरीर को सम्वन्धित करने वाला आवश्यक शरीर, जो कि विद्युत् पुद्गल से निर्मित है, को तैजस शरीर कहा गया है। यह शरीर भोजन को पचाने की शक्ति रखता है। कर्म समूह को कार्मण शरीर रूप कहा गया है। जो कि आठ प्रकार के कर्मों से निर्मित है। यह आन्तरीय सूक्ष्म शरीर है जो सब मानसिक और शारिरिक क्रियाओं का बीज है। इन पाँच शरीरों में से प्रथम शरीर का ही प्रत्यक्ष होता है जो कि स्थूल औदारिक शरीर कहा गया है। अन्य शरीर सूक्ष्म हैं। सूक्ष्मता क्रमशः बढ़ती चली जाती है। अन्तिम पाँचवाँ कार्मण शरीर सबसे सूक्ष्म है। यह वेदान्त और सांख्य के सूक्ष्म शरीर के समान है। स्थूल शरीर इस सूक्ष्म शरीर पर आधारित है। कार्मण शरीर आत्मा के साथ एक शरीर से दूसरे शरीर में भ्रमण करता रहता है। जब तक मोक्ष नहीं हो जाता तब तक तैजस और कार्मण शरीर आत्मा के संग निरंतर बने रहते हैं। अन्य तीनों शरीर आवश्यकता के अनुसार उचित अवसर पर धारण किये जाते हैं। मोक्ष प्राप्त कर लेने के बाद आत्मा के साथ कोई भी शरीर नहीं रहता। आत्मा और शरीर में ये पारस्परिक बाह्य सम्बन्ध मानते हैं। कर्मपुद्गलों के द्वारा ही आत्मा सीमित ज्ञान आदि वाला हो जाता है। इस प्रकार से मानव केवल शरीर ही नहीं बल्कि आत्मा तथा शरीर (सूक्ष्म तथा स्थूल) दोनों है। आत्मा का शरीर के साथ अनादि काल से सम्बन्ध चला आ रहा है किन्तु जैन मत के अनुसार उनके बताये मार्ग पर

---

१. तत्त्वार्थ सूत्र—२. ३७-४९।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चलने से आत्मा इस सम्बन्ध से छुटकारा पा सकता है। इस सम्बन्ध को "बन्ध" कहते हैं। बन्ध के कारण ही सब दुःख हैं। मानव जीवन का परम लक्ष्य आत्मा को शरीर से अलग करके बन्धन से मुक्त हो मोक्ष प्राप्त करना है। मुक्त पुरुष लोकाकाश तथा अलोक आकाश के मध्य में जाकर स्थित हो जाते हैं। जैन मत में सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान तथा सम्यक् चारित्र को त्रिरत्न कहा गया है। इन तीनो के द्वारा ही मोक्ष प्राप्त होता है। कर्मपुद्गल के आस्रव के कारण हो बन्ध है अतः बाह्य तथा आन्तरिक आस्रव को रोकना चाहिये। केवल आस्रव रोकने मात्र से ही काम नहीं चलेगा "संवर" के साथ साथ निर्जरा भी बहुत आवश्यक है। आत्मा के साथ पूर्व से चिपके कर्मों के नाश को निर्जरा कहते हैं। संवर तथा निर्जरा दोनों के द्वारा हो पुद्गल को आत्मा से दूर किया जा सकता है। संवर के द्वारा आस्रव रोके बिना तथा निर्जरा के द्वारा पूर्व कर्म पुद्गलों को समाप्त किये बिना मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता है। घातकीय (ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय तथा मोहनीय) तथा अघातकीय (आयु, नाम, गोत्र तथा वेदनीय) दोनों आठ प्रकार के कर्म होते हैं। जब निर्जरा के द्वारा सब कर्म पुद्गल नष्ट हो जाते हैं तथा संवर के द्वारा नवीन कर्मों का आस्रव बन्द हो जाता है। तभी मोक्ष प्राप्त होता है।

मोक्ष भी दो प्रकार का होता है १—भाव मोक्ष २—द्रव्यमोक्ष। भाव मोक्ष अन्य सम्प्रदायों के जीवन्मुक्तावस्था के समान है तथा द्रव्य मोक्ष को हम कैवल्य वा विदेहमुक्तावस्था कह सकते हैं।

जैन दर्शन में अभौतिक विशुद्ध चेतना का अनेकत्व तथा उनके लिये स्थान की आवश्यकता समझ में नहीं आती है। जब आत्मा, मन तथा शरीर से अलग हो जाता है तब उसके लिये स्थान की क्या आवश्यकता रह जाती है। इस प्रकार यह बहुत्ववादी सिद्धान्त समीचीन नहीं है।

६ भगवद्गीता के अनुसार मानव की धारणा

गीता के अनुसार मानव की धारणा के अन्तर्गत स्थूल शरीर समस्त संस्कारों सहित सूक्ष्म शरीर तथा आत्मा तीनों आ जाते हैं। स्थूल शरीर तो विनष्ट हो जाता है किन्तु आत्मा नित्य तथा अजन्मा है। जन्म मरण केवल शरीर का ही होता है। शरीर के नाश होने से आत्मा का नाश नहीं होता है। अज्ञान के कारण इस शरीर को मन इन्द्रियाँ वा मानसिक अवस्था मान लिया जाता है जिसके कारण उनके नाश को अपना नाश समझ लिया जाता है। संसार से लगाव के कारण ही यह जन्म मरण के चक्र में घूमता रहता है। गीता में शरीर को क्षेत्र

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहा है और शरीर को जानने वाले आत्मा को क्षेत्रज्ञ कहा है। सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ ईश्वर है, क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का जो ज्ञान है वह परमेश्वर का ज्ञान है। आत्मा को गीता में परमेश्वर की उत्कृष्ट विभूति कहा गया है। प्रकृति के गुणों, सुख, दुःख आदि विकारों से बद्ध रहने के कारण आत्मा को ही क्षेत्रज्ञ या जीवात्मा कहते हैं। इन गुणों से मुक्त होने पर वही परमात्मा हो जाता है। प्रकृति त्रिगुणात्मक है। अतः गुण तो सब प्रकृति के ही हैं। तीनों गुण साथ रहते हैं। इसी कारण सुख में दुःख निश्चित रूप से विद्यमान रहता है। इन्हीं गुणों के कारण मनुष्य सुख दुःख एवं मोह को प्राप्त होता रहता है। आत्मा त्रिगुणात्मक नहीं है। वह इन सबसे परे है। उसके सुखःदुःख तथा मोह का कारण केवल इनसे लगाव है। शरीर के बिना आत्मा क्रियाशील नहीं हो सकता। शरीर के विनष्ट होने पर आत्मा समस्त संस्कारों सहित सूक्ष्म शरीर के साथ इसको (स्थूल शरीर को) छोड़ कर नवीन स्थूल शरीर धारण करता है। यह चक्र अज्ञान के कारण है। अज्ञान के समाप्त होने पर ही आत्मज्ञान होता है तथा वास्ततिक स्वरूप प्रकाशित होता है। मोक्ष के लिये गीता में विभिन्न मार्गों को बताया है। सब मार्गों का लक्ष्य केवल जीव का ब्रह्म हो जाना है। अपने को ठीक-ठीक समझना है। इसके प्राप्त होने पर कुछ प्राप्त करने के लिये शेष नहीं रहता।

गीता के अनुसार मानव केवल शरीर, मन, इन्द्रिय आदि ही नहीं हैं बल्कि वह आत्मा भी है। आत्मा ही शरीर, मन आदि का नियन्त्रण करता है। प्रकृति के विकारों से सम्बन्धित आत्मा ही बद्ध जीव है। आत्मा ऐसी अवस्था में सूक्ष्म शरीर से सम्बन्धित है। सूक्ष्म शरीर इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख आदि से सम्बन्धित है। गीता स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण तीनों शरीरों को मानती है। स्थूल शरीर पंच महाभूतों से निर्मित है। सूक्ष्म शरीर बुद्धि, मन, अहंकार, इन्द्रियों आदि से बना है। कारण शरीर अज्ञान का स्थान है जिसके कारण सम्पूर्ण प्रपंचात्मक विश्व है। मानव इन तीनों शरीरों सहित आत्मा है। मानव का परम धर्म इन तीनों शरीरों से रहित होकर अपने शुद्ध आत्मा रूप की प्राप्ति करना है।

७—उपनिषद्, योगवासिष्ठ तथा अद्वैत वेदान्त के अनुसार मानव की धारणा

उपनिषदों के अनुसार मानव की धारणा में आत्मा, मन तथा शरीर तीनों ही आ जाते हैं वैसे तो जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है किन्तु ब्रह्म की शक्ति माया के कारण जीव का वास्तविक स्वरूप छिपा है। अज्ञान के कारण आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को भूलकर अपने आपको शरीर, मन, इन्द्रियाँ आदि से सम्बन्धित कर लेता है। मानव जाग्रत्, स्वप्न तथा सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं वाला होते हुए भी इन तीनों अवस्थाओं से परे है। उपनिषद्

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा वेदान्त में स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण तीनों शरीर माने गये हैं। ये तीनों ही जड़ हैं। इन तीनों शरीरों में केवल स्थूल शरीर ही इन्द्रियगम्य है। अन्य दोनों शरीर सूक्ष्म होने के कारण योगियों के सिवाय किसी को दिखाई नहीं दे सकते हैं। सब क्रियाएँ मन तथा इन्द्रियों के द्वारा होती हैं।[१] आत्मा स्थूल शरीर को छोड़कर कर्माशयों तथा सूक्ष्म शरीर सहित दूसरे नवीन स्थूल शरीर को धारण करता है। सूक्ष्म शरीर पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय, पंच प्राण, मन तथा बुद्धि को कहा गया है। स्थूल शरीर पंच भूतों के पंचीकरण की प्रक्रिया द्वारा प्राप्त होता है। अविद्या ही कारण शरीर है, जिसे अव्यक्त कहा गया है। यह त्रिगुणात्मक (सत्त्व, राजस तथा तामस) है। यही सम्पूर्ण विश्व का कारण है। आत्मा इन तीनों शरीरों से परे है। अज्ञान के कारण आत्मा इन तीनों शरीरों से भिन्न होते हुए भी सम्बन्धित है। इन तीनों शरीरों से सम्बन्धित आत्मा ही मानव है। मानव चार अवस्थाओं (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति तथा तूर्य)[२] तथा तीन शरीर (स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण) वाला है। मनुष्य केवल स्थूल शरीर सूक्ष्म तथा कारण शरीर ही नहीं है बल्कि वह आत्मा सहित इन सबका मिश्रित रूप है। मानव स्थूल शरीर सबसे निम्न तथा आत्मा सर्वोत्कृष्ट है। आत्मोपलब्धि ही मानव का लक्ष्य होना चाहिए। प्रकृति के नियमों से स्थूल शरीर शासित है, प्रकृति के नियम मानसिक नियमों पर आधारित हैं। मन ही प्रकृति पर नियन्त्रण करता है। अन्ततोगत्वा ये सब ही आत्मा के द्वारा शासित हैं। आत्मा ही सबका अन्तिम नियंत्रणकर्त्ता है। आत्मा ही मानव में ईश्वर का रूप है।

मानव के स्वरूप को उपनिषदों तथा वेदान्त में पंच कोषों के द्वारा बड़े सुन्दर ढंग से समझाया गया है। आत्मा पर आवरण हैं जिन्हें पंचकोषों के नाम से कहा गया है। आनन्द-मय कोष, विज्ञानमय कोष, मनोमय कोष, प्राणमय कोष तथा अन्नमय कोष ये पाँच आवरण आत्मा के ऊपर हैं।[3] उपनिषद् में अन्तिम अन्नमय कोष से विवरण प्राप्त करते हैं। अन्नमय कोष ही स्थूल शरीर है जो कि हड्डियों, मांसपेशियों, नाड़ियों आदि से निर्मित है। मृत्यु के समय जीवात्मा एक स्थूल शरीर को छोड़ कर दूसरे स्थूल शरीर में प्रवेश करता है। यह अन्नमय कोष मोक्ष प्राप्ति तथा कर्म फलों को भोगने के लिये नितान्त आवश्यक है। अतः

---

१. बृ० उ०—१।५।३, ४।४।१६, ४।३।१०-१४, ४।३।१९, २।१।१९

२. छा० उ०—५।१८।२, मा० उ०-आगम-३, ४, ५, ६, ७, यो० वा०-४।१९।१५, १६, १७, १९,-३३ तक ६।१।१२४।२३-२७, ३६।

३. तैत्तिरीयोपनिषद्-वल्ली २ (ब्रह्मानन्दवल्ली) विवेक-चूड़ामणि--१५६-१९०

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसका ज्ञान तो प्राप्त करना ही चाहिए। इस जटिल यंत्र के द्वारा ही मानव की समस्त क्रियाएँ चलती हैं। विश्व में जो भी है वह इस मानव देह में विद्यमान है। **"यत् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे"** जो ब्रह्माण्ड में है वह पिण्ड में है। प्राचीन योगियों ने इस अन्नमय कोष का सूक्ष्मतम ज्ञान निश्चित रूप से प्राप्त किया था क्योंकि इसका ज्ञान प्राप्त किये बिना साधक योगाभ्यास में आगे नहीं बढ़ सकता है।[1] आधुनिक शरीर विज्ञान अभी तक उतना सूक्ष्म अन्वेषण नहीं कर पाया है। यंत्रों के द्वारा अभी तक बहुत से सूक्ष्म केन्द्रों का ज्ञान भी प्राप्त नहीं हो पाया है। हो सकता है भविष्य में वर्तमान यन्त्रों से भी अधिक सूक्ष्मदर्शी यन्त्र बन जायँ जिनके द्वारा देह का अपेक्षा कृत सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त हो सके। किन्तु इन्द्रिय निरीक्षण की सदैव सीमा तो रहेगी ही। उसके आधार पर प्राप्त ज्ञान भी निश्चित रूप से सीमित ही रहेगा। भारतीय ऋषियों ने अति प्राचीन काल में देह ज्ञान की महत्ता को समझ लिया था। वेदों में नर देह को आठ चक्र तथा नव द्वारों वाली देवों की अयोध्यापुरी कहा है।[2] करीब करीब सभी ग्रन्थों में शरीर विज्ञान का ज्ञान प्राप्त होता है।

स्थूल शरीर हड्डियाँ, पेशी तन्त्र

नाड़ी तन्त्र (Nervous system), रक्त परिसंचरण-तन्त्र (Blood circulator system), श्वसन तन्त्र (Respiratory system), पाचन तन्त्र (Digestive system), उत्सर्जन तन्त्र (Excretory system), जनन तन्त्र (Reprooductive system) कोषाणुओं (Cells), तथा ऊतकों (Tissue) त्वचा (Skin), बालों, नाखूनों, दांतों, ग्रन्थियों (Glands), चक्रों, कुण्डलिनी आदि वाला है।[3]

त्वचा के द्वारा सम्पूर्ण शरीर ढका है। यह समस्त भीतरी अंगों की रक्षक है। यह शरीर का पहला आवरण है। पेशियों, हड्डियों संयोजक ऊतकों के द्वारा गति तथा कड़ापन है। नाड़ी तन्त्र जिसके अन्तर्गत मस्तिष्क, मेरुदण्ड, रज्जु, नाड़ियाँ, चक्र, कुण्डलिनी आदि आते हैं, ही हमें ज्ञान प्रदान करने का साधन है। इससे ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ज्ञान प्राप्त होता है तथा कर्मेन्द्रियों द्वारा क्रियायें होती हैं। सम्पूर्ण शरीर कोषाणुओं तथा ऊतकों से निर्मित है। इसके अलग-अलग कोषाणु होते हैं जैसे पेशीय कोषाणु, नाड़ियों के कोषाणु आदि आदि। १—संयोजक ऊतक

१. योग मनोविज्ञान—अध्याय २६ (डा० शान्तिप्रकाश आत्रेय, सिटी पैलेस, बलरामपुर, गोण्डा, उ०प्र०)
२. अथर्व वेद—का० १०, अ० १, सू० २ का ३१, ३२।
३. विस्तार पूर्वक जानने के लिये देखें
"Yoga as a system for Physical, Mental and Spiritual Health." (Ph. D. Thesis by Dr. S. P. Atreya) unpublished.

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(Connective tissue), २—पेशीय ऊतक (Musclte tissue), ३—तन्त्रिका ऊतक (Nerve tissue) ४—उपकला ऊतक (Epithelial tissue) नामक चार ऊतक होते हैं जिनकी भिन्न-भिन्न क्रियायें होती हैं।

मानव स्थूल शरीर २०६ हड्डियों, तीन प्रकार की पेशियों, हृदय, जिगर, तिल्ली आदि अनेक कोमल अंगों, रक्त, मज्जा, वीर्य आदि तरल पदार्थों, फेफड़ों, प्राणों, उत्सर्जन, तन्त्र, जनन तन्त्र, पाचन तन्त्र, नाड़ी तन्त्र, ग्रन्थि तन्त्र, स्थूल चक्र, कुण्डलिनी, संवेदनाओं, उद्वेगों आदि का अत्यधिक व्यवस्थित एवं जटिल रूप है। स्थूल शरीर की आन्तर व्यवस्था अद्भुत तथा चकित करने वाली है। सारा कार्य पूर्णतया व्यवस्थित रूप से सदैव चलता रहता है। इसके ज्ञान पर ही आगे का ज्ञान आधारित है। आत्म ज्ञान प्राप्त करने में इस अन्नमय कोष का अपना बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस स्थूल शरीर रूपी पुरी में घुसे बिना तो आपका सूक्ष्म जगत् में प्रवेश हो ही नहीं सकता। इसके ज्ञान पर अन्य सब सूक्ष्मतम विषयों का ज्ञान आधारित है। यह सबसे ऊपरी खोल है। जब तक आत्मा के इस खोल की जानकारी नहीं होगी अथवा आत्मा के ऊपर से यह खोल नहीं हटेगा तब तक इसके बाद वाले खोल का न तो ज्ञान ही हो सकता है और न उसको साधक हटाने में ही सफल हो सकता है। अतः यही सबसे पहला फाटक है जिसके द्वारा सूक्ष्म जगत् में प्रवेश होता है। सूक्ष्म जगत् में पहुँचने के लिए वेदों में वर्णित इस देवों की पुरी अयोध्या में प्रवेश करना अनिवार्य सा ही है। विश्व को जानने के लिए साधक योगी को इस स्थूल शरीर का ज्ञान एवं शौच नितान्त आवश्यक हो जाता है क्योंकि जो जो विश्व में है वह सब इस देह में है जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है। यहाँ यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि यह स्थूल शरीर आत्मा नहीं है किन्तु उसका सबसे ऊपरी आवरण है। इसको आत्मा समझना महान् भूल है। इस अन्न से बने रजवीर्य से उत्पन्न अन्नमय कोष के कारण ही अजर, अमर, अजन्मा आत्मा, मृत्यु जरा और जन्म वाला प्रतीत होता है।

प्राणमय कोष

अन्नमय कोष से अधिक सूक्ष्म तथा उसके भीतर का आत्मा का आवरण प्राणमय कोष है। यह पंच कर्मेन्द्रियों तथा पंच प्राणों से निर्मित है। प्राण जीवन के लिये परम आवश्यक है। प्राणमय कोष भी पुरुषाकार है जो कि अन्नमय कोष के भीतर विद्यमान है। इसके कारण ही आत्मा वक्तृत्व, दातृत्व, गति, क्षुधा-पिपासा आदि विकारों वाला न होते हुए भी इन सब विकारों वाला प्रतीत होता है। प्राणमय कोष सूक्ष्म शरीर का एक भाग है। प्राण, अपान, समान, उदान तथा व्यान ये पाँच प्राण हैं। इनमें से प्राण का स्थान हृदय,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपान का गुदा, समान का नाभि, उदान का कण्ठ तथा व्यान का सम्पूर्ण शरीर ही स्थान हैं। इन सब की अपनी क्रियायें भी हैं। प्राण प्रत्यक्ष रूप से अन्नमय कोष से तथा अप्रत्यक्ष रूप से सब कोषों से सम्बन्धित है। यही स्थूल शरीर का जीवन है।[1] सूक्ष्म पंच कर्मेन्द्रियां (वाक्, पाणि, पाद, पायु तथा उपस्थ) तथा पंच प्राणों के संघात को ही प्राणमय कोष कहा गया है। स्थूल शरीर के विनष्ट होने पर यह प्राणमय कोष अन्य स्थूल शरीर में प्रविष्ट होता है। आत्मा को प्राणमय कोष भी समझना भूल है क्योंकि वह सूक्ष्म होते हुए भी चेतना नहीं है। अतः आत्मा प्राणमय कोष नहीं है। यह तो केवल आत्मा के ऊपर के आवरणों में से चौथा आवरण मात्र है। इस आत्मा के आवरण का कारण अविद्या है।

मनोमय कोष

अन्नमय कोष के भीतर प्राणमय कोष है तथा प्राणमय कोष के भीतर मनोमय कोष विद्यमान है। यह आत्मा के ऊपर मन, सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रिय तथा तन्मात्राओं का आवरण है। संशय रहित आत्मा को संशय युक्त आत्मा, शोक-मोह रहित आत्मा को शोक-मोह युक्त आदि रूप से दर्शाता है। इस मनोमय कोष में इच्छा शक्ति विद्यमान है। यह पुरुषाकार होता है तथा प्राणमय कोष की अपेक्षा सूक्ष्म होता है। मन पंच प्राणों की अपेक्षा सूक्ष्म है। यह अहंकार से उत्पन्न तथा आन्तर इन्द्रिय है। मन के सहयोग से ही सब इन्द्रियाँ क्रियाशील होती हैं तथा विषय सन्निकर्ष के द्वारा विषय का ज्ञान प्रदान करती हैं। आत्मा को मनोमय कोष समझना भी उचित नहीं है। आत्मा तो अन्नमय, प्राणमय तथा मनोमय तीनों कोष से भिन्न है। अविद्या के कारण इन कोषों से राग पैदा होता है। आत्मा तो केवल साक्षी मात्र है। मनोमय कोष अपेक्षाकृत सूक्ष्म होते हुए भी आत्मा के ऊपर आवरण ही है। यह आत्मा के ऊपर का तीसरा खोल है।

विज्ञानमय कोष

आत्मा का दूसरा आवरण अहंकार और बुद्धि का है। इसके द्वारा अकर्ता आत्मा कर्त्ता, अविज्ञाता आत्मा विज्ञाता, निश्चय रहित आत्मा निश्चय युक्त, जाति अभिमान से रहित जाति अभिमान वाला हो जाता है। अभिमान ही इस विज्ञानमय कोष का गुण है। यह मनोमय कोष के भीतर आत्मा के ऊपर एक अपेक्षाकृत सूक्ष्म आवरण है। विज्ञानमय कोष भी आत्मा नहीं है। आत्मा तो इसका भी साक्षी है। ज्ञान तो ज्ञेय से भिन्न होता ही है। आत्मा ज्ञाता है। ये

१. शिव संहिता अध्याय ३।३–७।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सभी कोष विनष्ट होने वाले हैं किन्तु आत्मा अपरिवर्तनशील नित्य द्रव्य है। विज्ञानमय कोष, मनोमय कोष तथा प्राणमय कोष मिलकर सूक्ष्म शरीर कहलाते हैं।

आनन्दमय कोष

आत्मा पर सबसे पहला आवरण चित्त और कारण प्रकृति का है। इसके कारण प्रिय-मोद-प्रमोद रहित आत्मा प्रिय, मोद और प्रमोद वाली हो जाती है। यही आनन्दमय कोष कारण शरीर कहलाता है। इसके सहित आत्मा को प्राज्ञ कहते हैं। आत्मा के ऊपर का यह प्रथम आवरण सूक्ष्मतम आवरण इसकी अपेक्षा स्थूल ही हैं। आत्मा यह आनन्दमय कोष भी नहीं है। आनन्दमय कोष तो क्षणिक, परिवर्तनशील वा अनित्य है। आत्मा नित्य अपरिवर्तनशील है। आत्मा जो इसका द्रष्टा है वह स्वयं दृश्य कैसे हो सकता है। बुद्धि में आत्मा का प्रतिबिम्ब पड़ने से जो कि सत्, चित्, आनन्द रूप है, इस आनन्दमय कोष में आनन्द की प्रतीति होती है।

उपर्युक्त विवरण के द्वारा स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य केवल स्थूल शरीर ही नहीं है वह सूक्ष्म शरीर तथा कारण शरीर भी है। मानव पंच कोषों सहित आत्मा है। मानव न तो केवल आत्मा ही है और न केवल स्थूल शरीर ही। वह तो इन सबके संघात से निर्मित विश्व का सब कुछ विद्यमान है।

कृपाशक्ति !

भगवान् की कृपा कभी न छिपनेवाला प्रचण्ड और सुशीतल प्रकाशमय सूर्य है। पापान्धकार में कितनी शक्ति है जो क्षणमात्र भी उसके सामने ठहर चके। भगवान् के मिलने पर पाप नष्ट हो जाते हैं, इसमें तो कहना क्या है। भगवान् से मिलने की इच्छा ही पापों को जला देती है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सौन्दर्यानुभूति

"कुछ ऐसे दृग्विषय हैं जिनको देखकर हृदय में रस का संचार होता है। गगनचुम्बी हिमाच्छादित गिरिशिखर, समुद्र की फेनिल उत्ताल तरंग, प्रपात और निर्झर, तारों से जगमगाता आकाश, शीतल शशिप्रभा यह सब मनोरम हैं। किसी तूलिका से निकला चित्र, किसी कवि के मुख से कुछ शब्द चित्त को बरबस अपनी ओर खींच लेते हैं। हम इन सब में जो मनोहारिता पाते हैं उसको सौन्दर्य कहते हैं। यह अपने-अपने ढंग से सुन्दर है।

सौन्दर्य के सम्बन्ध में बृहत् वाङ्मय है। विशेषज्ञों ने जिन बातों का निरूपण किया है उनमें पड़ने की हमको आवश्यकता नहीं है। यहाँ तो सौन्दर्यानुभूति के विषय में केवल इस बात पर जोर देना है कि उस अवस्था में मनुष्य अपने को भूल सा जाता है। द्रष्टा की दृष्टि के साथ तन्मयता हो जाती है और दर्शन मात्र रह जाता है। जितनी ही तन्मयता होती है उतनी ही गहरी सौन्दर्यानुभूति होती है। सौन्दर्य की यही कसौटी है कि वह चित्त को एकाग्र कर सके। अनुभूति कुछ तो द्रष्टा पर निर्भर करती है, कुछ दृश्य पर। द्रष्टा अपने को जितना ही वासना से शून्य करता है उतना ही उसको सौन्दर्य की अनुभूति होती है। वासना रागात्मक हो या द्वेषरूपा, वह सौन्दर्य पर पर्दा डाल देती है। कामी पुरुष सौन्दर्य को न ढूँढता है, न पाता है, वह रति वासना की तृप्ति मात्र चाहता है। जो क्रोध से पागल हो रहा है उसके लिये कोमल फूल से कोमल बालक में भी सौन्दर्य नहीं है। जिसकी इच्छा कहीं और अटकी हुई है उसके लिये कोई दृश्य सुन्दर नहीं हो सकता है। जब चित्त अपने को किसी वस्तु पर लगा देता है तो उसका पूरा ज्ञान होता है, उसका सारा तत्त्व, सारा रहस्य आप से आप सामने आता है नाटक के प्रेक्षण का पूरा लाभ उसी को मिलता है जो स्वयं अभिनेता नहीं होता। ऐसे प्रेक्षक को प्रतिक्षण वस्तुस्वरूप का कोई नया अनुभव होता है। जो उस मनुष्य को नहीं हो सकता जो उसको भोग का साधना मात्र मानता है।

सौन्दर्यानुभूति की कुंजी स्रोतापत्ति :—अपने को प्रवाह में डाल देना—है। सौन्दर्य—वस्तु का स्वरूप—तब पूरा पूरा सामने आता है जब सौन्दर्य की भी खोज, उसके लिए प्रयास न हो। ऐसा होने पर ही बूँद उस समुद्र को उन्मुक्त कर देती है जो उसके गर्भ में सतत छिपा रहता है। खिले कमल, बादलों में से झाँकती ज्योत्स्ना में, उषा के स्मित में, मयूर के नृत्य में, विधवा के मौन रुदन में, अनाथ की लुटी आँखों में विश्व का रहस्य भरा है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हम इनके सम्बन्ध में सौन्दर्य शब्द सुन कर चौंकते हैं। यह प्रयोग असाधारण सा तो है, परन्तु चौंकने का मुख्य कारण यह है कि हम सौन्दर्य को भोग्यता का अंग मानने के अभ्यासी हो गये हैं।

जो चित्त किसी भी वस्तु के प्रति अपने को इस स्रोतापत्ति अवस्था में डाल देता है, उसको वस्तु का यथावत् अनुभव तो होता है। अर्थात् उससे वह सब सवित् तो प्राप्त होते ही हैं। जो अन्यथा त्यक्त रहते हैं। बुद्धि को उसमें वह शक्तियाँ मूर्तिमती देख पड़ती हैं। जो जगत् को परिचालित करती प्रतीत हो रही है। ऊँचा पहाड़ पत्थरों का ढेर नहीं है। वह शक्ति है जो गुरुत्वाकर्षण को अभिभूत कर रही हैं उस ओज का प्रतीक है जो नीचे खींचने वाली परिस्थितियों को ठोकर मार कर ऊपर उठाता है। वसन्त में कली नहीं चटकती, शिशिर में पत्तियाँ नहीं झड़तीं ब्राह्मी और रौद्री शक्तियाँ काम करती हैं। कमल किंजल्क के बीच में भौंरा रसपान नहीं करता, लक्ष्मी अमृत के कलश लुढ़काती है। कुतिया अपने बच्चों को दूध नहीं पिलाती साक्षात् जगद्धात्री जीवों में प्राण डाल रही हैं। इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाता, इन शक्तियों की कल्पना भी बहुतों को नहीं होती फिर भी इनका साक्षात्कार होता है। देखने वाला अपने साधारण जीवन के ऊपर उठ जाता है। भौतिक जगत् का कुछ अंश पीछे छोड़ देता है; उसको ऋत और सत्य की कुछ झलक मिल जाती है, नानात्व का कुछ उपशम हो जाता है उस एक पदार्थ से थोड़ा बहुत तादात्म्य प्राप्त हो जाता है जो सब का मूल है। सौन्दर्यानुभूति या रसानुभूति एक प्रकार की समाधि है। वह लोग भगवान् हैं जिनको यह अनुभव प्राप्त होता है। एकाध बार स्यात् सबको ही ऐसा हो जाता है, परन्तु किसी-किसी को जन्मना यह सिद्धि प्राप्त होती है ऐसा अनुभव बहुत देर तक नहीं ठहरता, परन्तु जब तक रहता है तब तक चित्त एक अपूर्व उल्लासमय अवस्था में रहता है। जो लोग अपने इस अनुभव को दूसरों तक पहुँचाने की क्षमता रखते हैं वही कवि और कलाकार कहलाने के पात्र हैं।

दृश्य द्रष्टा से भिन्न नहीं है। अविद्या ने ही यह द्वैध उत्पन्न किया है। दृश्य रूप में द्रष्टा को अपना दर्शन होता है। दृश्य में जो भी स्थूल सूक्ष्म लक्षण प्रतीत होते हैं वह द्रष्टा की ही चित्त-प्रसूति हैं। अतः जब चित्त एकाग्र होता है और रस की अनुभूति होती है उस समय द्रष्टा अपने ही सूक्ष्म रूप को देखता है। दृश्य सिमिट कर द्रष्टा के पास आ जाता है।

यों तो विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सर्वत्र सौन्दर्य है, परन्तु कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं। जो चित्त को अपनी ओर जल्दी खींचती हैं। इन में मौलिक शक्तियाँ इस प्रकार व्यक्त होती हैं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि उनका एक बार तो चित्त पर प्रभाव पड़ता ही है। ऊँचे पहाड़, समुद्र की उठती लहरें, खिले फूल, नदी का कल-कल प्रवाह, इन्दुरश्मि-प्रभा, सीकर सिक्त संगमर्मरशिला, नक्षत्रवसना निशा, इनकी ओर चित्त खिंच ही जाता है।

यही बात सच्चे कलाकार की कृति में होती है। कलाकार फोटो नहीं खींचता, वह प्रकृति की भी अनुकृति नहीं करता, उसका उद्देश्य यह है कि सत्य की जो झलक उसको मिली है वह दूसरों को भी मिले। इसके लिए उसको भौतिक साधनों से काम लेना पड़ता है और यह साधन अपने सहज दोषों को छोड़ नहीं सकते। चंचल सक्रिय पदार्थों को धातु, पत्थर या कागज में बाँधना उनको मार डालना है। उसका कौशल इसी बात में है कि कला की सामग्री कला के उद्देश्य को कमसे कम व्यवहृत कर सके। कवि इस बात में भाग्यवान् है, कि उसका उपकरण शब्द है। शब्दों में प्रवाह होता है और वह विचार प्रवाह के प्रतीक होते हैं। पद्य में विभिन्न छन्दों की मात्रा और लय के संघटन से प्राणों में लय उत्पन्न होता है और इससे चित्त की एकाग्रता में सहायता मिलती है। शब्दों का प्रयोग भी ऐसा होता है कि बुद्धि ब्योरे की बातों में न उलझकर उसी तत्त्व पर टिके जहाँ कवि उसे जमाना चाहता है।

काव्य दृश्य हो या श्रव्य, कवि को विभाव और स्थायी से काम लेना पड़ता है; अनुभव और सात्त्विक को दिखाना पड़ता है परन्तु उसका लक्ष्य रस ही रहता है। यदि नायक नायिका या उद्दीपन-सामग्री या रति आदि भाव या पात्रों की चेष्टायें अपने आगे न बढ़ने दें तो कवि की प्रतिभा का दोष है। यह सब तो इसके लिए बहाना मात्र होना चाहिए। किसी पुरुष का किसी स्त्री के प्रति प्रेम, किसी प्रोषितपतिका का विलाप, किसी माता का पुत्र की मृत्यु पर क्रन्दन, किसी महापुरुष की आत्मवलि, किसी संयमी की तपस्या—वर्णन आधार प्रत्येक दशा में कोई व्यक्ति विशेष ही हो सकता है। परन्तु चित्त इन उदाहरणों से उठकर प्रेम, करुणा, त्याग, और वैराग्य के निर्व्यक्ति क्षेत्रों में मड़राने लगता है। श्रोता अपने में पात्र को और पात्र में अपने को देखने लगता है, थोड़ी देर के लिए अनुभूतिका का घेरा निःसीम और उसकी गहराई अथाह हो जाती है।

कलाओं में संगीत का स्थान सबसे ऊँचा है। संगीत साहित्य से भी ऊपर उठता है। शब्द अपने अर्थों और ध्वनियों को नहीं छोड़ सकते। इसलिए वह बुद्धि को कुछ न कुछ उलझाए बिना नहीं रह सकते। संगीत में स्वर और ताल से काम लिया जाता है। जिस स्फोट से भौतिक जगत् निकला है। उसकी पहली अभिव्यक्ति स्वरों में हुई, इसलिए स्वरराशि परा वाणी के बहुत निकट है। अच्छे गाने या बजाने वाले को भाषा में कुछ बतलाने की आवश्यकता नहीं होती, स्वरों का आरोहावरोह प्राण को झंकृत कर देता है, ऐसा प्रतीत होता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हूँ कि देह का बन्धन छूट गया, मैं उठता, फैलता सा जाता हूँ। एक अद्भुत आनन्द अपने में छा जाता है—रस का महोदधि उमड़ आता है। सामवेद के उद्गाता और वीणा के कुशल बजाने वाले अनाहत नाद से स्वर मिलाते हैं, नटवर की पायल ब्रह्माण्डों के स्पंदन को ताल देती है। ऐसे संगीत विशारद भी कम हैं जिनको ताल और स्वर मण्डल पर इतना चमत्कारी अधिकार हो। ऐसे भाग्यवान् भी कम हैं जो संगीत से ऐसा रस पाते हों, परन्तु क्षण भर का भी ऐसा समाधिकल्प अनुभव मनुष्य को पवित्र कर देता है।

कभी-कभी ऐसा अनुभव जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है—प्राण का भीतर की ओर खींचना, साँस का रुक सा जाना, शरीर का शिथिल सा पड़ जाना, अपना ऊपर उठना या चारों ओर फैल सा जाना—ऐसे लोगों को भी हो जाता है जो न कलाकार हैं, न कला के विशेष प्रेमी। ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षण भर में विश्व का सारा रहस्य समझ में आ गया। बाद में इसकी कोई स्मृति नहीं रहती कि समझ में क्या आया था। ऐसे लोग या तो इस अनुभव की ओर उपेक्षा करते हैं, या—इसको ही समाधि की काष्ठा समझ लेते हैं। दोनों ही अवस्थाओं में वह ऐसे दुर्लभ अनुभव को आत्मसाक्षात्कार की सीढ़ी बनाने से वंचित रह जाते हैं। उनको वह पद भी प्राप्त नहीं होता जहाँ कलाकार पहुँचता है। क्योंकि योगी न होते हुए भी सच्चा कलाकार समाधि की निम्न भूमियों में बारंबार प्रवेश कर सकता है।

जिस समय वैज्ञानिक प्रयोक्ता अपने शास्त्र की गूढ़ समस्याओं पर विचार करता है, उस समय थोड़ी देर के लिए उसकी बुद्धि के सामने से भी नानात्व के बादल हट जाते हैं और एकत्व की एक झलक देख पड़ जाती है। यह झलक अस्फुट भले ही हो परन्तु उसमें अद्भुत स्फूर्ति होती है, जिन लोगों ने विज्ञान में नव युग प्रवर्तित करने का श्रेय पाया है उन सब को ऐसा अनुभव कभी न कभी हुआ है। यह वह बिन्दु है जहाँ विज्ञान और कला की रेखाएँ एक दूसरे को काटती हैं।

कुछ ऐसा ही अनुभव उस व्यक्ति को भी कभी हो सकता है जो दार्शनिक समस्याओं पर गम्भीर मनन करता है परन्तु यदि मनन के साथ साथ निदिध्यासन न हुआ तो व्यर्थ है। कोरे अनुमन्ता के सामने सत्य के स्वरूप के कोई नये पटल नहीं आते, वह बुद्धिनिर्माणों, विकल्पों और शब्दों के जंगल में भटकता रह जाता है। जो पण्डित है उसका पद विज्ञान के आचार्य और सच्चे कलाकार से बहुत नीचा है। यदि उसको कभी सत्य की झलक मिली भी तो उस आकाश में उसके भीतर का अँधेरा और प्रगाढ हो उठा होगा। कोरा शास्त्री जिसे विद्या समझता है वह अविद्या का ही भेद है।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देवभूमि कुरुक्षेत्र के बहुमुखी विकास

[श्री गुलजारीलाल नन्दा की रचनात्मक योजना]

कुरुक्षेत्र गीता की पवित्र भूमि है। यह दिल्ली के उत्तर में स्थित है। यह एक विशाल क्षेत्र है जोकि ४८ कोस अथवा लगभग १०० मील में फैला हुआ है। यहाँ बहुत-से अत्यन्त प्राचीन तथा परम्परागत मन्दिर और सरोवर स्थित हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के पहले ही श्लोक में कुरुक्षेत्र को 'धर्मक्षेत्र' कहा गया है।

४८ कोस के क्षेत्र में स्थाण्वीश्वर अथवा थानेसर, पृथूदक अथवा पिहोवा, कपिस्थल अथवा कैथल, फल्गु फराल, पुण्डरीक अथवा पुण्डरी, रामह्लद (रामराय), पिण्डतारक अथवा पिंडारा, सर्पदेवी अथवा सफीदों जैसे तीर्थ-स्थान सम्मिलित हैं। ३६० तीर्थ-स्थानों में से पिहोवा, कैथल, पुण्डरी, सफीदों तथा जीन्द में लगभग १०० तीर्थ-स्थानों की आसानी से यात्रा की जा सकती है। इनमें से कुछ तीर्थ-स्थान तो जीर्णावस्था में हैं और कुछ एक समय के परिवर्तनों से बिल्कुल ही लुप्त हो चुके हैं।

पंजाबी गजेटियर अम्बाला डिवीजन (१८८३-८४) के अनुसार इसकी सम्भावित सीमा सरस्वती के पश्चिम की ओर रत्नयक्ष से पिहोवा तक, पिहोवा से दक्षिण की ओर पुण्डरी तक, उससे पूर्व की ओर नारायणा तक और नारायणा से उत्तर की ओर रत्नयक्ष तक आँकी गई है।

कुरुक्षेत्र, जिसे परम्परागत रूप से भारतीय विचारधारा की जन्मभूमि माना जाता है, किसी समय आर्य संस्कृति का सबसे महत्त्वपूर्ण केन्द्र था। यह माना जाता है कि इसी स्थान पर हिन्दू समाज और धर्म ने अपना वास्तविक स्वरूप धारण किया। महान् नदी सरस्वती सदा इसी क्षेत्र में बहा करती थी। इसी नदी के तट पर ही महर्षि व्यास जी ने अमर महाकाव्य महाभारत की रचना की। महान् वेदों, उपनिषदों तथा पुराणों की रचना भी इसी भूमि में हुई। यहीं पर पाण्डवों तथा कौरवों के बीच धर्म-युद्ध हुआ और भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को प्रेरणा देने के लिए गीता का उपदेश दिया। निःसंदेह इस तीर्थ को भारत के तीर्थस्थानों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण एवं श्रद्धा का स्थान प्राप्त है।

कुरुक्षेत्र का नाम सम्राट् कुरु के नाम पर पड़ा है। वे कौरवों तथा पाण्डवों के धर्मात्मा पूर्वज थे जिनके बीच महाभारत का युद्ध हुआ। इसे 'दैवासुर' संग्राम माना जाता है जिसमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पाण्डव विजयी हुए। कठिन तपस्या करने के बाद कुरु को वरदान मिला जिसके कारण कुरुक्षेत्र पवित्र स्थान बना। जिन लोगों की मृत्यु यहाँ हुई, वे पापमुक्त होकर स्वर्ग सिधारे।

उत्तर-पश्चिम से विदेशी आक्रमणकारियों के लगातार हमलों के कारण इसकी गौरवपूर्ण सभ्यता का विनाश हुआ परन्तु इसके बावजूद कुरुक्षेत्र अमर रहा है और इस नाम को वही महत्त्व और सम्मान प्राप्त है जो समग्र देश के घर-घर में हिन्दू देवी-देवताओं को प्राप्त है। विशाल ऐतिहासिक नगर स्थाण्वीश्वर के ध्वंसावशेषों के पवित्र स्थल पर अब एक छोटासा नगर थानेसर बसा हुआ है। इसमें सभी युगों से देश के कोने-कोने से सारा वर्ष, विशेषकर कुछ वर्षों के बाद सूर्य-ग्रहण के मेले के अवसर पर बड़ी संख्या में तीर्थ-यात्री आते रहे हैं।

स्वर्ण युग

बाद के युगों में, कुरुक्षेत्र और इसका थानेश्वर नगर (थानेसर) फलता-फूलता रहा और गौरव तथा ख्याति प्राप्त करता रहा। यह विद्या तथा संस्कृति का एक बड़ा केन्द्र था और इसका विश्वविद्यालय एक हजार मील से भी अधिक अन्तर पर बसे आर्यावर्त के पूर्वी क्षेत्रों में स्थित नालन्दा से अधिक विस्तृत तथा बड़ा था। सातवीं शताब्दी में राज्य करने वाले सम्राट् हर्ष ने स्थाण्वीश्वर को अपने साम्राज्य के पश्चिमी प्रान्तों की राजधानी बनाया और यह संस्कृत शिक्षा, साहित्य एवं दर्शन का केन्द्र बना जिससे कुछ हद तक संयुक्त भारत बनाने का उसका स्वप्न साकार हुआ।

ईसवी सन् ६२९ से ६४५ के बीच भारत में आनेवाले चीनी यात्री ह्यूनसांग के यात्राविवरण में हमें हर्ष के राज्य की समृद्धि का स्पष्ट ब्यौरा प्राप्त होता है।

यहाँ कलाओं का विकास हुआ जिसका प्रमाण अभिलेखों के अतिरिक्त समय-समय पर की गई खुदाइयों से मिलता हैं। पत्थर के मन्दिरों तथा स्थानों के खण्डहर, जो कि सरस्वती तथा घग्गर के किनारे के गाँवों में मिलते हैं, इस प्रदेश की शक्ति, समृद्धि तथा सम्पत्ति के सूचक हैं। कुरुक्षेत्र की पवित्रता अनेक गुरुद्वारों द्वारा और भी बढ़ गई है जो कि इस स्थान पर यात्रा करनेवाले सिख गुरुओं की याद में बनाये गये थे। सिख धर्म प्रवर्तक गुरु नानक तथा छठे, नवें तथा दसवें गुरु—गुरु हरगोविन्द, गुरु तेग बहादुर तथा गुरु गोविन्दसिंह, दीन-हीन जनता को सत्य-मार्ग दिखाने के लिए कुरुक्षेत्र में पधारे थे।

मध्ययुगीन समय

यह स्थान दिल्ली को जानेवाले मार्ग पर स्थित हैं। इस स्थान पर यात्री, तीर्थ यात्री, लुटेरे तथा विजेता भी आये हैं। इसकी सम्पत्ति तथा धार्मिक महत्त्व के कारण उत्तर-पश्चिम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सीमाओं से आक्रमणकारियों ने आक्रमण भी किये और उनमें से एक महमूद गजनवी था, जिसने आक्रमण करके लूटमार की। महमूद गजनवी के बाद मुहम्मद गोरी आया। तरावड़ी का प्रसिद्ध युद्ध भी इस स्थान से दस मील की दूरी पर हुआ था। मुहम्मद गोरी ने इस युद्ध में वीर पृथ्वीराज को बन्दी बना लिया था। तैमूर ने अपने संस्मरणों में वर्णन किया है कि उसने इस स्थान को इसकी समृद्धि के कारण मटियामेट करने का पहले से ही निश्चय कर लिया था। १८वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही कुरुक्षेत्र युद्ध-क्षेत्र बन गया। दिल्ली के शासन के इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति ने अपने भाग्य की परीक्षा की। सिख मिसलों का शासन स्थापित हो जाने के बाद उत्तर-पश्चिम की ओर से आक्रमण समाप्त होने से परिस्थितियों में स्थिरता आ गई थी। वर्ष १७६५ के लगभग अहमद शाह दुर्रानी पंजाब पर राज्य करने की इच्छा से निराश होकर काबुल वापिस लौट गया था।

पटियाला, नाभा, जीन्द, कैथल तथा लाडवा के सिख राजाओं ने सतलज की ओर अपने राज्य की स्थापना की। अपने राज्यों में इन्होंने साधुओं तथा तीर्थ-यात्रियों के लिए लंगर का प्रबन्ध किया तथा मन्दिरों तथा अन्य धर्म स्थानों को भूमि और धन से सम्पन्न किया। महाराजा रणजीतसिंह ने यहाँ के मन्दिरों को सजाने के लिए उपहार भेंट किये। स्वतन्त्रता के बाद केवल प्रसिद्ध एवं भव्य गीता-मन्दिर (बिरला मन्दिर) का निर्माण हुआ है।

सूर्य ग्रहण मेला

सूर्य-ग्रहण तथा अन्य मेलों पर कुरुक्षेत्र में अपार धार्मिक उत्साह दिखाई देता है, जहाँ हिन्दू धर्म को माननेवाले लाखों लोग इकट्ठे होते हैं। पाण्डव पुराण के अनुसार जो व्यक्ति कुरुक्षेत्र के सरोवरों में सूर्य-ग्रहण के समय स्नान करता है, उसे हजारों अश्वमेध यज्ञों का पुण्य फल प्राप्त होता है। सूर्य-ग्रहण के समय पुराने विचारों के लोग अपने पापों से मुक्ति तथा आत्मा की पवित्रता के लिए अनेक कष्टों को सहन करके भी कुरुक्षेत्र के पवित्र सरोवरों में स्नान करने के लिए आते हैं। इसके अतिरिक्त चन्द्र-ग्रहण, सोमवती अमावस्या, बावन द्वादशी, फल्गु तथा वैशाखी के समय कुरुक्षेत्र में प्रायः मेलों का प्रबन्ध किया जाता है जिसमें भारतवर्ष के सभी स्थानों से तीर्थ-यात्री बहुत बड़ी संख्या में शामिल होते हैं।

योजना की संक्षिप्त रूपरेखा

(उद्घाटन के अवसर श्री गुलजारीलाल नन्दा का भाषण)

कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना एक अनेक पक्षीय उपागम है। कुरुक्षेत्र भारतीय संस्कृति के मूल्यों के अध्ययन एवं प्रचार का केन्द्र बनना चाहिए। इस क्षेत्र में अनुसंधान के लिए सुविधाएँ उपलब्ध करने की संस्था की स्थापना, कार्यक्रम का महत्त्वपूर्ण विषय है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारतीय समाज की जड़ें प्राचीन काल से ही विस्तृत भारतीय सभ्यता में जमी हुई हैं। हजारों वर्षों के परिवर्तशील काल में यह सभ्यता भारतीय जनता को अपनी शक्ति को बनाए रखने के लिए आवश्यक आन्तरिक पोषक तत्त्व प्रदान करती रही है। प्रारम्भिक काल से हमारे शास्त्रों ने माना है कि लोगों की स्थिति और परिस्थिति में एवं इसी प्रकार उनकी विशिष्ट जीवन पद्धति में परवर्तन होना अनिवार्य है। परन्तु इसके साथ-साथ ऋषियों और सन्तों ने कुछ ऐसे अधिभावी आदर्शों, सिद्धान्तों और मूल्यों पर भी जोर दिया है जिनका हमारे जीवन में स्थायी महत्त्व होना चाहिये। हमारी संस्कृति के इन तत्त्वों का जो उत्तरोत्तर ह्रास होता जा रहा है इससे हमारे समाज के दीर्घकालीन अस्तित्व और भविष्य के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया है। योजना के अंग के रूप में प्रतिवर्ष भारतीय संस्कृति सम्मेलन किया जाएगा। सम्मेलन के उद्देश्यों में एक उद्देश्य यह भी है कि भारतीय संस्कृति के उन मार्मिक तत्त्वों की निष्ठापूर्वक खोज की जाय जो हमारे लोगों के नैतिक तन्तुओं तथा आध्यात्मिक गुणों के संधारण एवं पुनरुद्धार के लिए आवश्यक हैं।

यह अनिवार्य और अशंकीय है कि इस देश की बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति और समस्त जनता के लिए उचित मात्रा में सुखसुविधा उपलब्ध करने के लिए विज्ञान तथा प्रोद्योगिकी के प्रचुर साधनों का हम पूर्ण रूप से उपयोग करें। इस तथ्य को भी आँख से ओझल नहीं किया जा सकता कि धर्म की अवनति और नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का पतन होने पर कोई भी समाज न तो वास्तविक आनन्द प्राप्त कर सकता है और न सच्चे अर्थों में जीवन के सुख का अनुभव कर सकता है।

अपनी समस्त दार्शनिक विचारधारा और धार्मिक परम्पराओं में अन्तस्थापित उदारता एवं सहिष्णुता की भावनाओं के लिये हमारा देश प्रसिद्ध है। यदि उन्हें ठीक रूप में समझा एवं प्रस्तुत किया जाय तो वे साम्प्रदायिक तथा सामाजिक शान्ति बनाए रखने और राष्ट्र की सर्वाङ्गीण प्रगति के उद्दीपन के लिए प्रबल तत्त्व बन सकते हैं। आधुनिक समाज के सम्मुख विद्यमान चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रभावी साधन प्रस्तुत करने में भी वे सहायक सिद्ध हो सकते हैं। इस प्रकार जो अनुसंधान कार्य किए जाएंगे सम्मेलन के कार्यक्रमों से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध होगा।

मानव के सुखों की वृद्धि तथा उसका पूर्णावस्था तक विकास करने में सक्षम पवित्र ज्ञान का अनेक प्रकार से उपयोग किया जा सकता है। इसलिए अनुसंधान कार्य से सम्बद्ध एक साधना केन्द्र की स्थापना की जाएगी। आराधना और नैतिक तथा आध्यात्मिक अनुदेश के विविध कार्यक्रमों के लिए प्रस्तावित ज्ञान मंदिर तथा वेद मंदिर अपरिहार्य उपाबन्ध हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारत के दीर्घकालीन इतिहास के प्रत्येक युग में गाय की पवित्रता इसकी धार्मिक परम्परा से अविच्छेद्य रूप से आवेष्ठित है। अधिकांश लोगों की भावनाओं पर इसका प्रबल प्रभाव है। भारतीय सभ्यता के विकास में गाय और गोवंश का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है और आज भी देश को इनसे अपरिमित लाभ मिल रहा है। भारत के संविधान में गौ-रक्षा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

तथापि यह स्पष्ट है कि जब तक व्यापक रूप से आवश्यक व्यावहारिक कदम न उठाये जांये, तब तक गाय के प्रति अपने कर्त्तव्य-पालन से हम सन्तोष नहीं अनुभव कर सकते।

गाय की रक्षा के लिए सबसे प्रभावशाली उपाय यह है कि ऐसे सभी सम्भव कार्य किए जाँय जिससे उसके आर्थिक मूल्यों में वृद्धि हो। इसके लिए इसके नस्ल और सहायता-साधनों में सुधार तथा एक गाय के जीवन-काल में उसके दूध में क्रमशः उच्चतम सीमा तक वृद्धि करना होगा ताकि उसके अन्तिम दिनों तक उसे चारा देने और रहने की व्यवस्था का व्यय वहन करना उचित जान पड़े।

इस उद्देश्य से श्रीकृष्ण गोपालन केन्द्र की स्थापना की जा रही है और उसका शिलान्यास श्री मां आनन्दमयी के कर-कमलों द्वारा १ अप्रैल को होगा। इस केन्द्र का आयोजन आधुनिक पद्धति पर किया जा रहा है और इसमें चार चरणों में सौ गायों तथा सौ बछड़ों के रहने की व्यवस्था की जाएगी।

यह उल्लेखनीय है कि यदि खराब नस्ल की गायों की वृद्धि न रोकी जाय तो आज की स्थिति में गो-रक्षा का कार्य होना कठिन हो जायगा।

गहन वैज्ञानिक और दार्शनिक आधार पर आधारित आयुर्वेद युग-युग से चिकित्सा-पद्धति के रूप में भारतीय जनता की सेवा करता आ रहा है। एक लम्बी अवधि से यह उपेक्षित रहा है और आज भी अपना उचित स्थान प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहा है। सरकार से इसे जिस मात्रा में मान्यता मिली है, उसका स्वागत है; परन्तु आयुर्वेद अपना पूर्ण विकास कर सके, इसके लिए बहुत कुछ करना शेष है। आयुर्वेद के विशिष्ट जनों के संरक्षण एवं मार्गदर्शन में सरकार के सहयोग से गैर सरकारी तौर पर प्रयत्न करके उसका बहुत अधिक विकास किया जा सकता है।

कुरुक्षेत्र-स्वास्थ्य-केन्द्र की कल्पना इस दिशा में एक कदम है। पहली अप्रैल को आयुर्वेदिक औषधालय तथा आदर्श औषध-निर्माण-शाला के उद्घाटन द्वारा एक अल्प आरम्भ होगा। आदर्श औषध-निर्माणशाला शास्त्रीय पद्धति के अनुसार विश्वसनीय उपादानों के प्रयोग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से औषधियों का निर्माण कर आयुर्वेद की सेवा करने की अपनी महत्त्वाकांक्षी प्रयोजन की की प्रथम अवस्था का प्रारंभ करेगा।

कुरुक्षेत्र के सुन्निकट एक गांव में ७५ एकड़ भूमि पर जीवन-निर्वाह केन्द्र की स्थापना की योजना, कार्यक्रम का महत्त्वपूर्ण अंग है। यह अपनी प्रवृत्तियों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप में अनेक परिवारों को रोजगार देने, जीवन के लिए न्यूनतम स्तर प्रदान करने और उनके विकासके लिए अनेक सुविधाएँ उपलब्ध करने की बहुमुखी विकास की एक योजना है। इस केन्द्र से सलाह और सहायता प्राप्त करके इससे भी अधिक संख्या में व्यक्ति और परिवार लाभान्वित हो सकते हैं। पोषाहार, आवास, वस्त्र, शिक्षा और स्वास्थ्य की मूल आवश्यकताओं की उचित मात्रा में तुष्टि समाज के प्रत्येक व्यक्ति और परिवार का जन्म सिद्ध अधिकार माना जा सकता है। यह कार्यक्रम न्यायपूर्ण वितरण और युक्ततम प्रयत्नों के द्वारा एक अत्यन्त छोटे पैमाने पर निदर्शन का एक प्रयास है।

लोगों के जीवन पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालनेवाली संस्थाओं के लिए कुरुक्षेत्र के चुनाव का विशेष कारण हैं। इतिहास के ऊषःकाल से ही कुरुक्षेत्र भारतीय सभ्यता की विकासभूमि रहा है। भारतीय चिन्तन एवं परम्पराओं में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसका उद्गम, विकास तथा परिपाक का स्थल रहा है। गीता का सन्देश भी यहीं दिया गया। सौ मील (४८ कोस) के क्षेत्रफल में कुरुक्षेत्र ऐसे स्थानों से भरा पड़ा है जो उन प्राचीन ऋषियों के नामों से सम्बन्धित हैं, जिन्होंने हमें शास्त्र और प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ प्रदान किये हैं। इस क्षेत्र में प्राचीन काल के अनेक मन्दिर और सरोवर अवस्थित हैं। सूर्य-ग्रहण के अवसर पर और अन्य मेलों के अवसर पर भारत के सभी भागों से यहाँ पर लाखों लोग एकत्र होते हैं। इन तथ्यों के आधार पर यह आशा की जा सकती है कि कुरुक्षेत्र अब भी नई शक्तियों के उद्भव का केन्द्रस्थल बन सकता है जिससे हमारे इतिहास के समस्त मूल्यवान् तत्त्वों एवं नवीन विकास के लिये जो कुछ भी लाभदायक प्रतीत हो रहा है उसका समन्वय किया जा सके।

भारतीय संस्कृति सम्मेलन

(३१ मार्च से २ अप्रैल, १९७२)

३१ मार्च से २ अप्रैल तक कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना के सम्बन्ध में हुए समारोहों में आशातीत सफलता प्राप्त हुई। इसका कारण भगवान् की कृपा और सन्तों का आशीर्वाद है।

थानेश्वर के छोटे नगर ने इस योजना को अपना मानकर अपनाया। लोगों में काफी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उत्साह था। और उन्होंने अतिथियों के स्वागत के लिये पर्याप्त तैयारी करने में और विविध समारोहों के लिये कुछ भी प्रयत्न करना शेष नहीं रखा।

कार्यक्रमों की शृङ्खला का प्रारम्भ हरियाणा के मुख्य मन्त्री श्री वंशीलाल द्वारा प्रदर्शनी के उद्घाटन से हुआ। इस अवसर पर भाषण करते हुए मुख्य मन्त्री ने कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना की विभिन्न प्रवृत्तियों के लिये अपनी सरकार का पूर्ण समर्थन घोषित किया।

कुरुक्षेत्र और समस्त प्रखण्ड के लिये सतसाईं बाबा की उपस्थिति के कारण प्रथम अप्रैल का अपराह्ण अविस्मरणीय अनुभव का अवसर हुआ। साईं बाबा उस दिन आरम्भ किये गये कार्यों का अपना समर्थन एवं आशीर्वाद देने के लिये विशेष रूप में कुरुक्षेत्र आये। अपने प्रवचन में साईं बाबा ने योजना के महत्त्व की ओर लोगों को आकर्षित किया और हर सम्भव सहायता देकर हमें सफल बनाने के लिये लोगों को उपदेश दिया।

३१ मार्च को स्वामी गंगेश्वरानन्द ने भारतीय संस्कृति सम्मेलन का उद्घाटन किया। अपने उद्घाटन भाषण में स्वामीजी ने भारतीय संस्कृति के महत्त्वपूर्ण पक्षों को बतलाया और उसके आवश्यक तत्त्वों पर प्रकाश डाला। मानव प्रवृत्तियों के लक्ष्य के रूप में उन्होंने आध्यात्मिक अनुभूति पर जोर डाला। जीवन और उसके उद्देश्य की भारतीय दृष्टि भौतिक सत्ता से मुक्ति में परिणत मानव की सर्वांग उन्नति के लिये एक विस्तृत उपागम प्रस्तुत करता है। उनके अनुसार वास्तविक और स्थायी आनन्द प्राप्त करने की दिशा में भारतीय संस्कृति का यह विशेष योगदान है।

बाद के सत्रों में कुछ निबन्ध विस्तारपूर्वक पढ़े गये और शेष लेखकों द्वारा सारांश रूप में प्रस्तुत किये गये। विभिन्न विषयों पर जो चर्चाएँ हुईं वे शिक्षाप्रद रहीं, और उन्होंने जीवन्त रुचि उत्पन्न की। ३१ मार्च के अपराह्ण में वाराणसेय संस्कृत विश्व-विद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति पंडित गौरीनाथ शास्त्री ने अपराह्णोत्तर सत्र की अध्यक्षता की। उन्होंने पहले पढ़े हुए निबन्धों पर अपनी टिप्पणी की और गीता के उपदेश का सार दिया। उन्होंने कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना—विशेषतः भारतीय संस्कृति केन्द्र से सम्बन्धित कार्य-क्रम और इस सम्मेलन की प्रशंसा की। २ अप्रैल को कार्यवाही की विशेषता डा० राघवन का संबोधन था। यह दो घंटे तक चला। इस सत्र का सभापतित्व कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने की। देश के विभिन्न भागों के लेखकों से निबन्ध प्राप्त हुए थे।

बाहर के बहुत से लोगों के लिए सम्मेलन में भाग लेना सम्भव नहीं हो सका क्योंकि हम उनके यात्रा व्यय के वहन करने की स्थिति में नहीं थे। आशा है जब अगले वर्ष सम्मेलन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

होगा तब इस बाधा को दूर कर दिया जायगा। निबन्धों और उनके लेखकों की सूची संलग्न है।

सम्मेलन के लिए जिन सुविधाओं की आवश्यकता थी उन्हें कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय ने उपलब्ध कराया। डा० कमलेश (संयोजक), डा० बी० रावमूर्ति, डा० रणसिंह शर्मा, श्री हिम्मतसिंह सिन्हा, श्री होशियारसिंह मलिक, डा० मधुसूदन राव, की एक संचालक समिति ने विभिन्न चरणों में सम्मेलन के प्रबन्ध की देखभाल की।

अनुसंधान विभाग

स्वामी गणेशानन्द जी, डा० गोपिका भट्टाचार्य, डा० युद्धवीर सिंह, डा० रामेश्वर लाल खंडेलवाल और डा० महादेव प्रसाद (संयोजक) की एक स्थायी समिति बनाई गई है। यह भारतीय संस्कृति केन्द्र में अनुसंधान का कार्य करेगी। गत १५ अप्रैल की बैठक में इस समिति ने अनुसंधान की योजना तैयार करने की दृष्टि से चर्चा प्रारंभ की। प्रयोगात्मक तौर पर यह निश्चय किया गया कि प्रथम चरण में निम्न लिखित विषयों पर अनुसंधान होगा।

१—भारतीय संस्कृति में कुरुक्षेत्र का स्थान—इसका इतिहास और पुरातत्त्व।

२—श्रीमद्भगवद्गीता

३—सांख्य

गीता के सम्बन्ध में इस पर सहमति हुई कि गीता पर अप्रकाशित भाष्यों को संग्रह करने के लिये तुरत पग उठाये जांय।

शिक्षा और प्रचार विभाग

एक सत्संग समारोह, जिसमें पं० कपीन्द्र मुनि मुख्य अतिथि थे, एक बहुत बड़ा जनसमूह कीर्तन में सम्मिलित हुआ और भगवान् श्री रामचन्द्र तथा भगवान् श्रीकृष्ण के जीवनवृत्त पर आधारित प्रवचनों को दत्तचित्त से श्रवण किये। इस अवसर पर यह घोषणा की गई कि कुरुक्षेत्र नगर और कुरुक्षेत्र परिमंडल में सत्संग मंडलों का गठन होगा और सदस्यों को गो-सेवा, धर्म प्रचार और अन्धविश्वास तथा अनैतिक रिवाजों से लड़ने के काम सौंपे जायेंगे।

श्री श्री माँ आनन्दमयी द्वारा श्री कृष्ण गोपालन केन्द्र का शिलान्यास

१ अप्रैल को ११ बजे दिन में पूजन समारोह के पश्चात् श्री श्री आनन्दमयी मां के करकमलों द्वारा शिलान्यास किया गया। मां पूजन समारोह में भी सम्मिलित हुई।

शुभारम्भ-सत्र को श्री श्री आनन्दमयी मां ने अपनी उपस्थिति से महिमा-मंडित किया और स्वामी गणेशानन्द जी ने उसे संबोधित किया। स्वामी जी ने उन उद्देश्यों पर प्रकाश डाला जिसकी पूर्ति गोपालन केन्द्र के द्वारा अभिप्रेत है और कहा कि यद्यपि केन्द्र के विकास में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धनिक वर्ग के दान का स्वागत किया जायगा तथापि हम बहुसंख्यक लोगों के छोटे-छोटे दान को अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

भारतीय समाज के नैतिक एवं आध्यात्मिक पुनरुज्जीवन की दिशा में कुरुक्षेत्र के आह्वान पर भारतीय संस्कृति और सभ्यता के इस प्राचीन स्रोत का उपयोग करके कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना रूप धारण कर रही है। कुरुक्षेत्र के सन्देश में मानव कल्याण से सम्बन्धित सब कुछ है। इसका मुख्य स्वर आध्यात्मिक प्रबोधन है।

कुरुक्षेत्र में जिस कार्यक्रम को लिया गया है उसका प्राथमिक उद्देश्य देश की स्थिति एवं उसकी समस्याओं के समाधान के सन्दर्भ में इस भूमि की युगों पुरानी संस्कृति के साधनों को महत्त्व प्रदान करना है। यदि भारतीय संस्कृति के माध्यम से इस महान् मिशन को सफल होना है तो सामूहिक प्रयत्नों के फलस्वरूप इसे अपना स्वरूप प्राप्त करना है।

अब सर्वप्रथम आवश्यता यह है कि हर एक के सम्बन्ध में धर्म क्या है—इसे लोग जानें, इसके अतिरिक्त अधिकांश लोगों के लिए धर्म-मार्ग का अनुसरण करने के लिए आवश्यक ज्ञान एवं शक्ति तभी प्रकट होगी जब उनके हृदय में दिव्य शक्ति की भक्ति का आविर्भाव हो। तभी हमारा समाज आर्थिक तथा सामाजिक मोर्चों पर बढ़ने के लिए सुसज्जित होगा। यही हमारे देश और भारतीय राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने तथा बाह्य खतरों एवं आन्तरिक संकटों से सुरक्षित रखने का सुनिश्चित तरीका है। अपनी संस्कृति तथा परम्परा में गहन रूप से जड़ जमाए बिना वास्तविक देश प्रेम नहीं हो सकता।

संस्कृति केन्द्र योजना का हृदय है। यह केवल कुरुक्षेत्र के लिए कार्यक्रम नहीं है। इसका कल्याणकारी प्रभाव सारे देश में फैलेगा।

इस योजना में गोपालन केन्द्र एक और गोशाला नहीं होने जा रहा है। गोरक्षा के लिए पद्धतियों को प्रस्थापित करने तथा हर सम्भव पग उठाने के औचित्य को सिद्ध करने के लिए इसे एक प्रयोगशाला की भूमिका अदा करनी है। जब देश में बहुत से घरों में गाय की पूजा होगी और उसकी हर जगह प्यार से देखभाल की जायेगी तभी गो और गोवंश की पूर्णरक्षा की जनता की आकांक्षा की पूर्ति हो सकेगी। यही वह उद्देश्य है जिसे इस केन्द्र को पूर्ण करना है।

स्वास्थ्य केन्द्र का उद्देश्य उन सिद्धान्तों तथा प्रयोगों का व्यापक प्रसार करना है जो जो शरीर और मन के वास्तविक स्वास्थ्य के आधार हैं। अपने समन्वित उपगमों के द्वारा आयुर्वेद मानव शरीर गठन को रोगों से बचने और स्फूर्ति पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने के उपाय प्रस्तुत कर सकता है। अवसर मिले तो आयुर्वेद की वह क्षमता तथा उदार दृष्टि है कि वह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi.

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वर्तमान समय में वैज्ञानिक अनुसंधानों में जो कुछ उत्तम एवं आवश्यक है उसे स्वीकार एवं आत्मसात् कर ले। केन्द्र का उद्देश्य जनता के लाभार्थ आयुर्वेद की महान् सम्भावनाओं का व्यावहारिक उपयोग करना तथा कुरुक्षेत्र को आयुर्वेद के विकास का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बनाना है।

योजना सफल होगी—मेरी यह आशा और आश्वासन उन सन्तों के आशीर्वाद पर आश्रित हैं जो भगवान् में ही रहते हैं और जहाँ कहीं वे जाते हैं उसके सन्देश को ले जाते हैं। कुरुक्षेत्र में वे सुविधायें पैदा करनी होंगी जिससे उनमें से जितने सम्भव हो सकें वहाँ आते-जाते रहें और कम से कम कुछ तो इसे अपना स्थायी निवास बना लें। कुरुक्षेत्र सरोवर की सीमा से जुड़ा हुआ ८ एकड़ का भूखण्ड है जिसे अब तक साधना फार्म कहा जाता रहा है अब साधना आश्रम हो जाएगा यहाँ सिद्ध महापुरुषों अथवा साधना में लगे जनों के लिये जो यहाँ रहना पसन्द करेंगे कुटिया बनेंगी। कुरुक्षेत्र एक छोटा स्थान है। यहाँ चलनेवाली प्रवृत्तियों से निश्चय ही इस क्षेत्र के निवासियों को लाभ होगा। लेकिन वस्तुतः वे भारत की समस्त जनता के लिए हैं।

आवश्यकताएं और साधन

यद्यपि परियोजना का केन्द्र कुरुक्षेत्र है तथापि इसका अखिल भारतीय स्वरूप है। इसे एक आन्दोलन के रूप में फैलाना है। इसके लिए कार्यकर्त्ता और साधन सारे देश से लिये जायेंगे। साधन वस्तु अथवा नकद के रूप में लिया जायगा। वे किसी विशेष उद्देश्य के लिये उद्दिष्ट किये जा सकते हैं अथवा सामान्य रूप से कार्यक्रम चलाने के लिये उपलब्ध किये जा सकते हैं। सरकारी सहायता प्राप्त करने योग्य योजनाओं को सरकारी स्रोत से सहायता की आशा की जा सकती है। कोश का अधिकांश तो जनता से ही आना है। विद्यमान ट्रस्ट इन कार्यक्रमों को उदार सहायता के योग्य पा सकते हैं। कतिपय विषयों के लिए नए प्राभूत बनाये सकते हैं।

विकास और रख-रखाव की आवश्यकताओं पर अलग-अलग विचार करना होगा। योजनाओं में से कुछ ऐसी होंगी जिन्हें निरन्तर सहायता की आवश्यकता होगी। एक बार भवन निर्माण हो जाने, साज सज्जा उपलब्ध हो जाने और गो समुदाय प्राप्त हो जाने पर संवर्धन के क्षेत्र में श्री कृष्ण गोपालन केन्द्र को अपने आवर्त्ती व्यय से अधिक वहन करने में समर्थ होना चाहिये। चार चरणों में सौ से एक सौ बीस गायों को रखने की हमारी योजना प्रथम चरण में जून तक भवन तैयार हो जायगा। इस चरण में ढ़ाई हजार रुपये प्रति गाय की दर से २२ गायों को खरीदने के लिये धन की आवश्यकता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शेष तीन चरणों की प्रगति इस पर निर्भर करती है कि दान कितनी तेजी से मिलता है। भवन निर्माण का व्यय लगभग एक लाख रुपया होगा। हमें ८० गायों की आवश्यकता होगी। मेरी आशा है भेंट प्राप्ति में कमी नहीं रहेगी।

जब तक एक ओर गाय की नश्ल में सुधार और दूसरी ओर निकृष्ट पशुओं की वृद्धि पर रोक करके परिणाम स्वरूप उनके लोप के द्वारा समस्या के समाधान होने तक गोरक्षा अर्थात् अनुपयोगी गायों के संभालने में वस्तु और नकद रूप में दान जारी रखने होंगे। इस समय हमने अपने कार्यक्रम के अंग के रूप में ५० गौओं के संभालने का सोचा है।

जहाँ तक श्री कृष्ण कुरुक्षेत्र औषधालय का प्रश्न है इसका प्रारम्भिक और आवर्त्ती व्यय का वहन बम्बई के एक मित्र करेंगे। आदर्श औषधि निर्माणशाला का पूंजीगत व्यय लगभग दो से तीन लाख रुपये होंगे। इसके चलने से कुछ आय भी होगा। शायद यह बड़ी न हो सके क्योंकि ताजे और शुद्ध उपादानों पर हम जोर देंगे जिससे लागत व्यय निश्चय ही बढ़ जायगा।

आयुर्वेदिक रुग्णालय और महाविद्यालय को अभी तैयार किया जाना है। ऐसी आशा है कि इस मद में जो खर्च होगा उसकी अधिकांश में पूर्ति सरकारी स्रोतों से होगी।

आयुर्वेद में अनुसंधान के कार्य क्रम में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा बीज प्रदान किया गया है। यह कहाँ तक बढ़ सकता है और कहाँ तक इसे बढ़ना चाहिये—यह आगामी कुछ महीनों में प्राप्त अनुभव पर आधारित होगा। जो कुछ हो, परिमित पैमाने पर ५० हजार रुपया प्रति वर्ष से कम खर्च नहीं होगा।

न्यूनतम स्तर पर स्वास्थ्य शिक्षा कार्य क्रम को १२ हजार रुपया वार्षिक की आवश्यकता होगी। परियोजना के अस्तित्व का मूल प्रयोजन भारतीय संस्कृति केन्द्र है। अनुमान है कि लगभग दो साल में भारतीय संस्कृति भवन का निर्माण हो जायगा।

कुरुक्षेत्र-धर्मक्षेत्र सदैव के लिए कुरुक्षेत्र है। यहाँ का एक-एक कण धन्य है। यह भगवद्गीता के आविर्भाव का मूक साक्षी है। भगवान् की इच्छा से यहाँ पर सामान्य हित के कुछ ऐसे चिरस्मरणीय कार्य हो रहे हैं जिनकी परिणति सब के हित में होगी।

कुरुक्षेत्र बहुमुखी विकास योजना

(मानवधर्म मिशन और नवजीवन संघ के तत्त्वावधान में)

प्रवृत्तियाँ

१—श्री कृष्ण गोपालन केन्द्रः

(अ) गोसंवर्द्धनः : इसमें चार चरणों में उत्तम प्रकार की सौ गायें और सौ बछड़ों

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

को रखने की व्यवस्था होगी।

(ब) आदर्श दुग्धशाला : आधुनिक पद्धति पर

(स) गोसदन : वृद्ध और असमर्थ गायों तथा बैलों को चारा और आश्रय की व्यवस्था। प्रथम चरण में २५ गायों के लिए, जिसमें आवास निर्माण भी शामिल है। २ लाख रुपया लगेगा। आगे के चरणों में २ लाख के हिसाब से कुल ५ लाख रुपये लगेंगे।

शिलान्यास : चैत्र २०, २०२८, शनिवार (१ अप्रैल, १९७२ को होगा।)

२–भारतीय संस्कृति सम्मेलन

(अ) अनुसंधान विभाग

(ब) साधना विभाग

(स) वेद मंदिर

(द) ज्ञान मंदिर : प्रवचन और अन्य शैक्षणिक प्रवृत्तियों के लिए एक सभा भवन

(थ) भारतीय संस्कृति सम्मेलन (प्रथम सम्मेलन का उद्‌घाटन ३१ मार्च को)

३–कुरुक्षेत्र स्वास्थ्य केन्द्र

(अ) औषधालय
(ब) आदर्श औषध निर्माणशाला
} चैत्र २०, २०२८ (१ अप्रैल १९७२ को उद्‌घाटन

(स) रुग्णालय

(द) आयुर्वेदिक अनुसंधान विभाग

(ह) आयुर्वेदिक अनुसंधान विभाग

(फ) स्वास्थ्य शिक्षा

(केन्द्र के प्रारम्भिक व्यय के लिए १० से १२ लाख रुपये तक का कोष एकत्र करना होगा।

४–जीवन निर्वाह केन्द्र

५–साधना, आश्रम और सन्त सदन।

(साभार 'नवजीवन-पथ' से)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री अरविन्द और उनका योग

श्री दुर्गाशंकर महलानवीस

"मेरा जीवनचरित कोई लिख नहीं सकता है क्योंकि मनुष्य दृष्टि में उस जीवन का वहिरंग रूपायण हुआ ही नहीं" श्री अरविन्द जी ने ही ऐसा कहा था। फिर भी उनके जीवन का अन्तर्निहित जो सत्य प्रकाश में आया है वह "एक अणु के अन्तस्तल में एक महाकाश सहस्र सौर रश्मियों के प्रकाश से जाज्वल्यमान हो रहा है।"[1]

"श्री अरविन्द आजन्म योगी हैं। यह योग अनुत्तर ज्योति के स्पर्श से सहस्रदल कमल का अपने आप खिलना। यह योग अखण्ड परिपूर्ण नित्य जाग्रत चेतना का सहज योग जिसमें सम्पूर्ण योग विधियों का सुसज्जित समाहार है। यह शिवाभिसारिणी महाप्रकृति का नित्ययोग है। इसीलिये उनकी भाषा में सारा जीवन ही योग है।"

श्री अरविन्द उनका जीवनचरित लिखने के लिये निरुत्साहित करने पर भी, उनका जीवन, और उपलब्ध सत्य जानने की चाह आज स्वीकार किये बिना नहीं रहा जाता। सिर्फ भारत में ही नहीं सारे विश्व के गुणियों के मुग्ध जिज्ञासा से। इस युक्तिवादी निरीश्वर युग में भी वे युग के ऋषि माने जाकर महान् व्यक्तियों की श्रद्धा पाकर गये। मनीषियों का चित्त जीत लिया। श्री अरविन्द की स्मृतियों को छानते हुए लब्धप्रतिष्ठ साधक श्री दिलीपकुमार राय ने अनिन्दनीय एक लेख में हर अध्याय में, मुनि रूप से, ज्ञानी रूप से, प्रेमी रूप से, योगी रूप से, गुरु रूप से, कवि रूप से, आखिर ऋषि रूप से दुर्लभ प्रशस्ति रचना करके भी स्वीकार करते हैं कि श्री अरविन्द का गुणाभरण जानने का वृथा प्रयास है।[2] इस वृथा प्रयास से भी हम लोग जिस रहस्य को पाते हैं वे प्रसादगुण में, मर्म्मग्राहिता में, साधक चित्त की एक महान् स्तुति है। श्री अरविन्द इन स्तुतियों के योग्य वरणीय पुरुष हैं। रवीन्द्रनाथ उनकी अमर कविता में स्वयं उसी प्रकार श्रद्धार्घ्य दिये हैं—"अरविन्द रविन्द्रेर लइ नमस्कार।"

श्री अरविन्द का जन्म १५ अगस्त १८७२ ई० में कलकत्ते में हुआ था। पिता श्री कृष्णधन घोष I. M. S., M. P. एक यशस्वी डाक्टर थे। पाश्चात्य शिक्षा पाकर पाश्चात्य जीवन-यात्रा पर एक आकर्षण होने से—उसी आदर्श में अपने पुत्र को शिक्षा देने को उद्यत

---

१. अनिर्वाण।

२. "युगर्षि श्री अरविन्द" श्री दिलीप कुमार राय।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुए। ५ साल की उम्र में दार्जिलिंग में एक मिशनरी स्कूल में श्री अरविन्द की शिक्षा की व्यवस्था की गयी। घर में भी एक ब्रिटिश नर्स की देखरेख में रहते थे। कानभेण्ट में भी बंगला सीखने की सुविधा नहीं थी। अतः उनकी मातृ भाषा अंग्रेजी ही हो गयी। उनके पिता यही चाहते थे। फिर ७ साल की उम्र में १८७९ ई० में उनके दोनों बड़े भाई विनय और मनमोहन के साथ इनके पिता इन्हें मैनचेस्टर ले गये। वहाँ एक पादरी परिवार में रहते हुए उनका 'विद्याभ्यास ईसाई रीति से विजातीय प्रभाव में होने लगा। दोनों भाई उनके दूसरी जगह रहते थे। हर एतवार को गिर्जा में जाना पड़ता था। यहाँ पर श्री अरविन्द का पारिवारिक नाम ऐकरायड अरविन्द घोष (Ayk Royd A. Ghosh) पड़ा। घर के मालिक लैटिन भाषा के अच्छे जानकार थे। उनकी चेष्टा से श्री अरविन्द लैटिन, अंग्रेजी और फ्रेंच भाषा के अच्छे जानकार हो गये। ६ साल मैनचेस्टर में बिताकर १८८५ ई० में वह लन्दन में आकर सेण्टपलस् स्कूल में भर्ती हो गये। हेडमास्टर साहब इनका लैटिन अंग्रेजी का विशेष ज्ञान देखकर इसके लिए जरूरी ग्रीक भाषा की शिक्षा देने लगे कि योग्यता के साथ विद्यालय में आगे बढ़ सकें। उनको श्री अरविन्द ने निराश नहीं किया। थोड़े ही अर्से में उनको मालूम हो गया। जब ग्रीक और लैटिन में कविता बनाकर उन्होंने विद्यालय से ईनाम प्राप्त किये। इसके लिए उनको विद्यालय से १८८८ ई० में सोने का मेडल मिला। इसी बीच उन्होंने इटालियन जर्मन स्पेनिश और रशियन भाषा सीखना शुरू किया।

परन्तु उनको इसी समय धन की कमी हो गयी। पिता थे सिविल सर्जन नामी डाक्टर; काफी पैसा कमाने पर भी मित्र, स्वजन, कुटुम्ब, पड़ोसी, दुखियों को मदद देने में पूरा पैसा निकल जाता था, बुढ़ौती में अपने तीन बच्चों को ठीक समय पर रुपया भेज नहीं सके। हालत इतनी खराब हो गयी कि श्री अरविन्द को काफी कर्ज हो गया। इस समय सारे दिन में, सबेरे चाय डबल रोटी और सैण्डविच और दिन को एक पनिका सैभलय डबल रोटी और चाय। परन्तु उन्होंने धैर्य के साथ इसे सहकर पढ़ने में गफलत नहीं की।

१८०९ ई० में सेण्टपलस् स्कूल से केम्ब्रिज विश्वविद्यालय की एडमिशन परीक्षा में सर्वप्रथम होकर पास करने से उनको वजीफा मिला। और उसी विश्वविद्यालय के किंग्स कालेज में भर्ती हुए। कवि रावर्ट ब्राउनिंग के पुत्र कवि अस्कार ब्राउनिंग वृत्ति परीक्षा के परीक्षक रहे। उन्होंने श्री अरविन्द को कहा, १३ साल से मैं इस वृत्ति परीक्षा का परीक्षक हूँ। इस समय के अन्दर तुम्हारे उत्तरपत्र जैसा उत्तरपत्र नहीं देखने में आया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसके बाद श्री अरविन्द ने इसी साल १८ साल की उम्र में I. C. S. परीक्षा देकर चौथा स्थान प्राप्त किया। इस परीक्षा में लैटिन ग्रीक भाषा के प्राचीन श्रेष्ठ नम्बर को अतिक्रम करके एक नया रेकार्ड स्थापित किया। परन्तु सिविल सर्विस के आकर्षणीय पद के लिए आग्रहान्वित नहीं थे। इसीलिए घुड़सवारी की परीक्षा के दिन गैरहाजिर रहे। इसलिये पास नहीं हुए। पिता के स्वप्न को व्यर्थ करने की उनकी इच्छा न होने पर भी इसी कारण अनुपस्थित रहकर इससे जान बचाई।

पाश्चात्य जीवन के आदर्श का अभ्यस्त होने पर भी श्री अरविन्द ब्रिटिश साम्राज्यवाद से ऊब गये थे। मैनचेस्टर में रहते समय भी इन्होंने "रिवोल्ट आफ दि इसलाम" नाम का किताब कई बार पढ़ी थी।[१] इसी से ही उनके किशोर मन में भविष्य जीवन का मसाला इकट्ठा हुआ था। लन्दन में वह और उनके भाई "लोटास् ऐण्ड डैगर" "कमल और तलवार" नामक भारत को स्वाधीन करने की इच्छावाली एक गुप्त समिति के सभ्य थे। कैम्ब्रिज के "भारतीय मजलिस" नाम की सभा में भी ये राजद्रोही भाषण देते थे। बाद में १९०५ ई० में इनकी धर्म्मपत्नी मृणालिनी देवी को लिखे १ पत्र में उनका जन्म से ही, देशोद्धार की प्रेरणा की बात स्वीकृत हो गयी थी। "मैं जानता हूँ इस पतित जाति को उद्धार करने का बल मेरे पास है, पर शारीरिक बल नहीं, तलवार बन्दूक से मैं लड़ने नहीं जा रहा हूँ। मुझमें ज्ञान का बल है। क्षात्रतेज एकमात्र तेज नहीं है ब्रह्मतेज भी है वह तेज ज्ञान में प्रतिष्ठित है। यह भाव नया नहीं है; आजकल का भी नहीं है इस भाव को लेकर मैं जन्मा था। यह भाव मेरे रोम-रोम में है। भगवान् ने इस महाव्रत के साधन के लिये मुझे पृथिवी में भेजा था।" चौदह साल की उम्र में बीज का अंकुर फूटने लगा। १८ वर्ष की उम्र में इसकी दृढ़ और अचल प्रतिष्ठा हो गयी थी।

इस चिट्ठी से मालूम होता है कि १८ वर्ष की उम्र में ही यह भारत माता की मुक्ति के लिये पक्का व्रत धारण किया था, इसमें सन्देह नहीं रहता। I. C. S. परीक्षा भी १८ वर्ष की उम्र में ही दी थी। घुड़सवारी की परीक्षा न देने का कारण भी स्पष्ट हो जाता है।

२ साल बाद श्री अरविन्द क्लासिकल ड्रायपोस परीक्षा में सम्मान के साथ पास हो गये और यूनिवर्सिटी में प्रथम आये।[२] सिर्फ पाठ्यपुस्तक में ही ये लगे नहीं रहते। विदेश-वास का पूरा उपयोग किया था। यूरोप की कड़ी प्रचलित प्रधान भाषाओं को सीखकर उन्हीं

१. श्री मोतीलाल राय के समक्ष श्री अरविन्द का कथन।
२. "भारत पुरुष अरविन्द" श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भाषाओं के माध्यम से पाश्चात्य जगत् के साहित्य, इतिहास, दर्शन आदि का अध्ययन करते थे। सभ्यता के उदय काल से यूरोप के साथ इनका परिचय था गम्भीर और अन्तरदर्शी।

महाराजा बड़ौदा जब विलायत में थे—श्री अरविन्द की प्रतिभा की बात उन्होंने सुनी थी। महाराजा से परिचयपत्र पाकर श्री अरविन्द ने नौकरी के लिये उनसे साक्षात्कार किया और महाराजा के प्रश्न के उत्तर में २००) दो सौ रुपये मासिक वेतन से वह सन्तुष्ट होंगे ऐसा कहा। चौंके हुए महाराजा उनको लेकर १८९२ ई० में भारत में वापस आये। शीघ्र ही वह महाराजा के प्रिय पात्र बन गये और क्रम से राजस्व विभाग, महाराजा का सेक्रेटरी, बड़ौदा कालेज के अंग्रेजी का अध्यापक, बाद में वाइस प्रिंसिपल तक हो गये। १३ साल वह बड़ौदा में रहे। इसी समय में श्री अरविन्द ने भारतीय शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, प्राचीन और आधुनिक भारत की आदर्श साधना में मन लगाया। भारतीय कोई भी भाषा वह नहीं जानते थे। असामान्य प्रतिभा के बल से धीरे-धीरे संस्कृत, गुजराती, मराठी, बंगला और मूंड़ी नामक एक प्रान्तीय भाषा भी उन्होंने सीख ली। वेद उपनिषद् आदि ग्रन्थों की निःसन्दिग्ध व्याख्या इसका प्रमाण है। यह उनके भाषाज्ञान और मर्म्मग्राही शक्ति, असाधारण प्रतिभा को सूचित करता है। अवकाश समय में ये अंग्रेजी कविता लिखते थे। ये कवितायें बाद में पाण्डेचेरी से प्रकाशित की गयी थीं।

विलायत में रहते हुए ही श्री अरविन्द की विद्यावेत्ता की ख्याति भारत में सब जान रहे थे। इन ख्यातियों से सुखी होकर उनके भारत में आने की राह देख रही थी एक तपस्विनी बंगनारी भूपालचन्द्र वसु की कन्या श्रीमती मृणालिनी देवी। सर रमेशचन्द्र दत्त और उनके मित्र बंगवासी कालेज के प्रतिष्ठाता श्री गिरीशचन्द्र वसु के प्रस्ताव से श्री अरविन्द ने इन्हीं को अपनी पत्नी रूप से ग्रहण किया था १९०२ ई० में। किन्तु वह सती अल्पायु रहीं। बंगाल के उपद्रवों से बहुत काल तक उन्हें पतिसंग नहीं मिला।

वास्तव में श्री अरविन्द की राजनैतिक क्रियाशीलता सन् १९०२ ई० से चालू हो गई थी। स्वाधीनता संग्राम का उद्योग पर्व इसी साल से शुरू हुआ बड़ौदा से ही। बड़ौदा से अपने छोटे भाई श्री वारीन्द्रनाथ घोष तथा छद्मवेशी भूतपूर्व सैनिक श्री उपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय को गुप्त समिति के गठन के लिये बंगाल में भेजा था। स्वयं भी कई बार बंगाल में गये। छिपे रहकर वह आयरलैण्ड के "सीनफ्रीन" लोगों के जैसे "स्वदेशी आन्दोलन" को प्रेरणा देते रहे। अपने सहकर्म्मियों में। आयरलैण्ड में भी उस समय तक "सीनफ्रीन" आन्दोलन शुरू नहीं हुआ था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री अरविन्द के राजनैतिक विषय में उतरने के पहले कांग्रेस की आवाज धीमी थी। मध्य पन्थियों के कारण बहुत ही धीमी गति थी। १९०५ ई० में बंगभंग आन्दोलन से बंगाल में नवजागरण की उन्मादना शुरू हुई। श्री अरविन्द उनके इस आवेग को समझकर "स्वाधीनता-संग्राम" में कूद पड़ने की तैयारी कर रहे थे। १९०६ ई० में ७५०) तनख्वाह, बड़ौदा कालेज का वाइस प्रिन्सिपल के पद को, आत्म प्रतिष्ठा, ख्याति, और अनायास जीवन का लाभ छोड़कर कलकत्ते में नेशनल कालेज में सिर्फ १५०) डेढ़ सौ रुपये माहवार पर प्रिन्सिपल होकर आ गये।

महाराजा बड़ौदा ऐसे निराडम्बर निरहंकार प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति को दुर्लभ मित्र रूप से पा गये थे परन्तु उनकी सारी कोशिशों को वेकार करके उज्ज्वल भविष्य को फेंककर सारे प्रलोभनों को फटकारकर वह चले ही आये। कोई भी बाधा नहीं मानी गयी।

१५ अगस्त १९०६ ई० से नेशनल कालेज में अध्यापन शुरू कर दिया। परन्तु उनकी स्वाधीन चिन्ता से उद्भूत शिक्षा सूची यहाँ चल नहीं सकती समझ में आते ही थोड़े ही दिनों में यह काम छोड़ दिया और उनके समर्थकों के साथ सहयोग देकर "वन्देमातरम्" नाम की पत्रिका का पूरा भार ले लिया। पहले वह अस्थायी सम्पादक रहे। उनके हाथ में आने से पत्रिका का रूप बदल गया जोकि विशेष चलता नहीं था वही मुक्ति का पथ-प्रदर्शक बन गया। स्वाधीनता की वाणियों से सारा भारत एक बार चौंक गया। और हरेक दिन लोग इस पत्रिका की प्रतीक्षा करने लगे कि आज क्या नयी वाणी आती है। विलायत के ब्रिटिश सरकार के कान खड़े हो गये। परन्तु वन्देमातरम् का कण्ठरोध नहीं हो सका। विशेष दुःख के साथ "लण्डन टाइम्स" कहने को मजबूर हो गया कि श्री अरविन्द के सम्पादकीय प्रबन्ध लिपि-कुशलता से कानून जिसे स्पर्श नहीं कर सकता। भारत के अंग्रेज सम्पादक भी इनके आगे प्रभाहीन हो गये। जो सरकार, श्री अरविन्द को I. C. S. से वंचित करके, निर्भय हो गयी ऐसा मान रहा थी वह फिर कोशिश में लगी कि किसी प्रकार ये कानून के शिकंजे में आ जायँ।

कांग्रेस में जो व्यक्ति अग्रगामी मनोवृत्ति के रहे उनको मिलाकर एक छोटा दल बनाने को श्री अरविन्द ने तैयारी करने लगे। यह दल नम्रपंथियों को बाधा देने को तैयार नहीं था। श्री अरविन्द ने महाराष्ट्रीय नेता श्री बालगंगाधर तिलक को पुरोहित रूप से आगे करके उदार-पंथी प्रवीणों के हाथ से कांग्रेस को लेकर सर्वभारतीय रूप से गठन करने के लिए इस दल को उत्साहित किया। दोनों का संग्राम शुरू हो गया। दो साल तक रस्साकशी के बाद

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जातीयतावादी (Nationalist) जीत गये । कांग्रेस का नियंत्रण उनके हाथ में आ गया । उनके कर्म्मसूची की मूल नीति घोषित हो गयी । आत्मनिर्भरता, गवर्नमेण्ट के साथ असहयोग, विदेशीवर्जन, स्वदेशी शिलाप्रतिष्ठा, ब्रिटिश अदालत का संस्रववर्जन, नालिशी अदालत में आपस में समझौता, सरकारी शिक्षा-प्रतिष्ठान का वर्जन, जातीय विद्यालय प्रतिष्ठा, निष्क्रिय प्रतिरोध, युवसंगठन की मदद से पुलिस का काम चलाना । इस प्रकार श्री अरविन्द विदेशी राष्ट्र की बराबरी में अघोषित भारतराष्ट्र की प्रतिष्ठा के लिये तैयारी करने लगे । थोड़े ही दिनों में उन्होंने वन्देमातरम् के पृष्ठों में मुक्ति की वाणी का संचार करते हुए राजनैतिक चिन्ताधारा में युगान्तरकारी परिवर्त्तन की युग यात्रा में अग्रवर्ती हो गये । प्रवीणों का आदर नहीं रहा ।

परन्तु श्री अरविन्द कभी यश के अभिलाषी नहीं रहे । बाद में श्री दिलीपकुमार राय को उन्होंने लिखा "मैं कभी अपना नाम करना नहीं चाहा, जब देश के काम में मशगूल था तब भी नहीं । दूसरे को उसको मालूम न हो इस प्रकार आगे धकेलकर मैं पर्दे के पीछे काम करना पसन्द करता था, काम हो गया, बस । सिर्फ जहाँ बाज ब्रिटिश साहब लोग (Confounded British Government) हमारी सारी योजनाएँ तोड़कर मुझे देशनायक घोषित करके अभियुक्त रूप से खड़ा कर दिया" सब नष्ट हो गया ।

१९०७ ई० के अप्रैल में 'युगान्तर' के एक निबन्ध का अनुवाद करके वन्देमातरम् में प्रकाश करने पर राजद्रोह के अपराध में श्री अरविन्द पकड़े गये परन्तु मुकदमे के बाद छूट गये ।

मुजफ्फरपुर बमकाण्ड के बाद १९०८ ई० के मई में कलकत्ते में व्यापक रूप से खाना-तलाशी हुई । मुरारिपुकुर में बम तैयार करने का कारखाना पकड़ा गया । श्री अरविन्द के छोटे भाई वारीन्द्र-उपेन्द्र और उल्लासकर आदि को मुरारिपुकुर बगीचे में और श्री अरविन्द अविनाश भट्टाचार्य और शैलेन को नवशक्ति आफिस में गिरफ्तार किया गया । यह मामला "अलीपुर बम केस" नाम से प्रसिद्ध हुआ । पूरा एक साल जेल में रहकर श्री अरविन्द निरपराध साबित हुए । १९०९ के ५ मई को उनके विचाराधीन बन्दी जीवन की समाप्ति हुई । उनकी अनुपस्थिति में वन्देमातरम् पत्रिका बन्द हो गयी । परन्तु काराजीवन ने उनको साधना करने की सुविधा कर दी ।

बन्दीजीवन शुरू होने से कुछ महीने पहले सूरत कांग्रेस से लौटते समय रास्ते में उनकी महाराष्ट्रीय योगी श्री विष्णु भास्कर लेले से भेंट हुई । उनसे योगसाधन का उपदेश

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्होंने लिया। उस समय तीन दिन की समाधि की हालत में उन्हें जो उपलब्धि हुई उस प्रसंग में वे कहते हैं—"समग्र सत्ता की चेतना में एक विराट् प्रशान्ति आती है। शाश्वती निश्चलता एक सर्वग्रासी अभिभूत के भाव साथ में जगत् की अनित्यता मायामय अनुभूति निःशब्द में विलीन कालातीत ब्रह्मोपलब्धि। लेले जी, ने उनके साथियों को बाद में कहा था—इससे पहले और कोई साधक मेरी नजर में नहीं आया जो अपने को इस प्रकार निर्लिप्त भाव में रखते हुए निर्विरोध अपनी सम्पूर्ण सत्ता को निःशेष रूप से गुरु के हाथ में समर्पण कर सकता है। यही श्री अरविन्द की पहली उपलब्धि है। इसके बाद की उपलब्धि अलीपुर जेल में। यह एक अपूर्व भागवतीचरित कथा है। इस प्रसंग में उन्होंने कहा था—"जेल में मुझे मानवजगत् से अलग रखने से मैं उसी ओर देखा—परन्तु मालूम हुआ कि मैं जेल की ऊँची दीवालों के अन्दर बँधा नहीं हूँ। मुझे वासुदेव ने घेर रक्खा है। मेरे सेल के सामने वाले वृक्ष की छाया में मैं टहलता था, मैंने देखा वह वृक्ष नहीं है। मैंने जाना वह वासुदेव है। देखा श्रीकृष्ण वहाँ खड़े हैं, मेरे ऊपर छाया किये हुए हैं। मेरे सेल के लोहे के सींखचों को देखा तो फिर वासुदेव को देखा। नारायण खड़े होकर मेरा पहरा दे रहे हैं। बिस्तर में बिछाने को मुझे एक कम्बल दिया था उस पर सोकर अनुभव किया कि श्रीकृष्ण मुझे दोनों हाथों से लपेट रक्खे हैं वह हाथ मेरे दोस्त का मेरे प्रेमास्पद का है।"[१]

इसके बाद दिव्य उपलब्धियों में विशेष उल्लेख योग्य है—परम सत्यकी एक ही सत्ता में—सक्रिय निष्क्रिय दोनों प्रकार की एक साथ स्थिति। अतिमानस चेतना भूमि का विभिन्न स्तर आदि श्री अरविन्द के योग प्रसंग में इसके संक्षिप्त भाव की आलोचना की गयी है।

कारावास के समय उनके जीवन का एक आमूल परिवर्त्तन शुरू हो गया था। वह भगवान् की यन्त्री हुए जा रहे थे। जेल से छूट कर उन्होंने देखा; सारे देश की प्राण सत्ता में जागरण मन्त्र हल्का पड़ गया है, कर्मप्रेरणा को राह नहीं मिल रही है। जातीयतावादी कांग्रेस कैम्प 'नेतृत्व हीन हो गया है' राज रोष के कारण सब ही बन्दीशाला में हैं। वह ही एक मात्र विप्लव झंझा के सामने दिग्दर्शक है। उनके ऊपर जो जिम्मेवारी आ पड़ी है उसे उन्होंने ले लिया। स्वदेश मातृ के मुक्ति यज्ञ में देश को जगाने की कोशिश करने लगे। इस उद्देश्य के साधन के लिए अंग्रेजी में "कर्मयोगिन्" बंगला में "धर्म" नामक २ साप्ताहिक पत्रिका की प्रतिष्ठा किया। अंग्रेजी और बंगला भाषा में उनकी उद्दीपनामयी संजीवनी वाणी निकलने लगी। फिर उनको गिरफ्तार करने की तोड़ जोड़ शुरू हो गयी। आखिर १९०९ ई०

५. श्री अरविन्द का उत्तरपाड़ा भाषण का अनुवाद—श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

के दिसम्बर में कर्मयोगिन् में उनकी दस्तखती एक निबन्ध के लिये कुछ दिनों में ही उनके लिए गिरफ्तारी वारण्ट निकला। श्री अरविन्द ने विश्वस्तसूत्र से कर्मयोगिन् और धर्म के आफिस में बैठे ही समाचार प्राप्त किया। सायंकाल का समय था गोधूलि समय बीतकर कुछ अँधेरा छाने लगा था। अकस्मात् ऊर्ध्व लोक से आदेश वाणी सुना "चन्दननगर जाओ" देर बिना किये दो साथी को लेकर नाव से चन्दननगर रवाना हो गये। कर्मयोगिन् का मुद्रक पकड़ा गया। नीचे की अदालत में सज़ा मिलने पर भी कलकत्ता हाई कोर्ट में उनको छोड़ दिया। श्री अरविन्द के अन्तर्धान से मामला और आगे नहीं बढ़ सका। ब्रिटिश सरकार उनको दुबारा बन्द करने की चेष्टा करके व्यर्थ काम हो गयी।

दूसरे दिन २१ फरवरी १९१० चन्दननगर राणी घाट में उनकी नाव लग गयी। स्वदेशी नेता अध्यापक श्री चारुचन्द्र राय ने श्री अरविन्द को आश्रय देना स्वीकार नहीं किया। श्री मोतीलाल राय को यह खबर मिली। उस समय सुबह हो ही रहा था। तुरत नदी घाट में ज़ा कर श्री राय श्री अरविन्द को आदर के साथ अपने घर ले आये। उस समय भी अरविन्द जी को आश्रय देने वाले श्री अरविन्द के पास अनजान व्यक्ति ही रहे। मोती बाबू के एक छोटी सी गुप्त कोठरी में श्री अरविन्द प्रायः ध्यानस्थ रहते थे। कारागार में बन्दी जीवन जैसा ही। श्री राय की स्त्री इन गुप्त व्यवस्थाओं से अनजान थी। एक दिन अचानक उस अव्यवहृत कोठरी में चली आयी। श्री अरविन्द ने देखा स्वयं काली जी उनके सामने खड़ी हैं। श्री अरविन्द को फिर आदेश मिला पाण्डेचेरी जाने के लिये। वह ३१ मार्च को चन्दननगर छोड़ कर पाण्डेचेरी पहुँच गये। ४ अप्रैल के दिन गलत परिचय से "डुप्ले" जहाज से गये थे। वहाँ जहाज घाट में दोस्तों की असावधानी से वह पुलिस के नज़र में पड़ गये। ब्रिटिश पुलिस का पहरा लग गया उनके आवास गृह से थोड़ी ही दूर पर बंगाल के २-४ सहकर्मी के सिवा और कोई भी उनकी हाल चाल नहीं जानते थे। चन्दननगर रहते समय ही श्री मोती बाबू को साधना और देशसेवा में उद्‌बुद्ध किये थे।

मोतीबाबू फ्रेञ्च चन्दननगर के ही बाशिन्दे थे। इस कारण पाण्डेचेरी से फ्रेंच डाक से मोती बाबू के साथ संयोग रखते हुए एक ओर धर्म दूसरी ओर विप्लवी राजनीति से उनकी दिलचस्पी बढ़ाया। श्री अरविन्द के आदेश पालन करते हुए श्री राय के साथ श्री अरविन्द पन्थी देशव्रती और विप्लवियों के साथ परिचय हो गया। उनका घर विप्लवियों का केन्द्र बन गया। वे नहीं जानते थे श्री अरविन्द अज्ञात प्रवास में उनके दिग्दर्शक हैं। अलीपुर कारावास की अभिज्ञता से धीरे धीरे अध्यात्म की ओर वह खिचते चले गये। अपने सामने एक बड़ी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भारी जिम्मेवारी महसूस करने लगे। बंगाल में वापस आकर फिर देशमातृका के मुक्ति युद्ध में उतरेगें प्रवास में भी उनकी यही चिन्ता बनी रही। कम से कम २ वर्ष के लिये। धीरे-धीरे वह स्वप्न लोप होने लगा। उन्होंने अनुभव किया, देशोद्धार का व्रत विप्लव के जरिये नहीं, योग शक्ति से ही सफल होगा। बहिरंग का नेतृत्व उनके लिये नहीं। इसके बाद कर्म सूची ने रंग बदला। पुलिस का पहरा ढीला हो गया। उन्होंने कलम हाथ में ले ली। १९१४ ई० में पाण्डेचेरी से उनकी विख्यात "आर्य" पत्रिका निकलने लगी। उनका अज्ञातवास अब ज्ञात हो गया। फिर भी जीवन के अन्तिम क्षण पर्यन्त उन्होंने एकान्त निवास को नहीं छोड़ा। ४० साल तक निरन्तर योग जीवन बिताकर युगर्षि रूप से देशवासी द्वारा पूजित होते रहे। इस समय उनकी अमृतमयी लेखनी से काव्य साहित्य दर्शन का स्रोत अविराम बहता रहा। उनकी वाणी विश्व में व्याप्त हो गई और उसे सब कोई मुग्ध हो कर सुनते रहे।

सन् १९५० ई० ४ दिसम्बर को रात (पाश्चात्य मत से ५ दिसम्बर) १ बज कर २६ मिनट में उनकी महासमाधि हो गयी। पाँच दिन पाँच रात उनका शरीर ज्योतिर्मय था। आश्रम के विशिष्ट प्रत्यक्षदर्शी ने उनकी अभिज्ञता वर्णन करते हुए लिखा है—

····खबर मिली ५ दिसम्बर बड़ो सबेरे। हमारे लिये यह समाचार वज्राघात से कुछ भी कम नहीं। परन्तु इस आघात की वेदना विशेष स्थायी नहीं हो सकी। खबर मिलते ही श्री अरविन्द के देह दर्शन के लिये गया। प्रथम दर्शन से विस्मय विमूढ रह गया। पलंग पर लेटा हुआ दिव्य देह। ध्यान स्तिमित नेत्र से योग निद्रा में समाहित महायोगी। सम्पूर्ण देह में प्रवहमान सुस्निग्ध कान्ति, हिरण्यप्रभ दिव्यद्युति सब मिलाकर एक विराट् महिमामय दृश्य। अपनी आँख से दर्शन कर के ही इस दृश्य को समझा जा सकता है। इसे भाषा में वर्णन नहीं किया जा सकता इस असंभव दृश्य का।

····दूसरे दिन श्री अरविन्द का देह समाहित करने की बात थी। परन्तु दूसरे दिन श्री मां ने एक विज्ञप्ति प्रचारित की, श्री अरविन्द के देह में अतिमानस ज्योति संचारित हो रही है इस लिये देह में विकार नहीं आया है, इसलिये जितने दिन यह देह अविकृत रहेगा उतने दिन इस देह की अन्त्येष्टि क्रिया नहीं की जायगी। समाचार पत्रों में यह समाचार प्रचारित होते ही दूर के दर्शनार्थी यात्री सब दौड़े हुए आये इस असाधारण दृश्य के दर्शन के लिये। परन्तु फ्रेंच सरकार पशोपेश में पड़ गयी। फ्रेंच कानून के अनुसार कोई मृत देह ४८ घंटे से ज्यादा असमाहित हालत में रक्खा नहीं जा सकता। ७ दिसम्बर को फ्रेंच सरकार के डाक्टर आये। ४८ घण्टा बीतने पर भी मृत देह में कुछ भी विकार नहीं देखने में आया

.CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निर्विकार निर्मलिन रोग निर्मुक्त—ज्योति से उज्ज्वल शरीर था। विद्वान् डाक्टर उनके शरीर विज्ञान ग्रन्थ के किसी भी अध्याय में इस रहस्य का कोई किनारा न पाकर रखने का आदेश दे गये।[1]

श्री अरविन्द योग का मूलसूत्र

विश्व मानव प्रकृति में अतिमानस शक्ति का ऐश अवतरण और जीवन का आमूल दिव्य रूपान्तर। मानुषी शरीर में अन्नमय कोष में, प्राणमय कोष में, मनोमय कोष का अशोधित आधार में दिव्य जीवन प्राप्त नहीं किया जा सकता। मर देह में युग युग में भगवान् अवतीर्ण हुए थे अवतार लीला में। वह भगवान् मानुष रूपी भगवान्। देह की न्यूनता अक्षमता को वहाँ पार नहीं किया गया। श्री कृष्ण को व्याध-शर-विद्ध होकर देह त्याग करना पड़ा। भगवान् बुद्ध अर्हत पद प्राप्त हो कर भी व्याधि को रोक नहीं सके, ज़रा को रोक न सके। इस भंगुर देह में महाशक्ति का ऐशिक अवतरण श्री अरविन्द का लक्ष्य नहीं है।

श्री अरविन्द ने महाराष्ट्रीय योगी श्री विष्णु भास्कर लेले के सान्निध्य में ध्यानस्थ होकर प्रथम अनुभव किया—जगत् की अनित्यता, ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या, माया प्रपंच मात्र जगत्, ब्रह्मैव केवलम्। अतः ब्रह्म एक, अद्वय, निर्गुण, निष्क्रिय, निर्विशेष, निराकार। यह प्रसिद्ध मायावाद का अन्तिम सिद्धान्त है। श्री अरविन्द की यह उपलब्धि समाधिभूमिका में अक्षर पुरुष की। इनके बाद की उपलब्धि निरवच्छिन्न निःसंग कारावास की एकाग्र साधना में। यह विश्वगत सगुणब्रह्म का साक्षात्कार। नारायण को उन्होंने निर्जन बन्दीवास में संगीरूप में पाया था। काराप्रहरी नारायण, काराप्राचीर नारायण, उनके सामने छाता धारण करनेवाले छाया देनेवाले ब्रह्मरूपी नारायण। सर्वभूत में भगवान् "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" ये क्षर पुरुष की उपलब्धि है। इसके बाद की उपलब्धि—विश्वातीत मायातीत, क्षर अक्षरातीत परम ब्रह्म की। जहां सगुण, निर्गुण, साकार, निराकार, सविशेष, निर्विशेष, सक्रिय, निष्क्रिय, एक और बहु का अनन्त वैचित्र्य, एक ही सत्य स्वरूप में समाहार। शिव और शक्ति का सामञ्जस्य परात्पर पुरुषोत्तम। सिर्फ कालान्तर में सत्य नहीं। सक्रिय, निष्क्रिय, सकल, निष्कल, निराकार, साकार, सब ही सत्य एक ही सत्ता में युगपत् सत्य परमब्रह्म एक अद्वितीय "एकमेवाद्वितीयम्"। इस त्रयी उपलब्धि के साथ उन्होंने और एक उपलब्धि जोड़ा है जिसको वह अतिमानस—(Super mind) नाम दिया है। यह परमेश्वर का स्वातंत्र्य के कारण उनकी स्वरूप

---

१. श्री नलिनीकान्त सरकार—गल्प भारती पौष १३५७ वं.।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भूता शक्ति का व्यक्त चैतन्य रूप में आत्म प्रकाश। चैतन्य का सृष्टिमुखी अवतरण इस अतिमानस शक्ति स्तर से ही सूचित होता है। अतिमानस के नीचे है अवरोहण-आरोहण का और भी कुछ स्तर। जटिल रूप से परस्पर के साथ मुक्त, अधि मानस (Over mind), सम्बुद्ध-मानस (Intuitive mind), प्रदीप्त मानस (Illumined mind), उत्तर मानस (Higher mind) और मानस (MInd)। अति मानस परम ब्रह्म के साथ अभिन्न होते हुए भी भिन्न परमेश्वर की लीला में अवतरण कर अनन्त भाव और रूप की धारिणी विश्व मातृका। अनिर्देश्य के दृग देशवासे स्वयं परमेश्वरी। यहाँ जड़ नहीं है केवल चैतन्य नित्य चैतन्य एकीभूत। शक्ति और चैतन्य अभी भी वस्तुतः अभेद। ऊपर कहे हुए क्रम सब चैतन्य के कुछ लक्षणीय निम्नाभिमुखी विशेषित भूमि। श्री अरविन्द का योग सब प्रकार वैचित्र्य और एकत्व का सार्विक समुच्चयन (Integration)। यह पुरुषोत्तम में विश्वप्रकृति का नित्य योग है।

भारतीय साधना के दिग् दर्शन में यह सब तत्त्व नया नहीं है। भक्ति, कर्म, ज्ञान, योग, राजयोग, अथवा तन्त्र साधना के जो लोग साधक रहे वे साध्य रूप से किसी भी एक तत्त्व को लेकर लक्ष्य में पहुँचे और केवल लाभ किये। भगवान् या परम सत्य को जो जिस भाव से साधना करते हैं उनको वही सत्य प्राप्त होता है। सायुज्य सारूप्य सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य मुक्ति में से किसी भी एक को ग्रहण करके योगी इष्टकाम होते हैं। यह सब खण्ड उपलब्धि है। सामग्रिक भाव से एक स्वरूप में अनन्त का अखण्ड सामंजस्य उपलब्धि नहीं है। कोई सांख्य का पुरुष, कोई वेदान्त का निर्गुण ब्रह्म, कोई सन्धिनी संवित् ह्लादिनी स्वरूप भूत विश्वगत नारायण की उपासना किये हैं, भिन्न भिन्नसाध्यगत उपास्यों के अन्दर से मुक्ति वा कैवल्य भूमि में आरोहण किये हैं, ये सब परम सत्य की एक तरफ की उपलब्धियाँ हैं। आनन्दमय स्थिति है—इसमें सन्देह नहीं है परन्तु अखण्ड उपलब्धि नहीं, साधक कह सकते हैं, जिस किसी मार्ग से ब्रह्मोपलब्धि होते ही अखण्ड परम सत्य की सार्विक उपलब्धि में मिल सकता है परन्तु वह निरंकुश सिद्धान्त नहीं माना जा सकता है। आचार्य शंकर और रामानुज आपस में एक दूसरे का खण्डन क्यों करते हैं। और भी समझने की वस्तु है, प्रचलित मार्ग की साधना तपः साध्य कठोर है, पृथिवी विमुख है, त्याग वैराग्य दीप्त कौपीनवन्त का भाग्य ही इसमें सुप्रसन्न होता है; मर देह में यह सुसिद्ध होने का नहीं। शाश्वती स्थिति में पृथिवी के जीवन में फलित होने वाला नहीं। समाधि आरुढ़ हो कर ही मर्त्यलोक का मनुष्य इन सब दुरूह तत्त्वों का पता पाता है—अथवा साकारोपासना की तन्मयता का आनन्द पाता है। फिर भी उनकी सिद्धि भूमि पृथिवी में नहीं है, मर देह में वह सिद्धि मिल नहीं सकती। जीवनमुक्त पुरुष भी विदेह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुक्ति चाहते हैं। देह-उत्तरण-प्राक्पर्व में पृथिवी को साधन पीठ रूप में मानते हैं नित्य धाम रूप में नहीं।

इस प्रकार के कैवल्य से श्री/अरविन्द सन्तुष्ट नहीं हो सके, चाहते थे विश्वमानव का दिव्य-जीवन इस पृथिवी में ही। एक खण्ड उपलब्धि के फल श्रुति रूप से नहीं। परम सत्य का पूर्ण आपूरण के साफल्य में, अतिमानस शक्ति के पार्थिव स्तर में, पार्थिव देह में अवतरण, नित्य लीलालीन की साधना में जड़ और जीवन का आमूल चिन्मयकरणी मन्त्रसिद्धि में। इस रूपान्तर के योग को ही उन्होंने नाम दिया है पूर्ण वा अखण्ड योग (Integral yoga) यहीं पर श्री अरविन्द की विशिष्टता है।

पूर्ण योग का लक्ष्य मर्त्यभूमि में स्वर्गभूमि की दिव्य नित्य लीला शाश्वत सुस्थित मृत्यूत्तीर्ण देह में, देवजाति। इसके लिए चाहिए देह का रूपान्तर देहोपादान के स्तर में, प्राण के स्तर में, मन के स्तर में चाहिए सुसिद्ध, सुषम, दिव्य, चिन्मय देह, देवायतन देह, जो देह देवालय के दीप जैसा उत्सर्गीकृत सब प्रकार से उपयोगी, ऊर्ध्व चैतन्य के स्तर से शक्ति के अवतरण का। अतिमानस शक्ति का इस अवतरण में अतिमानव तैयार हो जायगा। यह नीट्शे का आपूरिक तेजोदृप्त महामानव (Superman) नहीं। ऐसी शक्ति विग्रहान्वित देवमानव। भगवान् स्वयं अणु में अन्वित होकर बहुत से वैचित्र्य में व्यष्टि सत्ता में विशेषित— जहाँ स्वातन्त्र्य-अस्वातन्त्र्य में भेदोपलब्धि की न्यूनता नहीं है। अणु व्यष्टित्व न खोकर विभु सच्चिदानन्द स्वरूप भूत।

विश्वमानव का एक साथ ही अतिमानस रूपान्तर होगा नहीं यह तो सच है। यह होता है क्रम विकास के रास्ते से धीरे-धीरे या द्रुत, विलम्बित, क्रम से, आस्पृहा और दैवी अनुकम्पा के संयोग से साधन लभ्य है। परमेश्वर स्वयं ही इसका फलित भविष्य का द्रष्टा और स्रष्टा। अप्रतिरोध्य गति से प्रकृति के विवर्त्तन के बीच नित्य प्रति चल रहा है यह विकास रिंगण। योग शक्ति गति को त्वरान्वित कर सकता है। पूर्ण योगी का लक्ष्य यही है। अतिमानसतत्त्व श्री अरविन्द का एक दार्शनिक मतवाद नहीं है योगिदृष्टि लब्ध सत्य है।

पूर्ण योग साधना का तीन क्रम है—चैत्य पुरुष का जागरण (Psychicigation), अध्यात्म चेतना का जीवनतन्त्र में आपूरण (Spiritualisation) और अतिमानस शक्ति का अवतरण और देह का रूपान्तर (Supramentilesation)।

चैत्य पुरुष है अन्तरात्मा निरवच्छिन्न भागवत चेतना में निष्णात। वह जब साधक का भार लेते हैं तब साधक का कर्त्तव्य है उनके इङ्गित का अनुसरण करते जाना। देह, मन,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्राण का अविद्या अनुविद्ध स्तर से तब व्यष्टि चेतना से परमेष्ठी चेतना में उठने लगता है द्वितीय पर्याय का दिग्दर्शक नित्यमुक्त जीवात्मा (Individual self) परमात्मा की सृष्टि केन्द्रित जीवभूत सनातनी सत्ता। इसके प्रभाव से साधक का देह, प्राण, मन की चेतना अध्या-चेतना से आपूरित होकर ऊर्ध्व में चैतन्य के अभिमुखी होता है और आरोहण मार्ग में घट में अतिमानस शक्ति का अवतरण स्तर स्तर से होता है देह चिन्मय हो जाता है। पूर्ण योगी शाश्वत दिव्य देह लाभ करते हैं इसी पृथिवी में। भगवान् के नित्य मर्त्यलीला के ये सदा के साथी होते हैं। उनको कर्म्म त्याग नहीं करना पड़ता। सारा कर्म्म तब भगवान् का ही कर्म्म है उनके यन्त्री रूप में।

इस योग साधना का दीक्षा मन्त्र, भगवान् में आत्म-समर्पण उत्सर्ग किया हुआ जीवन नि:शेष रूप से उनके हाथों में सौंप देना। तब अन्तरपुरुष सामने आकर खड़े हो जाते हैं दिग्दर्शक रूप से। व्यक्तिगत प्रचेष्टा का प्रयोजन समाप्त हो जाता है—वासना तृष्णा इच्छा इष्ट प्रीति में। "त्यक्तेन भुंजीथा:" भगवान् तब योगी का योगक्षेम वहन करते हैं और शिष्य कर्म्म के लिए निमित्त मात्र हो जाते हैं, संसार त्याग का प्रयोजन नहीं है। गृही, कर्म्मी, योगी, भक्त, ज्ञानी, सभी इस योग के अधिकारी हैं अपने-अपने कर्म्मक्षेत्र में रहते हुए ही। उसी से आस्पृहा की ऐकान्तिकता में अन्तरपुरुष का समय में साक्षात्कार हो जाता है। (Psychie beind)[1] उतने दिन जाग्रत बुद्धि विवेक की प्रेरणा से चलना। प्रभुपथ यात्री उनका सहाय महाजनगत पन्था अग्रगामियों का योगजीवन अथवा चैतपुरुष का प्रतिनिधि—गुरु।

पूर्ण योग के साफल्य के सम्बन्ध में श्री अरविन्द ने कहा है—विश्व के क्रम विकास का जो तथ्य प्रतीची के विज्ञान ने मान लिया है—प्राची की वैदिक सभ्यता के युग में दशावतार में विवर्त्तन में जो पहले ही स्वीकृति पा चुका है, वह निसर्ग का एक स्वैराचारी खेल मात्र नहीं प्रकृति स्वयं योगासीना (Natures own yoga) यह उसकी सत्ता का अभीप्सित पूर्णायन है जिससे नित्य निरन्तर प्रकृति में मग्न चेतना ज्ञात में अज्ञात में मुक्ति की आस्पृहा में विकासोन्मुखिनी है। सृष्टि का रहस्य इसके गभीर में क्रियमाण है। वैदिक युग का आदर्श था जीवन को सम्पूर्ण रूप से शुद्ध और सिद्ध करके पूर्णता के बीच विकसित होना। जीवन को पंगु करके अनन्त में मिल जाना वैदिक आदर्श का सम्पूर्ण विरोधी है।[2] प्रकृति की वह मानता के रहस्य में जो आकर तत्त्व है निगूढ़ भाव से नियत रूप से वह अतिमानस

१. श्री दिलीप कुमार राय की अंग्रेजी परिभाषा।

२. अमेरिका में अरविन्द दर्शन के अध्यापक श्री हरिदास चौधुरी—"वेद रहस्य और श्री अरविन्द"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अभिमुखी पूर्ण विकास की एषणा जड़ को अतिक्रम करके चेतना का उत्तरण। यह चेतना की मग्न अवस्था की बाद की अवस्था अर्थात् जड़त्व में अवरोहण इसके बाद महाजागरण को यात्रा।

शक्ति की ये दोनों लीलाएँ समान रूप से चल रही हैं। अवरोहण (Involution) और आरोहण (Evolution)। अवरोहण में चैतन्य शक्ति की क्रम निष्क्रियता, आरोहण में क्रमोन्मेष। परमेश्वर का स्वतन्त्रतावश में शक्ति का प्रथम अभिमुखीनता सृष्टि के आरम्भ में। अतिमानस शक्तिस्तर (Super mind) से अधिमानस में (Over mind)। अविद्या वा माया का जन्म यहीं पर है। ऊर्ध्व चैतन्य के साथ में स्वतन्त्रता बोध ऐक्य का सूत्र तब तक अधिमानस में छिन्न नहीं हुआ है, अस्पष्ट है। अतिमानस में पहुँचकर अधिमानस फिर ऐक्य प्राप्त हो जाता है, आरोहिणी के प्रत्येक सोपान में स्वच्छ। अवरोहिणी में क्रम विच्छेद क्रमशः चेतना में अस्वच्छता। अवरोहण की आखिरी सोपान सीमा है अन्ध तामस जड़ प्रकृति। चेतना वहाँ पर अस्ति नास्ति के नैराज्य में रहकर भी नहीं है ऐसी अवस्था। अधिमानस (Over mind) से अवरोहण की क्रमावनति के बहुत से स्तर हैं, क्रमशः अविद्या प्रमा थी, अजड़ स्तर स्तर में जाडचाक्रान्त अचेतन। अधिमानस के नीचे सम्बुद्धमानस (Intuitive mind) प्रदीप्तमानस (Illumined mind) उत्तर मानस (Hidher mind) मानस (Mind) इसके बाद मन की और भी मग्नावस्था—प्राणस्तर (Life) अन्त में निष्प्राण जड़ (Matter) जन्मे अविद्या का अबाधित प्रभाव। ये सब निम्नाभिमुखी रूपान्तर हैं (Involution)।

चैतन्य का स्वरूप धर्म्म है स्वतः जागरण। व्युत्थान आवेग से (Evolution) जड़ में भी वह अभिघात अनाहत रूप से सक्रिय है। अतः शुरू होता है क्रम विकास। जड़ से जीवन विकास का यही तात्पर्य है। जड़ के प्रथम जागरण में अचेतन। जड़ में प्राण का आविर्भाव। सृष्टि होता है उद्भिद् जगत्। जहाँ चेतना की अर्ध निमग्न अवस्था है। दूसरे पर्याय में यह जागृति और सुस्पष्ट है प्राणि जगत् में। चेतक शक्ति—Psyche स्फुरित हो उठी है। मन विचारणा में अधिष्ठित होकर मनुष्य अनुभव करता है, मानसोत्तर शक्ति की इच्छा करता है स्थितावस्था में वह सुखी नहीं। इस उत्तरण का नित्य लक्ष्य है अतिमानस में। यह विश्व प्रकृति का ही चिरन्तन आवेग है। विश्व मानव सिसृक्षा का आज यह आन्तर आवेग दिग्भ्रान्त है। विश्व प्रकृति की निगूढ़ में इसीलिये मानसोत्तर प्रतिभासित चंचलता। मन की उत्तान चेतना अर्धपथ में ऊर्ध्वचेतना का लीन प्रवाह में आपूरित होकर दिव्यजीवन की सूचना होती है यह पहले कह चुके हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अवतरण मुख में चेतना जैसा क्षीयमाण, कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा जैसा धीरे-धीरे अन्धकार में निमज्जमान, आरोहण में भी उसी क्रम से प्राखर्य में भास्वर होकर पूर्ण कला प्राप्त होता है। पहली गति अज्ञान की धारा में दूसरी गति ज्ञान के पथ में। इसको प्रवृत्तिमुखी-निवृत्तिमुखी नाम श्री अरविन्द ने नहीं दिया है। महाशक्ति का यह सृष्टिरहस्य सनातन है। मर्त्य में इस रहस्य को सार्थक करना ही पूर्ण योग का पूर्णत्व है, शक्ति तब होगी अणु में भी पूर्ण विभु में भी पूर्ण। "पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते" पूर्ण से पूर्ण ग्रहण करने से पूर्ण ही शेष रह जाता है। वही साधना पूर्ण योगी के सामने है। इसके बाद दिव्य देह दिव्य शाश्वतजीवन स्वाराज्य¹ मर्त्यभूमि में वैराज्य में वापस जाना नहीं पड़ेगा। श्री अरविन्द इसके द्रष्टा ऋषि हैं।

संक्षेप में पूर्ण योग की बातें जो यहाँ कही गयीं यह सिर्फ सारांश ही है। स्थानाभाव से आलोचना यहाँ ही समाप्त की गयी।

---

१. स्वाराज्य और स्वराज्य एक बात नहीं है। स्वराज्य मानी स्वाधीन राज्य। स्वाराज्य माने स्वर्गराज्य ईश्वरत्व।

सच्चा प्रेम !

"जो सच्चे प्रेमी होते हैं, वे प्रेमास्पद के विरह में जीवनभर रोया करते हैं, सहस्रों आपत्तियों को सहन करते हैं, परन्तु उस पर दोषारोपण कदापि नहीं करते; उनको अपने प्रेमास्पद में कभी कोई दोष दीखता ही नहीं। ऐसे प्रेमी के लिये प्रेमास्पद को कभी चैन नहीं पड़ता। उसकी गली में उसे दौड़कर आना ही पड़ता है।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री अरविन्द

आज जिनके सम्बन्ध में मुझे कुछ कहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उन्हें साधारण युक्ति तक के गतानुगतिक मार्ग से पकड़ा नहीं जा सकता। हो सकता है पण्डित अरविन्दको, राजनीतिज्ञ अरविन्दको, साधक अरविन्द को हम लोग यत्किंचित् जान भी सकें परन्तु दिव्य-मानव श्री अरविन्द को जानना अभी शुरू भी नहीं हुआ। हृदयद्वार बिन खोले, प्रज्ञान की अनिर्वाण शिखा हाथ बिना लिए, अपना करके जो कुछ भी है सभी को बिना खोये इस महान् आत्मा को हम कदापि समझ नहीं पायेंगे।

श्री अरविन्द का व्यक्तित्व था विराट्, उनकी प्रतिभा थी सर्वतोमुखी, उनको कवित्व-शक्ति थी अनुपम। प्राच्य तथा पाश्चात्य की भावसंपदाओं तथा विचारधाराओं का एक महान् समन्वय हुआ था उनके विशाल मानस में। उनकी अलौकिक विद्वत्ता के सम्बन्ध में यह कहना ही पर्याप्त होगा कि वे जब सिर्फ चौदह वर्ष के थे उसी समय उन्हें अंगरेजी, लैटिन, ग्रीक तथा फ्रेंच भाषाओं की पूरी जानकारी थी, एवं इटालीयन, जर्मन तथा स्पैनिस भाषाओं का साधारण ज्ञान भी उन्हें था। वह अल्पवस्यक बालक लैटिन तथा ग्रीक भाषाओं में सुन्दर-सुन्दर कविताओं की रचना भी किया करते थे।

उनकी जीवन-कथा हम जब पढ़ते हैं तो ऐसा मालूम होता है कि मानो यह आधुनिक युग का एक महाकाव्य ही है, जिसमें एक क्रान्तिकारी नवीन आध्यात्मिक प्रगति का चित्रण किया गया है। यह आध्यात्मिक प्रगति शुरू हो चुकी थी जब कि अपनी देशमातृका की आजादी में उन्होंने अपना सर्वस्व स्वाहा किया था।

आज भी हमें याद आती है कि करीब पचास वर्ष के पूर्व उन्होंने किस तरह स्वतंत्रता युद्ध में नेतृत्व किया था, किस तरह हिन्दुस्तान के हर व्यक्ति के हृदय में आत्म-विश्वास प्रतिष्ठित कर दिया और किस तरह हिन्दुस्तानियों के सम्मुख पूर्ण स्वतंत्रता का आदर्श स्थापित किया। किन्तु उसकी राजनीतिक देन का समुचित मूल्यांकन तभी हो सकता है जब कि उसे हम भारत तथा संपूर्ण विश्व की आध्यात्मिक जागृति के एक अंश के रूप में देखें,—योगी गुरु श्री अरविन्द राष्ट्रगुरु अरविन्द का ही पूर्ण परिणत रूप है। उनके भक्तों तथा अनुयायियों की दृष्टि में आप एक ऐसे दिव्य व्यक्ति हैं जो कि सारी मनुष्य-जाति को एक दिव्य तथा भागवत चेतना के स्तर पर उठाने के लिए आये थे, मनुष्य-जन्म को देव जन्म में परिणत करने के

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लिए आये थे। जिस देव-जन्म के लिए, मर्त्य जीवन के बीच विश्वातीत रहस्य को प्रकट करने के लिए, वैदिक ऋषियों का प्रयास था, जिसके लिए है विश्व की अभीप्सा, उस देव-जन्म की वाणी प्रस्फुटित हुई है, उनके हर लेख में, हर शब्द में। संक्षेप में कहा जा सकता है, श्री अरविन्द की साधना का उद्देश्य था सच्चिदानन्द लोक से Supramental consciousness अर्थात् अतिमानस चेतना को मर्त्य के वक्ष पर उतार कर मानव को अतिमानव बनाना, देव-मानव बनाना।

अपनी योग-दृष्टि से श्री अरविन्द ने देखा था कि जैसे क्रमिक विवर्त्तन की धारा में जड़ से वृक्ष, वृक्ष से पशु तथा पशु से मानव की अभिव्यक्ति हुई है उसी तरह मानव से अति-मानव की अभिव्यक्ति स्वाभाविक तथा अनिवार्य है। पांडिचेरी आश्रम की माताजी ने १९५६ ई० २४वीं एप्रिल को स्पष्ट भाषा में घोषित किया है :—

"मर्त्य के वक्ष पर अतिमानस का जो आविर्भाव, यह तो अब प्रतिज्ञामात्र नहीं रहा, वह है आज एक जीवन्त घटना, एक मूर्त्त सत्य।

"यहाँ शुरू हो गया है उसका कार्य, एक दिन आने वाला हैं (और वह भी जल्दी ही) जब कि जो अन्धतम है अज्ञतम है यहाँ तक कि अत्यन्त अनिच्छुक भी जो है उसे भी इसे मानना ही पड़ेगा।"

"श्री माँ ने और भी कहा है कि परिवर्तन (मनुष्य का देव मानव में रूपान्तर) का जो विराट् काम श्री अरविन्द ने अपने हाथ में लिया था यह तो सार्थक होने जा रहा है, वह तो सत्य होने जा रहा है। हम लोगों के हाथ में अभी जो काम है, उस कार्य की सिद्धि के सम्बन्ध में अब जरा भी संदेह नहीं है। यह अब और परीक्षा-मूलक प्रचेष्टा नहीं है, बल्कि यह है, अतिमानस का अनिवार्य प्रकाश।

श्री अरविन्द ने कई वाणियों में कहा है कि मानव-जीवन का ऊर्ध्वायन अवश्य ही होगा, मनुष्य की मनोमय चेतना के माध्यम से यह ऊर्ध्वायन ऐहिक जीवन में ही ज्ञानरूप में, शक्तिरूप में तथा आनन्द रूप में आएगा। अब मनुष्य के संकल्प में जग पड़ी है दिव्य की एक महती अभीप्सा।

जरा तह में देखने से, जरा शांत समाहित चित्त से विचार करने पर यह साफ समझा जा सकता है कि सर्वसाधारण की चेतना में भी मानों एक नवीन रंग पकड़ना शुरू हो गया है मानो एक नवीन आलोड़न प्रारंभ हो गया है। अनजाने ही ये सब आज बदले चले जा रहे हैं। लाखों प्रयत्न करने पर भी केवल स्थूल को आश्रय करके वे आज जी नहीं सक रहे हैं, उनसे और इसके बिना रहा नहीं जा रहा है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आज वह शुभ दिन आ गया है जिसे श्री अरविन्द ने अपनी दिव्यदृष्टि से चालिस वर्ष पहले ही देख लिया था। उस शुभदिन के आगमन पर क्या क्या लक्षण दीख पड़ेंगे अब वही बयान करता हूँ। दिव्य-जीवन सम्बन्धी भावों और कल्पनाओं की गतिधारा पहले दीख पड़ेगी दर्शन में, साहित्य और कला के बीच तथा मनुष्य की हर विचार-सरणी में। साहित्य में, कला में, सौन्दर्यसृष्टि में ये सब भाव-कल्पनाएँ इशारा करेंगी ऐसी संभावनाओं का जो अतीत में कभी भी नहीं देखी गई।

भविष्य में आनेवाली नवीन आध्यात्मिक प्रगति के बारे में श्री अरविन्द ने कहा है यद्यपि इसका कर्मक्षेत्र विश्वव्यापी होगा तथापि प्रथम उषा की किरण फूट पड़ेगी इसी भारतवर्ष में ही, इस आध्यात्मिक विकिरण का प्रथम केन्द्र भारत वर्ष ही होगा। भारतवर्ष हमेशा से अपने लिए नहीं बल्कि सारे विश्व के लिए ही रहा है। उसको स्वयं महान् होना है केवल अपने लिए ही नहीं, प्रत्युत विश्व के जनसाधारण को भी महानता में दीक्षित करने के लिए।

हमारे इस भारतवर्ष में योग के मुख्यतया छः मार्ग हैं—ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, तन्त्रयोग, राजयोग, तथा हठयोग। ज्ञानयोग का लक्ष्य है 'मैं ब्रह्म हूँ' जान कर मुक्त होना, भक्तियोग के अनुसार ईश्वर से प्रेम करके संसार बन्धन से छुटकारा पाना और सदानन्दमय होना, कर्मयोग का उद्देश्य है ईश्वर के लिए निरासक्त होकर कर्म करना जिसके फलस्वरूप अहंकार का मिट जाना और मुक्त हो जाना, राजयोग का कहना है कि चित्त की वृत्तियाँ निरुद्ध करने पर पुरुष साक्षात्कार तथा कैवल्य की प्राप्ति होती है और हठयोग के अनुसार इस देह को रोग से मुक्त कर दिव्य के स्पर्श पाना है। ज्ञान, भक्ति, कर्म तथा राजयोग के मत के अनुसार यह संसार अनित्य है, निरानन्दमय है, मायिक है। अतः इसे त्याग देना ही चाहिये। हठयोग का आदर्श ऊँचा नहीं है, इसकी दृष्टि अधिकतर देह की ओर ही है, मन की ओर नहीं। तंत्रयोग में अवश्य पलायनी वृत्ति दीख नहीं पड़ती, यह इस संसार को अनित्य नहीं मानता।

जिस योग-मार्ग के प्रवर्त्तक हैं श्री अरविन्द उसका नाम है पूर्ण-योग। इस योग में ज्ञान, भक्ति, कर्म, हठ तथा राज आदि सभी योगों का समावेश है। इस योग की प्रमुख विशेषताएँ हैं—(१) पृथ्वी को अतिमानस-चेतना के प्रकाश से सच्चिदानन्द में रूपान्तरित करना, स्वर्ग को पृथ्वी पर उतारना। इस मर्त्यधाम को अनित्य तथा दुःखमय मानकर जीवन से पलायनी मनोवृत्ति का सहारा इस योग का साधक नहीं लेता है, प्रत्युत वह समझता है कि यह पृथ्वी भी ब्रह्म ही है, सर्व खल्विदं ब्रह्म। (२) ज्ञान, कर्म, भक्ति आदि के समन्वय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

द्वारा एक दिव्य जीवन निर्माण करना ही इसका लक्ष्य है। (३) सामूहिक मुक्ति अर्थात् समग्र मानवजाति तथा विश्व का रूपान्तर न कि व्यक्तिगत मुक्ति पर ही जोर देता है, यद्यपि इस रूपान्तर के लिये वैयक्तिक मुक्ति की सख्त जरूरत है, पहली जरूरत है।

अतः हम कह सकते हैं कि ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग तथा राजयोग का लक्ष्य है मिट्टी से मुक्ति (संसार से मुक्त होना) तंत्रयोग का लक्ष्य है मिट्टी में मुक्ति (संसार में रहकर ही मुक्ति प्राप्त करना) और पूर्णयोग का लक्ष्य है मिट्टी की मुक्ति अर्थात् इस पृथ्वी का रूपान्तर।

—प्रो० मथुरानाथ बनर्जी, सम्पादक, **श्री अरविन्द स्टॅडी सर्किल, राँची**

संतमहिमा !

संत के चरणकमल की महिमा, मोरे बुते बरनि न जाहि।
जल तरंग जल ही तें उपजे, फिर जल माहिं समाहि॥
हरि में साध, साध में हरि है, साध से अन्तर नाहिं।
व्रह्मा बिस्नु महेस साध संग, पाछे लागे जाहिं॥
दास गुलाल साध की संगति, नीच परम पद पाहिं॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मातृ लीला

(१५ अप्रैल से १५ जुलाई १९७२ तक)

[हिन्दी भाषान्तर :--श्री यादवकृष्ण अवधिया एम. ए., बी. टी.]

माता जी ने १६ अप्रैल से २७ अप्रैल तक वाराणसी में निवास किया। दि० २८ को बड़े तड़के वे प्रयाग के लिए रवाना हुईं, जहाँ वे एल्लेनगंज में स्वर्गीय श्री गोपाल ठाकुर के आश्रम में पधारीं। रात्रि को वे दिल्ली जाने वाली ट्रेन पर सवार हुईं। दि० २९ अप्रैल से दि० ३ जून तक उन्होंने नई दिल्ली कालका जी स्थित हमारे आश्रम में निवास किया। आश्रम के मैदान में माता जी के लिए एक मनोहर नवीन भवन का निर्माण किया गया है, जिसके मध्य में माता जी का कमरा है, जो सभी ओर से बरामदों से घिरा है। उस कमरे के ऊपरी भाग में ड्योढ़ी, तथा सबसे निचले भाग में कई कमरे हैं। ग्रीष्म-ऋतु में प्रकृति स्वयं सबसे निचले भाग को वातानुकूलित बना देती है। दि० २ मई को प्रातःकाल धार्मिक कृत्य-पूर्वक इस नवीन भवन का उद्‌घाटन किया गया। श्री पद्मनाभ की रजत निर्मित मूर्ति, जिसे ट्रावनकोर के राजा इलय (Elaya Raja) ने माता जी को भेंट की थी, आजकल प्रायः माता जी के साथ यात्रा में सदैव रहती है। उस प्रतिमा को जुलूस के साथ पंचवटी से आश्रम के चारों ओर घुमाया गया एवं तत्पश्चात् माता जी के कमरे में एक नारायण शिला सहित उसकी पूजा सम्पन्न हुई। माता जी एवं अन्य सभी उपस्थित साधुगण शोभा यात्रा में सम्मिलित हुए। उस रात्रि माताजी की प्रथम अन्म-दिवस-पूजा संपन्न हुई। माता जी अपने नये कक्ष में विश्राम करती रहीं एवं बाहर पूजा संपन्न होती रही। उसी दिन पंडितों द्वारा दैनिक दुर्गा सप्तशती पाठ एवं अखण्ड- जप का भी शुभारंभ किया गया जो तिथि पूजा ३१ मई तक चलता रहा। माता जी ने अपने नए भवन में ३ रात्रि तक निवास किया। तब यह आशा की गई कि माताजी कई दिनों के लिए कनखल तथा देहरादून जावेंगी एवं २३ मई को प्रारंभ होने वाले जन्म-महोत्सव के कुछ ही समय पूर्व दिल्ली लौटेंगी।

माता जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं था। यात्रा के अंतिम क्षणों में उन्होंने अपने कार्य क्रम में परिवर्तन कर लिया एवं गर्म लू होने पर भी वे नई दिल्ली में ही ठहरीं। हमें यह बताते प्रसन्नता हो रही है कि माता जी के स्वास्थ्य में क्रमशः सुधार होता गया तथा वे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जयन्ती महोत्सव के अवसर पर अत्यन्त क्रियाशील थीं एवं एक अत्यन्त उत्कृष्ट तथा उदात्त भाव में थीं। वे प्रत्येक वस्तु का निरीक्षण स्वयं करती थीं एवं प्रतिदिन पंडाल में कई घंटे उपस्थित रहतीं थीं। दि० ५ मई को माता जी आश्रम के प्रमुख भवन में स्थित अपने पुराने कक्ष में लौट आईं परन्तु दि० १५ मई को वे पुनः अपनी नई कुटिया में पहुँच गईं, जहाँ आश्रम के हॉल में अनेकों श्रद्धालुओं द्वारा परंपरागत पूजा पूर्वक अक्षय तृतीया मनाई गई। उस दिन ऐसे कार्यक्रमों के लिए विशेष रूप से शास्त्रोक्त नियमानुसार निर्मित यज्ञशाला में भव्य महारुद्र यज्ञ का शुभारंभ हुआ। लगातार १५ दिनों तक प्रतिदिन कई घंटे १६ ब्राह्मण इस यज्ञ को संपन्न करते रहे। उनमें से कुछ को हरिद्वार से आमंत्रित किया गया था। एक रामलीला मंडली आई एवं उसने दैनिक कार्यक्रमों का शुभारंभ कर दिया। दुर्भाग्य से कुछ दिनों के पश्चात् एक मुख्य पात्र के पिता का स्वर्गवास हो गया अतः उस मंडली को स्थान छोड़ना पड़ा, परंतु वृन्दावन की रासलीला मंडली ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया।

कलकत्ते से प्रोफेसर त्रिपुरारि चक्रवर्ती पधारे थे एवं वे प्रतिदिन माताजी की उपस्थिति में अपना भाषण प्रस्तुत करते रहे। रामायण के सुप्रसिद्ध व्याख्याकार श्री कपीन्द्र जी भी प्रतिरात्रि प्रवचन करते रहे। वे अपने प्रवचन की समाप्ति एवं प्रतिदिन के कार्यक्रमों की समाप्ति के रूप में माता जी को "रामनाम" गाने के लिए राजी करने में सफल हो ही जाते थे, जिससे प्रत्येक को बड़ी प्रसन्नता होती थी। आजकल माता जी बातें नहीं करतीं और इसीलिए 'मातृ-सत्संग' के रूप में जो प्रश्नोत्तर की सभा होती थी, उसका आयोजन नहीं किया जा सकता था; परन्तु माताजी का गायन वर्णनातीत होता है। प्रति संध्या को वे नए शब्दों एवं नई धुनों की तात्कालिक रचना करती थीं। गीत आदि सभी चीजें टेप रिकार्ड कर सुरक्षित रखी गई हैं।

दिनांक २३ मई से विधिवत् जयन्ती महोत्सव प्रारंभ हुआ जिसमें प्रातःकाल से लेकर रात्रि में देर तक भाषण, संगीत एवं अभिनय के विस्तृत कार्यक्रम होते रहे। कलकत्ते के एक विशेषज्ञ द्वारा एक अत्यन्त मनोहर पंडाल का निर्माण किया गया था। वह कला का एक उत्कृष्ट नमूना था। उसे आश्रम भवनों तथा वृक्षों के बीच इस प्रकार फिट किया गया था कि वह उस दृष्टिगोचर प्रदेश का अविच्छिन्न अंग प्रतीत होता था। उसमें एक ऊँची, नीली गुम्बदाकार सीलिंग थी तथा उसे चित्रों तथा दीपों से सुसज्जित कर अत्यन्त रोचक बनाया गया था। उसमें कई पंखे तथा ५ कूलर थे जो मई माह की कड़ी गर्मी को सफलता पूर्वक विफल बना रहे थे। मंदिरों के संमुख निर्मित विशाल मंच एक साथ माता जी तथा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्य महात्माओं के बैठने के लिए तथा विशाल रंग मंच के रूप में अभिनयों के लिए उपयोगी सिद्ध हो रहा था। विशाल जन समूह एवं कड़ी गर्मी होने पर भी सब प्रकार की व्यवस्था अत्युत्तम थी।

कई महात्मागण एवं महामण्डलेश्वरगण पधारे एवं उन्होंने अपने प्रभावशाली, ज्ञानवर्धक प्रवचनों से इस अवसर की शोभा बढ़ाई। उनमें महेश्वरानन्द आश्रम के प्रमुख श्रीब्रह्मानन्द जी, ऋषिकेश के कैलास आश्रम के प्रमुख श्रीविद्यानंद जी, शिवानंद आश्रम के प्रमुख श्रीचिदानंदजी, रामतीर्थ आश्रम के प्रमुख श्रीगोविन्द प्रकाश जी तथा मानव-सेवा-संघ के प्रमुख श्रीशरणानंद जी प्रधान थे। प्रतिदिन प्रातः काल नियमित रूप से ठीक ७.३० बजे माता जी श्रीविष्णु आश्रम जी के प्रवचन सुनती थीं, जिन्हें मोदीनगर का एकांतवास अधिक प्रिय था और जो मोटर चलाते हुए उषाकाल में काल्का जी आ जाते थे तथा दिन चढ़ने के पूर्व ही अपने निवास स्थान पर पहुँच जाते थे। दूसरा—सदा की भाँति चलने वाला कार्यक्रम था—

"श्री चैतन्य महाप्रभु-लीला" जिसका अभिनय वृन्दावन से आई हुई मंडली करती थी। वह मंडली प्रतिदिन सायंकाल को निकटस्थ पंत कॉलेज के विशाल हाल में 'रासलीला' का भी अभिनय करती थी। पंत कालेज ने संपूर्ण भारतवर्ष के विभिन्न भागों से एकत्रित हुए हमारे अधिकांश अतिथियों को भी आश्रय प्रदान किया। माताजी प्रतिदिन कुछ समय तक 'महाप्रभु लीला' के अवसर पर तथा मध्याह्नोपरांत एवं सन्ध्याकाल में कई प्रवचनों में उपस्थित रहीं।

प्रधान मंत्रीजी कार्यक्रमों के उद्घाटन समारोह में उपस्थित न हो सकीं परन्तु वे दूसरे दिन पधारीं। उन्होंने मंच पर महात्माओं के साथ अपना स्थान ग्रहण करते हुए एक संक्षिप्त, सुन्दर, सारगर्भित एवं ओजस्वी भाषण दिया, जिसमें उन्होंने माताजी से वर्तमान कठिन परिस्थिति में हमारे देश को आशीर्वाद देने की प्रार्थना की।

कलकत्ता से पधारे हुए सुप्रसिद्ध गायक श्रीधनंजय भट्टाचार्य जी एवं अन्य संगीतज्ञों ने अपने गायनों से हमें आनन्दित किया। एक विशिष्ट कार्यक्रम था हावड़ा समाज की सुप्रसिद्ध मंडली "नादेर निमाई" द्वारा बंगला भाषा में श्रीचैतन्य महाप्रभु के जीवन का अभिनय जो लगातार दो रातों को २ या ३ बजे तक चलता रहा। माता जी अपने स्थान से नहीं हिलीं एवं अन्त में उन्होंने मंच पर साष्टांग प्रणाम किया। वे एक विशिष्ट भाव में थीं। कुछ रातों में अन्तिम कार्यक्रम के रूप में माताजी तथा दीदी माँ के चलचित्र प्रदर्शित किये गये।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आश्रम में कुमारी-पूजा संपन्न हुई एवं १०

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

छोटी कन्याओं को भोज दिया गया। माताजी स्वयं उनके मस्तक पर पुष्प रखती जाती थीं तथा एक कुमारी से उन्होंने भोजन कराने के लिए कहा।

दि० ३१ मई की रात्रि को पूर्ण गंभीरता एवं सामरस्य पूर्वक तिथि पूजा आरंभ हुई। उस समय न केवल पंडाल ठसाठस भरा था, अपितु उसके चारों ओर मंत्रमुग्ध, मौन एवं पंक्तिबद्ध जनसमूह खड़ा था। संपूर्ण वातावरण में एक अलौकिक मधुरिमा थी। हम उस नीरवता तथा आनन्द में पहुँच चुके थे, जहाँ रात्रि-जागरण से उत्पन्न थकान का कहीं पता न था। पूजा के अवसर पर हमारे आश्रम के सर्वश्रेष्ठ गायकों ने अपने भजन एवं गीत प्रस्तुत किये। मध्यांतर की पूर्ण निस्तब्धता में आधे घंटे तक 'ध्यान' का कार्यक्रम संपन्न हुआ। माताजी से कुछ दूर हटकर पूजा संपन्न की गई क्योंकि वे कुछ समय के लिए पुष्प, सुगन्ध आदि के अनुभवों से परे की अवस्था को पहुँच चुकी थीं। श्री टी० सदाशिवम् एवं श्रीमती एम० एस० सुभुलक्ष्मी द्वारा सुन्दर ताजे पुष्प रात्रिकालीन हवाई जहाज से भेजे गए थे और वे ज्यों की त्यों हालत में यहाँ पहुँचे थे।

कई शासकीय उच्चपदाधिकारी उपस्थित थे जिनमें उपराष्ट्रपति श्री जी० एस० पाठक जी प्रमुख थे। वे सपरिवार पधारे थे। इनके अतिरिक्त कई अन्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण, लब्ध प्रतिष्ठ महानुभाव, राजागण तथा रानियाँ थीं।

माताजी इस बार ११ बजे रात्रि के पूर्व ही अपनी समाधि से उठ गईं थीं एवं वे अपने भवन तक ले जाने वाली सीढ़ियाँ चढ़ने में समर्थ थीं।

माताजी के जन्मदिवस के उपलक्ष में जो भोजन करना चाहते थे, उनके लिए पंडाल एक विशाल भोजनालय के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। भोजनोपरांत वह पंडाल हटा दिया गया।

दि० २ जून को दिन भर नाम-यत्र संपन्न होता रहा एवं दि० ३ की रात्रि को माताजी कनखल जानेवाली ट्रेन पर सवार हुईं। वे वहाँ दि० ४ को बड़े तड़के उतरीं। दि० ५ जून की शाम को कार द्वारा माताजी किशनपुर पहुँचीं; दिनांक ८ को रात की गाड़ी से वे देहरादून से दिल्ली को रवाना हुईं एवं दि० ९ की शाम को वहाँ से वे बम्बई के लिए रवाना हुईं। देहरादून में भी माताजी अत्यंत क्रियाशील रहीं एवं वे प्रतिदिन दो बार या अधिक बार दर्शन देती रहीं। अंतिम दिन श्री सीताराम ओंकारनाथ जी माँ के दर्शनार्थ पधारे। माताजी सीढ़ी से नीचे उतरकर हाल में पधारीं। बड़ा ही मनोहर मिलन था यद्यपि माताजी "बावा बावा" के अतिरिक्त कुछ नहीं कहती थीं तथापि इशारे से वे सब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुछ प्रकट कर देती थीं। श्री सीताराम ओंकारनाथ जी माँ के दर्शन का कोई भी अवसर नहीं चूकते।

बम्बई में कुछ दिन निवास करने के पश्चात्, माताजी पूना में अधिक समय तक निवास करने के लिए पूना रवाना हुईं। प्रारंभ में माताजी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था एवं वे प्रायः प्रतिदिन कार से घूमकर लौटने के पश्चात् केवल संध्याकाल में एक घंटे तक दर्शन देती थीं। दि० २४ जून को उन्होंने दीदी को बुलाया एवं इंगित किया कि उनकी अस्वस्थता दूर हो गई है और अब वे पूर्ण स्वस्थ हैं।

दि० १२ जुलाई को एक बृहत् कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। मंदिर में श्री राधाकृष्ण जी के नवीन प्रतिमा की स्थापना की गई तथा जिन अन्य प्रतिमाओं को मंदिर में होनेवाले परिवर्तनों के कारण कुछ समय के लिए हटा दिया गया था, उनकी पुनः स्थापना की गई। दि० १० से दि० १६ तक श्रीनाथ शास्त्रीजी की अध्यक्षता में भागवत-सप्ताह का आयोजन किया गया था, जिसमें प्रतिदिन संध्याकाल को स्वामी अखंडानंद जी एक घंटे तक प्रवचन करते थे। वृन्दावन से रासलीला मंडली आई एवं प्रतिदिन रासलीला करती रही। दि० २० जुलाई को हमारी दिल्ली की कीर्तन मंडली ने नामयज्ञ संपन्न किया।

ऐसी आशा की जाती है कि माताजी २६ जुलाई की गुरुपूर्णिमा के लिए पूना में ठहरेंगी एवं तत्पश्चात् वे कुछ दिनों के लिए कलकत्ता रवाना होंगी।

यह भी आशा की जाती है कि दि० १५ अगस्त को मनाई जानेवाली, दीदी माँ की महासमाधि की द्वितीया वार्षिकी हेतु माताजी कनखल में रहेंगी।

नैमिषारण्य में दि० १४ से १७ अक्टूबर तक दुर्गापूजा संपन्न होगी एवं उसी स्थान में ५ नवम्बर दीपावली की रात्रि में काली पूजा संपन्न होगी।

दि० १३ से २० नवम्बर तक हरिद्वार में २२वाँ संयम-महाव्रत संपन्न होगा।

× × ×

यह स्मरण रखना उचित ही है कि हम माताजी को जो कुछ करते देखते हैं वह केवल उनकी लीला का अत्यल्प अंश ही है। वास्तव में जब, जहाँ जो भी उनका स्मरण करता है, उसके लिए तब वहाँ वे उपस्थित रहती हैं। भारत के बाहर माताजी के भक्तों की संख्या दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती जा रही है। कई उनके दर्शनार्थ भारत आते हैं एवं कई प्रार्थना करते रहते हैं कि माताजी अपनी उपस्थिति से उनके देशों को धन्य बनाएं। जब कोई व्यक्ति माताजी से अपने देश में आने की बात कहता है तो वे सामान्यतया उत्तर देती हैं, "मैं वहाँ हूँ! जैसे तुम मुझे यहाँ देखते हो, वैसे मैं वहाँ हूँ।" वे बार-बार यह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रहती है। "… बच्ची सदा तुम्हारे साथ है।" कई पत्र आते हैं जिनमें लोग माताजी की प्रत्यक्ष उपस्थिति एवं प्रभाव का अनुभव करने का दावा करते हैं। जिन्होंने भौतिक शरीर … माताजी से कभी भी प्रत्यक्ष भेंट नहीं की है, ऐसे कुछ लोगों ने स्वप्न में तथा दृश्यों (Visions) में उनके दर्शन किये, जिसका चिरस्थायी प्रभाव उन पर पड़ा।

नीचे एक भक्त का पत्र दिया जाता है, जो हजारों मील दूर रहती हैं :—

१४ अप्रेल १९७२

मेरी प्यारी, मेरी सगी माँ !

जब मैं उपरोक्त शब्द लिख रही हूँ, तब मैं जानती हूँ कि तुम यहाँ मेरे साथ हो, वास्तव में तुम्हीं लिखने वाली हो, तुम्हीं शब्द हो एवं विचार हो तथा तुम सर्वथा वर्णनातीत हो। परन्तु तुम्हारी उपस्थिति का बोध मुझे सदा नहीं रहता, क्योंकि मैं बुद्धि तथा अनुभव में द्ररिद्र हूँ। यही कारण है कि सदैव मेरी उत्कृष्ट अभिलाषा एवं तीव्र उत्कण्ठा रहती है कि तुम यहाँ आओ। यही कारण है कि मैं वनों में तथा आश्रम के इन घास के सुन्दर मैदानों में घूमती रहती हूँ और चिल्लाती रहती हूँ कि तुम आओ; और यही कारण है कि मैं अपनी प्यारी माँ को एक स्वप्न के बारे में लिख रही हूँ, जिसका अनुभव मुझे कई महीने पूर्व हुआ था।

प्यारी माँ ! तुम्हारी छोटी लड़की ने स्वप्न में देखा कि वह कई लोगों के साथ एक बड़े कमरे में है। ये लोग ईश्वर के बारे में कोई बात नहीं कर रहे थे, अतः तुम्हारी छोटी बच्ची अपने को बिल्कुल अकेली अनुभव करने लगी। वह लोगों से दूर चली गई। अपने आपको सांत्वना देने के लिए उसने सोचा, "अब मैं माँ के विषय में सोचूँगी। उससे मुझे प्रसन्नता मिलेगी।" ज्योंही मैंने ऐसा सोचा, त्योंही तुम मेरे सामने प्रकट हो गईं। तुम पूर्णतया वास्तविक तथा प्रकाश से परिपूर्ण थीं एवं तुम्हारी भुजाएँ मेरी ओर फैली हुई थीं। तुम मेरी ओर बढ़ीं और मैं तुम्हारी ओर; परंतु ज्योंही हम एक दूसरे का आलिंगन करने जा रही थीं, त्योंही तुम चलकर मेरे शरीर में समाकर अदृश्य हो गईं। मैंने कितना विलाप किया। तुम्हारा आलिंगन करने की मेरी कितनी प्रबल इच्छा थी परंतु मेरा स्पर्श होते ही तुम अदृश्य हो गईं।

अस्तु, मैंने सोचा कि शायद मैं अपना अनुभव पुनः प्राप्त कर सकती हूँ। अब मैं माँ के विषय में पुनः चिन्तन करूँगी। और पहली बार की भाँति तुम पुनः प्रकट हुईं तुमने मेरी ओर देखा मानो मैं तुम्हारी सगी बच्ची हूँ। तुम मेरी ओर चलकर आईं और पुनः मेरे इस शरीर में समा गईं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तब मेरी समझ में आया कि तुम यहाँ मेरे भीतर हो और बार-बार मैं इस अनुभव में खो जाती हूँ। कभी कभी मैं अनुभव करती हूँ कि तुम मेरी आँखों के पीछे हो और उन आँखों से देख रही हो, अथवा कभी मैं तुम्हें मेरी ही आवाज में गाते सुनती हूँ। परंतु तब मैं माँ को भूल जाती हूँ और कभी-कभी सोचने लगती हूँ कि तुम सुदूर भारत में विराजमान हो और मैं तुम्हें कदापि नहीं देख पाऊँगी।

ओह माँ! प्यारी माँ!! कृपा करके मुझे भारत माँ में तुम्हारे पास आने दो। अब प्यास बढ़ती जाती है—ईश्वर के लिए प्यास तथा मेरी माँ के लिए प्यास। माँ! कृपा करके मुझे तुम्हारे पास आने दो—मुझे संन्यास की दीक्षा लेने दो तथा तुम्हारे पास कुछ समय तक रहने दो।

इस सप्ताह में हमारे प्रिय मित्र हमारे आश्रम को लौट आवेंगे। माँ! मैंने प्रार्थना की थी कि किसी दिन तुम उन्हें हमारे पास यहाँ भेज दो। तथापि, मेरा विश्वास है कि उनके आगमन से केवल तुम्हारे लिए मेरी प्यास बढ़ेगी। वे तुम्हारे चित्र, कहानियाँ और गीत लावेंगे, जो उन्होंने तुम्हारे लिए गाये, और मैं लगातार रोती, चिल्लाती रहूँगी। यदि मुझे इस प्रकार रोना चिल्लाना ही है तो मुझे तुम्हारे चरणों में आकर रोने चिल्लाने दो।

माँ! हमें आशीर्वाद दो कि हम ईश्वर को जान सकें।

—तुम्हारी बच्ची।"

"संत वैराग्य के आगार हैं और ज्ञान के भंडार हैं भी वे ही हैं। संत ही उपरम का आश्रय-स्थान हैं और विश्रान्ति स्वयं वहाँ आकर विश्रान्ति पाती है। उदयास्त हुए बिना भगवान् सहस्त्ररश्मि के समान, संत अखण्ड और असीम ज्ञान का प्रकाश करते हैं। संत ही माता-पिता, भाई-बहिन, आप्तमित्र और स्वजन हैं। उनके कृपा बिना व्रत, तप, धारणा ध्यान सब निष्फल है। संत हृदय का प्यार और आनन्द का समारोह हैं। शान्ति और क्षमा की सम्मिलित स्वरूप और अमृत से बढ़कर मधुर रस की धारा हैं।"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"स्मरणिका"

प्रातःस्मरणीय ब्रह्मलीन श्री श्री १०८ स्वामी मुक्तानन्द गिरि महाराज जी की पुण्यमयस्मृति तर्पण के लिए तिल, तुलसी और गंगाजल के रूप में उनके स्वरचित कविता एवं भजन, गिरिजी के पवित्र जीवन एवं उपदेश, तथा उनके कुछ सुन्दर चित्रों के सहित "स्मरणिका" निर्माल्य के रूप में प्रकाशित की जाने की प्रचेष्टा चल रही है।

इस महान् कार्य के लिए आपलोगों की सहयोगिता को अभिलाषा की जाती है। गिरि जी के दिव्य जीवन, उपदेश, अथवा गिरि जी से सम्बन्धित कोई स्मरणीय घटना आपको ज्ञात हो तो, फुलस्केप कागज के दो पृष्ठों पर उसे लिपिबद्ध कर "श्रद्धार्थ" अर्पण के निमित्त सम्पादक के नाम भेजने की कृपा करें।

यदि आपलोगों के पास गिरिजी का कोई आकर्षणीय सुन्दर चित्र रहे तो उस चित्र का ६" ८" नाप की दो कापी Glossy कागज पर छपवा कर भेज देने का कष्ट करें।

"स्मरणिका" के सम्बन्ध में विस्तारित विवरण बाद में सूचित किया जायेगा।

सम्पादक
"आनन्दवार्ता"

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA
LIST OF PUBLICATIONS

HINDI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3-00
Sad Vāni "	...	1-00
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi, Vol. I to XVIII		52-00
Ma Anandamayee—Dr. Pannalal	...	3-00
Akhanda Mahāyajña—Gurupriya Devi	...	2-50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6-00
Sankirtan—Stav—Arati	...	0-50
Amar Vāni	...	6-00

BENGALI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	3-00
Sad Vāni—"Bhaiji"	...	1-50
Mātri Vāni	...	0-75
Sri Sri Ma Anandamayee—Gurupriya Devi, Vol. I—XV		41-50
Ma Anandamayee Upadeshmrita Sangraha	...	1-50
Akhanda Mahāyajña	...	2-50
Kirtan Rasa Swarūpa	...	6-00
Suno Bali Maer Katha—Sailesh Brahmachari	...	1-50
Anandamayee Ma—Ganga Samiran	...	2-50
Amar Vāni	...	10-00
Mātri Lila Sankirtan	...	0-30
SHREE SHREE RAM GITA—Swami Narayanananda Tirtha		2-00

GUJRATI

Mātri Darshan—"Bhaiji"	...	1-50
Ma Anandamayi—Na—Sannidhyama—(Containing Bhaiji's "Sad Vāni" & "Sri Ma Anandamayi Lila Katha") by Swami Bhagavatananda Giri—Vol. I	...	4-00
—Vol. II	...	2-00

ENGLISH

Mother As Revealed to Me—"Bhaiji"		...	6-00
Mātri Vāni (Sayings)	1-50	Special edition	2-[illegible]
Words of Sri Anandamayi Ma (New Edition)	5-50	do.	7-50
Mother as Seen by Her Devotees	5-50	Special edition	6-50
From the Life of Sri Anandamayi Ma by Bithika Mukerji		...	10-00

PHOTOS

Photos—various sizes Ranging from [illegible]-50 to 15-00

Registered with the Registrar of Newspaper for India under No. N. 1727/5

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीश्री आनन्द मयी संघ
ॐ मा
मातृ शरणं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi